श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः

श्रीमाधव-तिथि एवं वैष्णव व्रतोत्सव
[श्रीएकादशीका शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक माहात्म्य]

हरिकथा तथा प्रेरणा स्त्रोत
नित्यलीला प्रविष्ट ॐ अष्टोत्तरशत विष्णुपाद परमहंसस्वामी
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

श्रीभक्तिप्रज्ञान गौड़ीय वेदान्त विद्यापीठ प्रकाशन, बेंगलुरु—५६००८८

श्रीब्रह्म -माध्व -गौड़ीय वैष्णव गुरु -परंपरा

जय नित्यलीलाप्रविष्ट
ॐ विष्णुपाद सच्चिदानन्द
श्रीलभक्तिविनोद
ठाकुर

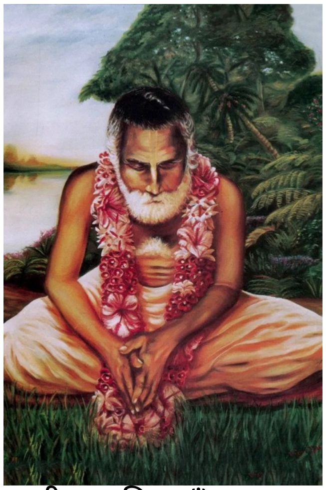

नित्यलीला प्रविष्ट ॐ
विष्णुपाद अष्टोत्तरशत
श्रील गौरकिशोरदास
बाबाजी महाराज

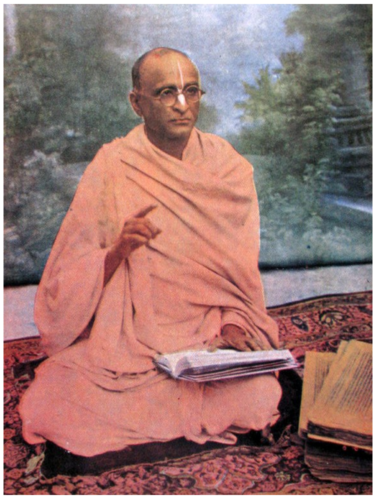

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ
विष्णुपाद अष्टोत्तरशत
श्रीश्रील
भक्तिसिद्धान्त सरस्वती
गोस्वामी प्रभुपाद

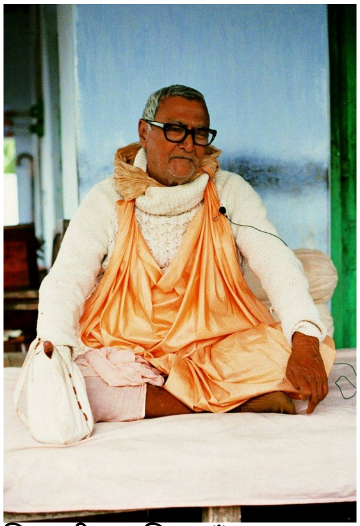

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ
विष्णुपाद अष्टोत्तरशत
श्रीश्रीमद् भक्तिरक्षक

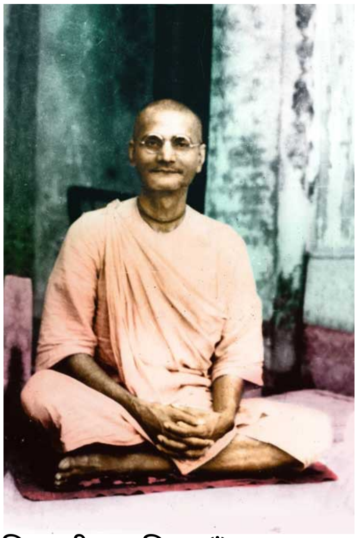

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ
विष्णुपाद अष्टोत्तरशत
श्रीश्रीमद्
भक्तिप्रज्ञान केशव
गोस्वामी महाराज

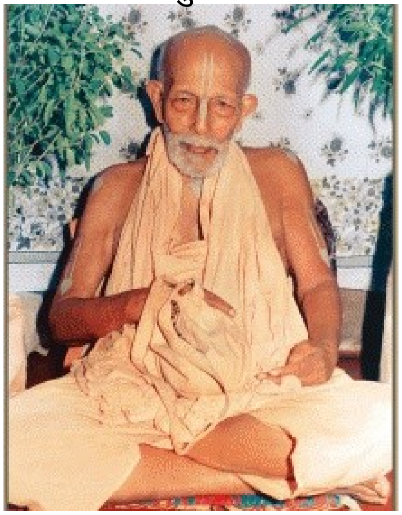

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ
विष्णुपाद अष्टोत्तरशत
श्रीश्रीमद् भक्तिप्रमोद

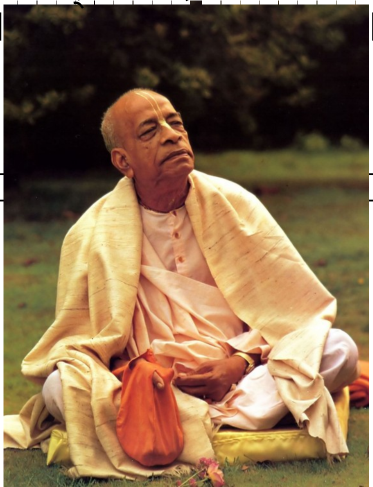

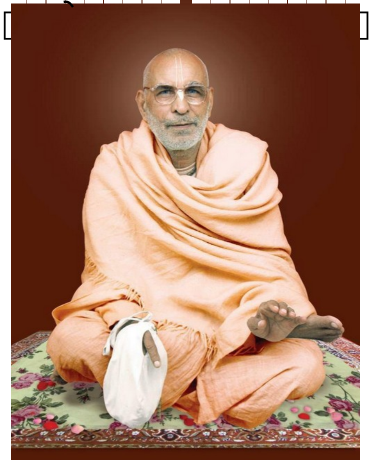

श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः

श्रीमाधव-तिथि एवं वैष्णव व्रतोत्सव

[श्रीएकादशीका शास्त्रीय
एवं वैज्ञानिक माहात्म्य]
हरिकथा तथा प्रेरणा स्त्रोत

नित्यलीला प्रविष्ट ॐ अष्टोत्तरशत विष्णुपाद परमहंसस्वामी श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजी के अनुगृहीत

नित्यलीला प्रविष्ट ॐ अष्टोत्तरशत विष्णुपाद परमहंसस्वामी श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

श्रीभक्तिप्रज्ञान गौड़ीय वेदान्त विद्यापीठ प्रकाशन, बेंगलुरु—५६००८८

प्रकाशक— त्रिदण्डिस्वामी भक्तिवेदान्त दण्डी महाराज

द्वितीय हिन्दी संस्करण— श्रीबलदेव पूर्णिमा (अगस्त १२, २०२२,
शुक्रवार)

प्राप्तिस्थान
(१) श्री रंगनाथ गौड़ीय मठ, हेसरकट्टा, बंगलौर, कर्नाटक. पिन: ५६००८८. दूरवाणी: ९३७९४४७८९५, ६३६९२२९२१९, ७७८०६२१६७१ ईमेल: bvdandi@gmail.com
(२) श्री गौर नारायण गौड़ीय मठ,.. कॉलोनी-३, तहसील: सिन्धनुर, जिला: रायचूर, कर्नाटक. पिन: ५८४१४३, दूरवाणी: ९६३२३९५२७९, ९९८६०६५४०४
(३) श्रीगौरनारायण सुरभि गोशाला चैरिटेबल ट्रस्ट, गाडेवाडी, पोस्ट: बोरीबेल, तहसील: दौंड, ज़िला: पुणे, महाराष्ट्र. पिन: ४१३१०८, दूरवाणी: ९९२३६७३१८९, ९०२१६२५२२८.
(४) श्री अमलकृष्ण दास (श्री अमरनाथ सिंग), फ्लैट १०१, लक्ष्मी ऐनक्लेव बिल्डिंग, शहाजी राजे रोड, विलेपार्ले, मुंबई, महाराष्ट्र. पिन: ४०००५७. दूरवाणी: ९९६७५१४२५७.
(५) श्री अमोल बनकर (अमल कृष्ण दास), २०२, नन्दपार्क, यशोधन नगर, पाड़ा नंबर
२, ठाकुर बंगले के सामने, ठाणे (पश्चिम), ४०० ६०६, महाराष्ट्र दूरवाणी: ८६०५६ ३५५६६ ईमेल: bankaramol2012@gmail.com
(६) श्री के. रामआंजनेयुलु (राय रामानंद दास), १०-७३८, क्रांति नगर, जीव कोणा रोड, तिरुपति-५१७५०१ दूरवाणी: ९४४०९८४४३८

वेबसाईट— (१) http://www.purebhakti.com (२) http://www.purebhakti.tv (३) http://www.bhaktiprojects.org/project/sri-ranganatha-gaudiya-matha-gurukula/ईमेल— vd108108108@gmail.com
मुद्रक—

आभार सूची—मुखपृष्ठपर विराजित ‘श्रीगौरांग महाप्रभु और छह गोस्वामी’ यह अद्भुत चित्र श्रीमती बकुला दासी ने प्रस्तुत किया हैं। कुछ अन्य चित्र श्रीमती श्यामराणी दासी एवं अन्य कलाकारों के द्वारा प्रस्तुत है।
१. श्री सनातन गोस्वामी— श्री मदन मोहनजी को जलाऊ लकड़ी पर भुने हुए आटे
की लोई निवेदन करते हुए। वह अनुताप करते हैं कि वह साथ में स्वाद के लिए नमक भी नहीं दे सकते।
२. श्री रघुनाथ भट्ट गोस्वामी— श्री गोविन्ददेव मंदिर में हरिकथा देते हुए।
३. श्री रघुनाथ दास गोस्वामी— विलाप कुसुमांजलि आदि लेखन करते हुए।
४. श्री रूप गोस्वामी के द्वारा श्री गोविन्ददेवजी की खोज।
५. श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी और श्री राधा रमणजी का प्राकट्य।
६. श्री जीव गोस्वामी षट्-संदर्भ आदि ग्रंथ लेकर जाते हुए।
हम उन सभी कलाकारों को धन्यवाद देते हैं जिनके कलाकृतियों का उपयोग इस पुस्तक में किया गया है।

विषयसूची पृष्ठ संख्या

विश्व प्रसिद्ध जगद्गुरु युगाचार्य नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्री श्रीमद् भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज
विश्व प्रसिद्ध जगद्गुरु नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्री श्रीमद् भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज
एकादशी उपवास की आवश्यकता
निवेदन
श्रीमन्मध्वाचार्य के एकादशी संबन्धित विचार
एकादशी के विषय में शास्त्र एवं आचार्यों के विचार
एकादशी व्रत तालिका
महाद्वादशी
अथाष्ट-महाद्वादशी-
एकादशी के दिन अन्न-प्रसाद क्यों न स्वीकार करें? श्रीनाम-भजन एवं एकादशी एक ही तत्त्व है
एकादशी व्रत की विधि
एकादशी तिथि का निर्णय
एकादशी पर श्रील गुरुदेव द्वारा प्रदत्त प्रवचनों की सूची श्रीएकादशी व्रत—भक्तिका नवाँ अंग
एकादशी एवं शरीर की स्वच्छ्ता
एकादशी के दिन प्रयोग करने योग्य मंजन
एकादशी के दिन प्रयोग करने योग्य प्राकृतिक साबुन पावडर एकादशी के दिन प्रयोग करने योग्य प्राकृतिक शैंपू श्रीगुरुवर्ग के एकादशी संबन्धित अनमोल वचन
कम खाओ और अधिक जप करो
नास्तिक लोग भी एकादशी का उपवास रखें
एकादशी के दिन टमाटर और लौकी जैसी सब्जियां वर्जित जगन्नाथ-पुरी में एकादशी पालन का आदर्श स्थापन
श्रीगुरुदेव से प्राप्त शिक्षामृत
मरणासन्न गोमाता की त्वरित मुक्ति
एकादशी-देवी—श्रीमती राधिकाजी का एक प्रकाश
पाण्डव निर्जल एकादशी (केवल भीम के लिए ही रियायत)
निर्जल एकादशी को स्नान एवं दाँत साफ करना वर्जित नहीं
एकादशी के दिन बहुत ज्यादा मात्रा में अनुकल्प ग्रहण न करें निर्जला एकादशी को श्रीगुरुदेव के प्रसाद-अवशेष ग्रहण न करें अधिक हरिनाम जप से अपराधों का क्षालन
एकादशी व्रत पारण का नियम
एकादशी के दिन क्या खाना चाहिए और क्या नहीं खाना चाहिए
अनुकल्प (एकादशी में लेने योग्य खाद्य पदार्थ)
एकादशी पर इस्तेमाल करने योग्य मसाले
एकादशी पर प्रतिबंधित खाद्य पदार्थ
एकादशी के लिए अयोग्य मसाले
एकादशी के दिन अनाज और श्यामा चावल निषिद्ध हैं
उपवास में साबूदाना और चाय क्यों वर्जित हैं? एकादशी का पालन कैसे करें?
चीनी का अच्छा विकल्प गुड़ है
एकादशी के महत्त्व के बारे में शास्त्र-प्रमाण एकादशी पर क्या करें और क्या न करें

एकादशी उपवास के संकल्प मंत्र
एकादशी के दिन श्रीमन्महाप्रभु की कीर्त्तन लीला
अनुकूल ग्रहण—वाचिक और मानसिक (एकादशी-कीर्तन)
‘शुद्ध भकत चरण रेणु’ इस एकादशी भजन की व्याख्या
द्वादशी को तुलसी-पत्तों का चयन वर्जित
एकादशी के दिन श्राद्ध एवं विवाह वर्जित
सधवा एवं विधवा महिला भी एकादशी का उपवास रखें
एकादशी के रात्रि-जागरण में श्रीश्रीचमत्कार-चन्द्रिका का पाठ करें एकादशी के दिन श्रीमद्भागवत महापुराण का श्रवण
एकादशी के दिन श्रीराधाकृपाकटाक्ष-स्तवराज का पाठ करें
असत्संगके दोष
वैष्णवों की सन्तुष्टि के लिये सेवा
क्या विग्रह (ठाकुरजी) को एकादशी दिन अन्न का भोग लगाएँ
एकादशी की मज़ेदार लीला
एकादशी के लाभ और वैज्ञानिक कारण
एकादशी उपवास करने के शरीर के संबन्धित बाह्य कारण
एकादशी हमें चंद्रमा के गुरुत्वाकर्षण बल से बचाती है
एकादशी व्रत के स्वास्थ्य लाभ संबंधी खोज के लिए दो महान पुरस्कार फिजियोलॉजी या मेडिसिन में २०१६ का नोबेल पुरस्कार
ऑटोफैगी क्या है?
फिजियोलॉजी या मेडिसिन में २०१८ का नोबेल पुरस्कार
चावल का पात्र और हमारा पेट
आयुर्वेद के अनुसार एकादशी उपवास के अद्भुत फायदे
उपवास शरीर की चर्बी को कम करते हैं
एकादशी अप्राकृत है
महिलाओं के सभी समस्याओं का इलाज
एकादशी आदि व्रत ही भक्तोंके लिए तप है
हरिवासर (एकादशी) आदि व्रत श्रीकृष्णचरणकी सेवाके अङ्ग हैं एकादशी व्रतोंका पालन करनेसे भक्तिमें वृद्धि होती है
उपवास की पद्धति
भक्तों के जीवन से जुड़ी एकादशी व्रत की प्रेरणादायक सच्ची घटनाएँ
कूर्म अवतार
अम्बरीष महाराज की कथा
शुद्ध भक्त श्री अंबरीष महाराज
श्री कृष्ण-प्रेम-तरंगिणी ग्रंथ (नवम स्कंध) से अंबरीष महाराज का चरित्र एकादशी माहात्म्य (भद्रशील का चरित्र)
अपरा एकादशी (रुक्मांगद राजा को एकादशी के माहात्म्य की उपलब्धि होना)
राजा रुक्मांगद की कथा
एकादशी के प्रभाव से पापियों का नरक से उद्धार
के प्रति सम्पूर्ण आत्मनिर्भरता
परमपूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीकी अप्रकटलीलाका स्मरण
श्रीनन्द महाराज द्वारा एकादशी का पालन
श्रीकृष्ण के पिता श्रीनन्द महाराज की एकादशी व्रत निष्ठा
निमाई का शचीमाता से एक अनुरोध
श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी और एकादशी का सबक
एकादशी के फलार्पण से ब्रह्म-दैत्य की मुक्ति
(श्रीमद्भक्तिगौरव वैखानस गोस्वामी महाराज के जीवन की सत्य घटना)

बाल्यकाल से ही असाधारण प्रतिभा सम्पन्न
प्रेत के साथ वार्त्तालाप
एकादशी व्रत का फल प्रदान करने से ब्रह्म-दैत्य की मुक्ति
श्री नामदेवजी के एकादशी निष्ठा की श्री ठाकुरजी द्वारा परीक्षा जगदीश और हिरण्य पण्डितका नैवेद्य ग्रहण
श्रीरामनवमी-व्रत
श्रीरामचन्द्र जी की जन्म-तिथि
श्रीरामनवमी-व्रत पालन करने व नहीं करने का फलाफल
पालन करने का फल
नही पालन करने का अफल
‘श्रीरामनवमी’-व्रत माहात्म्य
श्रीरामनवमी-व्रत-विधि (हरिभक्तिविलास में द्रष्टव्य) ‘श्रीराम-नवमी’ व्रतकाल निर्णय
श्रीरामनवमी-व्रत-विधि
श्रीनृसिंह चतुर्द्दशी
श्रीनृसिंह-चतुर्द्दशी व्रतोपवास अवश्य पालनीय श्रीनृसिंह-चतुर्द्दशी का व्रत-माहात्म्य श्रीनृसिंह-चतुर्द्दशी व्रतोपवास का काल निर्णय श्री नृसिंह-व्रतोपवास-विधि
श्रीबलदेव पूर्णिमा
श्रीबलदेव-तत्त्व एवं महिमा
श्रीबलदेव जी की आविर्भाव-लीला
श्रीबलदेव पूर्णिमा व्रत-विधि श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी
श्रीजन्माष्टमी-व्रत की उत्पत्ति श्रीजन्माष्टमी-व्रत का माहात्म्य जन्माष्टमी-व्रतकाल निर्णय श्रीजन्माष्टमी-व्रत पालन करने की विधि श्रीजन्माष्टमी पारण-विधि
श्रीकृष्ण जयन्तीके उपलक्ष्यमें श्रीवामन-द्वादशी
श्रीवामन-द्वादशी-व्रत का काल-निर्णय श्रीवामन-द्वादशी-व्रत-माहात्म्य श्रीवामन-द्वादशी-व्रत-विधि
श्रीवराह-द्वादशी
श्रीवराह-द्वादशी का व्रतकाल और व्रत-विधि श्रीवराह-द्वादशी व्रत-माहात्म्य
-सप्तमी
श्रीनित्यानन्द-त्रयोदशी
शिव-रात्रि-व्रत
शिवरात्रि-व्रत-निर्णय
योग एवं वेध
शिव-व्रत की विधि
शिव प्रार्थना मन्त्र
शिवरात्रि-व्रत पारण का निर्णय शिवरात्रि-व्रत-माहात्म्य श्रीगौर-पूर्णिमा
चातुर्मास्य

सभी शास्त्रों में ही चातुर्मास्य का उल्लेख
तथा त्रिदण्डी—सभी के लिए ही चातुर्मास्य-व्रत श्रीगौरसुन्दर के द्वारा चातुर्मास्य-व्रत पालन आश्रमों के हिन्दु मात्र के लिए ही चातुर्मास्य-व्रत चातुर्मास्य में भोग-परित्याग का आदर्श
त्याग के उद्देश से ही गृहस्थों के द्वारा भोग-स्वीकार
लिए कार्तिक अर्थात् ऊर्जा-विधि पालन करना कर्त्तव्य
चातुर्मास्य का काल-निरूपण
श्रीहरि-शयन के समय चातुर्मास्य-व्रत नहीं करने पर हानि
व्रत में ग्रहणीय तथा वर्जनीय
लोगों के लिए रुचि के अनुकूल विषयों को संकुचित करना ही हरि सेवा में उत्साह-वर्धक
के लिए व्रत-पालन की विधि
के लिए व्रत-पालन के निषेध
कृष्ण-सेवा तात्पर्य ही चातुर्मास्य का फल
’चातुर्मास्य-व्रत’ के सम्बन्ध में कुछ और तथ्य
‘ऊर्जादर-विशेषण’ का तात्पर्य
चातुर्मास्य-व्रत कर्मांग नहीं, शुद्ध-भक्तंग
व्रत के नियमों को पालन करने का फल चातुर्मास्य-व्रत-विधि
चातुर्मास्य के दौरान विभिन्न व्रत तथा व्रतोपवास चातुर्मास्य-व्रत
चातुर्मास्य व्रतारम्भ
चातुर्मास्य व्रतकी समय गणना
चातुर्मास्य व्रतकी विधि
चातुर्मास्य व्रतमें निषेध
चातुर्मास्य व्रतका उद्देश्य

चातुर्मास्य-व्रत का शास्त्रोक्त माहात्म्य श्रीदामोदर-व्रत
कार्तिक-मास का माहात्म्य
दामोदर व्रत का माहात्म्य
दामोदर-व्रत नहीं करने का फल
कार्तिक मास में विशेष कर्मों का माहात्म्य श्रीराधा-दामोदर इस मास के अधिदेवता “दामोदर-व्रत” के आरम्भ का समय “दामोदर-व्रत” पालन करने का स्थान “दामोदर-व्रत” पालन करने की विधि दीपदान-माहात्म्य
दीपमाला-माहात्म्य
आकाश-दीपदान-माहात्म्य
बहुलाष्टमी
श्रीयमदीप-दान
गोवर्द्धन-पूजा
गोपाष्टमी
उत्थान या प्रबोधनी-एकादशी
दामोदर-व्रत तथा चातुर्मास्य-व्रत समापन श्रीपुरुषोत्तम-मास-माहात्म्य
स्मार्त तथा परमार्थ के आधार पर शास्त्र द्विविध स्मार्त-शास्त्रों के विधि-विधान—कर्म पर आधारित
अधिमास सत्कर्म-हीन, इसका अन्य नाम—मलमास
परमार्थ-शास्त्र में अधिमास श्रेष्ठ तथा हरि-भजनोपयोगी अधिमास को ‘पुरुषोत्तम’-नाम की प्राप्ति
पुरुषोत्तम-मास के माहात्म्य में द्रौपदी का इतिहास वाल्मिकी-कथित पुरुषोत्तम-व्रत
श्रीपुरुषोत्तम-मास में स्नान-विधि
श्रीश्रीराधाकृष्ण की पूजा ही पुरुषोत्तम-मास में करणीय मास में क्या करना चाहिए
मास में क्या नहीं करना चाहिए
श्रीपुरुषोत्तम-मास-कृत्य
परित्यज्य वस्तु तथा आचरण
आमिष किसे कहते हैं?
वर्जनीय द्रव्य आदि
पुरुषोत्तम, कार्तिक तथा माघ—तीनों महीनों में एक ही कृत्य तथा त्रिविध व्रत
पुरुषोत्तम-मास में श्रीमद्भागवत-श्रवण तथा व्रत-पालन का फल
दीप-दान और उसका फल
पुरुषोत्तम-मास में कृष्णपक्षा की चतुर्दशी, नवमी तथा अष्टमी तिथियों
में विशेष क्रिया का वर्णन
अर्घ्य-मन्त्र तथा नमस्कार-मन्त्र
आरति, ध्यान तथा पुष्पांजलि मंत्र
व्रत के अंतिम-कृत्य तथा नियम-भंग करने की विधि
स्वनिष्ठ, परिनिष्ठित तथा निरपेक्ष परमार्थी के कृत्य
ऐकान्तिक भक्तों का माहात्म्य
अपने-अपने अधिकारानुसार यह व्रत पालनीय
सदाचार

एकादशी व्रत का भक्ति के साथ क्या संबंध है?
हरिवासरादि एकादशी-व्रत भाव प्रकाशित करने वाले उद्दीपन है एकादशी—भक्त्युद्दीपक वस्तु
भक्तिके प्रति अपराध
एकादशी व्रत पालन न करना यह एक प्रकारका सेवापराध
सेवापराध और नामापराध
श्रीबलदेवविद्याभूषण पाद के विचार
श्रीरूप गोस्वामी के आनुगत्य में एकादशी व्रत करना रागानुग साधकों के
लिए परमावश्यक
श्रीगुरुदेव के स्वतन्त्र और परतंत्र स्वरूप
एकादशी और जन्माष्टमी आदि व्रत आंशिकरूपमें भावसम्बन्धी भजनानुष्ठान जन्माष्टमी-रामनवमी-एकादशी आदि उपवासरूप तप
एकादशी—भक्ति का नित्य अंग
एकादशी के द्वारा भक्तिमूलक सुकृति की प्राप्ति
अनजाने में किये गये एकादशी व्रत के लाभ
व्रत (श्रीचैतन्य-शिक्षामृत से उद्धृत)
देश, काल और द्रव्यगत भगवदनुशीलन
देशगत अनुशीलन
कालगत अनुशीलन
द्रव्यगत अनुशीलन
एकादशी सभी मनोकामनाएँ पूर्ण कर सकती है
यह एक दिन नहीं है—यह कृष्ण है
साक्षात्-गुरुसेवाके सम्बन्धमें गुरुदासका कर्त्तव्य गुरुदासके लिए ५२ प्रकारके निषेध
एकादशीका यत्नपूर्वक पालन करना चाहिए।
द्रव्यासक्ति सबके लिये त्याज्य है
एकादशी आदि व्रतोंके पालनसे आसक्तिका दूर होना
साधकोंका कर्त्तव्य
-संग
एवं ठाकुर भक्तिविनोद इंस्टीट्यूट (पञ्चमी और एकादशीको अवकाश)
एकादशी संबंधित जानकारी
आचार्यों का संक्षिप्त जीवन चरित्र
श्रीश्रीलभक्तिरक्षक श्रीधर गोस्वामी महाराजका संक्षेप जीवनचरित्र श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजका संक्षेप जीवनचरित्र श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन महाराजका संक्षेप जीवनचरित्र श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त त्रिविक्रम महाराजका संक्षेप जीवनचरित्र श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराजका संक्षेप जीवनचरित्र

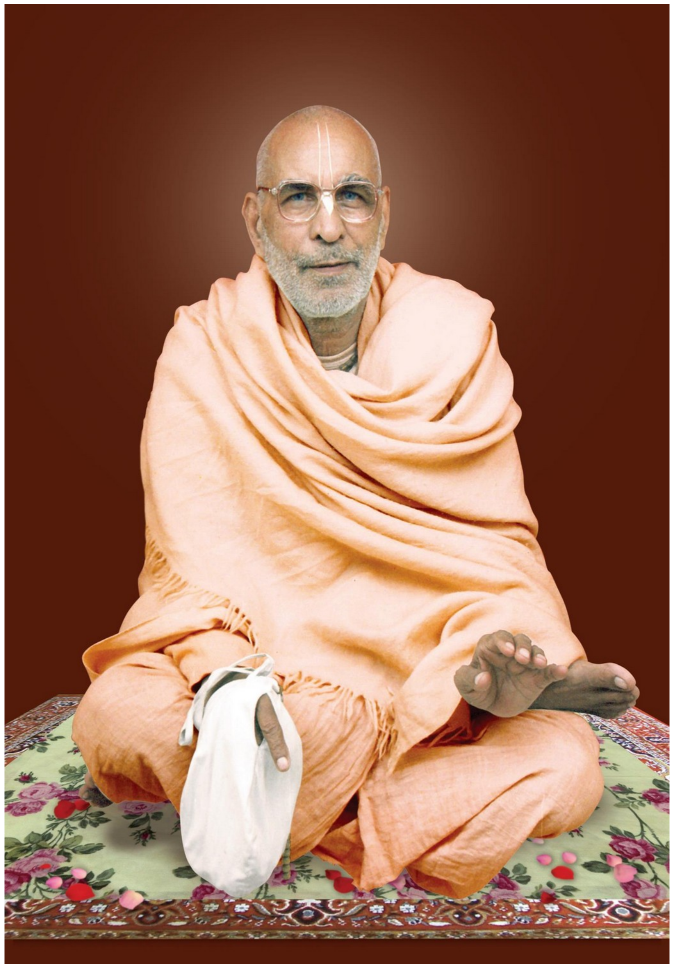

विश्व प्रसिद्ध जगद्गुरु युगाचार्य नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद

अष्टोत्तरशत श्री श्रीमद् भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज
आप एक रसिक आचार्य हैं। आपने अपनी पुलिस विभाग की अच्छी खांसी नौकरी त्याग कर पूरे वैराग्य के साथ युवा अवस्था में ही भगवद्- आरंभ किया। आप भगवान्‌ श्रीकृष्ण के नित्य परिकर हैं। आप इस जगत में केवल शुद्ध-भक्ति का प्रचार करने अवतरित हुए हैं। आपने सारे विश्व की चालीस बार प्रदक्षिणा करते हुए पृथ्वी के कोने कोने में श्री चैतन्य महाप्रभु की वाणी का प्रचार किया। आप ने गोस्वामी- वर्ग और प्राचीन आचार्यों के अमूल्य ग्रंथों का हिन्दी भाषा में अनुवाद एवं प्रकाशन करके सभी भक्तों के ऊपर परम उपकार किया हैं। आप के सभी ग्रंथों का अनुवाद अभी अंग्रेज़ी, रूसी, जर्मन, चाइनीज़, कन्नड़, तेलुगु, तमिल, मराठी आदि देश-विदेश की भाषाओं में हो रहा हैं। आपने विश्व प्रसिद्ध जगद्गुरु नित्यलीला ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्री श्रीमद् भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज की सन्‌ १९४७ ई. से प्रचुर सेवा की। उन्होंने आपको विदेश से ३०० से अधिक खत लिखे और आप के सेवा-वृत्ति की बहुत प्रशंसा की। आपने ही अपने हस्त कमलों से उन्हें समाधि प्रदान की।

विश्व प्रसिद्ध जगद्गुरु नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद

अष्टोत्तरशत श्री श्रीमद् भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज
आपने परमाराध्यतम जगद्गुरु ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत-श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ’प्रभुपाद’ से हरिनाम और परम गुरुदेव परमाराध्यतम जगद्गुरु ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत-श्रीश्रील भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजी से ब्राह्मण-दीक्षा और संन्यास प्राप्त किया। संन्यास के पहले आप श्री सज्जन सेवक ब्रह्मचारी के नाम से विख्यात थे। एक बार आपका शरीर १०४ डिग्री बुखार से तप रहा था। श्रील परम-गुरुदेव ने आप को वैष्णवों के लिये रसोई बनाने की आज्ञा दी। आपने उसी अवस्था में उठ कर रसोई बनाई और ठाकुर जी भोग निवेदन कर, सब वैष्णवों को प्रसाद-सेवा कराई। आपकी गुरु-निष्ठा की कोई सीमा नहीं हैं। कभी हरि-कथा परिवेषण करते करते जब श्रील परम-गुरुदेव कोई श्लोक भूल जाते तो आप वह श्लोक उनको याद दिलाते थे। एक बार आसाम प्रचार में “श्री चैतन्य को ‘भगवान्’ करके क्यों संबोधित करते हों?”—ऐसा प्रश्न श्रील परम गुरुदेव को किया गया। श्रील परम-गुरुदेव की आज्ञा से आपने उसी समय विभिन्न शास्त्रों से पचास श्लोक उद्धृत किये और वहाँ के लोगों के संदेह का निरसन किया। श्रील परम गुरुदेव ने बाँग्ला भाषा में प्रकाशित होने वाली श्री गौड़ीय पत्रिका का संपादन और प्रकाशन दायित्व आपके ऊपर दिया था। आपका स्वभाव गंभीर और शांत था।

एकादशी उपवास की आवश्यकता
हमारे देश में सामान्यतः सब लोग उपवास करते हैं। सप्ताह के कौन-कौन से
दिन उपवास या व्रत रखते है और उस के द्वारा विविध देवताओंको प्रसन्न करने की इच्छा होती है। इस व्रत के पीछे कोई तो उद्देश्य निश्चित ही होता है। साधारणतः धन प्राप्ति के हेतु, बीमारी से ठीक होने के लिए, राजनीति में पद के लिए, अच्छी नौकरी, पत्नी या पति प्राप्ति के लिए लोग उपवास करते है। भौतिक इच्छा प्राप्ति के लिए उपवास करने से बहुत बार फल मिलता है। पर यह फल भौतिक होने से सिर्फ क्षणिक होता ऐसे व्रत करना मतलब भगवान् से किया हुआ सौदा ही है। हमारी इच्छा पूरी होते ही व्रत समाप्त करके हम भूल जाते है। ‘जरूरत खत्म होते ही वैद्य की गुंजाइश नहीं रहती!’ श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज ऐसे अनुष्ठानों को ‘भौतिक धर्म’ कहते थे।
भगवान् श्रीकृष्ण के भक्त भी एकादशी, जन्माष्टमी, रामनवमी, गौर पूर्णिमा,
नृसिंह चतुर्दशी और अन्य वैष्णव तिथियों कों उपवास करते है, व्रत रखते है। इसके पीछे उनका क्या उद्देश्य होता है? वस्तुतः भक्तोंकी कोई भी भौतिक कामना नहीं होती। भक्त अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिए यह व्रत करते है। व्रत का पालन करना यह मूल सिद्धांत न होकर, भगवान् के प्रति अपनी श्रद्धा बढाना यह कारण है। उपवास करनेसे मन शुद्ध होता है, मन साधक के वश हो जाता है। मन को वश में करके श्रीकृष्ण की सेवा उत्तम प्रकारसे करने के लिए उपवास सहायक होता है।
एकादशी के दिन अन्न का त्याग करके, शरीरकी आवश्यकताएँ कम करके श्रवण-
कीर्तन के द्वारा भगवान् की अधिक से अधिक सेवा करना यही उपवास का उद्देश्य है। इससे संतुष्ट होते है। भारत में अनादि काल से एकादशी के व्रत का पालन किया जाता है। लेकिन आज लोगों की अध्यात्म के प्रति कोई रूचि नहीं है। अगर कोई एकादशी व्रत रखना चाहता है तो घरके लोग नाराज होते है। एकादशी व्रत का पालन बड़े-बुज़ुर्ग लोगोंको करना है, जवानों को तो खा-पीकर मौज करनी चाहिए। ऐसा गलत उपदेश दिया जाता है। श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज एकादशी तथा अन्य उत्सवों के वक्त व्रत रखने को आध्यात्मिक जीवनका महत्त्वपूर्ण अंग मानते है। वे कहते है, “यह सभी विधि-विधान हमारे महान आचार्यों ने उन लोगों के लिए बनाए है जो दिव्य जगत् में भगवानका संग पाने के इच्छुक है। महात्मागण इन सभी विधि-विधानों को मानते है, इसलिए उन्हें फल मिलता है।”
श्रील व्यासदेवजी ने पुराणों में अनेक स्थानोंपर एकादशी-व्रत का माहात्म्य वर्णन किया है। इस पुस्तक में अपरा एकादशी माहात्म्य का वर्णन कथारूप में किया गया है। कथा पढ़ने के बाद किसीको ऐसा प्रतीत हो कि इस पालन से भौतिक लाभ होता है, इसलिए यह व्रत केवल भौतिक लाभ हेतु हो। किंतु वैसा नहीं है,
जो वैष्णव है, उनके लिए यह सर्वश्रेष्ठ व्रत है। एकादशी भगवान् श्रीकृष्ण को अत्यंत प्रिय है, इसलिए उसको हरिवासर कहते है। उपवास शब्द का अर्थ है पास रहना। हमें भगवान् के निकट रहना है, तो उपवास करना आवश्यक है। इसीलिए एकादशी के दिन सभी इंद्रियतृप्ति के कार्यों से दूर रहकर भगवान् के नामस्मरण में अधिक-से-अधिक
समय बिताना चाहिए।
ब्रह्मवैवर्त पुराण में कहा गया है कि—
उपावृत्तस्य पापेभ्यो यस्तु वासो गुणैः सह।
उपवासः स विज्ञेयः सर्व भोग विवर्जितः॥
पापों से उत्तीर्ण होकर गुणों के सहित अवस्थिति को ही ‘उपवास’ कहा गया है।
किन्तु केवल भोजन वर्जन को उपवास नहीं कहा जाता है।
उपवास का मतलब सभी पापोंसे और इंद्रियतृप्ति के कार्योंसे दूर रहना।
निश्चित ही एकादशी व्रत के पालन से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इनकी प्राप्ति तो होती है, पर उसके साथ पंचम पुरूषार्थ भगवद्भक्ति अथवा कृष्णप्रेम भी प्राप्त होता है। श्री-हरिभक्ति-विलास नामक ग्रंथ में बताया गया है कि,

व्रतं नाम सर्व काम फल प्रदम्। सर्वदा विप्रैः विष्णु प्रीणनकारणम्॥
भगवान् श्रीविष्णु की प्रसन्नता के लिए ब्राह्मणों को एकादशी व्रतका पालन करना चाहिए। यह उनका कर्त्तव्य है। इसीलिए हर एक व्यक्तिको भगवान् की प्रसन्नता के लिए इस पालन करना चाहिए। भगवान् श्रीविष्णु के प्रसन्न होनेसे सुख और समृद्धि अपने
आप प्राप्त होती है। ॐ विष्णुपाद नित्यलीला प्रविष्ट सच्चिदानन्द भक्तिविनोद ठाकुर अपने एक गीत में लिखते है,
माधव तिथि भक्ति जननी यतने पालन करि।
“माधव तिथि (एकादशी) भक्तिको भी जन्म देने वाली हैं तथा इसमें कृष्णका
निवास हैं, ऐसा जानकर परम आदरपूर्वक इसको वरणकर यत्नपूर्वक पालन करता हूँ।”
संत शिरोमणि श्री तुकाराम महाराज कहते है,
ज्यासी नावडे एकादशी। तो जिताची नरकवासी॥
ज्यासी नावडे हे व्रत। त्यासी नरक तोहि भीत॥
ज्यासी घडे एकादशी। जाणे लागे विष्णुपाशी॥
तुका म्हणे पुण्यराशी। तोचि करी एकादशी॥
जिसे यह एकादशी अच्छी नहीं लगती, वो जीते जी नरक में रहनेवाला व्यक्ति
है। जिसे यह व्रत पसंद नहीं उससे नरक भी डरते है। क्योंकि वह व्यक्ति महापापी माना जाता है। जो एकादशी व्रतका पालन करता है, उसे निश्चित वैकुंठ प्राप्ति
होती है। इसीलिए तुकाराम महाराज कहते है जिसने पूर्वजन्मों में पुण्यों की
राशियां इकठ्ठी की है, वे ही केवल एकादशी व्रतका पालन करते है।
जया नाहीं नेम एकादशीव्रत। जाणावें तें प्रेत शव लोकीं॥
जो व्यक्ति एकादशी व्रत का अनुष्ठान नहीं करता हैं, वह व्यक्ति जीवित
होते हुए भी मृत के समान ही है।
श्री एकनाथ महाराज (श्री जनार्दन महाराज के शिष्य) कहते है—
एकादशी, एकादशी। जया छंद अहर्निशी॥
व्रत करी जो नेमाने। तेथे वैकुंठाचे पणे॥
नामस्मरण जाग्रण। वाचे गाय नारायण॥
तोचि भक्त सत्य याचा। एका जनार्दन म्हणे वाचा॥
जो भक्त को रात-दिन एकादशी तिथि के बारे में सोचता है और नित्य नियम के
साथ एकादशी पालन करता हैं, वह अवश्य वैकुंठ जायेगा। जो भक्त एकादशी के दिन जागरण हुए भगवान् श्रीहरि के नामों का स्मरण करता हैं, उन पवित्र नामों का गायन करता हैं, भगवान् का सच्चा भक्त हैं।
एकादशी को अन्नग्रहण करनेसे क्या होता है इसका वर्णन तुकाराम महाराज इस प्रकार करते है,
एकादशीस अन्न पान। जे नर करिती भोजन।
श्वानविष्ठेसमान। अधम जन तो एक॥
ऐका व्रताचें महिमान। नेमें आचरती जन।
गाती ऐकती हरिकिर्तन। ते समान विष्णूशी॥
अशुद्ध विटालशींचे खळ। विडा भक्षिंती तांबूल।
सांपडे सबळ। काळाहातीं न सुटे॥
शेज बाज विलास भोग। करि कामिनीशीं संग।
तया जोडे क्षयरोग। जन्मव्याधी बळिवंत॥
आपण न वजे हरिकिर्तन। आणिकां वारी जातां जन।
त्याच्या पापा जाणा। ठेंगणा महामेरु तो॥
तया दंडी यमदूत। झाले तयाचे अंकित।
तुका म्हणे व्रत। एकादशी चुकलीया॥
जो लोग एकादशी को अन्नग्रहण करते है, भोजन करते है वह बहुत ही पतित जीव
है। उन्हें अधम माना जाता है, क्योंकि वे जो भोजन करते है वह श्वान की विष्ठा

जैसा होता है। जो मनुष्य यह व्रत नहीं करता, उसे दंड देने के लिए यमदूत मौजूद हैं ही, वो नरकगामी बनता है। जो मनुष्य एकादशी को तांबूल (पान) खाता हैं, उसे स्त्री के मासिक स्त्राव में बहने वाले अशुद्ध खून पान करने का पाप लगता हैं।
जो मनुष्य एकादशी के दिन स्त्री-संग करता हैं, उसे क्षय (यक्ष्मा, टी.बी.) रोग होता है। उसे आजीवन रोग सताते ही रहेंगे। एकादशी के दिन पाप-पुरुष अन्न में वास करता है, इसलिए अन्नग्रहण नहीं करना चाहिए।

तुका म्हणे बरे व्रत एकादशी। केले उपवासी जागरण॥

श्री तुकाराम महाराज कहते हैं की एकादशी का उपवास और जागरण आत्मा के लिए परम उपादेय है।

छत्रपति श्री शिवाजी महाराज को उपदेश देते हुए संत श्रेष्ठ श्री तुकाराम महाराज कहते हैं—

आम्ही तेणे सुखी। म्हणा विठ्ठल विठ्ठल मुखि॥
तुमचे येर वित्त धन। जे मज मृत्तिके समान॥
कंठी मिरवा तुळशी। व्रत करा एकदशी॥
म्हणावा हरिचे दास। तुका म्हणे मज हे आस॥

“अहो, शिवाजी महाराज, आप अपने मुंह से 'विट्ठल विट्ठल' कहिए, तो हमें खुशी होगी।आप की धन-संपत्ति हमें मिट्टी के समान तुच्छ लगती है। गले में तुलसी की माला धारण करिए। इस तुलसी की माला को अमूल्य आभूषण की तरह प्रदर्शित करते हुए लोगों के बीच गर्वपूर्वक विहार करें और एकादशी के व्रत का पालन करें। अपने आप को हरि का दास कहलाईये, बस यही मेरी एकमेव इच्छा है।”

पद्मपुराणमें ऐसा बताया है कि—

पापानि देहेऽस्मिन् तिष्ठन्ति मनुजाधिप।
यावन्नोपवसेज्जन्तुः पद्मनाभदिनं शुभम्॥
अश्वमेधसहस्त्राणि राजसूयशतानि च।
एकादश्युपवासस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥

राजन्! जब तक कमलनाभ श्रीहरि के पवित्र वासर एकादशी में उपवासी न रहा जाय, तब तक ही शरीर में पापसमूह का अधिष्ठान रहता है। बहु सहस्र अश्वमेध यज्ञ एवं शत वाजपेय यज्ञ भी एकादशी उपवास के षोडशांश के एकांश के समान नहीं है। अर्थात् सहस्र अश्वमेध यज्ञ और सैंकड़ो राजसूय यज्ञ इनको एकादशीके उपवास की सोलहवीं कला छह (६) प्रतिशत इतना भी महत्त्व नहीं है।

स्वर्गमोक्षप्रदा ह्येषा शरीरारोग्यदायिनी।
सुकलत्रप्रदा ह्येषा जीवत्पुत्रप्रदायिनी॥
न गंगा न गया भूप न काशी न च पुष्करम्।
न चापि वैष्णवं क्षेत्रं तुल्यं हरिदिनेन च॥

एकादशी ये स्वर्ग, मोक्ष, आरोग्य, अच्छी पत्नी और अच्छा पुत्र प्रदान करती हैं। गंगा, गया, काशी, पुष्कर और अन्यान्य सभी वैष्णव क्षेत्र—इनमें से कोई भी एकादशी की बराबरी नहीं कर सकता है।

जो मनुष्य अपना हित चाहता हो, उसे निम्नलिखित अन्न का एकादशी के दिन त्याग करना चाहिए।

१) चावल, तथा उससे बने पदार्थ, २) गेहूँ, ज्वार, मक्का इनसे बने हुए पदार्थ, ३) दाल-मूँग, मसूर, अरहर (तुअर), चना, मटर इत्यादि, ४) जौं, ५) राई और तिलका तेल ६) श्यामा चावल, साबूदाना, चाय एवं कॉफी।

भूल से भी इन पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए। अन्यथा व्रत भंग होता है। भक्ति में प्रगति करने के इच्छुक व्यक्ति को इनका पालन करना चाहिए। एक ही दिन दो तिथि (दशमी और एकादशी) आती हो तो वैष्णव उस दिन का व्रत अथवा उत्सव दूसरे दिन करते है। इसलिए हम स्मार्त और भागवत यह दो एकादशी देखते हैं।
हरिभक्तिविलास इस ग्रंथ में कहा गया है—“हे ब्राह्मण, सूर्योदय से पूर्व ९६ मिनट के पहले एकादशी शुरू होती है, उस एकादशी को शुद्ध एकादशी कहना चाहिए।”

गृहस्थों को इस एकादशी का पालन करना चाहिए। एकादशी करनेवाले या करने की इच्छा होनेवाले हर एक व्यक्तिको इस ग्रंथ को ध्यानपूर्वक पढना चाहिए। —त्रिदण्डिस्वामी भक्तिवेदान्त दंडी महाराज

श्रीपाद भक्तिवेदान्त दंडी महाराज की शैक्षिक पृष्ठभूमि में निम्नलिखित शामिल है:
— बैंगलोर विश्वविद्यालय से बी.एससी. (सम्मान)
— इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, बैंगलोर से बी.ई. (इलेक्ट्रॉनिक्स और संचार
इंजीनियरिंग)
— इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, मद्रास से एम.एस. (बायो इंजीनियरिंग)
— वाशिंगटन यूनिवर्सिटी, सेंट लुइस, मिसौरी, यूएसए से डॉक्टर ऑफ साइंस
(इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग)

उनके पेशेवर प्रमाणपत्र में शामिल हैं:
— पेशेवर इंजीनियर (इलेक्ट्रिकल)
— सर्टीफाइड इनफॉर्मेशन सिस्टम्स सिक्योरिटी प्रोफेशनल (सीआईएसएसपी)
— सन सर्टीफाइड सिस्टम एडमिनिस्ट्रेटर (एससीए)
— माइक्रोसॉफ्ट सर्टीफाइड सिस्टम्स इंजीनियर (एमसीएसई)
— सिस्को सर्टीफाइड नेटवर्क एसोशिएट (सीसीएनए)
— सर्टीफाइड बिजनेस मैनेजर (सीबीएम)

महाराज ने आरसीए, जीई, यूएस आर्मी कॉर्प्स ऑफ इंजीनियर्स के साथ काम किया है, और सिटी यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क में पढ़ाया है। उनके पास तीन यूएस पेटेंट्स हैं।

संत श्री तुकाराम महाराज संत श्री एकनाथ महाराज

निवेदन

(श्री एकादशी -व्रतकथा ग्रंथ में प्रकाशित)

श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति से श्रीएकादशी -व्रतकथा -नामक ग्रन्थ सप्तम संस्करण के रूप में प्रकाशित हुआ हैं। विभिन्न पुराणों एवं वैष्णव -स्मृतिराज श्रीहरिभक्तिविलास आदि ग्रन्थों से यह संकलित हुआ हैं। श्री गौड़ीय वेदान्त समिति से प्र 'श्रीचैतन्य पंजिका ' के पुनः प्रवर्त्तक नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीमद् भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज जी ने स्व -लिखित भूमिकाओं में , श्रीचैतन्य -पंजिका के आदर्श -स्वरूप —जगद्गुरु श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद जी की विचारधारा से संवलित "गौड़ीयेर कृत्य " (भागवत धर्म) शीर्षक से उनके स्व -हस्त -लिखित कुछेक उपदेश मुद्रित किये हैं। उसमें संख्यापूर्वक नाम ग्रहण सहित 'एकादशी ' आदि हरिवासर व्रत पालन ' के संबंध में विशेष निर्देश प्रदत्त हुआ है। चौसठ प्रकार के भक्त्यांगों मे भी एकादशी व्रत पालन का विषय उल्लिखित हुआ है। अतः भक्ति लाभ करने के लिए सभी लोगों के द्वारा इस एकादशी या हरिव्रत पालन का नित्यत्व और उपयोगिता स्वीकृत हुई है।

पुराण आदि में उल्लिखित हुआ हैं कि ,—परमवल्लभा एकादशी तिथि मनुष्य मात्र के लिए ही सर्वाभीष्ट प्रदायिनी है। क्या शुक्ला , क्या कृष्णा , दोनों पक्षों की ही एकादशी तिथि के दिन पूजा -महोत्सव आदि अनुष्ठान करना कर्त्तव्य है। इस व्रत का पालन करने से सभी पाप -ध्वंस , सर्वार्थ -प्राप्ति और श्रीकृष्ण का होता है। भगवान् का प्रीतिविधान , विधि -प्राप्तत्व , भोजन की निषिद्धता और व्रत न करने के कारण दोष —इन चार कारणों से उक्त व्रत का नित्यत्व प्रसिद्ध है। एकादशी का व्रत श्रीहरि को सबसे अधिक प्रिय है। ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , शूद्र , नारी -पुरुष जो भी भक्तिपूर्वक एकादशी व्रत पालन करेंगे , वे मोक्ष और -सान्निध्य प्राप्त कर सकते हैं।

सभी के लिए एकादशी में उपवासी रहकर उक्त व्रत पालन करना अति आवश्यक है। उपवास -फलेच्छु व्यक्ति एक दिन पहले रात्रि भोजन , उपवास के दूसरे दिन रात्रि भोजन एवं उपवास के दिन और रात में भोजन को परित्याग करेंगे। हरिवासर (उपवास) के दिन ब्रह्म -हत्या आदि समस्त पाप अन्न में प्रवेश कर जाते हैं , अतः इस समय पंचशस्य (जौ , धान , राई , उड़द-दाल , तिल आदि) भोजन करने से सभी प्रकार के पापों को ही ग्रहण करना होता है एवं मातृघाती , पितृघाती , भ्रातृघाती और गुरुघाती पापी कहकर उसकी गणना होती है। ब्रह्मचारी , गृहस्थ , वानप्रस्थ और यतियों (त्रिदण्डि -संन्यासियों) के द्वारा एकादशी के दिन भोजन करने से गोमांस का भोजन करने के समान होता हैं। ब्रह्मघाती , सुरापायी , चोर आदि के लिए मुक्ति का विधान है , किन्तु एकादशी में अन्न भोजन करने वाले की रक्षा के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। एकादशी में अन्न ग्रहण करने वाला व्यक्ति पितरों सहित नरकगामी होता है। हरिवासर तिथि में किसी को भोजन के लिए अनुरोध करना भी अन्याय है।

जो विधवा स्त्री एकादशी के दिन अन्नादि ग्रहण करती है , उसकी सारी सुकृति नष्ट हो जाती है एवं सर्ववर्णी , सर्वाश्रमी , विधवा , यति , सती की भी 'अन्धतामिश्र ' नामक नरक में दुर्गति होती है। भक्तियुक्त होकर पुत्र -पत्नी और के साथ दोनों पक्षों की एकादशी में उपवास करने से भगवद् -भक्ति और परम पद प्राप्त होता है। घोर विपत्ति या जनन और मरणाशुचि में भी एकादशी व्रत का त्याग नहीं करना चाहिए। एकादशी के दिन नैमित्तिक श्राद्ध आने पर उपवासी रहकर द्वादशी को श्राद्ध करना चाहिए। उपवास के दिन कभी भी श्राद्ध नहीं करना चाहिए , क्योंकि उस दिन देवता और पितृगण निन्दित -अन्न का भोजन नहीं करते। एकादशी के दिन श्राद्ध करने से दाता , भोक्ता और विगत आत्मा तीनों को ही नरक में जाना पड़ता है। आठ वर्ष की आयु से अस्सी वर्ष की आयु तक शुक्ल और कृष्ण —दोनों पक्षों की एकादशी में उपवास करना अबला -वृद्ध -वनिता सभी मनुष्यों का कर्त्तव्य है। वैष्णव , शैव , सौर आदि सभी मनुष्यों का कर्त्तव्य है। वैष्णव , शैव , सौर आदि

सभी को ही हरिवासर-व्रत पालन करना चाहिए। शिवजी महाराज ने पार्वती देवी से कहा है,—मेरे भक्ति-बल का आश्रय लेकर हरिवासर में अन्नादि भोजन करनेवाले दुष्ट पातकी को मेरा अप्रियकर समझना। पति-पत्नी दोनों अथवा पत्नी यदि पति के उद्देश्य से एकादशी-व्रत का पालन करे तो वह सौगुना पुण्य की भागिनी होती है। बालक, वृद्ध, आतुर, रोग-ग्रस्त, असमर्थ व्यक्ति रात में मात्र एकबार भोजन२ अथवा दूध-फल-मूल भोजन करके एकादशी-तिथि का पालन करेंगे
शिशुओं की रक्षा के लिए माता की तरह एवं रोगियों के परित्राण के लिए औषधि
की तरह सभी जीवों की रक्षा के लिए एकादशी तिथि आविर्भूत हुई हैं। नाना प्रकार के दुःखों से भरे संसार में दुर्लभ मनुष्य जन्म प्राप्त कर जो एकादशी व्रतानुष्ठान करते हैं, वे धन्य है, वे बुद्धिमान है। एकादशी-व्रत को छोड़कर अन्य व्रत करने से हाथ में आई मणि छोड़कर लोष्ट्र (मिट्टी) की ही प्रार्थना करने के समान हो जाता है। केवल मात्र एकादशी में उपवास कर जनार्दन की भक्तिपूर्वक पूजा करने से दुःखपूर्ण संसार से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। संसार रूपी सर्प द्वारा दष्ट (काटे हुए) सभी पापी मनुष्य एकादशी उपवास के द्वारा ही परम सुख-शान्ति प्राप्त करते है। एकादशी में अन्न के अभाव से उपवासी रहने या राजगृह में बन्दी रहने की अवस्था में एकादशी उपवास करने से भी सम्यक् उपवास का फल प्राप्त हो जाता है। गोविन्द का स्मरण और एकादशी में उपवास—यह दोनों ही निःसंदेह मनुष्य के लिए प्रायश्चित स्वरूप और संसार से उद्धार करने वाले हैं। जो सभी सुख-धर्म-गुणों के आश्रय जगत्पति के अत्यन्त प्रिय और सभी धर्मों में श्रेष्ठ, एकादशी-व्रत का श्रद्धापूर्वक पालन करते हैं, वे वैकुण्ठ गति लाभ करते हैं। एकादशी-व्रतकथा श्रवण करने से, इसका अनुष्ठान करने से, इसके अनुष्ठान की अनुमति देने से अथवा व्रत पालन के लिए मनुष्यों के हृदय में श्रद्धा उत्पन्न कराने से सभी पापों से परित्राण और अति उत्तम गति प्राप्त होती है। हरिवासर को छोड़कर दान, तपस्या, तीर्थ-स्थान या अन्य किसी प्रकार का पुण्य मुक्ति का कारण नहीं होता। एकादशी-व्रत परायण व्यक्ति सर्वत्र पूज्य होते हैं; रोग, उपसर्ग, दाह, ग्लानि और कातरता से उनको भय की संभावना नहीं रहती एवं सर्वदा उनके चित्त में श्रीहरि की स्मृति बनी रहती है; उन लोगों की नित्य हरिकथा में रुचि और नित्य-धर्म में मति रहती हैं एवं श्रीकृष्ण के प्रति अतिशय अमला भक्ति प्राप्त होती है। एकादशी—पुण्य-स्वरूपिणी, सर्वपाप-विनाशिनी, विष्णु-भक्ति-उद्दीपनी और परमार्थ-गति-प्रदायिनी हैं। जगदीश्वर एकादशी में ही मूर्तिमान होकर विराजमान हैं। जो विष्णुमयी-शक्ति अनन्तस्वरूपा और पूरे जगत में व्याप्त होकर अवस्थित हैं, वे ही सभी प्रकार का मंगल प्रदान करने वाली एकादशी-तिथि हैं।
अरुणोदय-विद्धा या दशमी-विद्धा एकादशी का विशेष रूप से त्याग करते हुए शुद्ध एकादशी व्रत का पालन करना कर्त्तव्य है। तीनों लोकों में जितने पाप विद्यमान हैं, दशमी-संयुक्त एकादशी को उन पापों का स्थान कहा गया है। राक्षस और असुर दशमी-संयुक्त एकादशी का आश्रय लेते हैं, और द्वादशी-युक्त एकादशी को उपवासी वाले व्यक्ति को भगवान् वांछित फल प्रदान करते हैं। दशमी-विद्धा एकादशी को हरिवासर नहीं माना जाता है। यहाँ पर द्वादशी में उपवास और त्रयोदशी को पारण करने की विधी है। जगद्गुरु श्रील भक्तिविनोद ठाकुर जी ने गाया है, —”माधव-तिथि भक्ति जननी, यतने पालन करि।” ‘यतने पालन करि’, यहाँ ‘विद्धा का परित्याग करते हुए, व्रत पालन करने का उपदेश दिया गया है।’ ग्रन्थ के अन्त में विद्धा के सम्बन्ध में संक्षिप्त विचार प्रदर्शित हुआ है। एकादशी विभिन्न नामों से कथित है एवं अष्ट-महाद्वादशियाँ भी अलग-अलग नामों से प्रसिद्ध हैं। इन सब विषयों का इस ग्रंथ में सम्पूर्ण इतिहास एवं वृत्तान्त सहित विश्लेषण हुआ है। यह ग्रन्थ एकादशी-व्रत पालन करने वालों के लिए यथेष्ट सहायक होगा, इसमें सन्देह नहीं है। इस संस्करण के परिशिष्ट अंश में “अष्ट-महाद्वादशी” निरूपण, व्रत-कृत्य सूचक कीर्तन, माहात्म्य आदि संयोजन तथा ग्रन्थ के पूर्वनिबन्ध में अधिकतर ज्ञान का

पथ प्रशस्त किया गया है। व्रतपालनकारी और पाठक-पाठिका एवं श्रोतृवर्ग के द्वारा भगवद्-भक्ति लाभ करने से हम सबकी सेवा-प्रचेष्टा सार्थक होगी। अधिक क्या, असावधानीवश कुछ त्रुटि रहने से पाठकवर्ग निजगुणों से संशोधन कर लेंगे, यही अनुरोध है। अलमतिविस्तरेण—

पापांकुशा एकादशी
२६ पद्मनाभ, ५१८ गौराब्द
७ कार्तिक. १४११ बंगाब्द. २४-१०-२००४.

त्रिदण्डिभिक्षु
श्रीभक्तिवेदान्त वामन

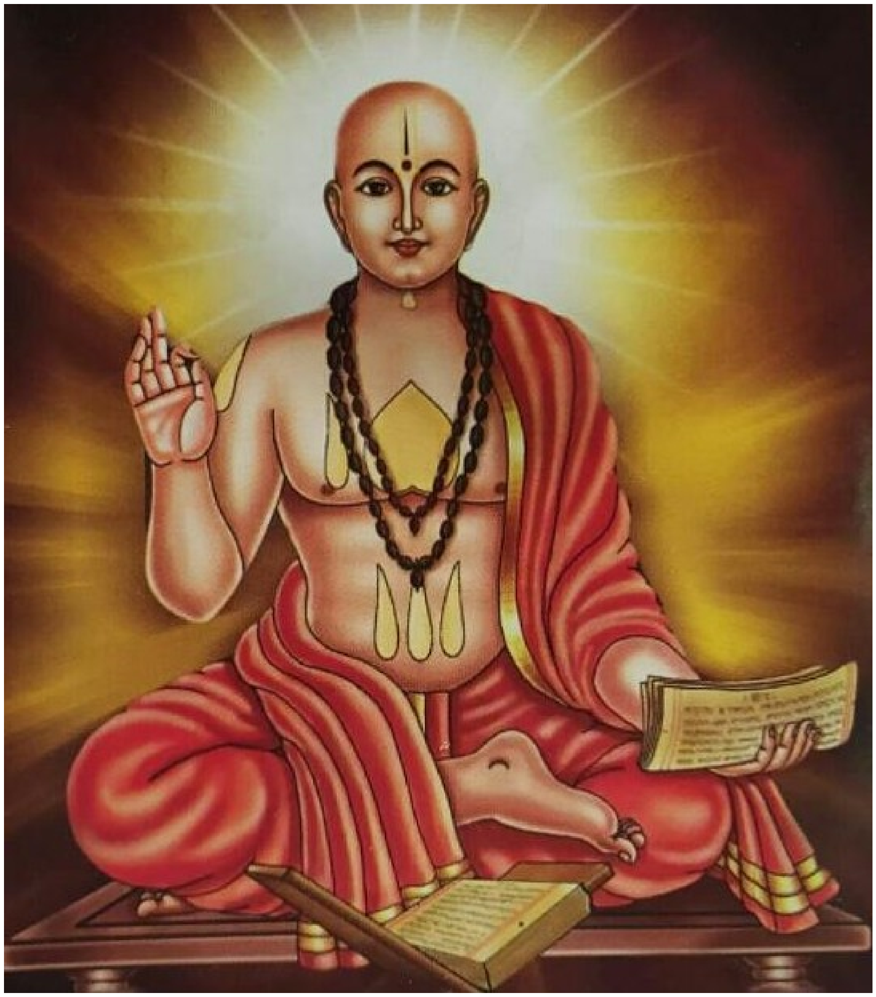

श्रीमन्मध्वाचार्य के एकादशी संबन्धित विचार स्मार्त्तमत खण्डन—
श्वदृतो पञ्चगव्यञ्च दशम्या दुषितां त्यजेत्। एकादशीं द्विजश्रेष्ठाः पक्षयोरुभयोरपि॥
(कृष्णामृतमहार्णव १२९)
श्रेष्ठ ब्राह्मणगण कुत्तेके चर्मसे बने पात्रमें रखे पञ्चगव्यके त्यागकी दोनों पक्षकी दशमी विद्धा एकादशीका परित्याग करेंगे। अर्थात् पण्डित-श्रेष्ठों! कुत्ते की चमड़ी में रखे पंचगव्य को जिस प्रकार से छोड़ते है, उसी प्रकार शुक्ल और कृष्ण दोनों पक्षों में भी दशमी से विद्ध होने के कारण अपवित्र की गयी एकादशी तिथि को छोड़ना चाहिए (उस दिन उपवास नहीं करना चाहिए)।
अथवा मोहनार्थाय मोहिन्या भगवान् हरिः।
अर्थितः कारयामास व्यासरूपी जनार्द्दनः॥
धनदार्चाविवृद्ध्यर्थं महावित्तलयस्य च।
असुराणां मोहनार्थं पाषण्डानां विवृद्धये॥
आत्मस्वरूपाविज्ञप्त्यै स्वलोकाप्राप्तये तथा।
एवं विद्धां परित्यज्य द्वादश्यामुपवासयेत्॥
(कृष्णामृतमहार्णव १५०-१५२)
अथवा व्यासरूपी भगवान् जनार्दन श्रीहरिने रुक्माङ्गद राजा की पत्नी मोहिनीके द्वारा प्रार्थना किये जानेपर कामी लोगोंको मोहित करनेके लिए, धनकी

आकांक्षासे अर्चनकी वृद्धिके लिए, परमार्थको लुप्त करनेके लिए, असुरोंको मोहन करनेके लिए, पाषण्डी लोगोंकी वृद्धिके लिए, अपने आत्मस्वरूपको न जनानेके अभिप्रायसे और जिससे विष्णु-लोककी प्राप्ति न हो सके—इसलिए ऐसा विधान करवाया था विद्धोपवास-परक-वाक्यों को बनवाया है। अतएव इस प्रकारकी विद्धा एकादशीको परित्यागकर द्वादशीमें उपवास करना चाहिये।
वरं स्वमातृगमनं वरं गोमांसभक्षणम्। वरं हत्या सुरापानमेकादश्यन्नभक्षणात्॥
(कृष्णामृतमहार्णव १७८)
एकादशीमें अन्न भोजन करना स्व-मातृगमन, गोमांस-भक्षण, सुरापान इत्यादि
भी अधिक निन्दनीय है। अर्थात् एकादशी के दिन अन्न खाने से अपनी माता से भोग करना श्रेष्ठ है, गाय का मांस खाना श्रेष्ठ है, लोगों को मारना श्रेष्ठ है और मदिरा पीना श्रेष्ठ है।
एकादशीदिने प्राप्ते भुञ्जते ये नराधमाः। अवलोक्य मुखं तेषामादित्यमवलोकयेत्॥
(कृष्णामृतमहार्णव १७९)
जो हीन पुरुष अत्यन्त पवित्र एकादशी के दिन में भोजन करते हैं, उन लोगों
का मुख-दर्शन करनेपर सूर्य को देखना चाहिए।
यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यादिकानि च।
अन्नमाश्रित्य तिष्ठन्ति संप्राप्ते हरिवासरे॥
(कृष्णामृतमहार्णव १८०)
धरती में ब्राह्मणों को मारना इत्यादि जो पाप परिगणित हैं, वे सब पाप एकादशी दिन आते ही अन्न में आश्रित होकर रहते हैं।
व्याख्या—इस धरतीपर जितने भी पापों की परिगणना की गयी है, वे सभी पाप एकादशी के दिन अन्न में ही रहते हैं। अतः एकादशी के दिन भोजन करनेवाला ब्रह्म-हत्या-पाप, गो-हनन-पाप (गाय को मारने का पाप), चौर्य (चोरी करने) का पाप, अपने गुरूजी की पत्नी के साथ भोग करने का पाप— ये सभी पापों को प्राप्त करता हैं। इतना ही नहीं, किन्तु उस से भी अधिक पाप प्राप्त करता है। ब्राह्मणों को मारना, अपनी माता से संभोग करना, अथवा गोमांस को खाना, मदिरा पीना, चुराना इत्यादि दुष्कार्यों से जो पाप होता है, वह पाप एकादशी के दिन अन्न खाने से होने वाले पाप से कम ही है। एकादशी के दिन भोजन करनेवाले लोगों के मुख देखकर प्रायश्चित्त हेतु सूर्य को देखना चाहिए।
शंकरः-
रटन्तीह पुराणानि भूयो भूयो वरानने।
न भोक्तव्यं न भोक्तव्यं संप्राप्ते हरिवासरे॥
(कृष्णामृतमहार्णव १८४)
श्री शंकर जी कहते है—हे पार्वती-देवी! ‘एकादशी के दिन प्राप्त होने पर भोजन नहीं करना चाहिए, भोजन नहीं करना चाहिए’—इस प्रकार बहुत सारे पुराण-वाक्य एकादशी के विषय में बोल रहे हैं।
द्वादशी न प्रमोक्तव्या यावदायुः प्रवर्तते।
अर्चनीयो हृषीकेशो विशुद्धेनान्तरात्मना॥
(कृष्णामृतमहार्णव १८५)
जब तक हमारा जीवन चलता रहता है तब तक एकादशी का उपवास तथा द्वादशी का पारण छोडना चाहिए। विशुद्ध मन से भगवान् कृष्ण का अर्चन करना चाहिए।
दशमीमेषसंयुक्ता गान्धार्या समुपोषिता।
तस्याः पुत्रशतं नष्टं तस्मात्तां परिवर्जयेत्॥
(कृष्णामृतमहार्णव १४१)

गान्धारी ने अरुणोदय काल में दशमी के कुछ अंशों से संयुक्त एकादशी के
दिन उपवास किया था। इस कारण से उनके सौ पुत्र नष्ट हो गये थे। दशमी-विद्धा एकादशी को छोडना चाहिए।
व्याख्या—अरुणोदय काल में दशमी-तिथि से युक्त एकादशी के दिन गान्धारी
ने उपवास किया था। अतः उनके सौ पुत्र युद्ध में मर गये। इस लिये अरुणोदय काल में तीन घटिका तक दशमी से संयुक्त संदिग्धैकादशी तथा दो घटिका तक दशमी से संयुक्त संकीर्णैकादशी के दिन उपवास नहीं करना चाहिए। किन्तु उसके बाद द्वादशी दिन उपवास कर त्रयोदशी के दिन पारण करना चाहिए। पारण शब्द का अर्थ हैं — “उपवास के बाद किये जानेवाला भोजन।”
यथा गौर्नैव हन्तव्या शुक्ला कृष्णेति भामिनी।
एकादश्यां न भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि॥
(कृष्णामृतमहार्णव १५९)
श्री शंकरजी ने कहा—हे पार्वती देवी! जिस प्रकार सफेद गाय को मारना नहीं चाहिए, उसी प्रकार काली गाय को भी मारना नहीं चाहिए। उसी प्रकार शुक्ल-कृष्ण भेद न करते दोनों भी पक्षों में एकादशी के दिन भोजन नहीं करना चाहिए।
एकादशीसमुत्थेन वह्निना पातकेन्धनम्। भस्मीभवति राजेन्द्र अपि जन्मशतोद्भवम्॥
(कृष्णामृतमहार्णव १७२)
हे राजन्! एकादशी उपवास से उत्पन्न पुण्याग्नि से एक सौ जन्मों में किया
गया पापरूपी इन्धन भी भस्म हो जाता है।
तावत्पापानि देहेऽस्मिन् तिष्ठन्ति मनुजाधिप।
यावन्नोपोषयेज्जन्तुः पद्मनाभदिनं शुभम्॥
(कृष्णामृतमहार्णव १७४)
हे राजन्! मनुष्य जब तक अत्यन्त पावन एकादशी के दिन उपवास नहीं करता है,
तब तक इस देह में पाप रहते हैं।
एकादशेन्द्रियैः पापं यत्कृतं भविति प्रभो।
एकादश्युपवासेन तत्सर्वं विलयं व्रजेत्॥
(कृष्णामृतमहार्णव १७५)
हे राजन्! ग्यारह इन्द्रियों से जो पाप किया हुआ रहता है, वह सब पाप एकादशी उपवास से नष्ट हो जाता है।

एकादशी के विषय में शास्त्र एवं आचार्यों के विचार
एकादशी व्रत करने से श्रीविष्णु में प्रीति होती हैं, इसलिये इसका दूसरा
नाम ‘हरिवासर’ है। अन्य अन्य सकाम व्रत करने से उनका फल तो प्राप्त होता है किन्तु न करने से कोई अपराध या पाप भी नहीं होता। एकादशी व्रत का फल है— श्रीकृष्णभक्ति की प्राप्ति। अतः एकादशी न करने से अपराध तो होता ही है साथ ही व्रत का फल श्रीकृष्णभक्ति का हृदय में आविर्भाव नहीं होता।
श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने कहा है—
माधव तिथि भक्ति जननी यतने पालन करि।
कृष्ण वसति, वसति बलि परम आदर वरि॥
माधव तिथि (एकादशी) भक्ति को जन्म देने वाली है, इस तिथि में श्रीकृष्ण का साक्षात निवास है, ऐसा जानकर मैं परम आदरपूर्वक इस तिथि को वरण कर प्रयत्नपूर्वक इसका पालन करता हूँ।
“श्रीकृष्ण के लिये एकादशी तिथि जन्माष्टमी से भी श्रेष्ठ है। परम करूणामय श्रीकृष्ण स्वयं माधव तिथि अर्थात् एकादशी के स्वरूप में मूर्तिमान होकर इस जगत में विराजित हैं। अनन्त स्वरूपा विष्णुमयी शक्ति समस्त जीवों के लिये सभी प्रकार का मंगल विधान करने के उद्देश्य से परम शुभ एकादशी तिथि के रूप में प्रकटित हैं।”
(श्रील गुरुदेव के प्रवचन से उद्धृत)
व्रतोपवास का वास्तविक उद्देश्य श्री भगवान् के प्रति प्रेमभक्ति प्राप्त करना है, यथा—
”शुद्ध भक्तों के संग इस व्रत का आचरण करने से धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष रूपी चतुर्वर्ग के प्रति तुच्छ बुद्धि जाग्रत होकर श्रीकृष्ण के प्रति श्रवणादि रूप प्रेमलक्षणा विशुद्ध भक्ति प्राप्त होती है।”
(स्कन्द पुराण)
”समस्त प्रकार के भोग और सिद्धियाँ हरिभक्ति-रूपा एकादशी महादेवी के पीछे सदा दासी की भाँति अनुगमन करती हैं।”
(नारद पंचरात्र)
ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणाञ्चैव योषिताम्।
मोक्षदं कुर्व्वतां भक्त्या विष्णोः प्रियतरं द्विज॥
नाम सर्व्वकामफलप्रदम्।
सर्व्वदा विप्रैर्विष्णुप्रीणनकारणम्॥
(श्रीहरिभक्ति विलास १२-७,८)
समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला एकादशी व्रत केवल श्रीकृष्ण के प्रीति
के लिए ही पालन करना कर्त्तव्य है। बृहन्नारदीय पुराण के एकादशी माहात्म्य में लिखित है—हे द्विजवृन्द! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, नारी,—जो कोई क्यों न हो, भक्तिपूर्वक श्रीविष्णु (श्रीकृष्ण) प्रीतिप्रद एकादशी व्रत पालन करने से मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। एकादशी व्रत सर्व कामप्रद हैं। श्रीविष्णु (श्रीकृष्ण) तोषण के निमित्त इस व्रत का पालन करना ब्राह्मणों का एकान्त कर्त्तव्य है।

एकादशी व्रत तालिका

मास का नाम	पक्ष का नाम	एकादशी का नाम
वैशाख	कृष्ण	वरूथिनी
वैशाख	शुक्ल	मोहिनी
ज्येष्ठ	कृष्ण	अपरा
ज्येष्ठ	शुक्ल	निर्जला
आषाढ़	कृष्ण	योगिनी
आषाढ़	शुक्ल	शयनी
श्रावण	कृष्ण	कामिका
श्रावण	शुक्ल	पवित्रारोपणी
भाद्र	कृष्ण	अन्नदा
भाद्र	शुक्ल	पार्श्वैकादशी
आश्विन	कृष्ण	इन्दिरा
आश्विन	शुक्ल	पापांकुशा या पाशांकुशा
कार्तिक	कृष्ण	रमा
कार्तिक	शुक्ल	उत्थान या प्रबोधिनी
अग्रहायण	कृष्ण	उत्पन्ना
अग्रहायण	शुक्ल	मोक्षदा
पौष	कृष्ण	सफला
पौष	शुक्ल	पुत्रदा
माघ	कृष्ण	
माघ	शुक्ल	भैमी
फाल्गुन	कृष्ण	विजया
फाल्गुन	शुक्ल	आमलकी
चैत्र	कृष्ण	पापमोचनी
चैत्र	शुक्ल	कामदा
पुरुषोत्तम मास	कृष्ण	कमला
पुरुषोत्तम मास	शुक्ल	कामदा

महाद्वादशी
उन्मीलनी व्यंजुली च त्रिस्पृशा पक्षवर्द्धिनी।
जया च विजया चैव जयन्ती पापनाशिनी॥
द्वादश्योऽष्टौ महापुण्याः सर्व्वपापहरा द्विज।
तिथियोगेन जायन्ते चतस्रश्चापरास्तथा।
नक्षत्रयोगाच्च बलात् पापं प्रशमयन्ति ताः॥
(हरिभक्तिविलास १३/२६५-२६६)
श्रीब्रह्मवैवर्त्त पुराण के श्रीसूत-शौनक-संवाद में लिखित है—हे द्विज—(१) उन्मीलनी, (२) व्यंजुली, (३) त्रिस्पृशा, (४) पक्षवर्द्धिनी, (५) जया,
(६) विजया, (७) जयन्ती और (८) पापनाशनी—यह अष्ट द्वादशियाँ महापवित्रा (महा पुण्यस्वरूपा) और निखिल पाप का हरण करने वाली (पापहरा) हैं। उनमें प्रथम चार,— अर्थात् एकादशी द्वादशी के विशेष योग से, तथा अन्य चार, —विशेष नक्षत्र योग उपस्थित होने पर उत्पन्न होती हैं।
जया च विजया चैव जयन्ती पापनाशिनी। सर्व्वपापहरा ह्येता: कर्त्तव्या: फलकाङ्क्षिभिः॥
ब्रह्मपुराण के वशिष्ठ-मान्धातृ-संवाद में लिखित है—जया, विजया, जयन्ती
एवं पापनाशिनी, यह कई द्वादशीयाँ, सब पापों को विदूरित करती हैं। सुतरां उक्त फल की आकांक्षा करने वाले पुरुष को इन सब दिनों में व्रत करना चाहिये।

अथाष्ट-महाद्वादशी-
द्वादश्योऽष्टौ समाख्याता या: पुराणविचक्षणैः।
च हता हन्ति पुण्य पुराकृतम्॥
में लिखित है—पुराण शास्त्रवित् सुधीवृन्द कर्त्तृक जो अष्टमहाद्वादशी वर्णित हैं, उनमें एक को परित्याग करने पर भी, द्वादशी वर्ज्जनकारी का पूर्व सञ्चित पुण्य विनष्ट होता है।
पाद्मे मार्कण्डेयपुराणे च श्रीभगवदुक्तौ—
न करिष्यन्ति ये लोके द्वादश्यौऽष्टौ ममाज्ञया। यमपुरे वासो यावदाहुतसंप्लवम्॥
पद्मपुराण एवं मार्कण्डेय पुराण की भगवदुक्ति में प्रकाशित है—जो मानव, जगत् में आकर अष्ट महाद्वादशी व्रत का अनुष्ठान नहीं करता है, मेरी आज्ञा से महाप्रलय पर्यंत उसको यमपुरी में वास करना पड़ता है।
इस प्रकार हम देखते हैं कि एक ओर एकादशी व्रत पालन श्रीहरि को प्रिय है और उनकी भक्ति को जन्म देने वाली है। दूसरी ओर एकादशी के दिन समस्त प्रकार के भयंकर पाप अनाज में आश्रय करके अवस्थान करते हैं। इसलिये उस दिन अन्न ग्रहण करना पाप ग्रहण करने के समान है।

एकादशी के दिन अन्न-प्रसाद क्यों न स्वीकार करें?
अब पूर्व पक्ष उठाते हैं कि वैष्णव तो केवल श्रीकृष्ण निवेदित महाप्रसाद
ही ग्रहण करते हैं। महाप्रसाद समस्त प्रकार के पापोंसे निर्मुक्त तथा विशुद्ध होता है तो उसे ग्रहण करने में क्या हानि है? उत्तर में कहते है कि श्रीकृष्ण प्रीतिलाभ करना ही एकादशी व्रत का मुख्य उद्देश्य है और वैष्णवों का भी यही उद्देश्य है। पाप का भक्षण हुआ या नहीं हुआ ऐसी चिन्ता करने से अपने अमंगल या सुख-दुख की भावना करना एक वैष्णव का कर्त्तव्य नहीं है। वैष्णव का कर्त्तव्य समस्त कृत्यों में श्रीकृष्ण की प्रीति को लक्ष्य करना है अपने मंगल-अमंगल को नहीं। इस विषय में श्री चैतन्य महाप्रभु ने एक आदर्श प्रस्तुत किया है। महाप्रभु महाप्रसाद को श्रीकृष्ण का साक्षात अधरामृत जानकर विशेष प्रीतिपूर्वक ग्रहण करते थे। कहते थे—महाप्रसाद प्राप्त होते ही तुरन्त उसका सेवन करो।
उदाहरण के लिए, सहजियों के एक वर्ग का कहना है कि पुरी में कोई एकादशी नहीं है। वे कहते हैं कि जब महाप्रभु पुरी में रहते थे, उन्होंने एकादशी का पालन नहीं किया क्योंकि श्री चैतन्य-चरितामृत में वे हमेशा महाप्रसाद लेते हुए पाए जाते हैं। वे कहते हैं कि पुरी में एकादशी पर भी हमें उपवास नहीं करना चाहिए क्योंकि वहाँ हमेशा महाप्रसाद उपलब्ध है, और वहाँ महाप्रसाद को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।
हालाँकि, श्रीजगदानंद पंडित के ‘प्रेम-विवर्त’ ग्रंथ में स्पष्ट रूप से
कहा गया है कि जब महाप्रभु के आगे एकादशी के दिन महाप्रसाद प्रस्तुत किया गया था, तो उन्होंने अपने सर के द्वारा उस महाप्रसाद का स्पर्श किया, उसे सम्मानपूर्वक अपने पास रखा, पूरे दिन और रात कीर्तन किया, और फिर अगले सुबह उस महाप्रसाद का सेवन किया। ‘प्रेम-विवर्त’ में ऐसे ही कई बिंदु मिलते हैं जो गौड़ीय मठ के प्रचार के लिए बहुत सहायक होते हैं।
एक समय एकादशी के दिन गोपीनाथ सार्वभौम भट्टाचार्य के साथ प्रसाद लेकर उपस्थित हुए जिसमें विभिन्न प्रकार के अन्न व्यंजनादि श्रीजगन्नाथ जी का महाप्रसाद था। महाप्रभु के साथ स्वरूप दामोदर, राय रामानन्द, वक्रेश्वर तथा अनेक क्षेत्रवासी भक्तजन बैठे थे।
एकदिन गौरहरि, श्रीगुण्डिचा परिहरि,
जगन्नाथवल्लभे बसिला।
शुद्ध एकादशी-दिने, कृष्णनाम सुकीर्त्तने,
दिवस रजनी काटाइला॥
एक दिन श्री शचीनन्दन गौरहरि श्री गुंडिचा मंदिर से बाहर आकर श्रीजगन्नाथ-वल्लभ-उद्यान में आकर बैठ गए। वह शुद्ध एकादशी का दिन था, भगवान्‌
ने सारा दिन और सारी रात कृष्ण के नाम का जप करते हुए व्यतीत की।
संगे स्वरूपदामोदर, रामानन्द, वक्रेश्वर,
आर जत क्षेत्र वासिगण॥
प्रभु बले—एकमने, कृष्णनाम-संकीर्त्तने,
निद्राहार करिये वर्जन॥
स्वरूप दामोदर, रामानंद राय, वक्रेश्वर पंडित और श्रीक्षेत्र (श्रीजगन्नाथ पुरी) रहने वाले अन्य भक्त उनके साथ थे। भगवान् ने कहा, “आज एकनिष्ठता से कृष्ण के नाम का जाप करें और सोने और खाने से बचें।”
केह कर संख्यानाम, केह दण्डपरणाम,
केह बल रामकृष्ण-कथा।
यथा तथा पड़ि सबे, गोविन्द गोविन्द रबे, महाप्रेमे प्रमत्त सर्वथा॥

“आप में से कुछ भक्त लोग श्रीहरिनाम महामंत्र का जप करें, आप में से कुछ लोग
एवं भक्तों को प्रणाम करें, और आप में से कुछ लोग को बलराम और कृष्ण के संबंधित हरिकथा का गान करें।” जो भक्त लोग जहाँ पर थे, स्थान पर उन्होंने दंडवत्‌ प्रणाम किया। फिर ”गोविंद! गोविंद!” ऐसा उच्चारण करते हुए सभी भक्त लोग दिव्य प्रेम के आनंद मत्त हो गए।
हेनकाले गोपीनाथ, पड़िछा सार्वभौम-साथ,
गुण्डिचा-प्रसाद लइया आइल।
अन्न-व्यंजन, पिठा, पाना, परमान्न,
दधि, छाना, महाप्रभु-अग्रेते धरिल॥
उस समय, गोपीनाथ आचार्य, तुलसी पड़िछा और सार्वभौम भट्टाचार्य गुंडिचा मंदिर से श्रीजगन्नाथजी का महाप्रसाद ले लाए। उन्होंने महाप्रभु के सामने चावल, सब्जियां, पीठ, शर्बत (पानक), मीठे चावल और दही रखा।
प्रभुर साज्ञाय सबे, दण्डवत् पड़ि तबे,
महाप्रसाद वन्दिया वन्दिया।
त्रियामा रजनी सबे, महाप्रेम मग्नभावे,
अकैतवे नामे काटाइया॥
के आदेश के अनुसार, ने दंडवत् प्रणाम अर्पण करते हुए महाप्रसाद की प्रार्थना एवं स्तुति की। फिर उन्होंने पूरी रात दिव्य प्रेम में मग्न होकर हरिनाम का जप करते हुए बिताई।
प्रभु-आज्ञा शिरे धरि, प्रातःस्नान सबे करि,
महाप्रसाद सेवाय पारण।
करि हृष्ट चित्त सबे, प्रभुर चरणे तबे,
कर जोड़ करे निवेदन॥
ने भगवान् की आज्ञा अपने सिर पर धारण करके सुबह स्नान किया और फिर महाप्रसाद का सम्मान करके अपना उपवास का समापन किया। हर्षित हृदय से और हथेलियों को जोड़कर, ने तब भगवान् के चरणों में एक निवेदन किया। सर्व-व्रत-शिरोमणि, श्रीहरिवासरे जानि,
निराहारे करि जागरण।
जगन्नाथ प्रसादान्न, क्षेत्रे सर्वकाले मान्य,
पाइलेइ करिये भक्षण॥
“हम जानते हैं कि सभी विधियों का मुकुट रत्न प्रभु के प्रिय एकादशी के दिन बिना भोजन या पानी के पूरी रात जागना है। हम यह भी जानते हैं कि श्रीक्षेत्र में जगन्नाथ के महाप्रसाद का हर हाल में सम्मान करना चाहिए और जब भी महाप्रसाद मिले उस का मुख के द्वारा सेवन करना चाहिए।
ए संकटे क्षेत्रवासे, मने हय बड़ त्रासे, स्पष्ट आज्ञा करिये प्रार्थना।
सर्ववेद आज्ञा तव, जाहा माने ब्रह्मा-शिव, ताहा दिया घुचाओ यातना॥
“हम श्रीक्षेत्र में रहते हैं और इस दुविधा से बहुत डरते हैं, इसलिए हम प्रार्थना करते हैं कि आप हमें एक स्पष्ट निर्देश दें। सभी वेद आपके निर्देश हैं, और ब्रह्मा और शिव उनका पालन करते हैं। कृपया हमें निर्देश देकर हमारे भ्रम (अस्पष्टता) को समाप्त करें।”
प्रभु बले, भक्ति-अंगे, एकादशी-मान-भंगे, सर्वनाश उपस्थित हय।
प्रसाद-पूजन करि, परदिने पाइले तरि, तिथि परदिने नाहि रय॥
ने कहा, “एकादशी के उपवास का पालन न करने से संपूर्ण विनाश होता है। यदि
आप एकादशी के दिन प्रसाद की पूजा करते हैं और अगले दिन वही प्रसाद का मुख के

द्वारा सेवन करते हैं, तो आप इस दुविधा को पार कर लेंगे क्योंकि एकादशी की अवधि हमेशा अगले दिन समाप्त होती है।”
श्रीहरिवासर-दिने, कृष्णनाम-रसपाने, तृप्त हय वैष्णव सुजन।
अन्य रस नाहि लय, अन्य कथा नाहि कय, सर्वभोग करये वर्जन॥
“ के पवित्र एकादशी तिथि को, शुद्ध भक्त-वृन्द कृष्ण के मधुरातिमधुर नाम
के रस का आकंठ पान कर के संतुष्ट होते हैं। उस दिन वे किसी अन्य रस का सेवन नहीं करते और न ही किसी अन्य विषय की आपस में चर्चा करते हैं। वे सभी प्रकार के विषय-भोगों से अपने आप को बचाते हुए एकादशी व्रत का अनुशीलन करते हैं।
प्रसाद-भोजन नित्य, शुद्ध वैष्णवेर कृत्य,
अप्रसाद ना करे भक्षण।
शुद्ध-एकादशी जबे, निराहार थाके तबे, पारणेते प्रसाद-भोजन॥
“भगवद्-प्रसाद का सम्मानपूर्वक सेवन करना यह शुद्ध भक्तों की दैनिक गतिविधि है; वे कोई भी अनिवेदित खाद्य-पदार्थ अर्थात अप्रसाद स्वीकार नहीं करते है। हालांकि, शुद्ध एकादशी पर, वे उपवास करते हैं और (अगले दिन) पारण का समय आने पर वे अन्न-प्रसाद स्वीकार कर के अपने उपवास को विराम देते है। अनुकल्प-स्थानमात्र, निरन्न प्रसादपात्र, वैष्णवके जानिह निश्चित।
अवैष्णव जन जाँरा प्रसाद-छलेते ताँरा, भोगे हय दिवानिशि रत।
पाप-पुरुषेर संगे, अन्नाहार कर रंगे,
नाहि माने हरिवासर-व्रत॥
“भक्तों को निश्चित रूप से पता होना चाहिए कि एकादशी के दिन एकमात्र गैर-
अनाज प्रसाद (अनुकल्प) ही स्वीकार्य है। अभक्त लोग एकादशी के दिन भी रातदिन प्रसाद का भोग करते हैं। एकादशी के पवित्र तिथि का गुरुत्व न जान कर हल्के दिल से, वे अनाज खाते हैं, जिसमें पाप-पुरुष का वास होता है। इस तरह वे प्रभु के पवित्र अर्थात् एकादशी-तिथि के विधि की अवहेलना करते हैं।
भक्ति-अंग-सदाचार, भक्तिर सम्मान कर, भक्तिदेवी-कृपा-लाभ हबे।
अवैष्णव-संग छाड़, एकादशी-व्रत धर,
नाम-व्रते एकादशी तबे॥
“सभी को भक्ति का सम्मान करना चाहिए और भक्ति के अंगों का अनुशीलन करना चाहिए। तब उन्हें भक्ति देवी की कृपा प्राप्त होगी। अतः अभक्तों की संगति को त्यागें और नामजप के विधि का पालन करते हुए एकादशी के दिन भलीभाँति उपवास करें। तब आपका एकादशी का व्रत सफल होगा।
प्रसाद-सेवन आर श्रीहरिवासरे।
विरोध न करे, कभु बुझह अन्तरे॥
“अपने हृदय में यह ठीक से समज ले कि प्रसाद का सम्मान करना और प्रभु के दिन एकादशी का सम्मान करना—ये दोनो क्रियाओं में कोई संघर्ष (विरोध) नहीं हैं।
एक अंग गाने, आर अन्य अंगे द्वेष।
जे करे, निर्बोध सेइ जानह विशेष॥
“जो लोग भक्ति के एक अंग का पालन तो करते हैं लेकिन दूसरों अंगों की
उपेक्षा करते हैं वे नितान्त मूर्ख हैं। यह निश्चित रूप से जानिए।
जे अंगेर जे देश काल-विधि-व्रत।
ताहाते एकान्त-भावे हओ भक्ति-रत॥

“भक्ति साधना के प्रत्येक अंग का भलीभाँति उपयुक्त स्थान, समय, नियम और शास्त्रविधि के अनुसार निष्ठापूर्वक स्वयं को समर्पित करते हुए पालन करिए।
सर्वे अंगेर अधिपति ब्रजेन्द्रनन्दन।
जाहे तेंह तुष्ट ताहा करह पालन॥
“भक्ति के सभी अंगों के भोक्ता एवं अधिपति एकमात्र श्रीकृष्ण ही हैं, इसलिए जो आचरण उन्हें प्रसन्न करता है उसका पालन करें।
एकादशी-दिने निद्राहार-विसर्जन।
अन्य दिने प्रसाद-निर्माल्य सुसेवन॥
“एकादशी के दिन नींद और भोजन का त्याग करें, और अगले दिन, और भगवान् के अन्य निर्माल्य एवं चरणामृत को पूरे सम्मान के साथ स्वीकार करें।”

श्रीनाम-भजन एवं एकादशी एक ही तत्त्व है
श्रीनाम की सेवा और एकादशी का पालन दोनों एक ही हैं:
श्रीनामभजन आर एकादशी-व्रत।
एक तत्त्व नित्य जानि’ हओ ताहे रत॥
(श्रीजगदानंद पण्डित द्वारा रचित श्रीप्रेमविवर्त्त)
श्रीनाम-भजन एवं एकादशी व्रत के पालन को सदा एक ही समझकर दोनों अंगों का भलीभाँति पालन करिए।
श्रीचैतन्य महाप्रभु की आज्ञा से सभी ने महाप्रसाद को दण्डवत् प्रणाम किया, समस्त रात्रि कीर्त्तन में व्यतीत की तथा प्रातःकाल सबने स्नान करके महाप्रसाद के द्वारा व्रत का पारण किया। इसके पश्चात सभी ने प्रफुल्लित चित्त से करबद्घ हो श्रीचैतन्य महाप्रभु से कहा—सर्वव्रत शिरोमणि एकादशी के दिन निराहार रह कर जागरण करना चाहिए। साथ ही श्री जगन्नाथ जी का महाप्रसाद पाते ही तुरन्त भक्षण करना चाहिए ऐसा भी आदेश है हम लोग इनमें से कौन सी आज्ञा का पालन करें? इस विषय में वेदों की क्या आज्ञा है? आप इसका स्पष्टीकरण करके इस दुविधामय संकट से हमारा निस्तार करें।
श्रीचैतन्य महाप्रभु ने कहा—भक्ति का अंग एकादशी को भंग करने से सर्वनाश होता है। महाप्रसाद का पूजन करके उसे अगले दिन पाना चाहिये। भक्ति के समस्त अंगो के अधिपति स्वयं श्री ब्रजेन्द्रनन्दन हैं, वे जिस प्रकार संतुष्ट हो उसी का पालन करिए। एकादशी के दिन निद्रा व आहार का परित्याग करिए और अन्य दिनों में निर्माल्य प्रसाद का सेवन करिए। एकादशी व्रत और नाम भजन को एक ही तत्त्व जानकर उसमें अनुरक्त हो जाइए।
कुछ लोग कहते हैं कि चूँकि हम भगवान कृष्ण या श्रीमती राधारानी के पवित्र नामों का जाप करते हैं, इसलिए हमें एकादशी के दिन उपवास करने की आवश्यकता नहीं है। हालाँकि, यदि हम एकादशी व्रत की उपेक्षा करते हैं तो केवल भगवान कृष्ण या श्रीमती राधारानी के पवित्र नाम हमें भक्ति प्राप्त करने में मदद नहीं करेंगे। जिस प्रकार सिक्के के मुख्य भाग को सिक्के के पिछले भाग से अलग करना संभव नहीं है, उसी प्रकार एकादशी व्रत को पवित्र नामों के जाप से अलग करना संभव नहीं है। दोनों अविभाज्य हैं और समान लाभ देते हैं।
जब श्रीभक्तिवेदान्त मुनि महाराज ने परमगुरुदेव श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान गोस्वामी महाराज से पूछा कि चूंकि उनकी उम्र ९५ वर्ष से अधिक हो गई है, इसलिए वे एकादशी व्रत छोड़ना चाहते हैं और एकादशी के दिन अन्न ग्रहण करना चाहते हैं। हालाँकि परम-गुरुदेव श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान गोस्वामी महाराज ने उनसे कहा कि यदि वे एकादशी व्रत छोड़ देंगे, तो उन्हें मठ भी छोड़ना होगा।
हमें किसी भी ब्राह्मण के वशीभूत होकर कभी भी एकादशी का व्रत का उद्यापन नहीं करना चाहिए। कुछ ब्राह्मण बताते हैं कि आप एकादशी व्रत का उद्यापन ११

चांदी की थालीयाँ दान में देकर कर सकते हैं। हालाँकि एकादशी एक स्थायी व्रत है और इसे मरते दम तक नहीं छोड़ना चाहिए।

एकादशी व्रत की विधि

शुद्ध एकादशी का नाम हरिवासर है। विद्धा एकादशी का त्याग करना चाहिए। महाद्वादशी उपस्थित होने पर एकादशी छोड़कर द्वादशी का पालन करना चाहिए। पूर्व दिन ब्रह्मचर्य का पालन, एकादशी के दिन निर्जल उपवास, रात्रि जागरण के साथ निरन्तर भजन, उपवास के दूसरे दिन भी ब्रह्मचर्य का पालन और उपयुक्त समय पर पारण करना ही हरिवासर का सम्मान करना हैं। सामर्थ्यहीन अथवा शक्तिहीन अवस्था में प्रतिनिधि या अनुकल्प की व्यवस्था है। फल, दुग्ध, जल, घृत, पञ्चगव्य अथवा वायु — ये सब वस्तुएँ क्रमशः एक से दूसरी श्रेष्ठ है। महाभारत उद्योग पर्व के अनुसार जल, मूल, फल, दुग्ध, धृत, गुरुवचन और औषधि —इनसे व्रत नष्ट नहीं होता। अनुकल्प में केवल फलाहार की व्यवस्था है। अतएव अपनी एकादश (पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ एवं मन) इंद्रियों को संयमित करके एकादशी का पालन करें।

एकादशी तिथि का निर्णय

श्री चैतन्य चरितामृत मध्यलीला में सनातन शिक्षा के अन्तर्गत महाप्रभु कहते हैं —

एकादशी, जन्माष्टमी, वामनद्वादशी। श्रीरामनवमी, आर नृसिंहचतुर्दशी॥
एइ सबे बिद्धा-त्याग अबिद्धा-करण। अकरणे दोष, कैले भक्तिर लभन॥
(श्रीचैतन्यचरितामृत मध्य -२४/३४१-३४२)

अनुभाष्य —एकादशीमें अरुणोदय-बिद्धा त्याग और अन्य (जन्माष्टमी, वामनद्वादशी, श्रीरामनवमी और नृसिंहचतुर्दशी) व्रतोंमें सूर्योदय-बिद्धा त्याग करके अबिद्ध (शुद्ध) व्रत ही पालनीय है। बिद्ध-व्रतका पालन करनेसे 'दोष' और अबिद्ध व्रत-पालनसे ही 'भक्ति' होती है। विशेष रूपसे जाननेके लिये हरिभक्तिविलास १२वाँ और १३वाँ विलास देखें।

को अरूणोदय काल अर्थात् सूर्योदय से पूर्व एक घंटा छत्तीस मिनिट के मध्य यदि दशमी किंचित स्पर्श करे तब वह एकादशी विद्धा कहलाती है। यदि एकादशी के शेष भाग में द्वादशी शुरू हो जाये तब इसमें कोई दोष नहीं होता। वही पालनीय है। अधिक जानकारी के लिये श्रीहरिभक्तिविलास ग्रंथ में बारह और तेरह अध्याय द्रष्टव्य हैं। `

एकादशी पर श्रील गुरुदेव द्वारा प्रदत्त प्रवचनों की सूची

वर्ष	स्थान	विषय
०४/०७/१९९४	श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरा	एकादशी कथा
०५/०६/१९९८	लास ऐंजल्स, कैलिफोर्निया	एकादशी एक दिन नहीं अपितु स्वयं श्रीकृष्ण हैं!
१३/०५/२०००	हवाई द्वीप	एकादशी व्रत
२२-२४/०८/२००१	ह्यूस्टन, टेक्सास	एकादशी समस्त कामनाओं को पूर्ण करती हैं।
२३/०२/२००२	श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरा	अम्बरीष महाराज की महिमा
२७/०५/२००७	ह्यूस्टन, टेक्सास	राजा रुक्मांगद की कथा

श्रीएकादशी व्रत —भक्तिका नवाँ अंग

श्रीभक्तिरसामृत-सिन्धु-बिन्दु ग्रंथमे भक्ति के चौसठ अंगो का वर्णन किया गया हैं। श्रीएकादशी व्रत भक्तिका नवाँ अंग हैं। शुद्धा एकादशीका नाम हरिवासर है। विद्धा एकादशीका त्याग करना चाहिए। महाद्वादशी उपस्थित होने पर एकादशी छोड़कर महाद्वादशीका पालन करना चाहिए। पूर्व दिन ब्रह्मचर्य, हरिवासरके दिन निरम्बु उपवास और रात्रि जागरणके साथ निरन्तर भजन और उपवासके दूसरे दिन ब्रह्मचर्य और उपयुक्त समय पर पारण करना ही हरिवासरका सम्मान करना है। महाप्रसाद त्याग किये बिना निरम्बु (जलरहित) उपवास नहीं होता। सामर्थ्यहीन अथवा शक्तिहीनकी अवस्थामें प्रतिनिधि या अनुकल्पकी व्यवस्था है —'नक्तं हविष्यान्नं' (हरिभक्तिविलास १२/३९ धृत वायुपुराण) वचनोंके द्वारा अनुकल्पकी विधि है। प्रतिनिधिके द्वारा उपवासकी विधि हरिभक्तिविलास १२/३४ दी गयी है।

उपवासेत्वशक्तस्य आहिताग्नेरथापि वा।
पुत्रान् वा कारयेदन्यान् ब्राह्मणान् वापि कारयेत्॥

अर्थात् साग्निक ब्राह्मण उपवास करनेमें असमर्थ होने पर पुत्रों द्वारा अथवा ब्राह्मणों द्वारा उपवास करवायेंगे।

हविष्यान्न आदि द्वारा उपवासकी विधि हरिभक्तिविलास १२/३९धृत वायुपुराणमें है —"नक्तं हविष्यान्नमनोदनम्बा फलं तिलाः क्षीरमथाम्बुचाज्यं। यत् पञ्चगव्यं यदि वापि वायुः प्रशस्तमत्रोत्तरमुत्तञ्च॥" अर्थात् रातमें हविष्यान्न-अन्न छोड़कर दूसरे-दूसरे द्रव्य फल, दुग्ध, जल, घृत, पञ्चगव्य अथवा वायु —ये सब वस्तुएँ क्रमशः एकसे दूसरी श्रेष्ठ है। महाभारत उद्योग पर्वके अनुसार जल, मूल, फल, दुग्ध, घृत, ब्राह्मण कामना, गुरुवचन और औषधि —इन आठोंसे व्रत नष्ट नहीं होता —"अष्टैतान्य-व्रतह्नानि आपो मूलं फलं पयः। हविर्ब्राह्मणकाम्य च गुरोर्वचनमौषधम्॥"

हरिवासरसे एकादशी तथा जन्माष्टमी, रामनवमी, नृसिंह-चतुर्दशी, गौरपूर्णिमा आदि वैष्णव व्रतोंको भी पालन करना चाहिए। चारों वर्ण और चारों आश्रमके स्त्री-पुरुष, सबके लिए एकादशी पालनका विधान हरिभक्तिविलासमें दिया गया है। स्त्रियोंमें विधवा और सधवा सबके लिए एकादशी पालनीय है। एकादशीके दिन अन्नभोजनसे गोमाँस भोजनका पाप लगता है। प्रत्येक माहकी दोनों पक्षोंकी एकादशीका विधिवत् पालन करना चाहिए।

सपुत्रश्च सभार्यश्च स्वजनैर्भक्तिसंयुतः।
एकादश्यामुपवसेत् पक्षयोरुभयोरपि॥

(हरिभक्तिविलास १२/१९)

यहाँ स्वभार्याका तात्पर्य पत्नीके साथ व्रतका पालन करनेका विधान दिया गया है। इसके द्वारा सधवा स्त्रियोंको भी एकादशी व्रतपालन करनेका विधान दिया गया है। एकादशी व्रत नित्यव्रत है, इसका पालन नहीं करनेसे दोष होता है "अत्र व्रतस्थ नित्यत्वादवश्यं तत् समाचरेत्।" बल्कि दूसरे-दूसरे कामना-मूलक उपवास ही सधवा स्त्रियोंके लिए निषिद्ध हैं, एकादशी नहीं।

श्रीश्रीचैतन्य-शिक्षामृत ग्रंथमे श्रील भक्तिविनोद ठाकुरने लिखा हैं —"भगवत्-सेवाके पूर्व जल ग्रहण करना, भगवानको अनिवेदित द्रव्योंको ग्रहण करना, श्रीमूर्त्ति और उसकी सेवादिका नित्य दर्शन न करना, अपनी प्रिय वस्तु और कालोचित स्वादिष्ट फलादि द्रव्य भगवानको अर्पण न करना, हरिवासर एकादशी या भगवानके जन्म-दिवस आदिका पालन न करना —ये सभी कार्य निष्ठा अभावके अन्तर्गत हैं।"

एकादशी एवं शरीर की स्वच्छ्ता

एकादशी के दिन प्रयोग करने योग्य मंजन
प्रायः मसूड़ें कमजोर होनेसे दात गिर जाते है। इससे बचनेके लिए १०० ग्राम फिटकरी की पावडर, ५० ग्राम सेंधा नमक और २ चम्मच शुद्ध हल्दी (घरमें जड़ से कूटकर बनायी हुई)—इन तीनों को मिलाकर एक डिब्बी में भर लें। सुबह और रातमें उँगली के द्वारा दाँत और मसूड़े साफ करनेसे सौ साल तक दाँत मजबूत रहेंगे तथा मसूड़ों से खून आना बंद हो जायेगा।

एकादशी के दिन प्रयोग करने योग्य प्राकृतिक साबुन पावडर १०० ग्राम मुलतानी मिट्टी, १०० ग्राम शिकाकाई पावडर, १०० ग्राम अरीठा (Soap Nut) पावडर—उपरोक्त तीनों को मिलाकर एक डिब्बी में भर लें। शौच के बाद तथा नहाते समय इसका प्रयोग करनेसे प्राणीयोंके चरबी से बने हुए साबुनोंसे बचा जा सकता हैं।

एकादशी के दिन प्रयोग करने योग्य प्राकृतिक शैंपू
१ लीटर शुद्ध जल, २० निंबु का रस, २ चम्मच शिकाकाई पावडर, २ चम्मच अरीठा (Soap Nut) पावडर, १ चम्मच आमला पावडर—इस सामग्री को मिलाकर एक बोतल में संग्रहित करें। इससे केश धोने से केश लंबे और सघन होंगे।

श्रीगुरुवर्ग के एकादशी संबन्धित अनमोल वचन
कम खाओ और अधिक जप करो
हमें इस तरह एकादशी का पालन करने का प्रयास करना चाहिए— कई बार पानी, जूस,
फल, या दूध लेकर नहीं। यदि आप युवा और स्वस्थ हैं, तो आप बिना कुछ लिए भी—यहां तक कि पानी के बिना पूरा दिन और पूरी रात बीता सकते हैं। यदि आप ऐसा नहीं कर सकते हैं, तो आप दोपहर या शाम को एक बार खा या पी सकते हैं। यदि आप बीमार या कमजोर हैं, तो आप अपने जीवन को बनाए रखने के लिए दिन में दो बार थोड़ा खा सकते हैं ताकि आप “हरे कृष्ण, हरे कृष्ण” का जाप कर सकें।
पश्चिमी भक्तों के लिए अधिक रियायतें दी गयी हैं, क्योंकि कुछ भक्त शरीर
में कमजोर हैं। बाकी भक्त बहुत मजबूत हैं। मैंने कई पश्चिमी भक्तों को, खासकर महिलाओं को, पूरे दिन और रात बगैर सोये उपवास करते देखा हैं।
एकादशी के पालन से बहुत सारे फायदे होते हैं। कॉलेजों, अस्पतालों, और काम
के विभिन्न स्थानों में छात्रों और श्रमिकों के लिए सप्ताह में एक बार छुट्टी दी जाती हैं, ताकि वो आराम ले सकें और अगले दिन वे पूरी ऊर्जा के साथ काम कर सकें। अन्यथा, वे उनकी गतिविधियों अनेक वर्षों तक जारी रखने में सक्षम नहीं होंगे। उन्हें कुछ आराम लेने की सख्त जरूरत हैं।
यह हमारे पेट के बारे में भी सच है। हमारे पेट में बैक्टीरिया होते हैं जो हमारे स्वास्थ्य के लिए सहायक होते हैं। ये जीवाणु हमेशा हमारे पाचन के लिए काम करते रहते हैं। यदि वे बीमार हो जाएँगे या थक जाएँगे, तो आप भी बीमार हो जाएँगे। उन्हें कम से कम एक दिन के लिए आराम देने के लिए हमें प्रयास करना चाहिए ताकि अगले दिन वे महान ऊर्जा के साथ फिर से काम कर सकेंगे।
दूसरी बात यह की, आप देख सकते है की विशेष रूप से एकादशी से पूर्णिमा तक सागर में बहुत बड़ी लहरें उठती हैं। इसका कारण यह है की चंद्रमा इस ग्रह के सभी पानी को आकर्षित करता है। जहाँ जहाँ पानी है, चाँद उसे आकर्षित करता है। हमारे शरीर में ज़्यादा पानी है, विशेष रुपसे एकादशी के दिन चंद्रमा इसे आकर्षित करता है। यदि कोई बीमारी है, तो यह बहुत वृद्धि को प्राप्त होगी। यह बेहतर होगा कि हम इन चीजों से परहेज करें। विशेष रूप से अनाज, मक्का, गेहूँ, और उनसे बने भोजन का त्याग करें
यह भी कहा गया है की कभी-कभी आप पानी पी सकते हैं; उस से कोई नुकसान नहीं होगा। यदि आप एक पत्थर पर पानी डालते हैं, तो पत्थर तुरंत फिर से शुष्क हो जाएगा; सब पानी गायब हो जाएगा। दूसरी ओर, आप यदि कुछ कपास या सोख्ता काग़ज़ (Blotting Paper) पर पानी डालते है, तो वे पानी सोख लेंगे और सुखाने के लिए घंटे लगेंगे।
अनाज, गेहूँ, चावल, मक्का, और दाल से बनाये हुये व्यंजन हमारे पेट में कपास
की तरह हैं। चाँद उन से पानी को आकर्षित करता है, जिस कारण रोगों की वृद्धि होती है। कई लोग एकादशी से पूर्णिमा और एकादशी से अमावस्या के बीच अस्पतालों में मर जाते हैं। रोगों को नियन्त्रित करने के लिए एकादशी का पालन करना आवश्यक है।

नास्तिक लोग भी एकादशी का उपवास रखें
व्यक्ति भगवान् में विश्वास नहीं रखते है, उन्हें भी एकादशी का पालन
करना चाहिए। भारत में सभी प्रकार के भक्त एकादशी का पालन करते हैं—मायावादी (निर्विशेषवादी), शैव (शिव के उपासक), शाक्त (दुर्गा देवी के उपासक), और गणेश भक्त भी इसका पालन करते हैं। महिलाएँ, पुरुष और बच्चे भी इसका पालन करते हैं, लेकिन आजकल यह प्रवृत्ति कम हो रही है। लगभग हर कोई एकादशी से परहेज करने लगा है; जैसे की पश्चिमी देशों से एक बहुत बड़ा तूफान भारत में गया हों और हर जगह को प्रभावित किया हों।

यदि आप अंबरीष महाराज या कृष्ण के माता-पिता—नंद और यशोदा की तरह भक्त बनना चाहते हैं, तो आपको एकादशी का पालन अवश्य करना चाहिए। नंद और यशोदा ने वृन्दावन में एकादशी का पालन किया। वृन्दावन से वे मथुरा के पास अंबिका-कानन गये और वहाँ उन्होंने एकादशी व्रत का पालन किया। उन्होंने ऐसा किया था, तो क्या हमें नहीं करना चाहिए? हमें बड़ी सावधानी से एकादशी का पालन करना चाहिए। फिर, भक्ति अविवेचित रुपसे हमारे पास आ जाएगी।
हम शुद्ध वैष्णवों के मार्गदर्शन में एकादशी का पालन करें और कीर्तन का अनुष्ठान करें। यदि कोई भक्ति करता है तो ठीक है। लेकिन यदि वह एक ऐसे भक्त के आनुगत्य में भजन करता हैं जिसका व्रज से रिश्ता है, जिस में व्रज-भक्ति हैं और जो रसिक हैं, तो ऐसा भक्त उसके संदेहों को दूर कर सकता हैं और राधा, कृष्ण तथा महाप्रभु उसके दिल में स्थापित कर सकता हैं। हमेशा इस क्षमता के वैष्णव के मार्गदर्शन में वृन्दावन रहें और हमेशा मंत्र-जप करें और भगवद्-स्मरण करें। साथ ही कृष्ण के पवित्र नाम का जप करें और उस नाम से संबधित लीलाओंका स्मरण करें।

एकादशी के दिन टमाटर और लौकी जैसी सब्जियां वर्जित श्यामराणी दासी: गुरुदेव, हम हमेशा सुनते है की हमें एकादशी के दिन अनाज नहीं लेना चाहिए, क्यों की उस दिन उन में पाप जमा हो जाते है, लेकिन टमाटर और लौकी की जैसी कुछ सब्जियां हम क्यों नहीं ले सकते?
श्रील नारायण गोस्वामी महाराज: यह अनाज के समान नहीं है। उनमें अनाज, मक्का, गेहूँ, और दाल के गुण नहीं हैं [यानी वे सोख्ता कागज या कपास की गेंद के तरह बर्ताव नहीं करते हैं।] हमें एक विशेष कहानी से पता है कि एकादशी के दिन ब्रह्म-हत्या (एक ब्राह्मण की हत्या), मातृ-हत्या (अपने मां की हत्या), और गोहत्या (एक गाय की हत्या) सहित सभी पाप अनाज और अनाज से तैयार किये हुए व्यंजनों में आश्रय लेते हैं। इसके अलावा, शास्त्र कुछ सब्जियां और अन्य खाद्य पदार्थों के खाने पर प्रतिबंध लगाता है।
पश्चिमी भक्तों और भारत के कमजोर व्यक्तियों के लिए एक रियायत दी गयी है।
यदि आप इन सब विधि-निषेधों का पालन नहीं कर रहे हैं, तो आपको सब पापों का भागी बनना पड़ेगा। यदि आपके पास कुछ भक्ति है, तो वह नष्ट हो जाएगी।
आप सभी आज एकादशी का पालन कर रहे हैं। हमें निश्चित रूप से एकादशी का पालन करना चाहिए—सभी प्रकार के अनाज जैसे गेहूँ, जौ, इत्यादि से तैयार किये हुए व्यंजन—ये सभी का सख्ती से परहेज करना चाहिए। यदि आप एकादशी का पालन करते हैं, के पवित्र नाम का जप करते हैं, श्रेष्ठ साधु-संग में हरि-कथा श्रवण करते हैं, उन्नत भक्तों का संग करते हैं और भक्ति के नौ अंगों में से किसी भी अंग का पालन करते है, तो आप का कभी भी पतन नहीं होगा।
कमजोर व्यक्ति पसंद के अनुसार कुछ ले सकते हैं, लेकिन यह एकादशी के लिए अनुज्ञप्त खाद्य पदार्थों मे से ही होना चाहिए। बच्चे भी अपनी पसंद से कुछ खा सकते हैं, लेकिन उनकी मां और पिता को ध्यान रखना चाहिए की बच्चे केवल फल और एकादशी के लिए आवंटित अन्य खाद्य पदार्थ ही खायें।
कभी कभी, कलियुग और माया के कारण हम कमजोर हो जाते हैं और पालन नहीं कर सकते हैं; यही वजह है कि हम अध:पतित होते हैं। किसी भी स्थिति में, हम मंत्र का जप, कृष्ण का स्मरण और एकादशी व्रत का पालन—इन्हें भूलना नहीं चाहिए। भले ही आप कमजोर हों, इन सिद्धान्तों का पालन करने के लिए प्रयास करें।
इसके अलावा एकादशी पालन करने का सबसे महत्त्वपूर्ण कारण यह हैं की एकादशी स्वयं कृष्ण का रूप है। कृष्ण एकादशी बन गये हैं। वे एकादशी के दिन इस दुनिया में अवतरित होते है। जो लोग एकादशी व्रत पालन कर रहे हैं, भगवान् उनकी स्वयं देखभाल करते हैं और उन्हें विशेष दया प्रदान करते है। इसलिए हमें एकादशी का पालन करना चाहिए।

जगन्नाथ-पुरी में एकादशी पालन का आदर्श स्थापन
एकबार एकादशी के दिन श्री चैतन्य महाप्रभु अपने परिकर—स्वरूप दामोदर,
राय रामानन्द, नित्यानन्द प्रभु और अन्य हज़ारों भक्तों के साथ पुरी में थे। वे एक पल भर भी सोये बिना कृष्ण का स्मरण और हरि-कथा श्रवण करते हुए अहोरात्र कीर्तन कर रहे थे। इस बीच में शाम को लगभग ८:०० बजे जगन्नाथ पुरी के पंडे (पुजारी) बड़ी मात्रा में स्वादिष्ट, मधुर महा-प्रसाद ले आये और उसे महाप्रभु और उनके भक्तों के सामने रखा।
पुराणों और अन्य शास्त्रों में लिखा गया है की यदि कोई महा-प्रसाद प्राप्त करता है तो एक पल की देरी के बिना उसका सेवन करना चाहिए। जब चैतन्य महाप्रभु ने महा-प्रसाद को देखा, वे अत्यधिक प्रसन्न हो गये। उन्होंने विभिन्न तरीकों से उस महा-प्रसाद की प्रार्थना और रात भर उसकी परिक्रमा की। उन्होंने शास्त्र से कई श्लोक उद्धृत किये और उनकी व्याख्या करते हुए उन्होंने बताया था की सूअर, कौवे, और कुत्तों द्वारा लिया हुआ महा-प्रसाद भी महा-प्रसाद ही है। वह इतना शक्तिशाली है। हमें उसका अनादर नहीं करना चाहिए; बल्कि, हमें उसे स्वीकार करना चाहिए। यदि वह सड़ा या सूखा हो, दूर स्थानों से लाया गया हो, तो भी हमें उसका सम्मान करना चाहिए।
जब सुबह हो गयी, तो महाप्रभु ने उनके सभी परिकरों के साथ समुद्र में स्नान किया, और फिर उन से कहा, ”अब इस प्रसाद को हम विभाजित करें और फिर उसे आदरपूर्वक ग्रहण करे।”
एकादशी के दिन, अन्न स्वीकार न करके हमें एकादशी का सम्मान करना चाहिए। एकादशी कृष्ण-भक्ति, प्रेम और स्नेह की जननी है। यदि आप एकादशी का पालन नहीं करते हैं, तो कृष्ण-भक्ति कभी भी नहीं आएगी।
अगर आप युवा और सशक्त हैं, तो आप फल, सब्जियां, रस, यहां तक कि पानी भी न लेकर, सब दिन उपवास कर सकते हैं। यदि आप इतने सशक्त नहीं है, या यदि आप बीमार या वृद्ध हैं, तो आप कुछ फल, थोड़ा रस या दूध ले सकते हैं।
एक दिन में तीन या चार बार बड़ी मात्रा में रस, एक या दो किलो मीठी रबड़ी
या अन्य खाद्य पदार्थ मत लीजिए। सिर्फ अपने जीवन को बनाए रखने के लिए बहुत कम लेना चाहिए। हमें दिन के दौरान बिलकुल सोना नहीं चाहिए और श्रील हरिदास ठाकुर की तरह जप करना चाहिए; तो एकादशी का फल प्राप्त होगा।

श्रीगुरुदेव से प्राप्त शिक्षामृत
मरणासन्न गोमाता की त्वरित मुक्ति इन्दुलेखा दासी की भतीजी: कल पहली बार मैंने एकादशी का पालन किया।
हालांकि मैंने ये मेरी माँ के लिए किया क्योंकि उसकी जीवन यात्रा लीवर कैंसर से समाप्त होनेवाली है।
श्रील नारायण महाराज: यह अच्छा है। एक बार सडक पर पड़ी हुई गाय मर रही थी।
उसका शरीर तड़प रहा था, लेकिन उसके प्राण उसके शरीर से बाहर नहीं जा रहे थे।
मेरी एक शिष्या ने उसको देखा और कहा, “हे गोमाता, मैं तुम्हें एक एकादशी
का फल दे रही हूँ। अब आप बहुत आसानी अपने प्राण त्यागने में सक्षम होगी।” तुरंत, बिना किसी देरी के, गाय ने शरीर छोड़ दिया।
पिछले साल, नंद-गोपाल के घोड़ों में से एक घोडा मर रहा था, साथ ही उसके प्राण शरीर से बाहर नहीं जा पा रहे थे। मैंने उसके कान में “हरे कृष्ण” कहा, और उसने आसानी से प्राण छोड़ दिया। यह जप चमत्कारी और बहुत शक्तिशाली है।

एकादशी-देवी—श्रीमती राधिकाजी का एक प्रकाश
राम-तुलसी दास: क्या एकादशी-देवी स्वयं राधिका है?
श्रील नारायण महाराज: एकादशी राधिका नहीं है, लेकिन उन्हें श्रीमती राधिका का एक प्रकाश माना जा सकता है। कृष्ण स्वयं एकादशी बन गये है। एकादशी और कृष्ण एक ही हैं, राधा और कृष्ण एक ही है, इसलिए यह कहा जा सकता है एकादशी राधिका की अभिव्यक्ति (या प्रकाश) हैं।
श्रीमती राधिका जो ह्लादिनी-शक्ति-स्वरूपा (कृष्ण के सर्वोच्च आनंद-प्रदायिनी शक्ति का सार) है, एकादशी से अधिक है। गोलोक वृन्दावन में एकादशी का कोई पालन नहीं करता। एकादशी का पालन इस भौतिक संसार में साधन भक्ति में रत जनों के लिए ही है। गोलोक वृंदावन में श्रीमती राधिका कृष्ण की सर्वोच्च शक्ति है, तो उनमें और एकादशी में कुछ अंतर हैं।
[नोट: कोई तर्क कर सकता है की नंद महाराज ने एकादशी का पालन किया, और वे तो गोलोक वृन्दावन के निवासी है। वास्तव में नंद महाराज केवल प्रकट वृन्दावन में ही एकादशी का पालन करते है। यह भौम वृन्दावन इस दुनिया में प्रकट हुआ हैं और एक साधना-भूमि हैं। उन्होंने केवल दूसरों को सिखाने के लिए ऐसा किया।]

पाण्डव निर्जल एकादशी (केवल भीम के लिए ही रियायत)
श्रीपाद नेमी महाराज: यदि वास्तव में हमने किसी कारणवश बाकी एकादशीयों
का पालन नहीं किया हो, तो (पाण्डव) निर्जल एकादशी का पालन करने से क्या हम क्षतिपूर्ति (कमी पूरी) कर सकते है?
श्रील नारायण गोस्वामी महाराज: मैंने अभी इसका जवाब दिया है। आप केवल हरिनाम के द्वारा क्षतिपूर्ति कर सकते हैं, केवल उचित रीति से (पाण्डव) निर्जल एकादशी का पालन करके नहीं। आप को हर एकादशी का पालन करना होगा। केवल भीम के लिए ही यह रियायत दी गई थी।

निर्जल एकादशी को स्नान एवं दाँत साफ करना वर्जित नहीं बलराम दास: क्या हमको निर्जल एकादशी पर अपने दांत साफ करना चाहिए?
श्रील नारायण गोस्वामी महाराज: क्यों नहीं? क्या आपको स्नान नहीं करना चाहिए? (जिस तरह स्नान आवश्यक हैं, उसी तरह दांत साफ करना भी आवश्यक हैं।) बलराम दास: स्नान में पानी पिया नहीं जाता।

श्रील नारायण गोस्वामी महाराज: लेकिन किसी भी तरह पानी आपके शरीर में प्रवेश रहा हैं। बेशक आपको स्नान करना चाहिए, लेकिन उस दिन चरणामृत नहीं लेना चाहिए; केवल चरणामृत को प्रणाम करना चाहिए।

एकादशी के दिन बहुत ज्यादा मात्रा में अनुकल्प ग्रहण न करें
श्रील नारायण गोस्वामी महाराज: प्राचीन काल से श्री रूप, श्री सनातन आदि
छ: गोस्वामीयों के समय तक भक्त लोग सभी एकादशीयोंका अनुष्ठान जल लिए बगैर निर्जला एकादशी तरह ही करते थे।
अंबरीष महाराज प्रत्येक एकादशी का अनुष्ठान तीन दिनों तक करते थे। पहले
दिन वह अपने आहार को नियन्त्रित करते थे, दूसरे दिन वे खाने और पीने से परहेज करते थे और तीसरे दिन वे केवल एक बार ही खाते थे।
भारत में हर एकादशी का पालन आम तौर पर भोजन या पानी के बिना किया जाता है। पूज्यपाद श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज ने देखा की पश्चिमी भक्त कुछ हद तक कमजोर थे, इसलिए उन्होंने उनके लिए रियायत का सूत्रपात किया।
उन्होंने कहा कि वे दिन में तीन बार अनुकल्प ले सकते है। हालांकि, अनुकल्प ग्रहण करने के बजाय, बृहत्‌-कल्प (-फलाहार) ले रहे हैं। जितना वो खा-पी सकते हैं, उतनी मात्रा में फलाहार ले रहे है। क्या आप समझे? यह अच्छा नहीं है।

निर्जला एकादशी को श्रीगुरुदेव के प्रसाद-अवशेष ग्रहण न करें
यशस्विनी दासी: यदि कोई व्यक्ति निर्जला एकादशी करते हुए आपके (श्रील गुरुदेव के) प्रसाद के अवशेष को खाती है तो क्या उससे उसकी एकादशी टुट जाती हैं?
श्रील नारायण गोस्वामी महाराज: हाँ।
श्रीपाद माधव महाराज: आप श्रील गुरुदेव का उच्छिष्ट प्रसाद अलग रखकर निर्जला एकादशी के बाद वाले दिन भी खा सकते हैं। [इससे निर्जला एकादशी व्रतकी भी रक्षा होगी और भक्त गुरुदेव के प्रसाद का भी सम्मान कर सकेगा।]

अधिक हरिनाम जप से अपराधों का क्षालन
भक्त: मैंने कुछ अपराध किये है।
श्रील नारायण गोस्वामी महाराज: अपराध मत करो। यदि आप अपने को जप बढा दोगे
तो, अपराधोंका विनाश हो जायेगा।

एकादशी व्रत पारण का नियम यदि एकादशी व्रत का पालन निर्जला किया हो, तो चरणामृत द्वारा पारण करें,
अगर फलाहार किया हो तो अन्न-प्रसाद द्वारा पारण करें। समय पर पारण करने से एकादशी व्रत सम्पूर्ण होता है। महाद्वादशी उपस्थित होने पर एकादशी के स्थान पर महाद्वादशी तिथि को ही व्रत पालन करने का नियम है। सभी एकादशी एवं महाद्वादशी पारण का समय आदि का विवरण गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन द्वारा प्रस्तुत वैष्णव व्रतोत्सव तालिका में पाया जा सकता है।

एकादशी के दिन क्या खाना चाहिए और

क्या नहीं खाना चाहिए
अनुकल्प (एकादशी में लेने योग्य खाद्य पदार्थ)
(१) सभी फल (ताजा और सूखे), सूखे-मेवे और उनसे निकाले हुए तेल, पानीफल, सिंघाड़ा, गन्ना, चीनी और गन्ने से बने अन्य पदार्थ। चीनी में गाय, सुअर और कुत्तेके हड्डीके चुरेके मिश्रण की आशंका होने के कारण शुद्ध गुड (मैदे के मिलावट से रहित) का प्रयोग करना ज़्यादा अच्छा रहेगा।
(२) आलू, शकरकंद, कद्दू, कुम्हड़ा, खीरा, मूली, स्क्वाश, कटहल, नींबू, अवकाडो (मेक्सिको में पैदा होने वाला नाशपाती जैसा फल), जैतून, नारियल, कुट्टू, सभी शक्कर।
(३) दूध और इस से तैयार सभी पदार्थ। सभी शुद्ध दूध के उत्पाद। चातुर्मास्य (बरसात के मौसम) के दूसरे महीने के दौरान दही से परहेज और तीसरे महीने के दौरान दूध से परहेज।
(४) भारतीय नस्ल की गायों के माखन को धीमी आँच पर गरम करके बनाया शुद्ध घी, शुद्ध मूंगफली का तेल, नारियल तेल, बादाम का तेल। आज कल बाजार के मिलने वाले तेलों मे भारी मिलावट होती हैं। इसलिए तेलों की जगह मूंगफली या नारियल की बुकनी (चूर्ण, पाउडर) से भी अनुकल्प तैयार हो सकता हैं।

एकादशी पर इस्तेमाल करने योग्य मसाले
काली मिर्च, ताजा अदरक, शुद्ध सेंधा नमक (समुद्री नमक एकादशी पर प्रयोग नहीं किया जाता है) और ताजी हल्दी (सूखे जड़ों से घर पर पीसी हुई, मैदे के मिलावट के संभावना से रहित)। ये सब नए और स्वच्छ पैकेट से लिए जाए।

एकादशी पर प्रतिबंधित खाद्य पदार्थ
(१) टमाटर, बैंगन, फूल गोभी, ब्रोकोली, शिमला मिर्च, मटर, छोला (चना), सब प्रकार की सेम, लोबिया, राजमा इत्यादि एवं उनसे बने पदार्थ जैसे पापड़, सोयाबीन का दही, सोयाबीन का दूध, इत्यादि।
(२) करेला, लौकी, परमल, तोरई, सेम, डंठल, भिंडी, केलेका फूल
(३) सभी प्रकारकी पत्तेवाली सब्जियां—पालक, सलाद, पत्ता गोभी, कढ़ी पत्ता,
नीम पत्ता इत्यादि
(४) अन्न जातीय—बाजरा, जौं, सूजी, दलिया, चावल, श्यामा चावल, मक्का एवं समस्त प्रकारके आटे जैसे चावलका आटा, चनेका आटा (बेसन), उड़द की दाल का आटा इत्यादि
(५) अनाज से बने तेल—मक्का का तेल, सरसों का तेल, तिलका तेल, सोयाबीन तेल,
और सामान्य वनस्पति तेल आदि, और इन तेलों में तले हुए पदार्थ, जैसे मूंगफली, काजू, आलू के चिप्स और अन्य प्रकार का हलका नाश्ता।

(६) मक्का या अन्न का माड़ तथा उनसे बनी या मिश्रित वस्तुएँ जैसे—बेकिंग सोडा, बेकिंग पाउडर, कस्टर्ड पावडर, कस्टर्ड, केक, हलवा, क्रीम, मिठाई, साबूदाना इत्यादि।
(७) शहद।

एकादशी के लिए अयोग्य मसाले हींग, तिल के बीज, जीरा, मेथी, सरसों, इमली, सौंफ, इलायची, कलौंज, जायफल,
खसखस, अजवाइन, लौंग, आदि।

एकादशी के दिन अनाज और श्यामा चावल निषिद्ध हैं
गर्वीले और आभासी (छद्म) वैष्णव श्यामा चावल (वरइ का चावल), सूजी, चना आदि
को अनाज न समझकर उनका एकादशी के दिन सेवन करते हैं। अनाज का अर्थ हैं ‘अत्तुं योग्यं ’। इस परिभाषा के अन्तर्गत सभी प्रकार के अनाजों का समावेश होता हैं। सच कहे तो हरि के दिन (एकादशी के दिन) अनाज से बना हुआ कोई भी व्यंजन स्वीकार करने योग्य नहीं हैं। फल, मूल, जल और दूध रूपी अनुकल्प लेने से उपवास खंडित नहीं होता है। यदि कोई पूरा भूखा रहने में असमर्थ है तो अनुकल्प स्वीकार करने की व्यवस्था है। शंकर और पार्वती के बीच हुआ संवाद पद्म-पुराण में द्रष्टव्य हैं—
अन्नन्तु धान्य-संभूतं गिरिजे यदि जायते।
धान्यानि विविधानीह जगत्यां श्रुणु यत्नतः॥
श्याम-मास-मसूराश्च धान्य-कोद्रव-सर्षपाः।
यव-गोधूम-मुद्गाश्च तिल-कंगु-कोलथकाः॥
गवेधुकाश्च निवारा आतकश्च कलायकाः।
माण्डुको वज्रको रंक कीचको बडकस्तथा।
तिलकश्चणकाद्यश्च धान्यानि कथितानीह॥
“हे गिरिजे (हिमालय पर्वत की कन्या), अनाज से उत्पन्न हुए व्यंजन ‘अन्न’ के
नाम से जाने जाते हैं। इस जगत में अनेक प्रकार के अनाज हैं। उनकी सूची मैं आपको बताता हूँ, ध्यानपूर्वक सुनिए—श्यामा चावल (भगर या वरई), मसूर की दाल, धान्य, कोद्रव (कोद-धान, एक प्रकार का अनाज जो गरीब लोग खाते है), तिल, पंगु, कुलथ, गवेधुक (तृण-धान्य), आतक, मटर, मण्डुक, बाजरा, रल्क, कीचक (बास-धान्य), बरबटी, तिलक (होम अनाज), चना आदि। ’आदि’ शब्द के द्वारा ज्वारी और मक्का का बोध होता हैं। इसलिये श्यामा-चावल, गेहूँ का आटा, चना आदि व्यंजन अन्न में ही गिने जाते हैं और एकादशीके दिन खाने के लिए अयोग्य हैं।”

उपवास में साबूदाना और चाय क्यों वर्जित हैं?
आहार शरीर को ऊर्जा देता हैं और उपवास हमको आरोग्य प्रदान करता हैं। उपवास योग्य तरीके से पालन करनेसे ही हमें उसका फायदा होगा। गलत पद्धति से पालन किया गया उपवास अनेक रोग उत्पन्न करता हैं। पेट को अंदर से साफ करने के लिए उपयोगी फॉलिक ऐसिड फलों में ही सर्वाधिक परिमाण में प्राप्त होता हैं। इसलिए उपवास के दिन यदि संभव हो तो पकाया हुआ, भूँजा हुआ, तला हुआ, उबाला हुआ कुछ भी नहीं खाना चाहिए या पीना चाहिए। उसी तरह अनाज और अन्न जातीय पदार्थ न खायें। समुद्री नमक भी उपवास को वर्जित हैं। इस का अर्थ हैं केवल फल खाना चाहिए। केला, संतरा, कटहल, आलू, शकरकंद चलेंगे। अनेक लोक उपवास के दिन चाय पीते हैं। चाय में का खून होता हैं। उपवास के दिन चाय पीने से भगवान् कैसे प्रसन्न होंगे? सामान्यतः साबूदाना को शाकाहारी कहा जाता हैं और व्रत उपवास में इस का काफ़ी प्रयोग किया जाता हैं। लेकिन क्या आप जानते हैं की शाकाहारी प्रतीत होने वाला साबूदाना असल में मांसाहार के समान ही हैं और अत्यंत अपवित्र हैं? क्या आप उसका सही रूप जानते हों? साबूदाना (Tapioca) ‘कसावा’ नामक वनस्पति के जड़ से बनाया जाता हैं, यह बात तो सच हैं। लेकिन साबूदाना बनाने का तरीका इतना अपवित्र हैं की उसे शाकाहारी या स्वास्थ्यप्रद कहना भी सत्य का विपर्यय होगा। साबूदाना बनाने के लिए सर्व प्रथम कसावा वनस्पति के जड़ को खुले मैदान
में स्थित बड़े कुंडों में डाला जाता हैं। उस के पश्चात रसायनों के मदद से दीर्घकाल तक सड़ाया जाता हैं। इस तरह से सडाने के पश्चात तैयार हुआ साबूदाने का गूदा अनेक महीनों तक खुले आकाश के नीचे पड़ा रहता हैं। रात्रि के समय कुंडों को उष्णता देने के लिए उनके इर्दगिर्द में बड़े बड़े बल्ब लगाये जाते हैं। इस के कारण जलते हुए बल्बों के निकट उडने वाले छोटे बड़े विषैले कीडे भी कुंडों में गिर के मर जाते हैं।
इन कुंडों में सड़ते हुए साबूदाने के गूदे पर पानी डाला जाता हैं, जिस से
उस में सफेद रंग के करोड़ो लंबे कृमि उत्पन्न होते हैं। इस के बाद यह गूदा मजूर

लोग अपने पैरों के नीचे कुचलते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान उस गूदे में पडे हुए कीडे-पतंग और सफेद कृमि भी कुचले जाते हैं। यह क्रिया को अनेक बार दोहराया जाता हैं। इस के बाद गूदे को यंत्रों में डालते हैं और मोती जैसे चमकने वाले दाने बना कर उन्हें साबूदाने का नाम और रूप दिया जाता हैं। लेकिन इस चमक के पीछे छिपी अपवित्रता सभी को दृष्टिगोचर नहीं होती हैं।
साबूदाना बनाते समय उस में जिलेटिन नाम का एक केमिकल डालते हैं। यह जिलेटिन का निर्माण देसी गाय के बछड़े के पेट में रहने वाले बड़े आंत से होता हैं। इस का अर्थ हैं साबूदाना खाना याने माँस खाना हैं। साबूदाना खाने के बाद क़रीबन दोन दिन तक वह नहीं पचता हैं। इस से पचन क्रिया ख़राब हो जाती हैं। मलावरोध होता हैं। आगे जाकर हमें बवासीर (अर्श रोग) हो जाता हैं। इसलिए एकादशी के दिन साबूदाना नहीं खाना चाहिए।

एकादशी का पालन कैसे करें? कभी भी माँस, मछली, अंडे, प्याज, लहसुन, गाजर, लाल मसूर, हरी दाल (Green Flat Lentils), मशरूम (कुकुरमुत्ता) या इनसे बने उत्पादों को न खायें। एकादशी के दिन चाय, कॉफी, पान, गुटका, खैनी, बीड़ी, सिगरेट, तमाकू से बने पदार्थ, सुपारी, शराब से परहेज करना चाहिए। एकादशी के दिन स्त्रीसंग करनेसे क्षय रोग (यक्ष्मा, Tuberculosis TB) होता हैं।
नोट: भारत में अधिकांश तेलों में पामोलीन तेल होता है, जो ताड़ के फल से प्राप्त नहीं होता है, बल्कि इसमें अक्सर गोमांस और सूअर के तेल मिलाए जाते हैं। एकादशी के अनुकल्प में मूंगफली को भूनकर उसका पाउडर या सूखे अथवा गीले नारियल का कद्दूकस डालने की सलाह दी जाती है। गायों से प्राप्त कथित "शुद्ध घी" में अक्सर मारी गई गाय की चर्बी का तेल और कृत्रिम सुगंध मिलाया जाता है, और कभी-कभी उसे बनावटी रूप से दानेदार बनाने के लिए उस में गाय की हड्डियों का पाउडर भी मिलाया जाता है।

चीनी का अच्छा विकल्प गुड़ है एकादशी के दिन या किसी भी दिन कभी भी चीनी का प्रयोग नहीं करना चाहिए। चीनी को सफेद बनाने के लिए, निर्माता इसमें मनुष्यों, गाय, भैंस, सूअर, बिल्ली और कुत्तों की हड्डियों को जलाने से प्राप्त राख मिलाते हैं। चीनी तब तक पच नहीं सकती जब तक वह हमारी हड्डियों से कैल्शियम को अवशोषित न कर ले। भारत में बड़े पैमाने पर चीनी की खपत के परिणामस्वरूप, कई लोगों में ऑस्टियोपोरोसिस विकसित हो रहा है। चीनी को खाने के बाद पचने में 8 से 12 घंटे का समय लग सकता है। चीनी का सबसे अच्छा विकल्प गुड़ है। सफेद गुड़ की अपेक्षा काले अथवा लाल रंग गुड़ बेहतर होता है। गुड़ फॉस्फोरस का बहुत अच्छा स्रोत है और बेहतर पाचन में मदद करता है।

साधुभक्तोंके प्रति अश्रद्धा प्रकाश करनेसे तथा साधु-चरित्र महाजनोंकी निन्दा करनेसे हरिनामके प्रति अपराध होता है। अतएव जो हरिनामका आश्रय करेंगे, उनको सर्वप्रथम वैष्णव-अवज्ञाकी प्रवृत्तिको सर्वतोभावेन परित्याग करनी चाहिए। वैष्णवोंके कार्योंके प्रति सन्देह होने पर साथ-ही-साथ निन्दा न करके उसका तात्पर्य अनुसन्धान करनेकी चेष्टा करनी चाहिए। अतएव साधुजनोंके ऊपर श्रद्धा करना ही कर्त्तव्य है।

एकादशी के महत्त्व के बारे में शास्त्र-प्रमाण
१. मन में भौतिक इच्छा रखनेवाले लोग भी मोक्ष प्राप्त करने के लिए अथवा
अपनी उद्देश्य-पूर्ति के लिए प्रत्येक एकादशी को उपवास रखें। परंतु एकादशी का सच्चा हैं भगवान् को आनंद प्रदान करना।
२. शुक्ल पक्ष हो या कृष्ण पक्ष हो, भरणी नक्षत्र हो या अन्य कोई भी कारण
हो, श्री हरि का प्रेम और उनके धाम की प्राप्ति करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति
ने एकादशीके दिन उपवास रखना आवश्यक हैं।
३. काशी, गया, गंगा, नर्मदा, गोदावरी और कुरुक्षेत्र—इन में से कोई भी
तीर्थ एकादशी की बराबरी नहीं कर सकते।
४. हज़ारों अश्वमेध यज्ञ करके और सैकडों वाजपेय यज्ञ करके जो पुण्य प्राप्त होता है, उस पुण्य की तुलना एकादशी के उपवास द्वारा प्राप्त होनेवाले पुण्य के सोलहवें हिस्से के साथ भी नहीं हो सकती।
५. पृथ्वी पर भगवान् पद्मनाभ के दिन के समान (एकादशी के समान) शुद्धि प्रदान करनेवाला और पाप दूर कर सकने में समर्थ अन्य कोई भी दिन नहीं हैं।
६.
एकादशेन्द्रियैः पापं यत्कृतं भविति प्रभो। एकादश्युपवासेन तत्सर्वं विलयं व्रजेत्॥
अनुवाद: हे राजन्! ग्यारह इन्द्रियों के द्वारा (आँखें, कान, नाक, जीभ और त्वचा यह पाँच ज्ञानेंद्रिय; मुँह, हाथा, पैर, गुदद्वार और जननेंद्रिय यह पाँच कर्मेद्रिय और मन—इन के द्वारा) किये गये सर्व पाप-कर्म हर एक पक्ष के ग्यारहवे दिन को (एकादशी को) उपवास करने से नष्ट हो जाते हैं।
७.
एकादशीसमं किंचित्पवित्रं न हि विद्यते।
व्याजेनापि कृता राजन्न दर्शयति भास्करिम्॥
अनुवाद: हे राजा! अपना पाप नष्ट करने के लिए एकादशी के समान प्रभावी उपाय दूसरा कोई नहीं हैं। यदि कोई व्यक्ति केवल दिखावे के लिए या कोई बहाने एकादशी के दिन उपवास करता है, तो भी उस व्यक्ति को मृत्यु के उपरांत भास्कर-पुत्र यम-धर्मराज का दर्शन नहीं होता हैं।
८. श्रीकृष्ण के अवतार महर्षि वेद व्यास ने कहा है—”मेरे दिन (एकादशी को)
यदि कोई व्यक्ति मुझे थोड़ा भी अन्न अर्पण करता है, तो वह नरक में जायेगा। तो कोई व्यक्ति स्वयं अन्न खाने से उस की क्या गति होगी, ये कहने की आवश्यकता नहीं हैं।”
९. स्वमातृगमन, गोमांस भक्षण करना, ब्राह्मण की हत्या करना और शराब पीना—
ये सब पाप एकादशी को अन्न खाने के पापों से क्षुद्र हैं।
१०. जो मनुष्य एकादशी के पवित्र दिन अन्न खाता हैं तो वह सब मनुष्यों में
हीन हैं। यदि कोई ऐसे मनुष्यों का अशुभ चेहरा देखता हैं, उसने सूर्य के तरफ़ देखकर अपने आप को पवित्र कर लेना चाहिए।
११. एकादशी के दिन (श्रीहरि के दिन) इस पृथ्वी के उपर की सब बडे बडे पाप जैसे ब्रह्म-हत्या (ब्राह्मण को मारने का पाप) अन्न का आश्रय लेते है और वहाँ रहते हैं।
१२. यदि अपने पिता, पुत्र, या मित्र भी भगवान् पद्मनाभ के दिन यदि अन्न खायेंगे तो भी वे बडे पापियों में गिने जायेंगे।
१३. दशमी के दिन एक ही बार खाना खायें। एकादशी के दिन पूर्ण उपवास रखना चाहिए। एकादशी के दिन श्राद्ध, तिलोदक, पिंड-प्रदान, जल-तर्पण इत्यादि कार्य नहीं करना चाहिए।
१४. कोई भी महिला मासिक धर्म के समय भी (रजस्वला अवस्था में भी) एकादशी के
दिन अन्न न खायें।

१५. विधवा स्त्री यदि एकादशी के दिन अन्न भोजन करती हैं तो वह सब पुण्यों
से रहित होती है और प्रति दिन एक गर्भपात करने का पाप उसे लगता हैं।

एकादशी पर क्या करें और क्या न करें

एकादशी उपवास के संकल्प मंत्र

[illegible]

दशमी दिवसे प्राप्ते व्रतस्थोऽहं जनार्दन।
त्रिदिनं देवदेवेश निर्विघ्नं कुरु केशव॥

— ब्रह्मवैवर्त्त पुराण

जनार्दन ! आज दशमी होने के कारण मैं तीन दिवसीय व्रत के लिए तैयार हूं। हे ! देव देव ! केशव ! देखो कि मेरी व्रत के मार्ग में कोई विघ्न न आए।

एकादशी के दिन निम्न संकल्प मंत्र का उच्चारण करना चाहिए

एकादश्यां निराहारः स्थित्वाहमपरेहनि।
भोक्ष्यामि शरणं मे भवाच्युत॥

—बृहन्नारदीय पुराण २१.१५

एकादशी का निराहार व्रतोपवास करने के बाद मैं द्वादशी को श्रीजगन्नाथ के महाप्रसाद द्वारा पारण करूंगा, हे अच्युत ! आपण मुझे अपने चरणकमलों में शरण दिजिए।

[illegible]

अज्ञान तिमिरान्धस्य व्रतेनानेन केशव।
प्रसन्न सुमुखो भूत्वा ज्ञानदृष्टिप्रदो भव॥

—बृहन्नारदीय पुराण २१.२०

हे केशव ! मैं अज्ञान रूपी रतौंधी से अंधा हो रहा हूँ। आप इस व्रत से प्रसन्न हों और मुझे ज्ञानदृष्टि प्रदान करें।

स्वीकारात् कृतं यत् पारणं मया।
व्रतनानेन संतुष्टः स्वस्तिं भक्तिं प्रयच्छ मे॥

— ब्रह्मवैवर्त्त पुराण

हे श्रीकृष्ण ! आपका अन्न-प्रसाद स्वीकार कर के मैंने एकादशी व्रतोपवास का पारण किया है। इस व्रतोपवास से संतुष्ट होकर आप हमें श्रील गुरुदेव के मनोभीष्ट सेवा में यश एवं भक्ति प्रदान करें।

[illegible]

एकादश्युपवासेन द्वादश्यां पारणेन च।
यदार्जित मया पुण्यं तेन प्रीणातु केशव॥

— ब्रह्मवैवर्त्त पुराण

एकादशी का व्रतोपवास और द्वादशी के दिन व्रत का पारण कर के मुझे जो भक्ति-उन्मुख सुकृति प्राप्त हुई है, भगवान् केशव प्रसन्न हों। फलस्वरूप मुझे वे शुद्ध रूपानुग वैष्णवोंका संग एवं सेवा प्रदान करें।

एकादशी के दिन श्रीमन्महाप्रभु की कीर्त्तन लीला

(श्रील वृन्दावन दास ठाकुर)

एकादशी के दिन सभी गौड़ीय मठों में यह कीर्त्तन गाया जाता हैं।

श्रीहरिवासरे हरि-कीर्त्तन विधान।
नृत्य आरम्भिला प्रभु जगतेर प्राण॥

महाप्रभु सभी प्राणियों के जीवन और आत्मा हैं। एकादशी के दिन उन्होंने फैसला किया कि सभी को कीर्तन के लिए इकट्ठा होना चाहिए। अपने ही नाम की ध्वनि सुनकर वे परमानंद में नाचने लगे।
व्याख्या: गौड़ीय-भाष्य (श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर द्वारा)
श्री हरि-वासर के उपवास के दिन, गौरसुन्दर नृत्य करने लगे और हरि के नाम
का कीर्त्तन करने लगे।
‘श्री हरि-वासर’ इस वाक्यांश का अर्थ है " हरि का दिन;" दूसरे शब्दों में, एकादशी, द्वादशी, भगवान् की प्राकट्य (आविर्भाव) तिथि।
श्री हरि-भक्ति-विलास में कहा गया है कि यदि श्री हरि-वासर के दिन कोई उपवास करता है, के साथ भगवान् हरि का स्मरण करता है, हरि के नाम का जप एवं कीर्त्तन करता है, हरि की प्रसन्नता के लिए कार्य करता है, हरि पर अपना मन स्थिर करता है, और भौतिक भोग की सभी इच्छाओं को त्याग देता है, तो निस्संदेह वह व्यक्ति प्रह्लाद की तरह हरि के धाम को प्राप्त करता है।
हरि के भक्तों का यह कर्तव्य है कि वे चंदन का लेप, फूल, धूप, दीपक, बेहतरीन खाद्य पदार्थ, उपहार देकर भगवान् हरि की पूजा करें और श्रीहरिनाम का जप करें, अग्निहोत्र यज्ञ करें, परिक्रमा करें, विभिन्न प्रार्थनाएं करें, प्रसन्न होकर नृत्य एवं कीर्त्तन करें, वाद्य यंत्र बजाना, प्रणाम करें, “जय!” उच्चारण करके भगवान् की महिमा गान करें। और भगवान् श्रीहरि की महिमा का कीर्त्तन करते हुए रात में जागरण करें।
पुण्यवन्त श्रीवास-अंगने शुभारंभ। उठिल कीर्त्तन-ध्वनि ‘गोपाल गोविन्द’॥
श्रीवास- अर्थात् श्रीवास ठाकुर के दिव्य प्रांगण में, भगवान्‌ श्रीकृष्ण के 'गोपाल! गोविंद!' इत्यादि दिव्य एवं पवित्र नामों का उच्च स्वर से जोरदार कीर्तन करना आरंभ किया।
भाष्य: श्रीवास का प्रांगण अनेक पवित्र कार्यों का आश्रय स्थल है, क्योंकि वहाँ गोविन्द और गोपाल के नाम संकीर्त्तन का उद्घाटन हुआ था।
मृदंग-मंदिरा बाजे शंख-करताल।
संकीर्त्तन संगे सब हइल मिशाल॥
प्रांगण में मृदंग, छोटी झांझ, शंख, करताल और सुंदर गायन के स्वर एक साथ
मिल गए।
ब्रह्माण्ड भेदिलो (उठिल) ध्वनि पूरिया आकाश।
चौदिकेर अमङ्गल जाय सब नाश॥
प्रचंड कीर्त्तन की ध्वनि पूरे ब्रह्मांड से होकर गुजरी और उस से पूरा आकाश व्याप्त हो गया। ये ध्वनि श्वेतद्वीप तक पहुंची। उस ध्वनि ने समस्त चौदह लोकों के सभी अशुभ चीजों (अमंगल वस्तुओं) को नष्ट कर दिया।
उषःकाल हइते नृत्य करे विश्वम्भर।
यूथ यूथ हइल जत गायन सुन्दर॥
सुबह से श्री विश्वम्भर (जो भक्ति द्वारा पूरे ब्रह्मांड का पोषण और पालन-पोषण करता है) नृत्य करने लगे। कई भक्तों के समूह आकर्षक रूप से गाते रहे थे—प्रत्येक समूह एक अलग राग गा रहा था।
श्रीवास-पंडित लइया एक सम्प्रदाय।
मुकुन्द लइया आर जन-कत गाय॥
श्रीवास पंडित कीर्तनियों के एक समूह के गुरु थे, और मुकुंद दूसरे समूह
के प्रमुख गायक थे।
लइया गोविन्द घोष आर कत जन।
गौरचन्द्र-नृत्ये सबे करेन कीर्त्तन॥
गोविन्द घोष दूसरे गुट के मुखिया (प्रधान) थे। गौरचन्द्र ने पूरी कीर्तन
सभा के बीच में नृत्य किया।

धरिया बुलेन नित्यानन्द महाबली।
अलक्षिते अद्वैत लयेन पदधुलि॥
महाप्रभु जब नृत्य करते हुए मूर्छित हुए तब प्रभावशाली (शक्तिशाली) नित्यानंद प्रभु ने महाप्रभु की रक्षा की। उस समय अद्वैत आचार्य ने गुप्त रूप से महाप्रभु के चरण-कमलों की धूल ली।
गदाधर-आदि जत सजल-नयने।
आनन्दे विह्वल हइल प्रभुर कीर्त्तने॥
महाप्रभु के कीर्तन को सुनकर गदाधर, मुकुंद, श्रीधर और अन्य लोगों के आँखों में आंसू आ गए, क्योंकि अष्ट-सात्त्विक भावों के उदय ने उनके हृदयों को अभिभूत कर दिया।
जखन उद्दण्ड नाचे प्रभु विश्वम्भर।
पृथिवी कम्पित हय, सबे पाय डर॥
श्री विश्वम्भर ने इतने शक्तिपूर्वक नृत्य किया कि पृथ्वी काँप उठी, जिससे सभी भक्त भयभीत हो गए।
कखनो वा मधुर नाचये विश्वम्भर।
जेन देखि नन्देर नन्दन नटवर॥
कभी-कभी श्रीविश्वम्भर ने इतने मनोहर ढंग से और मधुर नृत्य किया कि वे नटवर नंदनंदन प्रतीत हुए, जो सर्वश्रेष्ठ नर्तक है।
अपरूप कृष्णवेश, अपरूप नृत्य।
आनन्दे नयन-भरि’ देखे सब भृत्य॥
महाप्रभु की सुंदरता अप्रतिम और बेजोड़ है, यहां उस सुंदरता ने कि कृष्ण
की सुंदरता को भी हरा दिया। क्यों कि कृष्ण के पास भी श्रीमती राधिकाजी का ‘महाभाव’ नहीं है। उनका नृत्य देखकर उनके सभी अनुयायियों की आंखें आनंद से भर गईं।
निजानन्दे नाचे महाप्रभु विश्वम्भर।
चरणेर ताल शुनि अति मनोहर॥
आनंद में लीन होकर महाप्रभु विश्वम्भर ने नृत्य किया। उनके नाचते हुए चरणों की ताल सुनकर भक्त मंत्रमुग्ध हो गए।
भाव-भरे माला नाहीं रहे गलाय।
छिण्डिया पड़ये गिया भकतेर पाय॥
इस हर्षित मनोदशा को प्रतिध्वनित करते हुए, उनकी माला बेतहाशा (उन्मत्तवत्) झूलने लगी और उनके गले में रहने में असमर्थ हो गई, वह टूटकर भक्तों के चरणों में गिर पडी।
चतुर्द्दिके श्रीहरि-मंगल-संकीर्त्तन।
माझे नाचे जगन्नाथ-मिश्रेर नन्दन॥
श्री हरिनाम संकीर्तन का शुभ स्वर चारों दिशाओं में फैल गया, जबकि जगन्नाथ मिश्र के पुत्र ने सभी भक्तों के बीच नृत्य किया।
जाँर नामानन्दे शिव वसन ना जाने।
जाँर यशे नाचे शिव, से नाचे आपने॥
शिव उसी आनंदमय नाम का जप करते हैं और प्रेम में इतने लीन हो जाते हैं कि उनका कपड़ा नीचे गिर जाता है। महाप्रभु की महिमा सुनकर, शिव नृत्य करने लगते हैं, और महाप्रभु, उनकी महिमा सुनकर, नृत्य भी करते हैं।
जाँर नामे वाल्मीकि हइला तपोधन।
जाँर नामे अजामिल पाइल मोचन॥
इसी नाम से वाल्मीकि ने तपस्या का धन प्राप्त किया—उन्होंने सभी राम
लीला को देखा। और इसी नाम से अजामिल के सभी अनर्थ और अपराध जड़ से उखड गये थे।
जाँर नाम श्रवणे संसार-बन्ध घुचे।
हेन प्रभु अवतरि’ कलियुगे नाचे॥

श्री कृष्ण-नाम का श्रवण सभी सांसारिक मोहों को पूरी तरह से समाप्त कर देता है। श्री कृष्ण स्वयं कलियुग में महाप्रभु के रूप में आए, उन्होंने नृत्य किया और सभी को कृष्ण-नाम का जप करने का उपदेश दिया।
जाँर नाम गाइ’, शुक-नारद बेड़ाय।
सहस्र-वदन प्रभु जाँर गुण गाय॥
शुकदेव और नारद भी इस कृष्ण-नाम का जप करते हैं और इसे वितरित करते हैं।
हजारों जिह्वाओं से महाप्रभु इस नाम की महिमा गाते हैं।
सर्व-महा-प्रायश्चित्त जे प्रभुर नाम।
से प्रभु नाचये, देखे जत भाग्यवान्॥
महाप्रभु का नाम जप करना प्रायश्चित का सर्वोच्च रूप है। महाप्रभु को नृत्य करते हुए देख कर भक्त परम सौभाग्यशाली हो गए।
प्रभुर आनन्द देखि’ भागवतगण।
अन्योन्ये गला धरि’ करये क्रन्दन॥
महाप्रभु के आनंद को देखकर, भक्तों ने एक-दूसरे को गले लगाया और वे जोर-
जोर से रोने लगे (जैसे महाप्रभु के आनंद की किरणें उनके हृदय में प्रवेश कर गईं)।
सबार अंगेते शोभे श्रीचन्दन-माला।
आनन्दे गायेन कृष्ण-रसे हइ’ भोला॥
सभी भक्तों ने कीर्तन में भाग लिया और महाप्रभु ने व्यक्तिगत रूप से उनके शरीर को चंदन और मालाओं से सजाया। श्री गौरसुन्दर और भक्तों ने बड़े आनंद के साथ कृष्ण-रस का गायन किया और स्वाद लिया।
यतेक वैष्णव-सब कीर्त्तन-आवेशे।
ना जाने आपन देह, अन्य जन किसे॥
कीर्तन में लीन होकर सभी वैष्णव भक्तों ने अपने शरीर की पुरी तरह सुधबुध
खो दी। उन्हें उनके आस-पास में बैठे सभी लोगों की सुधबुध भी नहीं रही।
“जय-कृष्ण-मुरारी-मुकुन्द-वनमाली।”
अहर्निश गाय सबे हइ’ कुतूहली॥
“जय कृष्ण, मुरारी, मुकुंद, वनमाली।” दिन-रात सभी भक्तों ने बड़ी खुशी से
यही कीर्तन गाया।
अहर्निश भक्त संगे नाचे विश्वम्भर।
शान्ति नाहि कारो, सबे सत्य-कलेवर॥
श्रीविश्वम्भर ने अपने भक्तों के साथ चौबीस घंटे नृत्य किया, लेकिन वे
कभी थके नहीं, उनका शरीर पूरी तरह से दिव्य अर्थात् सत्व-कलेवर था।
एइमत नाचे महाप्रभु विश्वम्भर।
निशि अवशेष मात्र से एक प्रहर॥
दिन श्रीमन् महाप्रभु (पूर्ण प्रेम में मत्त हो कर) पूरी रात कीर्तन में नृत्य करते थे, और सूर्योदय से तीन घंटे पहले ही रुक जाते थे।
एइमत आनन्द हय नवद्वीप-पुरे।
प्रेमरसे वैकुण्ठेर नायक विहरे॥
श्रीचैतन्य महाप्रभु वैकुण्ठ (श्वेतद्वीप) के प्रेम-रस के आनंद का आस्वादन करने वाले नायक हैं। प्रतिदिन उन्होंने नवद्वीप में महान आनंद का स्वाद चखा और वितरित किया।
ए सकल पुण्यकथा जे करे श्रवण।
भक्त संगे गौरचन्द्रे रहु ता’र मन॥
जो इस शुभ वर्णन को पूरे विश्वास के साथ सुनते हैं, उनके हृदय में श्रीगौरचन्द्र और उनके सभी सहयोगी (परिकर) भक्त प्रवेश करते हैं। (इस प्रकार उनके हृदय श्रीवास-अंगन बन जाते हैं।)
श्रीकृष्णचैतन्य-नित्यानन्दचाँद जान।

वृन्दावन-धाम तछु पदयुगे गा’न॥
वृंदावन दास कहते हैं, “श्री कृष्ण चैतन्य और चंद्रमा जैसे नित्यानंद प्रभु मेरे जीवन और आत्मा हैं और मैं विनम्रतापूर्वक इस गीत को उनके चरण कमलों में अर्पित करता हूं।”
(श्रीचैतन्यभागवत)

अनुकूल ग्रहण—वाचिक और मानसिक
(एकादशी-कीर्तन)
एकादशी के दिन निम्नलिखित कीर्तन का गान अवश्य करें।

शुद्ध भकत, चरण-रेणु, भजन अनुकूल।
भकत सेवा, परम सिद्धि, प्रेमलतिकार मूल॥
माधव-तिथि, भक्ति जननी, यतने पालन करि।
कृष्णवसति, वसति वलि’, परम आदरे वरि॥
गौर आमार, जे सब स्थाने, करल भ्रमण रङ्गे।
से सब स्थान, हेरिबो आमि, प्रणयि-(भकत-)संगे॥
मृदंग-वाद्य, सुनिते मन, अवसर सदा याचे।
गौर-विहित, कीर्त्तन सुनि’, आनन्दे हृदय नाचे॥
युगलमूर्ति, देखिया मोर, परम आनन्द हय।
प्रसाद-सेवा, करिते हय, सकल प्रपञ्च-जय॥
जे दिन गृहे, भजन देखि, गृहेते गोलोक भाय।
चरण-सीधू देखिया गङ्गा, सुख ना सीमा पाय॥
तुलसी देखि’, जुड़ाय प्राण, माधवतोषणी जानि’।
गौर-प्रिय, शाक-सेवने, जीवन सार्थक मानि॥
भकति विनोद, कृष्ण-भजने, अनुकूल पाय जाहा।
प्रतिदिवसे, परम-सुखे, स्वीकार करये ताहा॥
(श्रील भक्तिविनोद ठाकुर)
अनुवाद—शुद्ध भक्तोंकी चरणरज ही भजनके अनुकूल है। भक्तोंकी सेवा ही परमसिद्धि है तथा प्रेमरूपी लताका मूल (जड़) है। माधव तिथि (एकादशी) भक्तिको भी जन्म देने वाली है तथा इसमें कृष्णका निवास है, ऐसा जानकर परम आदरपूर्वक इसको वरणकर यत्नपूर्वक पालन करता हूँ। मेरे गौरसुन्दरने जिन-जिन स्थानोंमें आनन्दपूर्वक भ्रमण किया; मैं भी प्रेमी भक्तोंके साथ उन सब स्थानोंका दर्शन करूँगा। मृदङ्गकी मधुर ध्वनिको सुननेके लिए मेरा मन सर्वदा लालायित रहता है तथा श्रीगौरसुन्दरसे सम्बन्धित कीर्तनोंको सुनकर आनन्दसे भरकर मेरा हृदय नाचने लगता है। युगल मूर्त्तिका दर्शनकर मुझे परम आनन्द प्राप्त होता है। महाप्रसादका सेवन करनेसे मायाको भी जय किया जा सकता है। जिस दिन घरमें भजन-कीर्तन होता है, उस दिन घर साक्षात् गोलोक हो जाता है। श्रीभगवानका चरणामृत और श्रीगंगाजीका दर्शनकर तो सुखकी सीमा ही नहीं रहती तथा माधवप्रिया तुलसीजीका दर्शनकर त्रितापोंसे दग्ध हुआ हृदय सुशीतल हो जाता है। गौरसुन्दरके प्रिय सागका आस्वादन करनेमें ही मैं जीवनकी सार्थकता मानता हूँ। कृष्णभजनके अनुकूल जीवननिर्वाहके लिए जो कुछ पाता है, यह भक्तिविनोद प्रतिदिन उसे सुखपूर्वक ग्रहण करता है।

‘शुद्ध भकत चरण रेणु’ इस एकादशी भजन की व्याख्या
[श्रील नारायण गोस्वामी महाराज और उनकी पार्टी ने फरवरी के अंत में ऑस्ट्रेलिया के ब्रिस्बेन में ३ दिन बिताए। उस समय प्रकाश दास अधिकारी और करुणा देवी दासी का घर ही श्रील महाराज का अस्थायी निवास स्थान था। वहाँ पर भक्तगण प्रतिदिन प्रातःकाल में मंगला आरती, वृंदावन की महिमामृत, और तुलसी परिक्रमा में शामिल होने के लिए दूर-दूर से आते थे। जब वे श्रीमती तुलसी देवी की परिक्रमा पूरी करते थे, तब श्रील महाराज कुछ भक्तों के साथ अपने आधे घंटे के लिए हरिनाम जप करते हुए टहलने के लिए निकल जाते।
एक सुबह, टहलने से लौटने के बाद, वे सोफे पर बैठ गये। सुबह के भजन गा रहे शिष्यों ने उन्हें घेर लिया। वह शुभ दिन एकादशी था, और इसलिए श्रील गुरु महाराज ने भक्तों से ”शुद्ध भकत चरण रेणु” यह भजन गाने का अनुरोध किया। फिर, यह देखकर कि कोई भी उस भजन को बिना ‘गौड़ीय-गीति-गुच्छ’ की सहायता के नहीं गा सकता है, श्रील महाराज ने उनसे कहा कि वे सभी भजनों को मुखस्थ एवं हृदयंगम कर ले। भजन गाते समय उन्हें कोई पुस्तक देखने की जरूरत न महसूस हो। अन्यथा, वे प्रार्थनाओं के गहरे अर्थों को नहीं समझ पाएंगे। फिर उन्होंने गीत की व्याख्या करना शुरू किया, और उस स्पष्टीकरण का एक प्रतिलेख नीचे प्रस्तुत है।] माधव-तिथि, भक्ति जननी,
यतने पालन करि।
कृष्णवसति, वसति बलि’,
परम आदरे वरि॥
माधव तिथि (एकादशी) भक्तिको भी जन्म देने वाली है तथा इसमें कृष्णका निवास है, ऐसा जानकर परम आदरपूर्वक इसको वरणकर यत्नपूर्वक पालन करता हूँ। (श्रील भक्तिविनोद ठाकुर द्वारा शुद्ध-भक्त, श्लोक 2)
[श्रील नारायण गोस्वामी महाराज:] माधव-तिथि क्या है?
[भक्त:] एकादशी।
[श्रील नारायण गोस्वामी महाराज:] जन्माष्टमी को माधव-तिथि क्यों नहीं
कहा जाता है? गौर-तिथि (गौर-पूर्णिमा) या अन्य पवित्र दिनों को माधव-तिथि क्यों नहीं कहा जाता है?
कृष्ण के लिए एकादशी जन्माष्टमी से भी श्रेष्ठ है। सभी जीवों के लाभ के लिए, कृष्ण स्वयं ’माधव-तिथि’ बने। उन्होंने सोचा, ’सब मुझे भूल रहे हैं, और वे इस दुनिया में पीड़ित हैं। मैं उन्हें गोलोक में कैसे ला सकता हूँ? उनके लिए कोई रास्ता नहीं है, क्योंकि वे इतने गिरे हुए और असहाय हैं।’ इसलिए वे एकादशी-तिथि बन गए। एकादशी-तिथि एक समय अवधि की तरह है। वे यह तिथि कैसे बने? सभी दिव्य समय स्वयं कृष्ण हैं, और इसलिए यह दिव्य समय भी कृष्ण ही है। हालांकि एकादशी-तिथि केवल एक समय नहीं है।
उदाहरण के लिए, श्रीमती राधिका कृष्ण की अभिव्यक्ति है। वे उनके शरीर के बाईं ओर से आई और राधिका बन गईं। इसी तरह, कृष्ण स्वयं एकादशी बन गए। इसलिए कहते है—’माधव-तिथि, भक्ति-जननी।’ यदि कोई एकादशी का पालन करता है, तो उसे भक्ति प्राप्त होती है, इसके विपरीत, यदि कोई एकादशी की उपेक्षा करता है, तो वह कभी भी उस दुर्लभ स्थिति को प्राप्त नहीं करेगा।
एकादशी के नाम पर लगातार जूस, (भारतीय दुकानों में बेची जाने वाली) लस्सी
और दूध पीना और दिन भर में कई किलो आम और अन्य फल खाना एकादशी नहीं है। केवल वही लें जो आपको अपने जीवन को बनाए रखने के लिए चाहिए ताकि आप बहुत आसानी से जप कर सकें।
इस तरह, कृष्ण एकादशी-तिथि बन गए हैं। वे एकादशी का पालन करने वालों को इस दुनिया से मुक्त करना चाहते है, और वे उन्हें गोलोक में अपनी सेवा में लाना चाहता है।

माधव-तिथि, भक्ति जननी, यतने पालन करि। ’यतने’ का मतलब सावधानी से होता है। एकादशी की उपेक्षा का प्रश्न ही नहीं उठता। आपको कृष्ण की तरह एकादशी की सेवा करनी होगी। जैसे हमारे गुरु-परंपरा के आचार्यों ने एकादशी व्रत का पालन किया है, वैसे ही हमें भी इसका पालन करने का प्रयास करना चाहिए।
कृष्ण-वसति, वसति बलि’, परम आदरे वरि। कृष्ण-वसति, वसति बलि। जहां एकादशी
है, वहीं कृष्ण हैं। जहां एकादशी देवी मौजूद हैं, वहां कृष्ण हमेशा मौजूद रहते हैं, क्योंकि एकादशी स्वयं कृष्ण हैं। परम आदरे वरि। हमें एकादशी को इतने सम्मान और आदर के साथ मनाना चाहिए कि ऐसे अनुशीलन से भक्ति एक ही बार में हमारे हृदय में आ जाए।
गौर आमार, जे सब स्थाने,
करल भ्रमण रङ्गे।
से सब स्थान, हेरिबो आमि, प्रणयि-भकत-संगे॥
मेरे गौरसुन्दरने जिन-जिन स्थानोंमें आनन्दपूर्वक भ्रमण किया; मैं भी प्रेमी भक्तोंके साथ उन सब स्थानोंका दर्शन करूँगा। (शुद्ध भकत, श्लोक ३)
उस दिन हमें क्या करना चाहिए? श्री चैतन्य महाप्रभु ने नवद्वीप के नौ द्वीपों में भ्रमण किया और नृत्य किया। वह पानी-हाटी और शान्तिपुर गए, और रास्ते में उन्होंने कई अन्य स्थानों का दौरा किया। फिर वे पुरी गए, और पुरी से वे गोदावरी-तट गए और श्री राय रामानंद से मिले। वहां से वे इधर-उधर गए, फिर से पुरी आए और पुरी से वे वृंदावन गए। वृंदावन के रास्ते में वे झारखंड, काशी, वाराणसी और प्रयाग गए, और वापस जाते समय उन्होंने और भी स्थानों की यात्रा की। प्रणयि-भकत-संगे। मैं इन स्थानों पर ’प्रणयि-भक्तों’ के साथ जाऊंगा, जिनके पास कृष्ण और महाप्रभु के लिए उच्च श्रेणी का प्रेम और स्नेह है, और मैं उनसे पूछूँगा, ”यह स्थान क्या है? श्री चैतन्य महाप्रभु ने यहां क्या किया?” मृदंग-वाद्य, सुनिते मन,
अवसर सदा याचे।
गौर-विहित, कीर्त्तन सुनि’, आनन्दे हृदय नाचे॥
मृदङ्गकी मधुर ध्वनिको सुननेके लिए मेरा मन सर्वदा लालायित रहता है तथा श्रीगौरसुन्दरसे सम्बन्धित कीर्तनोंको सुनकर आनन्दसे भरकर मेरा हृदय नाचने लगता है। (शुद्ध भकत, श्लोक ४)
मृदंग का ’धिक् धिक् तान’ ध्वनि (स्वर) सुनता हूं, तो मैं पूरी तरह से लीन
हो जाता हूं। वह समय कब आएगा, जब मैं गौर-भक्तों, कृष्ण-भक्तों के साथ मृदंगों और करतालों की आवाज पर नाचूँगा? मैं श्रीवास पंडित और उनके भाइयों का उनके कीर्तन-रास-मंडल में कब अनुसरण करूंगा?
गौर-विहित, कीर्तन सुनी। चैतन्य महाप्रभु को राय रामानंद और स्वरूप दामोदर के साथ-साथ नरोत्तम दास ठाकुर, श्यामानंद प्रभु, श्रीनिवास आचार्य, गोविंद दास, श्रील भक्तिविनोद ठाकुर, और उनके जैसे कई अन्य शुद्ध भक्तों के बहुत तेज और मधुर कीर्तन पसंद थे। जब मैं उनके कीर्तन सुनता हूँ, तब मेरा हृदय आनंद से नाच उठता है।
युगल-मूर्ति, देखिया मोर, परम आनन्द हय।
प्रसाद-सेवा, करिते हय,
सकल प्रपञ्च-जय॥
[”युगल मूर्त्तिका दर्शनकर मुझे परम आनन्द प्राप्त होता है। महाप्रसादका सेवन करनेसे मायाको भी जय किया जा सकता है। ” (शुद्ध-भक्त, श्लोक ५)] युगल-मूर्ति, देखिया मोर। जब मैं भक्तों को देखता हूं, तो मैं जल्दी ही आनंद से भर जाता हूं। प्रसाद-सेवा। हमें बंदरों की तरह यह सोचकर खाना और दौड़ना

नहीं चाहिए, ”ओह, मुझे उनके आने से पहले प्रसाद लेना चाहिए, नहीं तो वे इसे बांट लेंगे।” ऐसी सोच भक्ति नहीं है। प्रसाद-सेवा। हमें प्रसाद की सेवा करनी चाहिए। नाम-सेवा, वैष्णव-सेवा, ठाकुर-सेवा। हमें पवित्र नाम, वैष्णवों और ठाकुरजी की सेवा करनी चाहिए। सकल प्रपंच जय। प्रसाद-सेवा से मैं प्रपंच, भौतिक अस्तित्व पर विजय पाऊँगा, और मेरी सभी भौतिक इच्छाएं आसानी से गायब हो जाएंगी।
जे दिन गृहे, भजन देखि,
गृहेते गोलोक भाय।
चरण-सीधू, देखिया गङ्गा,
सुख ना सीमा पाय॥
[”जिस दिन घरमें भजन-कीर्तन होता है, उस दिन घर साक्षात् गोलोक वृन्दावन हो
है। श्रीभगवान् का चरणामृत और श्रीगंगाजीका दर्शनकर तो सुखकी सीमा ही नहीं रहती।” (शुद्ध-भकत, श्लोक ६)]
भजन देखि। यह भजन है। गृहेते गोलोक भाय। अब यहाँ गोलोक आया है। जहां ठाकुरजी और कीर्तन हैं, वह स्थान गोलोक है। हमें सभी स्थानों को गोलोक वृंदावन जैसा बनाने का प्रयास करना चाहिए। चरण-सीधू, देखिया गङ्गा, सुख ना सीमा पाय। एकादशी की तरह, गंगा कृष्ण-प्रिय है, और वह उस जल से आती है जो कृष्ण के चरण धोता है। वह सदा पवित्र है और सबको पावन बनाती है। जब मैं गंगा को देखता हूं, तो मुझे असीम खुशी का अनुभव होता है; मैं नहीं कह सकता कि इससे किस तरह की खुशी मिलती है।
खासकर जब मैं नवद्वीप जाता हूं और उस घाट को देखता हूं जिस पर चैतन्य महाप्रभु स्नान करते थे, वह घाट जिस पर उन्होंने पंडित केशव कश्मीरी को पराजित किया था, और वह घाट जिस पर उन्होंने गंगा में छलांग लगाई थी, और रात में ”हे कृष्ण, हे कृष्ण” ऐसा चिल्लाते हुए तैरकर गंगा के उस पार चले गए थे, और संन्यास आश्रम स्वीकार किया था, मेरे दिल में इतनी सारी मनोदशाएं (मनोभाव) प्रवेश करती हैं।
तुलसी देखि’, जुड़ाय प्राण, माधवतोषणी जानि’।
गौर-प्रिय, शाक-सेवने,
जीवन सार्थक मानि॥
["माधवप्रिया तुलसीजीका दर्शनकर त्रितापोंसे दग्ध हुआ हृदय सुशीतल हो जाता है। गौरसुन्दरके प्रिय सागका आस्वादन करनेमें ही मैं जीवनकी सार्थकता मानता हूँ।” (शुद्ध-भकत, श्लोक ७)]
तुलसी देखि’, जुड़ाय प्राण। जुड़ाय प्राण की व्याख्या करने के लिए कोई समानार्थी अंग्रेजी शब्द नहीं है। तुलसी देवी हमेशा माधव की सेवा करती हैं। जब मैं तुलसी देवी को देखता हूं तो मेरा दिल ठंडा हो जाता है। सभी भौतिक इच्छाएं गायब हो जाती हैं, और मेरा हृदय शांत हो जाता है क्योंकि मैं कृष्ण, महाप्रभु और उनके सभी सहयोगियों (परिकरों) को याद करता हूं। माधव-तोषणी जानि’। गौर-प्रिय, शाक-सेवने। गौर-प्रिय शाक। महाप्रभु को पालक जैसी सब्जी (शाक) सभी स्वादिष्ट खाद्य पदार्थों से भी ज्यादा प्रिय हैं।
भकति विनोद, कृष्ण-भजने,
अनुकूल पाय जाहा।
प्रतिदिवसे, परम-सुखे,
स्वीकार करये ताहा॥
[कृष्णभजनके अनुकूल जीवननिर्वाहके लिए जो कुछ पाता है, यह भक्तिविनोद प्रतिदिन उसे सुखपूर्वक ग्रहण करता है। (शुद्ध भकत, श्लोक ८)]
भक्तिविनोद सोचते है कि जो चीजें भक्ति के लिए अनुकूल हैं, वे उन सभी का दृढ़ विश्वास के साथ सम्मान करते है और वे उन चीजों को जल्दी से निकाल देंगे जो प्रतिकूल हैं। हे माधव-तिथि, और एकादशी, कृपया हम पर दया करें।

गौर प्रेमानंदे हरि हरि बोल!

द्वादशी को तुलसी-पत्तों का चयन वर्जित
छिन्द्यात् तुलसीं विप्रा द्वादश्यां वैष्णवः क्वचित्। (हरिभक्तिविलास, ७/३५४, विष्णु-धर्मोत्तर पुराण)
विष्णुधर्मोत्तर में लिखित है—हे विप्रगण! वैष्णव द्वादशी तिथि में कदाच
चयन न करे। अर्थात् हे ब्राह्मणों, एक वैष्णव द्वादशी के दिन कभी भी तुलसी पत्तों का चयन नहीं करता।
भानुवारं विना दुर्व्वां तुलसीं द्वादशीं विना।
न विचिन्वीत धर्मवित्॥
(हरिभक्तिविलास, ७/३५५, गरुड-पुराण)
गरुड़पुराण में कथित है—धर्मज्ञ व्यक्ति, यदि आयु ह्रास की कामना न करें
तो, रविवार में दूर्वा एवं द्वादशी तिथि में तुलसी चयन न करें। ऐसा करने से परमायु घटती हैं।
पाद्मे च श्रीकृष्णसत्या संवादीय-कार्त्तिकमात्म्ये—
द्वादश्यां तुलसीपत्रं धात्रीपत्रञ्च कार्त्तिके।
स नरो गच्छेन्निरयानतिगर्हितान्॥
(हरिभक्तिविलास ७/३५६, पद्म-पुराण,
कृष्ण और सत्यभामा के बीच का संवाद)
पद्मपुराण के श्रीकृष्ण सत्यभामा संवाद में उक्त है—जो व्यक्ति, द्वादशी तिथि में तुलसीपत्र एवं कार्त्तिकमास में धात्रीपत्र छेदन करते हैं, अतिशय नरक गमन करते है। अर्थात् यदि कोई मनुष्य द्वादशी के दिन तुलसी-पत्तों

का चयन करता है या कार्तिक महीने में आँवले के वृक्ष के पत्तों का चयन करता है तो उसे अत्यंत गर्हित नरक-लोक की प्राप्ति होकर दुःख का अनुभव करना पड़ता है।

एकादशी के दिन श्राद्ध एवं विवाह वर्जित
एकादशी के दिन अपने दिवंगत रिश्तेदारों का श्राद्ध न करें। एकादशी के
दिन शादी (विवाह) न करें। एकादशी के दिन विवाह करने से जीवन भर दंपती को दुःख की प्राप्ति होती हैं।
यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्या-समानि च।
य अन्नमाश्रित्य तिष्ठन्ति सम्प्राप्ते हरिवासरे।
तानि पापान्यवाप्नोप्ति भुञ्जानो हरिवासरे॥
(नारदपुराण)
एकादशी तिथि आनेपर ब्रह्महत्यादि सभी पाप अन्नका आश्रय करके रहते हैं, इसलिए एकादशी दिनमें अन्न भोजन करनेसे पूर्वोक्त पापोंको ग्रहण करना पड़ता है।
एकादश्यां मुनिश्रेष्ठ! श्राद्धे भुङ्क्ते नरो यदि।
प्रतिग्रासं स हि भुङ्क्ते किल्बिषं मूत्र विष्मयं॥
(संहिता)
हे मुनिश्रेष्ठ! कोई मनुष्य एकादशी तिथिमें श्राद्ध भोजन करता है तो उसे प्रतिग्रासमें ही विष्ठा, पेशाबयुक्त पाप भोजन करना पड़ता है।
विशेष विधि यह है कि श्राद्ध तिथि एकादशीके (अथवा उपवास यदि द्वादशीके
दिन हो, तब उस) दिन उपस्थित होनेपर उस उपवासवाले दिन श्राद्ध न करके पारणके दिन श्राद्ध करना चाहिये। हरिभक्तिविलास बारहवें अध्यायमें एकादशी नियमोंके प्रसङ्गमें ऐसा वर्णित है। जैसे पद्मपुराणके पुष्कर खण्डमें लिखा है— “एकादश्यां यदा राम श्राद्धं नैमित्तिकं भवेत्।
तद्दिने तु परित्यज्य द्वादश्यां श्राद्धमाचरेत्॥”
“हे राम! एकादशीमें नैमित्तिक श्राद्ध उपस्थित होनेपर उस दिनको छोड़कर द्वादशीमें श्राद्ध करना चाहिये।” पद्मपुराणके उत्तरखण्डमें लिखा है— “एकादश्यान्तु प्राप्तायां मातापित्रोर्मृतेऽहनि।
द्वादश्यां तत् प्रदातव्यं नोपवासदिने क्वचित्।
गर्हितान्नं न चाश्नन्ति पितरश्च दिवौकसः॥”
“माता-पिताके मृत्यु-दिनमें एकादशी उपस्थित होनेपर द्वादशीमें श्राद्ध करना चाहिये। उपवासके दिन कदापि श्राद्ध न करे, क्योंकि देवता एवं पितृगण निन्दितान्न भोजन नहीं करते हैं।” स्कन्द-पुराणमें भी कहा है—
“एकादशी यदा नित्या श्राद्धं नैमित्तिकं भवेत्।
तदा कुर्याद्द्वादश्यां श्राद्धमाचरेत्॥”
“नित्य स्वरूपिणी एकादशीमें नैमित्तिक श्राद्ध समागत होनेपर एकादशीमें उपवासी रहकर द्वादशीमें श्राद्ध करना चाहिये।” ब्रह्मवैवर्त पुराणमें कहा है
—

“ये कुर्वन्ति महीपाल श्राद्धं त्वेकादशीदिने।
त्रयस्ते नरकं यान्ति दाता भोक्ता परेतकः॥” “हे राजन्! एकादशीके दिनमें श्राद्ध करनेसे दाता, भोक्ता एवं प्रेत— तीनोंकी नरकमें गति होती है।”

सधवा एवं विधवा महिला भी एकादशी का उपवास रखें (श्रीचैतन्यचरितामृत आदि-लीला १५.८)

एकदिन मातार पदे करिया प्रणाम।
प्रभु कहे,—“माता, मोरे देह एक दान॥”८॥
शचीमाताको एकादशी-व्रत पालनमें प्रवृत्त करना —
माता बले,—“ताइ दिब, या तुमि मागिबे।”
प्रभु कहे,—“एकादशीते अन्न ना खाइबे॥”९॥

शची कहे,—“ना खाइब, भालइ कहिला।”
सेइ हैते एकादशी करिते लागिला॥१०॥
अनुवाद—एक दिन शचीमाताके श्रीचरणोंमें प्रणाम करके महाप्रभुने कहा,
— “माता! मुझे एक दान दीजिये।” माताने प्रसन्नतासे कहा,—“जो तुम माँगोगे, मैं वही दूँगी।” महाप्रभुने कहा,—“आप एकादशीके दिन अन्न नहीं खाना।” शचीमाताने कहा,—“तुमने ठीक ही कहा है, मैं अबसे एकादशीके दिन अन्न नहीं खाऊँगी।” उस दिनसे शचीमाता एकादशी व्रतका पालन करने लगीं॥८-१०॥
अनुभाष्य—श्रीजीव गोस्वामीने भक्ति सन्दर्भके २९९ संख्यामें लिखा है— “स्कान्दे—‘मातृहा पितृहा चैव भ्रातृहा गुरुहा तथा। यो भुङ्क्ते विष्णुलोकच्युतो भवेत्॥’ अत्र वैष्णवानां निराहारत्वं नाम महाप्रसादान्न परित्याग एव; नित्यमेव निषिद्धत्वात्। आग्नेये—‘एकादश्यां न भोक्तव्यं तद्व्रतं वैष्णवं महत्।’ तत्र तावदस्य अवैष्णवेऽपि नित्यत्वम्।”
“स्कन्दपुराणमें कहा गया है—‘जो व्यक्ति एकादशीके दिन भोजन करता है, वह मातृ-हत्या, पितृ-हत्या, भ्रातृ-हत्या और गुरु-हत्या न करते हुए भी उनके पापोंका भागी होता है तथा उस व्यक्तिकी कभी भी विष्णुलोकमें जानेकी आशा नहीं है।’ यहाँ वैष्णवोंके द्वारा निराहार रहनेसे महाप्रसादके त्यागको भी समझना चाहिये, क्योंकि वैष्णवोंके लिये महाप्रसादको छोड़कर अन्य भोजन सदा ही वर्जनीय है। अग्निपुराणमें भी कहा गया है—‘एकादशी तिथिके दिन भोजन मत करो, क्योंकि यह व्रत विष्णु सम्बन्धी है और महान् है।’ यह एकादशी-व्रत अवैष्णवोंके लिये भी अवश्य कर्त्तव्य है।”
वैष्णव लोग महाप्रसादके अतिरिक्त अन्य कोई भी वस्तु किसी दिन, किसी भी
समय स्वीकार नहीं करते, किन्तु एकादशीके दिन महाप्रसाद-त्याग करनेका नाम ही ‘उपवास’ है॥९॥
अमृतानुकणिका—हरिभक्तिविलास (१२/३)—
“अत्र व्रतस्य नित्यत्वादवश्यं तत् समाचरेत्। सर्वपापापहं सर्वार्थदं श्रीकृष्णतोषणम्॥” “एकादशी व्रत नित्य और अवश्य पालनीय है। इसका अनुष्ठान करनेसे सभी पाप
नाश होते हैं, सर्वार्थकी प्राप्ति होती है और सर्वोपरि श्रीकृष्ण प्रसन्न होते हैं।” हरिभक्तिविलास (१२/५) में मत्स्य और भविष्यपुराणसे उद्धृत श्लोक— “एकादश्यां निराहारो यो भुङ्क्ते द्वादशीदिने।
वा यदि कृष्णे तद्व्रतं वैष्णवं महत्॥”
“शुक्ल और कृष्ण, दोनों पक्षोंकी एकादशीमें उपवासी रहकर द्वादशीके दिन भोजन करनेसे इस व्रतसे श्रीकृष्ण परम सन्तुष्ट होते हैं।”
एकादशीके दिन भोजन निषेध है। जैसे अग्निपुराणमें (हरिभक्तिविलास १२/६) — “एकादश्यां न भुञ्जीत व्रतमेतद्धि वैष्णवम्॥”
तथा नारदीय पुराण और पद्मपुराणमें (हरिभक्तिविलास १२/१२) कहा गया है—
“न भोक्तव्यं न भोक्तव्यं संप्राप्ते हरिवासरे।”
चारों आश्रमोंमें स्थित व्यक्तियोंके लिये एकादशी पालनीय है, ऐसा विष्णुधर्मोत्तर (हरिभक्तिविलास १२/२५) में कहा गया है—
“ब्रह्मचारी गृहस्थो वा वानप्रस्थोऽथवा यतिः।
एकादश्यां हि भुञ्जानो भुङ्क्ते गोमोसमेव हि॥”
“ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, अथवा संन्यासी, जो कोई भी हो,— हरिवासरमें भोजन करनेपर वह गोमांस भोजन होता है।”
बृहन्नारदीय पुराण (हरिभक्तिविलास १२/७) में सभी वर्णोंके लिये भी एकादशी पालनका निर्देश दिया गया है—
“ शुद्राणाञ्चैव योषिताम्।
मोक्षदं कुर्वतां भक्त्या विष्णु प्रियतरं द्विजाः॥”

“हे द्विजवृन्द! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, नारी—जो कोई भी क्यों
न हो, भक्तिपूर्वक श्रीविष्णु-प्रीतिप्रद एकादशी व्रतका पालन करनेसे मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं।” इस श्लोकमें नारी कहनेसे सधवा और विधवा, दोनोंको लक्ष्य किया गया है। परन्तु कुछ लोगोंका मत है कि सधवा नारीको एकादशीका व्रत नहीं करना चाहिये, ऐसा वे एक स्मृति वाक्यको लेकर कहते हैं —
“पत्यौ जीविति या नारी उपवासव्रतञ्चरेत्।
आयुः सा हरति भर्त्तुर्नरकञ्चैव गच्छति॥”
“पतिके जीवित रहते जो नारी उपवास-व्रतका आचरण करती है, वह अपने पतिकी आयुका हरण करके नरकमें गमन करती है।” इस वाक्यका उद्देश्य एकादशी व्रतका निषेध नहीं है, अपितु अन्य सभी व्रतोपवासोंका ही निषेध है, अन्यथा इस वाक्यका अन्य शास्त्र प्रमाणोंसे विरोध होता है। विष्णुधर्मोत्तर (हरिभक्तिविलास १२/४७) में कहा है—
“सपुत्रश्च सभार्याश्च स्वजनैर्भक्तिसंयुतः। एकादश्यामुपवसेत् पक्षयोरुभयोरपि॥” “भक्तिसे युक्त होकर पत्नी, पुत्र और स्वजनोंके सहित दोनों पक्षोंकी एकादशी तिथिमें उपवास करना चाहिये।” यहाँ पत्नी सहित कहनेसे यह स्पष्ट है कि सधवा स्त्रियोंको भी एकादशीका व्रतोपवास करना चाहिये। इसलिये महाप्रभुने भी अपनी सधवा मातासे एकादशी उपवासके अनुरोध किया और श्रीशची माताने उसे सहर्ष स्वीकार किया॥९-१०॥

एकादशी के रात्रि-जागरण में श्रीश्रीचमत्कार-चन्द्रिका का पाठ करें
श्रीश्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर द्वारा विरचित श्रीश्रीचमत्कार-चन्द्रिका नामक ग्रंथ में चार कौतूहल (कथाएं) लिखें हैं। प्रथम कौतूहलमें मञ्जूषिका मिलन है। द्वितीय कौतूहलमें अभिमन्युके वेषमें श्रीकृष्णका राधाजीसे मिलन है। तृतीय कौतूहलमें श्रीकृष्ण वैद्यवेषमें राधाजीसे मिलते हैं। चतुर्थ कौतूहलमें श्रीकृष्ण गायिका रमणीके वेषमें राधाजीसे मिलित हुए हैं। महाजन पदावलीमें भी इन लीलाओंका यथेष्ट आभास मिलता है। ऐसा कहा जाता है कि हरिवासर अर्थात् एकादशीके रात्रि-जागरणके सम्पर्कमें चार-यामोंके लिए ये चार कौतूहल लिखे गये हैं। पूर्वकालमें भी वैष्णव लोग इस ग्रन्थका अनुशीलन और आस्वादनकर अनेक प्रकारके भावोंके साथ परस्पर रसोद्गार और स्व-अनुभूत अद्भुत चमत्कारिताका आदान-प्रदान करते हुए परम आनन्दित हुआ करते थे।

एकादशी के दिन श्रीमद्भागवत महापुराण का श्रवण द्वादश्यामेकादश्यां वा श्रृण्वन्नायुष्यवान् भवेत्।
पठत्यनश्नन् प्रयतः ततो भवत्यपातकी॥
(श्रीमद्भागवत १२.१२.६०)
जो पुरुष द्वादशी अथवा एकादशी के दिन श्रीमद्भागवत महापुराण का श्रवण
करता है, वह दीर्घायु हो जाता है और जो संयमपूर्वक निराहार रहकर पाठ करता हैं, उसके पहले के पाप तो नष्ट होत जाते है, पाप की प्रवृत्ति भी नष्ट हो जाती है।
यदि प्रतिदिन श्रीमद्भागवत महापुराण श्रवण करने का अवकाश नहीं भी तो
एकादशी एवं द्वादशी के दिन इसे जरूर सुनना चाहिए। इस महापुराण को श्रवण करनेसे धर्म की वृद्धि होती है। ‘धर्मेण वर्द्धते चायुः’—धर्म के पालन से आयु की वृद्धि होती अर्थात् श्रवणकर्ता अकाल-मृत्यु-हीन हो जाता है। ग्रहादि अरिष्ट से जो परमायु
का नाश होता है, उससे श्रवणकर्ता बच जाता है। भक्तिपूर्वक इन्द्रियों के वेगों
का दमन करते हुए उपवास सहित इस महापुराण का पाठ करने से मनुष्य अपातकी (पापरहित) जाता है। अर्थात् मनुष्य महापातक एवं उपपातक से हीन हो जाता है।

एकादशी के दिन श्रीराधाकृपाकटाक्ष-स्तवराज का पाठ करें पूर्णिमाके दिन, शुक्लपक्षकी अष्टमी या दशमीको तथा दोनों पक्षकी एकादशी
और त्रयोदशीको, जो शुद्ध बुद्धिवाला भक्त ‘श्रीराधाकृपाकटाक्ष-स्तवराज’ का प्रीतिपूर्वक पाठ करेगा, वह जो भावना करेगा वही प्राप्त होगा, अन्यथा निष्काम भावनासे पाठ करने पर श्रीराधाजीकी दयादृष्टिसे पराभक्ति प्राप्त होगी।

असत्संगके दोष
—श्रीभक्तिविनोद ठाकुर
असत्संगसे बचना चाहिए। इनका संग करनेसे श्रेय वस्तुका साधन किसी प्रकार
भी संभव नहीं है। जो असत्संगमें रहते हैं, वे सहस्त्रों प्रकारके साधन करके भी कोई फल लाभ नहीं कर सकते। आजकल अधिकांश लोग साधु-संन्यासियोंका बाना पहनकर साधनके अंगोंका पालन करते हैं, किन्तु कुछ दिनोंके बाद विचार करने पर देखा जाता है कि वे कुछ उन्नति नहीं कर सके हैं। इसका मूलकारण असत्संग है। असत्संग दो प्रकारका होता है—एक स्त्रीसंगी अथवा स्त्रीसंगियोंका संग, और दूसरा कृष्णभक्तिसे रहित व्यक्तियोंका संग। इन दोनों प्रकारके असत्संगोंसे ही दूर रहना चाहिए। प्रत्येक हरिवासर (एकादशी) के दिन एक बार विचार करना कर्त्तव्य है कि पिछले दिनोंमें हमारा भजन कितना उन्नत हुआ है। यदि देखा जाय कि तनिक भी उन्नति नहीं हुई है अथवा उन्नतिके बदले अवनति हुई है, तो समझना चाहिए कि असत्संग ही इसका प्रधान कारण है और उसे तत्क्षण उसका परित्याग करनेका यत्न करना चाहिए।

वैष्णवों की सन्तुष्टि के लिये सेवा श्रील भक्तिप्रकाश अरण्य गोस्वामी महाराज श्री भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर के प्रिय शिष्य थे। एक समय एकादशी के दिन हैदराबाद स्थित श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ में रन्धन-कार्य में निपुण एक ब्रह्मचारी ने मूँगफली, नारियल, बादाम, काजू से युक्त सब्जी, सूखे मेवे से युक्त पपीते की पायस (खीर), तली हुई मूंगफली तथा अन्य कई सुस्वादिष्ट व्यञ्जन तैयार किये।
सभी भक्त प्रसाद पा रहे थे तभी श्रील अरण्य गोस्वामी महाराज ने रन्धन करने वाले ब्रह्मचारी को निकट बुलाकर कहा, “तुमने बहुत सुन्दर व्यञ्जन तैयार किये हें। सभी तुम्हारी रसोई की प्रशंसा कर रहे हें। किन्तु मैं क्या खाऊँ? मेरे दाँत नहीं हैं।” ऐसा कहते हुए श्रील महाराज ने तब उस ब्रह्मचारी के कान को अच्छे से मरोड़ते हुए कहा, “शास्त्र कहते हैं—
चतुर्विध-श्रीभगवत्प्रसाद,

कृत्वैव तृप्तिं भजतः सदैव, गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥
(४)
[जो श्रीकृष्णभक्त-वृन्दको चर्व्य, चुष्य, लेह्य और पेय—इन चतुर्विध रस-समन्वित सुस्वादु महाप्रसादान्न द्वारा परितृप्त कर (अर्थात् प्रसाद-सेवनके द्वारा प्रपञ्चनाश और प्रेमानन्दका उदय करवाकर) स्वयं तृप्ति लाभ करते हैं, उन्हीं श्रीगुरुदेवके पादपद्मोंकी मैं वन्दना करता हूँ॥४॥]
“यदि तुम रन्धन के द्वारा भलीभाँति वैष्णवों की सेवा करना चाहते हो तो तुम्हें चारों प्रकार के पकवान तैयार करने पड़ेंगे। अन्यथा सभी तुम्हारी सेवा से सन्तुष्ट नहीं होंगे एवं तुम्हारी सेवा अधूरी मानी जायेगी।”
तात्पर्य: एकादशी के दिन अनुकल्प भोग बनाते हुए हमें ध्यान रहें की वयोवृद्ध दंतविहीन वैष्णवों के लिए मुलायम अनुकल्प व्यंजन अवश्य बनाए।

क्या विग्रह (ठाकुरजी) को एकादशी दिन अन्न का भोग लगाएँ (कक्ष संवाद, श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज, अप्रैल २२, १९७२, जापान)
प्रश्न: क्या एकादशी के दिन हम विग्रह (ठाकुरजी) को अनाज (अन्नप्रसाद) का
भोग लगा सकते हैं?

उत्तर: हाँ। लेकिन श्रील गुरुदेव को अन्नप्रसाद का भोग नहीं लगा सकते। एकादशी का पालन जीव-तत्त्व द्वारा किया जाता है, विष्णु-तत्त्व द्वारा नहीं। हम अपने भौतिक रोग को दूर करने के लिए उपवास कर रहे हैं, लेकिन श्रीश्रीराधा- कृष्ण और श्रीचैतन्य महाप्रभु को एकादशी व्रत करने की कोई जरुरत नही। फिर भी एकादशी के दिन श्रीचैतन्य महाप्रभु को भी अनाज के (अन्न के द्वारा बनाए हुए) व्यंजनों का भोग अर्पण नहीं किया जा सकता है, क्योंकि वे एक भक्त की भूमिका निभा रहे हैं। केवल श्रीश्रीराधा-कृष्ण, श्रीजगन्नाथ को ही अनाज के (अन्न के द्वारा बनाए हुए) व्यंजनों का भोग अर्पण किया सकता है। अन्यथा, एकादशी को श्रीश्रीगुरु-गौरांग को अन्न का भोग नहीं लगाया जाता। और अन्न-प्रसाद किसी को नहीं चाहिए। एकादशी के दिन भगवान् श्रीकृष्ण को अर्पित अन्न-प्रसाद अगले दिन के लिए रख देना चाहिए।

एकादशी की मज़ेदार लीला
एक समय की घटना हैं—एक हरि नामक लडका एक गाव में रहता था। हरि अशिक्षित
था। शिक्षा न होने से वह विशेष ज्ञान से हीन था। साथ ही साथ वह आलसी भी था। तब गाव के लोग उसे कहने लगे, “हे हरि! तू तो सिर्फ ‘खाने के लिए काल हैं, भूमि को भार हैं।’ तू कोई मठ में क्यों नहीं जाता? वहाँ सेवा करने से तुझे भरपेट प्रसाद मिलेगा।”
हरि भी को अच्छे व्यंजन और भरपूर मिठाईयां खाने की इच्छा थी। ये सून कर
हरि अयोध्या आया। अयोध्या आने पर हरि रहने के लिए कोई अच्छा मठ ढूंढने लगा। उसे एक मठ मिला भी। उस मठ में रहने वाले सन्तों का उसने दर्शन किया। उस ने गौर किया की उस मठ में रहने वाले सारे संत बहुत ही विशालकाय और हृष्टपुष्ट शरीर वाले थे। तब उस ने अनुमान लगाया की अवश्य ही इस मठ में उत्तम प्रकार का प्रसाद प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता होगा।
उस मठ के महंत की हरि ने भेट की। उस ने महंत को मठ में रहने की परवानगी मांगी।
उसने महंतजी से प्रश्न किया, “गुरुदेव! इस मठ में प्रति दिन कितने बार प्रसाद मिलता हैं?” महंतजी ने उत्तर दिया, "यहाँ प्रसाद दिन में दो ही बार मिलता हैं। एक बार सुबह और एक बार रात में।”
हरि बोला, “मुझे तो दिन में तीन बार प्रसाद पाने की इच्छा हैं।" तब महंत ने कहा, “कोई चिंता न करना। सुबह का प्रसाद थोड़ा अधिक मात्रा में लेकर आप वह प्रसाद दोपहर के लिए संग्रह कर के रखना। वही प्रसाद आप दोपहर को पा सकोगे।”
अब हरि मठ में रहने लगा। मठ में हरि जो भी सेवा उसे प्रदान की जाती उसे सुष्ठु रूप से संपादन करता था। इस प्रकार से उस का जीवन सुख से व्यतीत होने लगा।
एक दिन सुबह हरि ने देखा की मठ के पाकशाला में बहुत देर तक कोई भी सब्जी काटने नहीं आया। तब हरि ने एक मठवासी से जिज्ञासा की—“क्या आज रसोई घर में कुछ नहीं बनेगा? आज रसोई घर में सन्नाटा क्यों हैं?” मठवासी ने कहा, “अरे हरि, तुझे मालूम नहीं हैं क्या? आज एकादशी है। आज मठ में रसोई नहीं बनेगी। आज मठ में रहने वाले सभी भक्त एकादशी के उपवास का पालन करेंगे। कोई भी कुछ भी खाएगा या पियेगा नहीं।”
ये सुनकर तो हरि तो बहुत घबड़ा गया। वह विचार करने लगा, “एकादशी के उपवास
का पालन करना तो मेरे लिए असंभव हैं।” उस ने जाकर महंतजी से मुलाकात की। उसने कहा, “गुरुदेव, मेरे लिए एकादशी का निर्जल उपवास करना असंभव हैं। मैं दिन में तीन बार खाए बगैर नहीं रह सकता। कृपया आज मेरे भोजन की व्यवस्था करें। अन्यथा मैं दूसरे मठ में चला जाऊँगा।”
तब महंत ने कहा, “हरि, आज कोई भी मठ में तुझे अन्नप्रसाद नहीं मिलेगा। आज
सब मठों में एकादशी के उपवास का पालन किया जाएगा। लेकिन चिंता का कारण नहीं हैं। हम तुम्हें डाल, चावल, आटा, तेल, मसाले, सब्जियां इत्यादि सब रसोई की सामग्री प्रदान करते हैं। आप स्वयं चावल, सब्जी, दाल, रोटी, चटनी इत्यादि व्यंजन बनाकर, श्रीराम को निवेदन करो और स्वयं भी वह प्रसाद स्वीकार करो।” गुरुदेव ने हरि को रसोई सब सामग्री प्रदान की। हरि ने रसोई बनाना आरंभ किया। हरि आज पहले बार रसोई बना रहा था। हरि को रसोई बनाने का अभ्यास न होने से उसने बनाई हुई रोटियां थोड़ी जल गयी। परंतु उसने गुरुजी के आदेश के अनुसार दो थालियाँ तैयार की—एक राम के लिए और एक स्वयं के लिए।
बाद में हरि कहने लगा, “हे प्रभु राम, आप जल्दी आइये। मेरे ऊपर कृपा करिए
एवं भोग स्वीकार करिए। आप को भोग अर्पण किये बगैर मैं भोजन कर नहीं पाऊँगा।” मगर राम आये नहीं। तब तो दीन हीन बनकर वह राम को मनाने लगा, “हे राम! आज एकादशी हैं। आज मठ में पेडा, बरफी, हलवा इत्यादि में से कोई भी स्वादिष्ट व्यंजन आप को

प्राप्त नहीं होंगे। मैंने जैसे वैसे कुछ चावल, सब्जी, रोटी इत्यादि रसोई बनाई हैं। आप भोजन कर लें।”
ने बारबार ऐसी याचना करने पर भगवान् श्रीराम का हृदय द्रवित हो गया। वे वहाँ श्रीमती सीताजी के साथ प्रकट हो गए। श्रीराम कभी भी अकेले नहीं रहते। उन की स्वरूप शक्ति श्रीमती सीतादेवी सदा उन के साथ रहती हैं। हरि ने श्रीराम और श्रीमती सीता देवी का दर्शन किया। लेकिन श्रीसीता को देखकर उसे आश्चर्य का धक्का बैठा। वह बारबार अलट पलट कर श्रीमती सीता जी का मुख-कमल और भोजन की दूसरी थाली निहारने लगा।
तब श्रीराम ने उसे पूछा, “अरे हरि, तुझे क्या हुआ हैं? तू ठीक तो हैं ना? तुझे हम दोनों को देखकर आनंद हुआ की नहीं?”
हरि ने कहा, “हाँ, आप दोनों को देखकर मुझे अपार आनन्द हुआ हैं। पर मैंने तो
दो ही थालियाँ भोजन तैयार किया हैं। एक आप के लिए और एक मेरे लिए। परंतु श्रीमती सीतादेवी का भी आगमन होने वाला हैं—इस बात की मुझे तनिक भी कल्पना नहीं थी।”
“स्वयं के हिस्से की एक थाली श्रीमती सीतादेवी को भी अर्पण करना मेरा कर्त्तव्य हैं।” ऐसा विचार कर के उस ने एक भोजन की थाली श्रीराम को और एक थाली सीतादेवी को अर्पण की। अपने लिए भोजन की एक भी थाली न रहने से हरि द्वारा उस एकादशी को निर्जल उपवास का अनुष्ठान अपने आप संपन्न हो गया।
अगली एकादशी आने पर हरि श्रीगुरुदेव के पास गया और उसने प्रार्थना की, “हे श्रीगुरुदेव, पिछले एकादशी से थोड़ी अधिक राशन-सामग्री मुझे प्रदान करिए।” श्री गुरुदेव ने उसकी प्रार्थना को सन्मान देते हुए उसे थोड़े अधिक प्रमाण में रसोई के लिए राशन प्रदान किया। उस एकादशी को हरि ने तीन थालियाँ भोजन बनाया। दो थालियाँ थी श्रीराम और श्रीमती सीतादेवी के लिए, और एक थाली स्वयं के
उस के बाद हरि बड़े ही प्रेम से भगवान् को पुकारने लगा, “हे राम! श्रीमती सीतादेवी के साथ आप पधारिए। मैंने आप दोनों के लिए थालियाँ तैयार रखी हैं। आप दोनों भी भोजन कर लीजिए।"

पर आज श्रीमती सीतादेवी और श्रीराम जी के साथ श्रीलक्ष्मण भी हाजिर हुए।
तब हरि के आश्चर्य को सीमा रही नहीं। वे अलट पलट के तीसरी थाली और श्रीलक्ष्मण के मुख को देखने लगे। उन्हें पता लग गया की एक थाली लक्ष्मण को भी अवश्य देनी पड़ेगी। तब श्रीराम ने हरि को पूछा, “अरे हरि, तुम चकित हुए से दिखते हों। क्या हम तीनों के आगमन से तुम संतुष्ट नहीं हो?”
तब हरि ने उत्तर दिया, “ भगवान् श्रीरामचंद्र, मैं पूरी तरह से संतुष्ट हूं। आप तीनों पेट भर के खा लीजिए।” अब श्रीरामचंद्र, श्रीमती सीतादेवी और श्रीलक्ष्मण ने भोजन किया और वे अन्तर्धान हो गये।
अगले एकादशी को हरि ने श्रीगुरुदेव को फिर से विनती की, “हे गुरुदेव, आज मुझे पिछले एकादशी से भी अधिक राशन और रसोई के उपयोगी सामग्री प्रदान करने की कृपा करे।”
श्रीगुरुदेव ने हरि को पिछले एकादशी से भी अधिक राशन और सामग्री प्रदान करवाई। उस एकादशी को हरि ने पिछले एकादशी से भी अधिक प्रमाण में रसोई बनाकर चार थालियाँ भोजन तैयार किया। एक थाली श्रीराम के लिए, एक थाली श्रीमती सीतादेवी के लिए, एक थाली श्रीलक्ष्मण के लिए और एक स्वयं के लिए।

के बाद हरि भगवान् को पुकारने लगा, “ भगवान् श्रीरामचन्द्र, आप सब आइये
और भोग स्वीकार करिए। भोजन तैयार हैं।”
उस की प्रार्थना आतुर गुहार सुनकर श्रीरामचन्द्र प्रकट हो गये। लेकिन उन
के साथ श्रीमती सीतादेवी, श्रीलक्ष्मण और श्रीहनुमान भी थे। श्रीहनुमान को देखकर हरि को आश्चर्य का झटका लगा। वे बारबार अपनी थाली और श्रीहनुमान का मुख निहारने लगे। तब श्रीराम ने उनसे पूछा, “हे हरि, क्या हम सब को देखकर तू संतुष्ट नहीं हों?”
तब हरि ने उत्तर दिया, “अहो श्रीरामचंद्र, आप सब का दर्शन प्राप्त होने से मुझे बहुत आनंद हो रहा हैं।” ऐसे कहते हुए हरि ने अपने हिस्से की थाली श्रीहनुमान को अर्पण की और स्वयं निर्जल एकादशी का उपवास रखा।
श्रीरामचन्द्र उन के परिकरों के साथ अन्तर्धान होने ही वाले थे, तब हरि ने
से प्रार्थना की, “हे राम, अगले एकादशी को आप कितने भक्तों के साथ पधारेंगे, ये मुझे पहले ही बतायें, जिससे की मैं उतने लोगों का प्रसाद तैयार रख पाऊँगा।”
ये सुनकर श्रीरामचंद्र कुछ भी नहीं बोले और थोड़ा सा मुस्कराकर वे अपने परिकरों के साथ वहाँ से अन्तर्धान हो गए। उस के अगले एकादशी के दिन हरी ने श्रीगुरुदेव को विनती की, “हे गुरुदेव, मुझे आज पिछले एकादशी से भी बहुत अधिक राशन-सामग्री चाहिए। मैं जब एक के लिए भोजन बनाता हुँ, तब दो लोग आते हैं। दो लोगों के लिए बनाने से तीन जन आते हैं। और तीन लोगों के लिए बनाने से चार लोगों का आगमन होता हैं। इसलिए मुझे भरपूर राशन-सामग्री प्रदान करें।”
गुरुदेव ये बिलकुल समझ नहीं पा रहे थे की हरि किसके लिए इतनी राशन-सामग्री मांग रहा हैं। उन्हें लगा की शायद हरि किसी को प्रसाद वितरण करता होगा। फिर भी उस एकादशी को गुरुदेव ने उसे भरपूर राशन-सामग्री प्रदान की। उस के उपरांत चुपचाप हरि का पीछा करते हुए श्रीगुरुदेव रसोई घर में गये।
हरि ने वो सब राशन-सामग्री रसोई घर में लाकर रखी। परंतु हरि ने आज कुछ भी रसोई बनाई नहीं। सामान वैसे ही रसोई घर में रखकर वह बोला, “हे सीतादेवी, हे राम, हे लक्ष्मण, हे हनुमान, आप सब आइए। आज रसोई के लिए सब राशन-सामग्री तैयार हैं।” उस समय राम, सीता, लक्ष्मण, और बहुत सारे भगवान् श्रीराम के परिकर—जैसे जांबवान, नल, नील, सुग्रीव, अंगद इत्यादि उस स्थान पर प्रकट हुए। राम दाल धोने लगे। सीतादेवी रोटी बनाने के लिए आटा गुथने लगी। हनुमान सिगड़ी में जलाने के लिए लकडी तोड़ने लगे। लक्ष्मण सब्जी काटने के लिए मदद करने लगे। सुग्रीव और जांबवान चूल्हा जलाने लगे। इस तरह श्रीराम के साथ उन के सारे परिकर रसोई बनाने लगे।
तब गुरुदेव वहाँ आए। उन्होंने हरि को पूछा, “अरे कुछ बनाता क्यों नहीं?
हाथ पर हाथ डाल कर क्यों बैठे हो? चलो, रसोई बनाओ।” तब हरि बोला, “गुरुदेव! आप ही देखिए! राम, लक्ष्मण, सीता, हनुमान, अंगद, सुग्रीव, और सभी भगवान् के परिकर रसोई बनाने के लिए योगदान दे रहे है।”
उस समय हरि ने श्रीराम जी को विनती की, “हे राम! आप जल्दी ही सपरिवार मेरे गुरुदेव को दर्शन दो। वरना वो कहेंगे की मैं झूठ बोल रहा हूं। वे मेरे पर विश्वास नहीं करेंगे।”
भगवान् श्रीराम ने अपने परिकरों के साथ हरि के गुरुदेव को दर्शन दिया।
तब गुरुदेव को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उन की आंखों से आंसू बहने लगे। ये लीला देखकर हरि को शुद्ध-भक्ति की प्राप्ति हुई।
इस से पूर्व श्रीराम का दर्शन करके भी हरि को भक्ति प्राप्त नहीं हुई। लेकिन जब श्रीगुरुदेव ने ये श्रीराम की लीला देखी तब श्रीराम और श्रीगुरुदेव की से उसे शुद्ध भक्ति प्राप्त हुई। इस का अर्थ यह हैं की एकादशी के दिन भगवान् की इच्छा हैं की हम सब को नौ प्रकार के अनाज नहीं खाना चाहिए। यदि हमारा सशक्त हैं तो हमें कुछ भी न खाकर और कुछ भी न पीकर एकादशी के व्रत का अनुष्ठान करना चाहिए। इसलिये राम ने पहले एकादशी को एका थाली का भोग स्वयं ग्रहण किया और दूसरे थाली

का प्रसाद सीतादेवी को दिलवाया। किन्तु हरि के लिए कुछ भी अन्नप्रसाद शेष रहने नहीं दिया।
उस के अगले एकादशी को उन्होंने एक थाली का भोग स्वयं स्वीकार किया, दूसरे थाली में का प्रसाद श्रीमती सीताजी को और तीसरे थाली में का प्रसाद श्रीलक्ष्मणजी को प्रदान किया। उससे आगे वाले एकादशी के दिन एक थाली में परोसा भोग श्रीराम जी ने स्वयं स्वीकार किया और शेष तीन थालियों में परोसा हुआ प्रसाद उन्होंने श्रीमती सीतादेवी, श्रीलक्ष्मण और श्रीहनुमान जी को प्रदान किया। उस के आगे वाले एकादशी को उन्हों ने अपने सारे परिकरों के साथ पधारकर स्वयं रसोई बनाकर भोग स्वीकार किया और बचा हुआ सारा प्रसाद अपने सारे परिकरों को प्रदान किया। परंतु हरि के लिए प्रसाद का एक कण भी नहीं रखा।
इस कथा से हमें बहुत सारे भक्ति तत्त्वों की भलीभाँति जानकारी प्राप्त होती हैं। हरि अपने सद्गुरू के आनुगत्य में भजन कर रहा था, परंतु एकादशी व्रत पालन करने की उस की इच्छा नहीं थी। श्रीरामचंद्र ने बहुत सारी एकादशी के तिथियों को सारा भोग स्वीकार कर के हरि को एकादशी का उपवास करवाया। श्रीरामजी की कृपासे उसे एकादशी का उपवास रखने का अभ्यास हो गया।
हरि ने गुरुदेव का आश्रय लिया था। इसलिए श्रीरामचन्द्रजीने स्वयं ध्यान देकर हरि के एकादशी व्रत का रक्षण किया और हरि को एकादशी के दिन अन्न खाने नहीं दिया। अन्त में हरि का श्रीगुरुदेव के चरणों के प्रति प्रामाणिक भाव और प्रेम देखकर श्रीराम ने उसे शुद्ध भक्ति प्रदान कर दी।
हरि ने राम का दर्शन कर के भी उस के मन में डर था की मेरे भोजन की थाली मुझे श्रीमती सीतादेवी, लक्ष्मण या हनुमान जी को सौंपनी पड़ेगी। इस डर का मूल कारण था भोग की लालसा। भोग की लालसा दूर होती हैं भक्ति देवी हृदय में प्रकट होने पर।
एकादशी को भगवान् ने सीता और राम ऐसे दो रूप धारण कर के भोग स्वीकार
किया। दूसरे एकादशी को उन्होंने राम, सीता और लक्ष्मण ऐसे तीन रूप धारण कर के भोग किया। उस के अगली एकादशी को भगवान् ने राम, लक्ष्मण, सीता और हनुमान ऐसे चार रूप कर के भोग स्वीकार किया। लेकिन चौथे एकादशी को भगवान् ने अनेक परिकरों का रूप धारण करके स्वयं रसोई बनाई और भोग स्वीकार किया। ये लीला देखकर हरि की भोग-वासना चली गयी और उस को शुद्ध भक्ति प्राप्त हुई।

एकादशी के लाभ और वैज्ञानिक कारण

एकादशी उपवास करने के शरीर के संबन्धित बाह्य कारण
[श्रील गुरुदेव के ५ जून, १९९८ के एकादशी व्याख्यान से उद्धृत]
एकादशी के दिन चंद्रमा पृथ्वी के क़रीब आता है, और इसलिए वह हर जगह से— समुद्र, नदियों, हमारे शरीर इत्यादि से पानी को आकर्षित करता है। यदि इस दिन कोई अन्नग्रहण करता है, तो वह अन्न सोख्ता कागज की तरह बन जाता हैं। आप पानी पीते हैं, तो वह बहुत जल्द ही शरीर से गुजर जाता है। हालांकि, यदि आप एक साथ अनाज और पानी लेने हैं तब वह अनाज सोख्ता कागज़ या कपास की तरह बनकर पानी को पकड़ कर रखता है।
भले ही आप कपास निचोड़ ले, कुछ पानी रहता ही है। इसी प्रकार यदि आप अनाज खाते हैं, तो वह यह एक स्पंज की तरह हो जाता है। वह बहुत पानी संग्रहित करेगा। चंद्रमा पानी को आकर्षित करेगा, और आप के सभी रोगों में वृद्धि होगी। तुम समुद्र या महासागर में यह देख सकते हो; इस समय वहाँ उच्च ज्वार होता हैं और लहरें बहुत अधिक हो जाती है।]
ये सब शरीर के संबन्धित बाह्य कारण हैं। अपने शरीर से जो लोग आसक्ति रखते हैं, उनके फायदे के लिए मैंने उनका उल्लेख किया है।

एकादशी हमें चंद्रमा के गुरुत्वाकर्षण बल से बचाती है
हवाई, १३ मई २०००
—श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज
प्रत्येक मास के शुक्ल और कृष्ण पक्ष में एकादशी से पूर्णिमा और एकादशी
से अमावस्या तक समुद्र में जबरदस्त ज्वार आता है एवं लहरें बहुत ऊँची ऊँची उठती हैं। इसका कारण है इन पाँच दिनों में चन्द्रमा पृथ्वी के कुछ निकट आ जाता है और पानी को आकर्षित कर बलात् अपनी ओर खींचता है। मनुष्य शरीर में लगभग ९० प्रतिशत भाग तरल होता है, इस पानी पर भी उपयुक्त दिनों में चन्द्रमा का प्रभाव पड़ता है। अन्न ग्रहण करने से अन्न इस पानी को सोख लेते है और चन्द्रमा द्वारा भी पानी खींचने के कारण रोग होने की संभावना हो जाती है। मनुष्य शरीर एक मशीन की भांति है। हम दिन में तीन बार भोजन करते हैं, जिससे इस मशीन को विश्राम नहीं मिलता। इसलिये एकादशी के दिन भोजन न करने से शरीर को विश्राम मिलता है तथा नाम-भजन के लिये अधिक समय भी मिलता है। भक्ति भी पुष्ट होकर वृद्धि को प्राप्त करती है।

एकादशी व्रत के स्वास्थ्य लाभ संबंधी खोज के लिए दो महान पुरस्कार

फिजियोलॉजी या मेडिसिन में २०१६ का नोबेल पुरस्कार

जापानी कोशिका जीवविज्ञानी योशिनोरी ओहसुमी ने २०१६ में अपने शोध के लिए चिकित्सा में नोबेल पुरस्कार जीता। उन्होंने दिखाया की कैसे कोशिकाएं एक ‘ऑटोफैगी’ नामक प्रक्रिया के माध्यम से अपनी सामग्री को पुनर्चक्रित और नवीनीकृत करती हैं। एकादशी उपवास ऑटोफैगी को सक्रिय करता है। इसलिए एकादशी का उपवास करने से बुढापे की प्रक्रिया को धीमी होने में मदद होती है और कोशिकाओं की नवीकरण पर सकारात्मक प्रभाव पडता है।

ऑटोफैगी क्या है?
एकादशी व्रत के दौरान, कोशिकाएं प्रोटीन और अन्य कोशिका घटकों को तोड़ती
हैं और ऊर्जा के लिए उनका उपयोग करती हैं। ऑटोफैगी के दौरान, कोशिकाएं वायरस और बैक्टीरिया को नष्ट करती हैं और क्षतिग्रस्त संरचनाओं और कैंसर कोशिकाओं से छुटकारा पाती हैं। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो कोशिकाएं के स्वास्थ्य, नवीनीकरण और अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण है। ऑटोफैगी यह हमारे शरीर में होने वाली वह प्रक्रिया हैं जिस से हमारा शरीर स्वयं को खाता हैं। यदि हमारे शरीर में कोई भी अतिरिक्त कोशिकाएं, वसा आदि होते है तो वे फिर से इस्तेमाल किए जाते हैं या कूड़े के रूप में त्याग दिये जाते हैं। इस प्रक्रिया में कोशिकाएं ‘ख़ुद को खा लेती हैं।’ और इस प्रक्रिया को बाधित करने पर पार्किंसंस एवं मधुमेह जैसी बीमारियां हो सकती हैं। नोबल ज्यूरी ने कहा, ‘ऑटोफैगी’ जीन में बदलाव से बीमारियां हो सकती हैं और ऑटोफैगी की प्रक्रिया कैंसर तथा मस्तिष्क से जुड़ी बीमारियों जैसी कई स्थितियों में शामिल होती हैं। यदि ऑटोफैगी की यह प्रक्रिया ठीक से हमारे शरीर में चल रही है, तो हमारा शरीर स्वस्थ रहेगा। लेकिन इस प्रक्रिया को ठीक से चलने के लिए आवश्यक हैं की समय-समय हम उपवास रखें। यदि आप समय-समय पर एकादशी जैसे उपवास नहीं करते हैं तो ये अतिरिक्त कोशिकाएं और वसा हमारे पेट में जमा हो जाएँगे और हमारे शरीर को इन अतिरिक्त कोशिकाएं और वसा को संचय करने के लिए अतिरिक्त भार उठाना पड़ेगा। इसके अलावा हमारे सिस्टम में कोशिकाएं और वसा के इस अतिरिक्त संचय के कारण बीमारी हो जाती है। इन अतिरिक्त कोशिकाएं और वसा को सिस्टम से हटा दिया जाना चाहिए या पुनः उपयोग द्वारा संरक्षित किया जाना चाहिए।
इस प्रकार एकादशी व्रत हमें कई ऑटोइम्यून और सूजन संबंधी विकारों से बचा सकता है, जैसे कि सिस्टमिक ल्यूपस एरिथेमेटोसस, सोरायसिस, रुमेटीइड गठिया, आंत्र सूजन रोग, मल्टीपल स्केलेरोसिस और कैंसर। जब हमारा शरीर भूखा होता है, तो यह घातक और कैंसर कोशिकाओं को खा जाता है। विकृति विज्ञान में प्रयुक्त शब्द

‘घातक कोशिकाएं’ का अर्थ उन कोशिकाओं से है जो स्वास्थ्य के लिए खतरनाक हैं; ऐसी कोशिकाओं में प्रगतिशील और अनियंत्रित वृद्धि (विशेषकर कैंसर ट्यूमर) की विशेषता होती है।
अगर ऑटोफैगी की यह प्रक्रिया हमारे शरीर में बेहतर रूप से चल रही है, तो हमारे शरीर में कोई बीमारी नहीं आती है। जापानी नोबेल पुरस्कार विजेता योशिनोरी ओहसुमी ने अपने परीक्षण समूह के सदस्यों को कई दवाइयां देने की कोशिश की। लेकिन उन्हें एहसास हुआ कि समय समय पर किये गये उपवास ही ऑटोफैगी की प्रक्रिया को प्रभावी रूप से मदद कर सकते हैं। कोई भी दवा ऑटोफैगी की प्रक्रिया को उतने प्रभावी रूप से सहायता नहीं कर सकती हैं।
तो एकादशी का उपवास आपके शरीर में चलने वाली ऑटोफैगी की प्रक्रिया में सुधार लाने का सबसे अच्छा और एकमात्र तरीका हैं। इस जापानी वैज्ञानिक ने ये खोज निकाला की एकादशी जैसे आवधिक उपवास ऑटोफैगी की प्रक्रिया को गति देने के लिए परम लाभदायक होते हैं। उन के इस शोध के लिए उन्हें इस महान पुरस्कार के द्वारा गौरवान्वित किया गया।
इस तरह से आधुनिक विज्ञान ने भी एकादशी, राम-नवमी, गौर-पूर्णिमा, नित्यानन्द-त्रयोदशी, नृसिंह-चतुर्दशी, महा-शिवरात्रि, अद्वैत-सप्तमी, कृष्ण-जन्माष्टमी आदि दिनों में भोजन और पानी का त्याग कर के पूर्ण उपवास का पालन करने से होने वाले लाभों को मान्य किया हैं।
अगर हमारा शरीर स्वस्थ हैं और हम निर्जल-एकादशी करने में सक्षम है, फिर भी
यदि एकादशी तिथि की अवहेलना करते हुए हम अनुकल्प (यानी फल और पानी) स्वीकार करते हैं, तो इस अपराध के कारण हम एक गंभीर पापमय प्रतिक्रिया का सामना करना पड़ेगा।
यहां तक कि सांसारिक अर्थ में भी, यदि आप जरूरतमंद लोगों को आवश्यक खाद्य सामग्री और पानी की मदद कर सकते हैं, फिर भी आप भूखे और प्यास से पीडित लोगों की उपेक्षा करते हैं और उन्हें भोजन और पानी नहीं देते हैं, तो आपको उस पाप की प्रतिक्रिया मिलती है।
इसी प्रकार यदि आप एकादशी के दिन पूरी तरह से उपवास करने में सक्षम हैं,
और यदि आप ऐसा नहीं करते हैं, तो आप को पाप में भागी होना पड़ेगा।
उदाहरण के लिए जब देवानन्द पंडित के शिष्यों ने श्रीवास पंडित के चरणों
में अपराध किया तब देवानन्द पंडित भी उस अपराध में निबद्ध हो गए। एक बार श्रीवास पंडित को देवानन्द पंडित के मुख से निसृत श्रीमद्-भागवत के कथा श्रवण करने से भक्ति के अष्ट सात्त्विक विकारों का अनुभव होने लगा। मगर श्रीवास पंडित की शुद्ध भक्ति के उन्नत स्तर से अनभिज्ञ देवानन्द पंडित के अनुयायियों ने श्रीवास पंडित के प्रति असम्मान-जनक व्यवहार करते हुए उन्हें श्रीमद्- भागवत के कथा के मध्य से निष्कासित किया।
अपने अनुयायियों के इस अनियंत्रित आचरण के दरम्यान देवानन्द पण्डित केवल
एक मूक दर्शक की भूमिका निभा रहे थे। नतीजा ये हुआ की श्री चैतन्य महाप्रभु देवानन्द पण्डित से गुस्सा हो गए। जब देवानन्द पण्डित ने वक्रेश्वर पण्डित के चरण कमल में आश्रय लिया तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें श्रीवास पंडित के चरणों में किये हुए अपराध से क्षमा कर दी।
तो यह घटना हमें यह सिखाती है कि पूरी तरह से एकादशी का उपवास करने में सक्षम होने के बावजूद, अगर हम उस दिन फल और दूध का महा-प्रसाद स्वीकार करते हैं, तो हम से एकादशी- की उपेक्षा ही घटित होती हैं। इस के द्वारा हम भगवान्‌ श्रीकृष्ण के आदेश का उल्लंघन करने के पाप और अपराध में दोषी हो जाते हैं। इसलिए एकादशी के दिन पर अनुकल्प (जल या फल) न लें। अनुकल्प सभी के लिए नहीं है। यह किसके लिए है? जो लोग अस्सी वर्ष से भी अधिक आयु के हैं, जो लोग रोगी हैं या फिर जो महिलाएँ गर्भवती हैं, उनके लिए शास्त्र में अनुकल्प की व्यवस्था हैं।
एकादशी के पालन की प्रक्रिया की शुरुआत में हम कुछ फल और पानी भी ले सकते हैं,

क्योंकि पानी और फलों में मौजूद फोलिक एसिड हमें अपने पेट को साफ करने में मदद करेंगे।

हालांकि धीरे -धीरे हमें महत्त्वपूर्ण दिनों में जैसे एकादशी के दिन और विष्णु के अवतारों के आविर्भाव तिथियों में पानी और फल का भी त्याग करने का अभ्यास करना चाहिए।

यहां तक कि सांसारिक अर्थ में , यदि आप किसी भूख और प्यास से पीडित व्यक्ति को देखकर भी यदि एक मूक दर्शक की भूमिका निभाते हैं साथ रह रहे हैं , तो लोग आप से सवाल करेंगे , “अरे , तुमने उसकी मदद क्यों नहीं की ? तुमने उसे जल या अन्न प्रदान का कोई भी प्रयास क्यों नहीं किया ?”

एकादशी -तत्त्व और नाम -तत्त्व में कोई भी अन्तर नहीं है। कुछ लोग निर्जल एकादशी व्रत करने में सक्षम होकर भी निर्जल -एकादशी नहीं करते हैं। वे सोचते हैं कि “हम पाप से छुटकारा पाने के लिए अधिक संख्या में हरि -नाम का उच्चारण ” यह विचार शैली पवित्र भगवद् -नाम के प्रति अपराध का कारण बनती हैं। “मुझे एकादशी के उपवास का अनुष्ठान तो करना हैं , लेकिन मैं सक्षम होकर भी अनुकल्प लुंगा। ” यह एक अपराध युक्त सोच हैं।

श्री चैतन्य महाप्रभु ने भी एकादशी के दिन जगन्नाथ महाप्रसाद का सेवन नहीं था। महाप्रसाद का अर्थ भगवान् को निवेदित फल और अनाज भी हो सकता हैं। लेकिन महाप्रभु ने एकादशी के दिन महाप्रसाद की स्तुति -प्रार्थना की और अगले दिन ही उस का अपने श्री मुख से सेवन किया।

इसलिए यदि हम सक्षम हैं , हमें एकादशी के दिन भगवान् को निवेदन किये हुए फल का महा -प्रसाद भी नहीं खाना चाहिए। एकादशी के दिन निर्जल व्रत का पालन कर के हरि -नाम संकीर्तन में संलग्न रहना ही श्री चैतन्य महाप्रभु का शत प्रतिशत आनुगत्य कहा जा सकता हैं।

फिजियोलॉजी या मेडिसिन में २०१८ का नोबेल पुरस्कार

करोलिंस्का इंस्टिट्यूट में नोबेल असेंबली ने नकारात्मक प्रतिरक्षा विनियमन के निषेध द्वारा कैंसर चिकित्सा की खोज के लिए जेम्स पी . एलिसन और तासुकु होंजो को संयुक्त रूप से फिजियोलॉजी या मेडिसिन में २०१८ नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया।

कैंसर हर साल लाखों लोगों की जान लेता है और यह मानवता की सबसे बड़ी स्वास्थ्य चुनौतियों में से एक है। वर्ष २०१८ के नोबेल पुरस्कार विजेताओं ने ट्यूमर कोशिकाओं पर हमला करने के लिए हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली की अंतर्निहित क्षमता को उत्तेजित करके कैंसर चिकित्सा के लिए एक बिल्कुल नया सिद्धांत स्थापित किया है।

परंपरागत रूप से डॉक्टरों ने कैंसर का मुकाबला करने के लिए विकिरण चिकित्सा और कीमोथेरेपी का उपयोग किया है। हालांकि वर्ष २०१८ में इस महान पुरस्कार विजेता शोध ने कैंसर को ठीक करने के तरीके के रूप में इम्यूनोथेरेपी की खोज की। इम्यूनोथेरेपी में , कैंसर के रोगी सामान्य व्यक्ति एकादशी के दिन ... िक प्रतिरक्ष ... इससे टी - सेल ... रों कैंसर ... ।

... जान लेता ह ... बसे बड़ी
स्व ... वर्ष २०१८ क ... ेताओं ने
... हमारी प्रत ... तर्निहित

क्षमता को उत्तेजित करके कैंसर चिकित्सा के लिए एक बिल्कुल नया सिद्धांत स्थापित किया है।
परंपरागत रूप से डॉक्टरों ने कैंसर का मुकाबला करने के लिए विकिरण चिकित्सा और कीमोथेरेपी का उपयोग किया है। हालांकि वर्ष २०१८ में इस महान पुरस्कार विजेता शोध ने कैंसर को ठीक करने के तरीके के रूप में इम्यूनोथेरेपी की खोज की। इम्यूनोथेरेपी में, कैंसर के रोगी और सामान्य व्यक्ति एकादशी के दिन जल रहित उपवास करके अपनी शारीरिक प्रतिरक्षा को मजबूत करते हैं। इससे टी- सेल्स मजबूत होते हैं। एक टी-सेल हजारों कैंसर कोशिकाओं को मार सकता है।

चावल का पात्र और हमारा पेट
यदि आप के पास एक पात्र हैं जिस में आप हर रोज चावल पकाते हैं। अगर आप उस पात्र में प्रति दिन चावल पकाते हैं और उस पात्र को अंदर से और बाहर से कभी भी राख से साफ कर के पानी से धोया नहीं करते तो क्या होगा?
कुछ दिनों के बाद वह पात्र पूरी तरह से गंदा हो जाएगा और उस में सिद्ध किया हुआ (पकाया हुआ) चावल आरोग्य को हानिकारक साबित होगा। उसी तरह हमारा पेट भी एक पात्र के समान हैं। हम यदि प्रति दिन सुबह नाश्ता, दोपहर को भोजन और रात्रि का भोजन करते रहे तो हमारा पेट भी अंदर से गंदा और दूषित हो जाएगा।
इसी वजह से महीने में दो बार आने वाली दोनों एकादशी तिथियों का उपवास जल
का भी सेवन न करके, अथवा थोड़ा जल पीकर अथवा केवल थोड़े फल खाकर करना चाहिए। एकादशी के दिन उपवास या लंघन करने से हमारे पेट का पात्र साफ हो जाएगा। साथ ही हमारा पेट के विकारों से भी बचाव हो जाएगा।

आयुर्वेद के अनुसार एकादशी उपवास के अद्भुत फायदे
अन्न में भी एक प्रकार का नशा होता हैं। भोजन करने के बाद आलस्य के रूप
में इस नशे का प्राय: सभी लोगो को तुंरत अनुभव होता हैं। पकाए हुए अन्न की नशे में एक प्रकार की पार्थिव शक्ति समायी रहती हैं, जो पार्थिव शरीर के संयोग से दुगुनी हो जाती हैं। इस शक्ति को शास्त्रकारों ने ‘अधिभौतिक शक्ति’ कहा हैं। इस अधिभौतिक शक्ति के प्रबलता से वह ‘आध्यात्मिक शक्ति’ जो हम पूजा- उपासना के माध्यम से एकत्रित करते हैं, वह नष्ट हो जाती हैं, इसलिए भारतीय महर्षियों ने संपूर्ण आध्यात्मिक अनुष्ठानों में उपवास को प्रथम स्थान दिया हैं।
”विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः”—गीता जी के यह श्लोक अनुसार एकादशी का उपवास विषय-वासना के निवृत्ति का अचूक साधन हैं। जिस का पेट खाली हैं उसका मन व्यर्थ ही भटकता नहीं हैं। इसलिये शरीर, इंद्रिय और मन वर विजय पाने के लिए ‘जितासन’ (जिसने आसन पर विजय प्राप्त किया है) और ‘जिताहार’ (जिसने आहार पर विजय प्राप्त किया है) होने की परम आवश्यकता हैं।

आयुर्वेद और आज का विज्ञान—इन दोनों का एक ही निष्कर्ष हैं की हरिवासर व्रत और एकादशी उपवास के द्वारा अनेक शारीरिक व्याधियां समूल नष्ट हो जाती हैं और मानसिक व्याधियों के शमन का भी यह एक अचूक उपाय हैं। इस के द्वारा जठराग्नि प्रदीप्त होकर शरीर की शुद्धि हो जाती हैं।
फलाहार का तात्पर्य है की उस दिन आहार में केवल थोड़े बहुत फलों का सेवन करना हैं, लेकिन आज इसका अर्थ बदल कर फलाहार शब्द का अप भ्रंश होकर ‘फराळ (नाश्ता)’ बन गया हैं और इस ‘फराळ (नाश्ते)’ में लोक दबाकर साबूदाने की खिचड़ी अथवा भोजन से भी पचने में भारी, गरिष्ठ, स्निग्ध, तले हुए और मिरची-मसाले युक्त आहार का सेवन करने लगे है। उन को यह विनती है की वे सिर्फ पानी पीकर या थोड़े फल खाकर एकादशी का उपवास करें। अन्यथा ‘उपवास’ इस पवित्र शब्द का तो अपमान होता ही हैं, साथ ही साथ शरीर का ज्यादा ही नुकसान होता हैं। उन के इन अविवेक कृत्य के कारण उन्हें लाभ होने के बजाय नुकसान ही होता हैं।
पंदरह दिनों में से एक बार तो एकादशी का उपवास करना चाहिए। इस से आमाशय, यकृत और पचन-तंत्र को आराम मिलता हैं और उन की अपने आप शुद्धि हो जाती हैं। इस प्रक्रिया के द्वारा पचनतंत्र मजबूत होता हैं और मनुष्य के शक्ति के साथ साथ उस की आयु भी बढ़ती हैं।
भारतीय जीवन शैली में एकादशी व्रत, जन्माष्टमी, राम-नवमी, गौर-पूर्णिमा, नृसिंह-चतुर्दशी, नित्यानन्द-त्रयोदशी, अद्वैत-सप्तमी, बलदेव-पूर्णिमा, महाशिवरात्रि इत्यादि व्रत-उपवासों का विशेष महत्त्व हैं। उन का आचरण धार्मिक दृष्टिकोण से किया जाता हैं, लेकिन व्रतोपवास करने से शरीर भी स्वस्थ रहता है।
‘उप’ का अर्थ हैं पास में और ‘वास’ का अर्थ हैं रहना। उपवास का सही अर्थ हैं—
के निकट रहना, उपवास का व्यावहारिक अर्थ हैं निराहार रहना। निराहार रहने से भगवद्भजन और हरिनाम का जप करने में मदद मिलती है। वृत्ति अन्तर्मुखी होने लगती हैं। उपवास पुण्यदायक, आमदोषहारक, अग्निप्रदीपक, स्फूर्तिदायक और इंद्रियों को प्रसन्नता देने वाला माना गया हैं। इसलिए यथा काल, यथा विधि एकादशी का उपवास कर के नित्य-धर्म की अभिवृद्धि और स्वास्थ्य-लाभ को प्राप्त करना चाहिए।
पचति शिखी दोषान् आहारवर्जितः। पेट का अग्नि आहार को पचाता हैं और उपवास दोषों को पचाता हैं। उपवास से
पचन शक्ति बढ़ती हैं। उपवास काल में शरीर में नया मल उत्पन्न नहीं होता हैं और जीवन शक्ति को पुराना संचित मल बाहर निकालने का मौका मिलता हैं। मल-मूत्र-विसर्जन सुष्ठु रूप से होने लगता है। शरीर में हलकापन आता हैं और अतिनिद्रा- तंद्रा का नाश होता हैं।
एकादशी और हरिवासर के महत्त्व के कारण भारत वर्ष के सनातन धर्मावलंबी बहुधा एकादशी, कृष्ण-जन्माष्टमी, बलदेव-पूर्णिमा, राम-नवमी, गौर-पूर्णिमा, नृसिंह-चतुर्दशी, नित्यानन्द-त्रयोदशी, अद्वैत-सप्तमी, महाशिवरात्रि इत्यादि उत्सवों के उपलक्ष्य में उपवास करते हैं, क्यों की उन दिनों में प्राणों का ऊर्ध्वगमन होता हैं और जठराग्नि मंद होती हैं। शरीर शोधन के लिए एकादशी तिथि अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।
इस अनुभव से ये सिद्ध होता है की एकादशी से पूर्णिमा और एकादशी से अमावस्या तक का समय रोगों की उग्रता के लिए अधिक सहायक होता हैं, क्यों की सूर्य और चंद्र के परिभ्रमण के कारण उक्त तिथियों में समुद्र में विशेष उतार-चढ़ाव (ज्वार-भाटा) होता है। उसी प्रकार इस क्रिया के कारण हमारे शरीर में रोगों की वृद्धि होती हैं, इसलिए एकादशी के दिन उपवास का विशेष महत्त्व हैं। शारीरिक विकार: अजीर्ण, उलटी, मंदाग्नि, शरीर भारी लगना, सरदर्द, ज्वर, यकृत के विकार, दमा, मोटापन, जोड़ों का दर्द, सारे शरीर में सूजन, खाँसी, जुलाब (Loose Motion), मलावरोध, पेट में दर्द, मुंह में छाले होना, त्वचा के रोग,

मूत्राशय के रोग, पक्षाघात इत्यादि व्याधियों में एकादशी का उपवास बहुत ही फ़ायदेमंद और अत्यावश्यक हैं।
मानसिक विकार: मन पर भी उपवास का अत्यंत प्रभाव पड़ता हैं। उपवास से चित्त वृत्ति स्थिर हो जाती हैं और मनुष्य जब अपने चित्त वृत्तियों को नियन्त्रित करने लगता हैं तब भौतिक शरीर में होकर भी उसे सुख-दुःख, हर्ष-विषाद नहीं होते। उपवास से सात्त्विक भाव बढ़ता हैं, राजसिक और तामसिक भावों का विनाश होने लगता हैं, मनोबल और आत्मबल की वृद्धि होने लगती हैं, इसलिए अतिनिद्रा, तंद्रा, उन्माद (मूर्खता), अस्वस्थता, घुटन महसूस होना, भयभीत अथवा शोकातुर रहना, मन की दीनता, अप्रसन्नता, दुःख, क्रोध, शोक, ईर्ष्या इत्यादि मानसिक रोगों पर औषधोपचार सफल न होने से एकादशी उपवास विशेष लाभ देता हैं, इतना ही नहीं तो नियमित एकादशी उपवास के द्वारा मानसिक विकारों की उत्पत्ति भी नियन्त्रित की जा सकती है।
रसजानां विकारणां लंघनं परमौषधम्। जीवन शैली संबंधी विकारों की रोकथाम और प्रबंधन में एकादशी के उपवास को प्रमुख उपाय माना जाता है। रोग शरीर में विजातीय पदार्थ जमा होने से होता है और एकादशी का उपवास ही सर्वोत्तम औषधि है। एकादशी का उपवास एक पाक्षिक डिटॉक्स शिविर के समान हैं जो न केवल मौजूदा स्वास्थ्य समस्या को ठीक करता है बल्कि एक स्वस्थ जीवन शैली विकसित करने में भी मदद करता है, स्वास्थ्य चाहने वालों को एक स्वस्थ जीवन शैली बनाए रखने के बारे में एकादशी का उपवास एक व्यापक विचार प्रदान करता है।
एकादशी का उपवास मुख्य रूप से चौबीस घंटों के लिए सभी भोजन, पेय या दोनों
से स्वेच्छा से परहेज करने का कार्य है। यह स्वास्थ्य संरक्षण के लिए एक महत्वपूर्ण उपचार पद्धति है। एकादशी उपवास के दौरान, शरीर जलता है और भारी मात्रा में संचित अपशिष्ट को बाहर निकालता है।

उपवास शरीर की चर्बी को कम करते हैं
श्रीमद्भागवत (४.२८.३५-३६) के भक्तिवेदान्त तात्पर्य में श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज लिखते हैं—“यह हम निश्चित रूप से देख सकते हैं कि कृष्णभक्ति में अग्रसर होने के लिए मनुष्य को अपने शरीर-भार पर नियंत्रण रखना चाहिए। यदि कोई अत्यधिक मोटा हो जाए तो समझना चाहिए कि वह आध्यात्मिक रूप से उन्नति नहीं कर रहा है। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर अपने मोटे शिष्यों की कटु आलोचना किया करते थे। भाव यह है कि जिसे कृष्णभक्ति में आगे बढ़ने की इच्छा हो उसे अत्यधिक भोजन नहीं करना चाहिए। भक्त लोग पहले जंगलों या पहाड़ों में तीर्थयात्रा के लिए जाते थे, किन्तु आजकल ऐसी कठिन तपस्या सम्भव नहीं है। मनुष्य को केवल इतना प्रसाद खाना चाहिए जो आवश्यकता से अधिक न हो। वैष्णव पंचांग के अनुसार उपवास के अनेक दिन हैं—यथा एकादशी भगवान् एवं भक्तों के आविर्भाव एवं तिरोभाव के दिन। ये सारे उपवास शरीर की चर्बी को कम करने के उद्देश्य से हैं, जिससे भक्त न तो आवश्यकता से अधिक सोये
और न निष्किय तथा आलसी बने। अधिक खाने से अधिक नींद आयेगी। यह मनुष्य-जीवन तप
के लिए मिला है और तप का अर्थ है संभोग, आहार इत्यादि पर नियंत्रण। इससे आध्यात्मिक कार्यों के लिए समय बचेगा और मनुष्य अपने को बाहर तथा भीतर दोनों प्रकार से शुद्ध कर सकता है। इस प्रकार से शरीर तथा मन दोनों शुद्ध हो सकते हैं।”

एकादशी अप्राकृत है
—श्रील भक्ति रक्षक श्रीधर गोस्वामी महाराज
एकादशी को कृष्ण का पसंदीदा दिन माना जाता है, जब भक्त भौतिक गतिविधियों
से परहेज करते हैं। एकादशी अप्राकृत है। एकादशी तिथि को अप्राकृत कहने का का अर्थ है एकादशी प्राकृत की तरह प्रतीत होती हैं लेकिन वह चिन्मय है। हमें चेतावनी दी जाती है कि एकादशी सांसारिक नहीं है, हालांकि ऐसा लगता है। क्योंकि एकादशी चन्द्रमा से प्रभावित है, यह सांसारिक प्रतीत होती है। चन्द्रमा के प्रभाव से जगत् की उष्णता तथा शरीर में जलयुक्त भाग बढ़ जाता है, जिस प्रकार समुद्र के उच्च ज्वार और निम्न ज्वार पर भी चन्द्रमा से प्रभाव पड़ता है। जैसे- जैसे हम पूर्णिमा और अमावस्या के करीब आते हैं, हमारे शरीर का पानी वाला हिस्सा पृथ्वी, चंद्रमा और सूर्य की गति से बढ़ जाता है, और इस तरह आनंद की भावना (भोग करने की दुर्दम्य इच्छा) भी विकसित होती है।
तो, प्रकृति की उस बाहरी गति का सामना करने के लिए उपवास आवश्यक है। उपवास हमें उस अजीबोगरीब (असाधारण) प्रतिक्रिया से बचा सकता है। उपवास की सिफारिश की गई है, और विशेष रूप से, यदि कोई उपवास नहीं कर सकता है, तो वह कुछ ऐसा आहार ले जिससे की उत्तेजना कम हो, इसलिए व्यक्ति अनुकल्प (अनाज से न बनाए हुये पदार्थ जैसे आलु या सींगदाना) ले सकता है। हम इन्द्रियों को वश में करने के लिए उपवास करते हैं, क्योंकि प्राकृतिक प्रवाह से इन्द्रियाँ उस समय अधिक तीव्र हो जाती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति उत्तेजित हो जाता है और पर्यावरण का अतिक्रमण करके आनंद लेना चाहता है। तो यदि आप स्वयं पर होने वाले इस अनुचित अतिक्रमण को नियंत्रित करना चाहते है, तो एकादशी उपवास की सिफारिश की गई है—यह एक तरीका है।
हम कुछ प्रकार के खाद्य पदार्थ लेते हैं, अन्य नहीं, क्योंकि उन्हें कम हानिकारक माना जाता है, और शरीर के लिए कम रोमांचक (उत्तेजित करने वाले) माना जाता है। साथ ही हरि-भक्ति-विलास में उल्लेख किया गया है कि कुछ विशेष पाप उन खाद्य पदार्थों में आश्रय लेने के लिए आसक्त (अनुरक्त) होते हैं। इसलिए उन खाद्य पदार्थों को हम अस्वीकार करते हैं। ‘पाप’ शब्द का अर्थ है एक प्रकार का पाप जो अनाज और उन स्थानों पर आश्रय लेने का बहुत शौकीन है जिनसे हम निश्चित रूप से बचना चाहते हैं। प्रथम श्रेणी के उपवास का अर्थ है बिना पानी (निर्जला) किया जाने वाला उपवास। जो लोग बिना भोजन के नहीं रह सकते, वे फल, जड़ और दूध ले सकते हैं।
साथ ही, आध्यात्मिक दृष्टिकोण से, एकादशी के दिन कृष्ण स्वयं भी भोग के
लिए अधिक आवश्यकता महसूस करते हैं, और जब कृष्ण को अधिक आवश्यकता महसूस होती है, तो भक्तों के पास सेवा करने का अधिक मौका होता है। उनके लिए एकादशी का दिन अधिक मूल्यवान है, क्योंकि कृष्ण आनंद लेना चाहते हैं, और उस समय, भक्तों को उनके आनंद के लिए चीजों की आपूर्ति करने में व्यस्त होना चाहिए—इतना कि उनके पास अपनी आवश्यकताओं के लिए समय ही नहीं होगा। तो, पहला कारण कृष्ण को प्रसन्न करना है और दूसरा कारण यह है कि उपवास के द्वारा, हम अपने शरीर को शुष्क बना सकते हैं और इसलिए हमारी आनंद लेने की भावना कम हो जाएगी। यह सामान्य व्याख्या है। और भी बहुत सी बातें हैं। सब कुछ सचेतन है, सब कुछ व्यक्तिगत है, और एकादशी का अपना व्यक्तिगत चरित्र है, और वह कृष्ण की सेवा में अपने सारे परिकरों के साथ खुद को समर्पित करती है।
वह कोई भोजन या कुछ भी नहीं लेती है, और अपने समूह में दूसरों को भोजन लेने
या समय बर्बाद करने की अनुमति नहीं देती है, लेकिन हमेशा कृष्ण की सेवा में लगी रहती है। हमें बताया गया है कि एकादशी और द्वादशी हरि के पक्ष में हैं— अंतर्निहित कारण पहले ही समझाया जा चुका है। इन दिनों की गई किसी भी छोटी सेवा से हरि प्रसन्न होंगे। तो, द्वादशी और एकादशी दोनों ही कृष्ण के पसंदीदा दिन

माने जाते हैं। एकादशी का पालन अनिवार्य है—हालांकि द्वादशी को हरि के पसंदीदा के रूप में भी सम्मानित किया जाता है, फिर भी एकादशी को प्राथमिकता दी जाती है। नक्षत्र, तिथि आदि के संयोग से निर्धारित आठ मामलों में ही द्वादशी को एकादशी पर वरीयता प्राप्त होती है।
एकादशी और द्वादशी पर, थोड़ी सी सेवा भी कुछ अधिक पारिश्रमिक देती है। पारिश्रमिक का अर्थ है कि उस विशेष समय में हमारी सेवा करने की प्रवृत्ति और हमारी ईमानदारी (चित्तासक्ति) में वृद्धि होगी। इसका गहरा तात्पर्य यह है कि हरि उस समय और अधिक सेवा स्वीकार करना चाहते हैं। यह सेवकों का भाग्य है, कि हरि अपने दासों (सेवकों) से अधिक सेवा की माँग करते हैं, इसलिए उस समय एकादशी और द्वादशी के दौरान सेवकों का महत्व बढ़ जाता है। द्वादशी के दिन हम तुलसी के पत्ते नहीं तोड़ते हैं क्योंकि ऐसा माना जाता है कि तुलसी देवी ने एकादशी का व्रत एवं उपवास रखा है।
यह भी ध्यान दिया जाता है कि सेवा पहला विचार है। यदि मैं उपवास करूँ और
जल न पिऊँ, मुझे लेटना पड़ सकता है और मैं भगवान् की कोई सेवा नहीं कर पाऊँगा। यह वांछनीय नहीं है। तो, लेना और भगवान् की सेवा करना बेहतर है।
आलस्य से बैठने से सेवा उत्तम है। तो, अगर प्रसाद-सेवा को सेवा के रूप में लिया जाता है, तो यह सबसे अच्छा है। लेकिन साथ ही, एक भक्त की व्यक्तिगत स्थिति पर विचार किया जाना चाहिए। सहजिया एकादशी का व्रत बिल्कुल नहीं करते। वे कहते हैं, “ओह, हम वृंदावन में हैं—यहाँ कोई उपवास नहीं है!” लेकिन श्रील प्रभुपाद को यह पसंद नहीं था—सहजिया लोग, कृष्ण-भक्ति के नाम पर, इंद्रियों को खिलाते रहते है। लेकिन जब आवश्यक हो कृष्ण की सेवा के लिए, शरीर को बनाए रखने के लिए, हम प्रसाद लेते हैं—हमें यह पसंद नहीं है कि उपवास से शरीर के ऊर्जा की हानि हो। इस प्रकार हम एकादशी का सम्मान करते हैं। यदि उपवास हमारी सेवा में बाधा नहीं डालता है, तो हम बगैर कुछ खाए या पिए उपवास जारी रख सकते हैं।

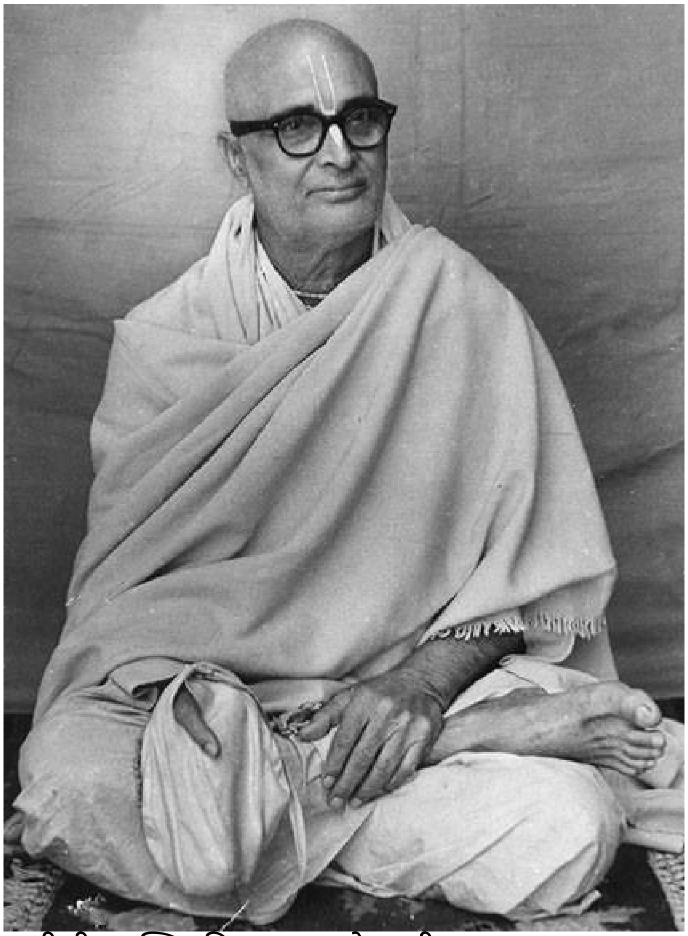

श्रीश्रीमद्भक्तिदयित माधव गोस्वामी

एक बार श्रीहयग्रीव ब्रह्मचारी (बाद में श्रीश्रीमद्भक्तिदयित माधव महाराज) को जन्माष्टमी के दिन मथुरा जाना था। उन्हें श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर के पुरुषोत्तम मास के अनुष्ठान के लिए मथुरा में एक उपयुक्त घर किराए पर लेने की व्यवस्था करनी थी। प्रभुपाद ने अपने रसोइए को जन्माष्टमी के दिन श्रीहयग्रीव ब्रह्मचारी को चावल खिलाने के लिए कहा। "उन्हें एक थकाऊ यात्रा करनी होगी और उनकी ऊर्जा बर्बाद होगी —उनका एक महत्वपूर्ण कर्तव्य है कि वे उस घर की व्यवस्था करे।" यह उनका आदेश था। लेकिन श्रीहयग्रीव ब्रह्मचारी हिचकिचाए और रसोइया भी हिचकिचाया। वैसे भी, उन्होंने जन्माष्टमी पर चावल नहीं लिया —इसके बजाय उन्होंने साबू (टैपियोका), केला और दही लिया।

हालाँकि, अगर प्रोफेसर सान्याल ऐसी स्थिति में होते, तो वे निश्चित रूप से चावल लेते —वे प्रभुपाद के आदेश के इतने अधिक अनुयायी और वशवर्ती थे। उन्होंने कहा होता, "श्रील प्रभुपाद ने मुझे चावल प्रसाद खाने के लिए कहा है — मुझे चावल प्रसाद अवश्य खाना चाहिए!" वह उनकी विचारधारा थी। लेकिन श्रीहयग्रीव ब्रह्मचारी हिचकिचाए, "नहीं, नहीं, यह जरूरी नहीं है, मैं काफी मजबूत हूं। मैं अपना कर्तव्य कर सकता हूं।" इसके अलावा, जब श्रील प्रभुपाद उपवास के दिनों में कुछ खाना चाहते थे, तो वे अनुकल्प ही लेते थे।

मेरे गुरु महाराज ने महसूस किया कि यदि आप अच्छा भोजन करते हैं और अच्छी सेवा करते हैं तो आपको अधिकतम ऊर्जा प्राप्त होगी। यही उनका निर्देश था। कृष्ण एक दिवालिया पार्टी नहीं है। पूर्ण प्रसाद लो और पूर्ण सेवा करो। जो कुछ भी आवश्यक है, उसे कृष्ण के लिए ले लो —अपने स्वयं के लिए नहीं। आप कृष्ण के हैं, इसलिए यदि आप कमजोर हो जाते हैं और आपकी सेवा में बाधा आती है, तो आप की हानि

होगी। “बेहतर होगा कि मेरे सैनिक अच्छी तरह से भोजन प्रसाद स्वीकार करें और अच्छी सेवा करें।” वह मेरे गुरु महाराज का सिद्धांत था।

महिलाओं के सभी समस्याओं का इलाज
जो कुमारिका (कन्या) अच्छा पति प्राप्त करना चाहती हैं, वो एकादशी का व्रत अवश्य करें। आजकल हर कन्या प्रह्लाद, युधिष्ठिर, अर्जुन, परीक्षित एवं शंकर जैसा पति प्राप्त करने की इच्छा करती हैं। मगर उसे प्राप्त होता हैं एक पति जो हिरण्यकशिपु, रावण, कुंभकर्ण, कंस, जरासंध, शिशुपाल, दन्तवक्र जैसे दुष्ट स्वभाव का एवं राक्षस प्रवृत्ति का होता हैं। इसलिए हर विवाहेच्छुक कन्या प्रत्येक एकादशी के दिन सिर्फ फल एवं जल का परिमित मात्रा में सेवन कर के उपवास करें। अच्छा, मनपसंद सात्त्विक एवं भक्त प्रवृत्ति का पति प्राप्त करने के लिए हर कन्या १०८ तुलसी मणियों की जपमाला पर “हरे कृष्ण” महामंत्र का ३२ माला जाप करें।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥
विवाह के उपरांत हर महिला की इच्छा होती हैं की वह एक सुन्दर, सुदृढ, सशक्त, बुद्धिमान एवं भक्त प्रवृत्ति की संतान प्राप्त करें। एकादशी के उपवास एवं “हरे कृष्ण” महामंत्र के द्वारा हर विवाहित महिला अपने इच्छानुसार पुत्ररत्न अथवा कन्यारत्न प्राप्त कर सकती हैं।

एकादशी आदि व्रत ही भक्तोंके लिए तप है
मदर्थेऽर्थपरित्यागो भोगस्य च सुखस्य च।
इष्टं दत्तं हुतं जप्तं मदर्थं यद् व्रतं तपः॥
(श्रीमद्भागवत ११/१९/२३)
मेरे लिए अन्यान्य सभी प्रकारके अर्थों अर्थात् भोग और सुखका परित्याग
कर दे। यज्ञ, दान, होम, जप और मेरे उद्देश्यसे किये गये एकादशी आदि व्रत ही भक्तोंके लिए तप है। इन सबको मेरे सख्य भावसे करना चाहिये।

हरिवासर (एकादशी) आदि व्रत श्रीकृष्णचरणकी सेवाके अङ्ग हैं
तैस्तान्यघानि पूयन्ते तपोदानव्रतादिभिः। तदपीशाङ्घ्रिसेवया॥
(श्रीमद्भागवत ६/२/१७)
बहुत-से व्यक्ति तप, दान और व्रतादिके द्वारा अपने पापोंका तो ध्वंस कर लेते हैं, किन्तु इन सब क्रियाओंके अनुष्ठानसे अधर्म करनेमें प्रवृत्त अपने हृदयको पवित्र नहीं कर पाते। हृदय तो केवल श्रीकृष्ण चरणकी सेवा द्वारा ही पवित्र हो सकता है। यहाँ कर्ममार्गीय कष्टप्रद प्रायोपवेशनादिरूप व्रतकी ओर सङ्केत किया गया है। जयन्ती, हरिवासर (एकादशी) आदि व्रत तो श्रीकृष्णचरणकी सेवाके अङ्ग हैं।

एकादशी व्रतोंका पालन करनेसे भक्तिमें वृद्धि होती है
(श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, रामनवमी आदि) जयन्ती व्रत, एकादशी तथा ऊर्जा व्रतादि श्रीहरिसम्बन्धी व्रतोंका पालन करनेसे भक्तिमें वृद्धि होती है।
श्रीमद्भागवत ३/१/ में श्रीशुकदेव गोस्वामी परीक्षित्से कहते हैं—
गां पर्यटन् मेध्यविविक्तवृत्तिः सदाप्लुतोऽधःशयनोऽवधूतः।
अलक्षितः स्वैरवधूतवेशो व्रतानि चेरे हरितोषणानि॥

महाशय पवित्र सद्वृत्तिके द्वारा जीवनकी रक्षा करते हुए पृथ्वीपर पर्यटन करने लगे। उपयुक्त समयमें स्नान, भूमिपर शयन, अवधूत (देह आदिके संस्कारसे रहित) और अलक्षित भावसे (जिससे कोई उन्हें पहचान न सके) स्वाधीन चेष्टा तथा अवधूत वेश धारणपूर्वक श्रीहरिको सन्तुष्ट करनेवाले समस्त व्रतोंका पालन करने लगे।

उपवास की पद्धति
एकादशी उपवास के दिन पूर्ण विश्रान्ति लेनी चाहिए और दिनरात “हरे कृष्ण” महामन्त्र का जाप करना चाहिए। मौन रह कर सिर्फ हरिनाम का जप किया तो बहुत ही उत्तम। उपवास के प्रारंभ में एक या दो एकादशीयों में थोड़ी कठिनाई अनुभव हो सकती हैं। उस के बाद मन और शरीर दोनों को एकादशी के उपवास का अभ्यास होने लगता हैं और उस में आनंद आने लगता हैं।
मुख्यतः चार प्रकार के उपवास प्रचलित हैं—निराहार, फलाहार, दुग्धाहार
और रूढ़िगत अनुकल्प।
१. निराहार: निराहार एकादशी व्रत श्रेष्ठ हैं। वे दो प्रकार के होते हैं
— निर्जल और सजल। निर्जल व्रत में पानी भी नहीं पी सकते हैं। सजल व्रत में गुनगुना पानी या फिर गुनगुने पानी में नींबू का रस मिलाकर ले सकते। इस से पेट में वायु नहीं बनेगा। शरीर में कही भी यदि वेदना हो रही हैं तो नींबू का सेवन नहीं करें।
२. फलाहार: इस में सिर्फ फल और फलों का रस लिया जाता हैं। उपवास के लिए अंगूर, अनार और पपीता हितकर हैं। लेकिन सेब को संरक्षित करने का तरीका गलत होने के कारण उन्हें एकादशी के उपवास में नहीं लेना चाहिए। इस में गुनगुने पानी में निंबु का रस मिलाकर आप ले सकते हैं। निंबु से पाचन तंत्र की शुद्धि को मदद मिलती हैं।
३. दुग्धाहार: इस श्रेणी के उपवास में दिन में एक बार या दो बार थोड़ा क्रीम से रहित दूध लिया जाता हैं। देसी गाय का दूध सर्वोत्तम आहार हैं। मनुष्य को स्वस्थ बनाने और दीर्घायुष्य प्रदान करने के लिए गोमाता के दूध समान दूसरा कोई भी श्रेष्ठ आहार नहीं हैं।
देसी गाय का दूध जीर्णज्वर, ग्रहणी, पांडुरोग, यकृत के रोग, प्लीहा के रोग, दाह, हृदय रोग, रक्तपित्त इत्यादि में काफ़ी गुणकारी हैं।
४. रूढ़िगत अनुकल्प: २४ घंटों में एक बार नमक, चीनी, तेल-घी विरहित थोड़े सिद्ध किये (उबाले) हुए आलू, शकरकंद, मूंगफली इत्यादि ले सकते हैं। इस के सिवा कोई भी पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए। सिर्फ पानी अथवा गुनगुने पानी में नींबू का रस मिलाकर ले सकते हैं।
दक्षता: जिन लोगों को सदा कफ, जुकाम, दमा, सूजन, घुटनों में दर्द और कम रक्तचाप (low blood-pressure) की समस्या हैं, उन्हें नींबू का सेवन नहीं करना चाहिए।
उपवास के दूसरे दिन उपवास की परिसमाप्ति पर मूँग को पानी में उबालकर उस
पानी को पीना चाहिए। साथ ही सिद्ध किये हुए (उबाले हुए) मूँग और चावल से बनी खिचड़ी को निवेदन करके पाना चाहिए। ये खिचड़ी-प्रसाद पाचन के लिए हलकी होती हैं।

भक्तों के जीवन से जुड़ी एकादशी व्रत

की प्रेरणादायक सच्ची घटनाएँ

कूर्म अवतार
विष्णु के दस अवतारों में कूर्म अवतार दूसरा अवतार हैं। कूर्म अवतार की कहानी इस प्रकार हैं। ब्रह्मा ने भृगु, मरीचि, अत्रि, दक्ष, कर्दम, पुलस्त्य, पुलह, अङ्गिरा तथा क्रतु—इन नौ प्रजापतियों कों उत्पन्न किया। महर्षि अत्रि के पुत्र दुर्वासा बडे ही तेजस्वी मुनि हुए। वे महान तपस्वी, अत्यंत क्रोधी तथा संपूर्ण लोकों को क्षोभ में डालने वाले है।
एक समय की बात है—दुर्वासा देवराज इन्द्र से मिलने के लिए स्वर्गलोक गये। उस समय इन्द्र हाथी पर आरूढ़ हो संपूर्ण देवताओं से पूजित होकर कहीं जाने के लिए उद्यत थे। उन्हें देखकर महातपस्वी दुर्वासा का मन प्रसन्न हो गया। उन्होंने विनीत भाव से देवराज को एक पारिजात की माला भेट कीं। देवराज ने उसे लेकर हाथी के मस्तक पर डाल दिया और स्वयं नंदनवन की ओर चल दिये। हाथी मद से

उन्मत्त हो रहा था। उसने सूँड से उस माला को उतार लिया और मसलते हुए तोड़कर ज़मीन पर फेंक दिया।
इससे दुर्वासाजी को क्रोध आ गया और उन्होंने शाप देते हुए कहा—देवराज!
तुम त्रिभुवन की राज्यलक्ष्मी से संपन्न होने के कारण मेरा अपमान करते हो।
इसलिए तीनों लोकों की लक्ष्मी नष्ट हो जायेगी। इसमें तनिक भी संदेह नहीं हैं।
दुर्वासा के इस प्रकार शाप देने पर इन्द्र पुनः अपने नगर को लौट गये।
तत्पश्चात जगन्माता लक्ष्मी अन्तर्धान हो गयीं। ब्रह्मा आदि देवता, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, दैत्य, दानव, नाग, मनुष्य, राक्षस, पशु-पक्षी तथा कीट आदि जगत के समस्त चराचर प्राणी दरिद्रता के मारे दुःख भोगने लगे।
सब लोगों ने भूख- से पीडित होकर ब्रह्मा के पास जाकर कहा—भगवान्‌! तीनों
लोक भूख-प्यास से पीडित हैं। आप सब लोकों के स्वामी और रक्षक हो। हम आपकी शरण में आये हैं। देवेश, आप हमारी रक्षा करें।
ब्रह्मा यह बात सुनकर बोले—देवता, दैत्य, गन्धर्व और मनुष्य आदि प्राणियों। सुनो। इन्द्र के अनाचार से ही यह सारा संकट उपस्थित हुआ है। दुर्वासाजी के क्रोध से आज तीनों लोकों का नाश हो रहा हैं। जिनकी कृपा-कटाक्ष से सब लोक सुखी होते हैं, वे जगन्माता महालक्ष्मी अन्तर्धान हो गयी हैं। इसलिए हम लोग चलकर क्षीरसागर में विराजमान सनातन देव—भगवान् नारायण की आराधना करें। उनकें प्रसन्न होने पर ही संपूर्ण जगत का कल्याण होगा। ऐसा निश्चय करके ब्रह्मा, संपूर्ण देवताओं और भृगु आदि महर्षियों के साथ क्षीरसागर पर गये और पुरुषसूक्त के द्वारा उनकी आराधना करने लगे। इससे प्रसन्न होकर भगवान् ने सब देवताओं को दर्शन दिया। तब भगवान् बोले—देवताओं! अत्रिकुमार दुर्वासा के शाप से भगवती लक्ष्मी अन्तर्धान हो गयी हैं। अतः तुम लोग मन्दराचल पर्वत को उखाड़कर क्षीरसमुद्र में रखो और उसे मथानी बना कर नागराज वासुकि को रस्सी की
जगह उसमें लपेट दो। फिर दैत्य, गन्धर्व और दानवों के साथ मिलकर समुद्र का मन्थन
करो। इससे जगत की रक्षा के लिए लक्ष्मी प्रकट होगी। उनकी कृपा दृष्टि पड़ते ही तुम लोग महान सौभाग्यशाली हो जाओगे। मैं ही कूर्मरूप से मंदराचल को अपनी पीठ पर धारण करूँगा। तथा मैं ही संपूर्ण देवताओं में प्रवेश करके अपनी शक्ति से उन्हें बलिष्ठ ऐसा कहकर भगवान् वहाँ से अन्तर्धान हो गये।
तत्पश्चात संपूर्ण देवता और महाबली दानव आदि ने मन्दराचल को उखाड़ कर क्षीरसागर डाला। इसी समय अमित पराक्रमी भगवान् नारायण ने कछुए के रूप में प्रकट होकर उस
पर्वत को अपनी पीठ पर धारण किया तथा एक हाथ से उस सर्वव्यापी अविनाशी प्रभु ने
उसके शिखर को भी पकड रखा था। तदनंतर देवता और असुर मंदराचल पर्वत में नागराज वासुकि को लपेटकर क्षीरसागर का मन्थन करने लगे। जिस समय महाबली देवता लक्ष्मी
को प्रकट करने के लिए क्षीरसागर को मथने लगे, उस समय संपूर्ण महर्षि उपवास करके
मन और इन्द्रियों के संयमपूर्वक श्रीसूक्त और विष्णुसहस्त्रनाम का पाठ करने लगे। शुद्ध एकादशी तिथि को समुद्र मंथन आरंभ हुआ। उस समय लक्ष्मी के प्रादुर्भाव अभिलाषा रखते हुए श्रेष्ठ ब्राह्मणों और मुनिवरों ने भगवान् लक्ष्मीनारायण का ध्यान और पूजन किया।
उस समय सबसे पहले कालकूट नामक महाभयंकर विष प्रकट हुआ, जो बहुत बडे पिण्ड
के रूप में था। वह प्रलयकालीन अग्नि के समान अत्यंत भयंकर जान पड़ता था। उसे देखते ही संपूर्ण देवता और दानव भय से भाग गये। श्री शंकरने अपने हृदय में भगवान् नारायण का ध्यान किया और उनके तीन नामरूपी महामन्त्र का भक्ति पूर्वक जप करते हुए भयंकर विष को पी लिया। अच्युत, अनंत और गोविन्द—ये ही श्रीहरि के तीन नाम हैं। ॐ अच्युताय नमः, ॐ अनन्ताय नमः तथा ॐ गोविन्दाय नमः, जो इन तीन नामों का एकाग्रचित्त होकर जप करता है, उसे काल और मृत्यु से भय नहीं होता। फिर समुद्र-मंथन करने पर लक्ष्मीजी की बड़ी बहन दरिद्रा देवी प्रकट हुई। उन्होंने देवताओं से पूछा—मेरे लिए क्या आज्ञा हैं। तब देवताओं ने उनसे कहा— जिन के घर में प्रतिदिन कलह होता हो वहीं हम तुम्हें रहने के लिए स्थान देते

हैं। तुम अमंगल को साथ लेकर उन्हीं घरों में जा बसो —जो सदा झूठ बोलते हो , जहाँ कठोर भाषण किया जाता हों। उन्हीं के घर में दुःख और दरिद्रता प्रदान करती हुई तुम नित्य निवास करो।

दरिद्रा देवी को इस प्रकार आदेश देकर पुनः देवताओं ने क्षीरसागर का मंथन आरंभ किया। तब सुन्दर नेत्रोंवाली वारुणी देवी प्रकट हुई , जिसे नागराज अनंत ने ग्रहण किया। तदनंतर समस्त शुभ लक्षणों से सुशोभित और सब प्रकार के आभूषणों से विभूषित एक स्त्री प्रकट हुई , जिसे गरुड ने अपनी पत्नी बनाया। इसके बाद दिव्य अप्सराएँ और महातेजस्वी गन्धर्व उत्पन्न हुए जो अत्यंत रूपवान और सूर्य , चन्द्रमा के समान तेजस्वी थी। तत्पश्चात ऐरावत हाथी , उच्चैःश्रवा अश्व , धन्वंतरि वैद्य , पारिजात वृक्ष और संपूर्ण कामनाओं को पूर्ण करनेवाली सुरभि गौ का प्रादुर्भाव हुआ। इन सब को इन्द्र ने बड़ी प्रसन्नता के साथ ग्रहण किया।

द्वादशी के प्रातःकाल महालक्ष्मी प्रकट हुई। उन्हें देखकर देवताओं को बड़ा हर्ष हुआ। उसके बाद क्षीरसागर से शीतल एवं अमृतमयी किरणों से युक्त चन्द्रमा प्रकट हुए जो माता लक्ष्मी के भाई हैं। इसके बाद श्रीहरि की पत्नी तुलसीदेवी प्रकट हुई ! जगन्माता तुलसी का प्रादुर्भाव श्री हरि की पूजा के लिए ही हुआ हैं। तत्पश्चात सब देवता प्रसन्न चित्त होकर मन्दराचल को यथास्थान रख आये और लक्ष्मी की स्तुति करने लगे। तब लक्ष्मी ने प्रसन्न होकर कहा —मुझसे तुम मनोवांछित वर माँगो।

देवता लोग बोले —विष्णु की प्रियतमा लक्ष्मीदेवी ! आप हम लोगों पर प्रसन्न श्री विष्णु के वक्षस्थल में निवास करें। कभी भगवान् से अलग न हों तथा तीनों लोकों का कभ न करें। तभी ब्रह्मा और भगवान् नारायण प्रकट हुए। सभी देवता हाथ जोड़कर बोले — महारानी लक्ष्मी को जगत की रक्षा के लिए ग्रहण कीजिए। ऐसा कहकर ब्रह्मा आदि देवता ने पीठ पर भगवान् विष्णु और लक्ष्मी को बिठाकर उन दोनों की पूजन किया। क्षीरसागर से जो कोमल दलोंवाली तुलसीदेवी प्रकट हुई थी , द्वारा उन्होंने भगवान् नारायण के युगल की अर्चना की। इससे सर्वदेवेश्वर भगवान् श्री हरि ने लक्ष्मीसहित प्रसन्न होकर देवताओं को मनोवांछित वरदान दिया। तब से देवता और मनुष्य आदि प्राणी बहुत प्रसन्न रहने लगे। उनके यहाँ धन -धान्य की प्रचुर वृद्धि हुई और वे निरोग होकर अत्यंत सुख का अनुभव करने लगे।

भगवान् विष्णु ने प्रसन्न होकर संपूर्ण लोकों के हित के लिए महामुनियों और देवताओं से कहा —एकादशी तिथि परम पुण्यमयी है। यह सब उपद्रवोंकों शांत करनेवाली है। तुम लोगों ने लक्ष्मी के दर्शन पाने के लिये इस तिथि को उपवास किया है , इसलिए यह द्वादशी तिथि मुझे सदा प्रिय होगी। आज से जो लोग एकादशी को उपवास करके द्वादशी को प्रातःकाल सूर्योदय होने पर बड़ी श्रद्धा के साथ लक्ष्मी और तुलसी के साथ मेरी पूजा करेंगे , वे सब बंधनों से मुक्त होकर मेरे परम पद को प्राप्त होंगे।

कहकर भगवान् विष्णु मुनियों के द्वारा अपनी स्तुति सुनते हुए लक्ष्मीजी के निवास स्थान क्षीरसागर में चले गये। वहाँ शेषनाग की शय्या के ऊपर लक्ष्मी के साथ लगे। तत्पश्चात सब देवता कच्छपरूपधारी सनातन भगवान् का भक्तिपूर्वक पूजन करके प्रसन्नचित्त हो गये।

की आज्ञा मानकर ब्रह्मा आदि देवता , सिद्ध , मनुष्य , योगी तथा मुनिश्रेष्ठ बड़ी के साथ एकादशी तिथि को उपवास और द्वादशी तिथि को भगवान् का पूजन करने लगे।

अम्बरीष महाराज की कथा
श्रीमद्भागवत के ही नवम् स्कन्ध में शुद्धभक्त श्री अम्बरीष महाराज की दृढ़तापूर्वक एकादशी का निराहार व्रत पालन तथा समयानुसार पारण करने की कथा का प्रसंग वर्णन है—एकादशी व्रत करने के प्रभाव से कहीं भी प्रतिहत न होने वाला ब्रह्मशाप महाराज अम्बरीष को स्पर्श भी न कर सका।
महाराज अम्बरीष बडे भाग्यवान थे। वे भगवान् के बड़े प्रेमी एवं उदार धर्मात्मा थे। पृथ्वी के सार्वभौम सम्राट होने पर भी उनकी अपनी सम्पत्ति ऐश्वर्यादि में आसक्ति न थी। उनकी रति श्रीकृष्ण तथा उनके प्रेमी भक्तों में थी।
उन्होंने अपने मन को श्रीकृष्ण के चरणारविन्द युगल में, को भगवान् के
गुण कीर्त्तन में, हाथों को श्रीहरिमंदिर मार्जन सेवा में तथा कानों को भगवान् अच्युत तथा उनके भक्तों की मंगलकारी कथा श्रवण में नियुक्त कर रखा था।
एक समय कार्त्तिक मास में अम्बरीष महाराज अपनी पत्नी सहित मथुरा प्रदेश
में मधुवन नामक स्थान पर आये तथा उन्होंने एक वर्ष तक द्वादशी प्रधान एकादशी व्रत करने का नियम ग्रहण किया। व्रत की समाप्ति पर अगले कार्त्तिक मास में उन्होंने तीन रात्रि (एकादशी से पूर्व तथा एकादशी तक) उपवास किया। यमुनाजी में स्नान भगवान् श्री कृष्ण का विराट पूजन करके दुधारु गायों का दान किया, वैष्णवों को

स्वादिष्ट भगवदप्रसाद दक्षिणा के साथ अर्पित किया। अब वे स्वयं व्रत का पारण करने को प्रस्तुत हुए। उसी समय अत्यन्त क्रोधी स्वभाव के दुर्वासा ऋषि वहाँ पधारे। राजा अम्बरीष ने उनकी अभ्यर्थना की। दुर्वासाजी को अपनी तपस्या के बल, ब्राह्मणत्व तथा श्रेष्ठता का बड़ा अभिमान था। राजा ने दुर्वासाजी के चरणों में प्रणाम कर भोजन की प्रार्थना की।
दुर्वासाजी ने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया और स्नानादि करने यमुना तट पर
चले गये। यमुना में परब्रह्म का ध्यान करते हुए वे निमग्न हो गये। इधर द्वादशी केवल घड़ी भर शेष रह गई थी। पारण के लिए अति अल्प समय था। धर्मज्ञ महाराज अम्बरीष ने चिन्तित होकर ब्राह्मणों से कहा, “अतिथि ब्राह्मण को बिना भोजन कराये स्वयं खा लेना दोष है तथा द्वादशी रहते पारण न करने से भक्ति की हानि होती है। इसलिये मैं केवल भगवान् के चरणामृत से पारण कर लेता हूँ।” श्रुतियों में कहा गया है कि जल पी लेने से पारण हो जाता है तथा ये भोजन करना, न करना दोनों ही है। यह निश्चय कर महाराज अम्बरीष ने भगवान् के चरणोदक से पारण कर लिया और दुर्वासा ऋषि के आने की प्रतीक्षा करने लगे।
दुर्वासाजी जब वापिस लौटें तो उन्होंने ध्यानयोग से जान लिया कि राजा ने पारण कर लिया है। वे अत्यन्त क्रोधित हो गये और कहने लगे—अरे ढोंगी! भगवान् स्वयं ब्राह्मणों का आदर करते है किन्तु तुमने मेरा अनादर किया है। तुमने सोच लिया जल पी लेने से हानि नहीं होगी परन्तु ब्राह्मण की अवज्ञा होगी इस पर विचार नहीं किया। मैं तुम्हें इसका दण्ड देता हूँ। ऐसा कहते हुए वे क्रोध से जल उठे। उन्होंने अपनी एक जटा उखाड़ी और अम्बरीष महाराज को मारने के लिये कृत्या उत्पन्न की। वह प्रलयकालीन अग्नि के समान दहकती हुई, हाथ में तलवार लेकर अम्बरीष महाराज पर लपकी। अम्बरीष महाराज ने अपने स्थान से हटने या अपने को बचाने का कोई प्रयास नहीं किया, वे शान्तिपूर्वक हाथ जोड़कर यथास्थान खड़े रहे। शरणागत वत्सल श्रीभगवान् ने अपने भक्त की रक्षा के लिये पहले से ही सुदर्शन चक्र को नियुक्त कर रखा था। चक्र ने कृत्या को जलाकर भस्म कर दिया।
कृत्या को जलाने के बाद सुदर्शन चक्र दुर्वासाजी की ओर बढ़ा। वे अपनी जान बचाने के लिये भागे। वे अपनी पीठ में चक्र के ताप और स्पर्श का अनुभव कर रहे थे किन्तु वह उन्हें जला नहीं रहा था। दुर्वासाजी ने देखा मेरा सारा प्रयास विफल हो गया उलटा ये चक्र मेरे पीछे लग गया। उससे बचने के लिये वे सुमेरू पर्वत की गुफा में दौड़े, वे समस्त दिशाओं, अतल, वितल आदि लोक, लोकपालों से सुरक्षित लोक तथा स्वर्ग तक में गए। किन्तु वह जहाँ भी गए असह्य तेजवाले चक्र को उन्होंने पीछे लगा देखा। कोई उपाय न देखकर वे ब्रह्माजी के पास रक्षा के लिये गए परन्तु ब्रह्माजी ने कहा, “इस चक्र को मैं नहीं लौटा सकता, मेरी सामर्थ्य नहीं है।” ब्रह्माजी से निराश होकर दुर्वासाजी शंकरजी की शरण में गये, उन्होंने भी अपनी असमर्थता जताई और कहा, “जिनका यह चक्र है उन्हीं की शरण में जाओ, वही तुम्हारी रक्षा कर सकते हैं।” यहाँ से भी निराश होकर दुर्वासाजी भगवान् के परमधाम बैकुण्ठ में गये। जाते ही वे काँपते हुए श्रीभगवान् के चरणों में गिर पड़े और कहने लगे—हे अच्युत! हे अनन्त! हे ब्रह्मण्यदेव! हे प्रभो, मेरी रक्षा कीजिए। आप अपने चक्र से मुझे बचाइये, मेरी रक्षा कीजिए।
श्रीभगवान् ने कहा—“हे ब्राह्मण! तुम मुझे ब्रह्मण्यदेव कह रहे हो किन्तु मैं तुम्हारी रक्षा करने में असमर्थ हूँ। ‘अहं भक्तपराधीनो’ मैं अपने भक्तों के पराधीन हूँ, भक्त मुझसे प्रेम करते है। और मैं उनसे। मुझमें तनिक भी स्वतंत्रता नहीं है। मैं तुम्हारी रक्षा करने में समर्थ नहीं हूँ।” दुर्वासाजी—हे ब्रह्मण्यदेव! मैं उच्च श्रेणी का ब्राह्मण हूँ। आप मेरी उपेक्षा क्यों कर रहे हैं। आप ही तो ब्राह्मणों के रक्षक हैं। श्रीभगवान्—तुमने मेरे भक्त को जलाकर मार डालना चाहा और मैं तुम्हारी रक्षा करूँ? मैं अपने भक्तों के शत्रु की रक्षा किस प्रकार कर सकता हूँ? मेरे भक्तों ने मेरे लिये अपने स्त्री, पुत्र, धन-सम्पति सबको छोड़ दिया। हे

ब्राह्मण! तुमने मेरे लिये क्या छोड़ा है? तुमने अम्बरीष का वध करने के लिये कृत्या को छोड़ा और अब चक्र से रक्षा के लिये विश्व की परिक्रमा कर रहे हो, ब्रह्मा-शिवादि के पास जा रहे हो।
दुर्वासाजी—आपके भक्त के प्रति यदि मेरा अपराध हुआ है, तो यह आपके चरणों
में अपराध है तो आप ही मुझे क्षमा कर दे।
—कांटा यदि पैर में लग जाये तो क्या वह सिर से निकाला जाता है? जाओ अम्बरीष से जाकर क्षमा माँगो।
दुर्वासाजी—आप अम्बरीष का दोष नहीं देख रहे हैं, मेरा ही दोष देख रहे हैं। उसने मुझे निमंत्रण देकर स्वयं भोजन कर लिया। मुझसे पहले खाकर उसने मेरा अपमान किया है।
क्रोधित होकर बोले—अम्बरीष ने मुझे प्रसन्न करने के लिये ही एकादशी
व्रत आदि किये। केवल चरणामृत का सेवन करने की खाने में गणना नहीं की जा सकती। दुर्वासाजी—कौन अधिक महत्त्वपूर्ण है, एकादशी व्रत का समयानुसार पारण
करना या ब्राह्मणों को यथा योग्य सम्मान देना?
भगवान् चिढ़कर बोले—जाओ जाकर अम्बरीष से पूछो तुम मूर्ख धर्मशास्त्र के तत्व से अनभिज्ञ हो वही तुम्हें धर्म की शिक्षा देगा। मेरे पास तुम्हारे निरर्थक प्रश्नों के समय नहीं है। श्रुति कहती है अर्थात् मेरे ही वचन हैं कि पानी पीने से भोजन
करना और नहीं करना दोनों ही होते हैं। इस नियम के अनुसार अम्बरीष ने ब्राह्मण व द्वादशी दोनों को सम्मान दिया है। किन्तु तुम यह सब नहीं जानते और क्रुद्ध हो
गये। जाओ उसी के पास, वही तुम्हें क्षमा करेगा, मैं नहीं कर सकता। भगवान् के
आदेश को सुनकर, सुदर्शन चक्र की ज्वाला से जलते हुए दुर्वासा लौटकर राजा अम्बरीष के पास आए, उनके चरणों में गिर पड़े और कहने लगे—हे राजन्, इस चक्र के असहनीय ताप से मेरी रक्षा कीजिए।
अम्बरीष महाराज चक्र की स्तुति करने लगे, उस समय उनका हृदय दयावश अत्यन्त पीडित हो रहा था। अम्बरीष महाराज की अनेकविध स्तव-स्तुति प्रार्थना से दुर्वासा को चारों ओर से संतप्त करने वाले चक्र शांत हो गये। चक्र के ताप से मुक्त होकर दुर्वासाजी का चित्त स्वस्थ हो गया तथा वे अनेकानेक आशीर्वाद देते हुए अम्बरीष महाराज की प्रशंसा करने लगे।
जब से सुदर्शन चक्र से भयभीत होकर दुर्वासाजी भागे थे तब से लेकर उनके वापस आने तक एक वर्ष का समय व्यतीत हो गया। इतने दिनों तक अम्बरीष महाराज उनके दर्शन की आशा से केवल जल पीकर रहे। अब राजा ने दुर्वासाजी को विधिपूर्वक भोजन कराया और तृप्त किया। दुर्वासाजी के जाने के बाद राजा ने उनके उच्छिष्ट का भोजन किया। दुर्वासाजी का कष्ट में पडना फिर अपने द्वारा उनका कष्ट दूर होना उन्होंने भगवद् कृपा के रूप में जाना।
दुर्वासा ऋषि ने गम्भीरतापूर्वक विचार किया कि यद्यपि मैं ब्रह्मवादी श्रेष्ठ ब्राह्मण हूँ किंतु सुदर्शन चक्र ने समस्त ब्रह्मांड में मुझे भगाया, न मैं अपने आपको बचा पा रहा था, न ही मुझे कोई शरण दे सका। यह अवश्य ही एकादशी व्रत की शक्ति रही होगी। इसी बात का प्रचार करने के लिये दुर्वासाजी तपलोक को चले गये।

शुद्ध भक्त श्री अंबरीष महाराज

अमेरिकामें प्रचारके दौरान श्रील नारायण गोस्वामी महाराजजीने पाँच प्रकारके भक्तोंकी आलोचना करते हुए कहा कि षड्गोस्वामियोंके अग्रगण्य श्रीलसनातन गोस्वामीपादने स्वरचित एवं प्रथम गोस्वामी -ग्रन्थ श्रीबृहद्भागवतामृतमें (१) ज्ञानी भक्त, (२) शुद्ध भक्त, (३) प्रेमी भक्त, (४) प्रेमपर भक्त, (५) प्रेमातुर भक्तोंकी विशद आलोचना की है। परवर्ती कालके समस्त गोस्वामी एवं गौड़ीय गुरुवर्गके अन्यान्य ग्रन्थ श्रीबृहद्भागवतामृतको आधार करके ही रचित किए गए हैं। इस ग्रन्थमें श्रीलसनातन गोस्वामीपादने एक ओर भक्तोंके तारतम्यके अनुसार तारतम्य और दूसरी ओर भगवान्के प्रकाशके तारतम्यके अनुसार भक्तोंके तारतम्यको दर्शाया है।

पूर्वोक्त पाँच प्रकारके भक्तोंमें श्रीचतुःसन, श्रीप्रह्लाद महाराज और श्रीभीष्म पितामह ज्ञानी भक्त हैं। श्रीअम्बरीष महाराज शुद्ध भक्त हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजीके सेवक हनुमान प्रेमी भक्त हैं। द्वारिकाधीश भगवान् श्रीकृष्णके परिकर पाँच पाण्डव और द्रौपदी देवी प्रेमपर भक्त हैं। श्रीकृष्णके मन्त्री, दयित, सखा, उपदेष्टा श्रीउद्धवजी प्रेमातुर भक्तके रूपमें जाने जाते हैं।

भगवान्के कितने प्रिय है, इसे श्रीलमहाराजजीने शुद्ध भक्त श्रीअम्बरीष महाराजके चरितके माध्यमसे प्रकाशित किया। श्रीअम्बरीष महाराजने भक्तिकी रक्षा हेतु भगवद् चरणामृतके सेवन द्वारा एकादशीके व्रतका पारण किया। महायोगी दुर्वासा योगके प्रभावसे यह जानकर निमेषमात्रमें वहाँ पर उपस्थित हुए और अम्बरीषका भस्म करनेके लिए राक्षसीकी सृष्टि की। भगवान्का सुदर्शन चक्र तत्क्षणात् वहाँ पर उपस्थित होकर कृत्याको ध्वंस करके दुर्वासाकी ओर बढ़ने पर ऋषिवर सुदर्शनके तापसे प्राणरक्षा हेतु चौदह भुवनोंमें सर्वोच्च लोक सत्यलोकमें गए। श्रीब्रह्माजीके महायोगी दुर्वासाको शरण देनेमें अक्षम होने पर ऋषिवर शिवलोकमें गए। श्रीशिवलोकमें जाकर वे 'ओ पिता ! त्राहि माम् ! त्राहि माम् !!' अर्थात् 'सुदर्शनके तीव्र तापसे मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो' पुकारने लगे।

श्रीशिवजी—तुम मेरे पास क्यों आए हो ? अभी इसी क्षण यहाँसे चले जाओ, मैं असहाय हूँ, तुम्हारी सहायता करनेमें असमर्थ हूँ। तुम्हारी इस दुर्दशाका कारण शुद्ध वैष्णवोंकी अवमानना करना है। मैं वैष्णव अपराधसे भय करता हूँ। तुम्हें शरण देनेसे सुदर्शन चक्र मुझे भी अभी ध्वंस कर डालेगा। हे वत्स ! तुम बिना देरी किए भगवान् विष्णुकी शरण लो। सुदर्शन चक्र उनका ही है। वे तुम्हारी सहायता कर सकते हैं।

श्रीदुर्वासा ऋषि—(विष्णुके पास जाकर) हे ब्रह्मण्य देव ! ब्राह्मणोंके रक्षक ! अपने सुदर्शन चक्रके तीव्र तापसे रक्षा कीजिए। रक्षा कीजिए।

भगवान् श्रीनारायण—हे ऋषिवर ! आपकी रक्षा करनेमें मैं असमर्थ हूँ। असहाय हूँ।

अहं भक्त पराधीनो ह्यस्वतन्त्र इव द्विज।
साधुभिर्ग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रियः॥

मैं भक्तोंका प्रिय हूँ, अपने भक्तोंकी भक्ति द्वारा सम्पूर्ण रूपसे वशीभूत हूँ। यद्यपि ब्रह्मा, शिव आदि देवता सम्पूर्ण रूपसे मेरे अधीन हैं, तथापि मैं स्वयं भी स्वतन्त्र नहीं हूँ। मेरे द्वारा आपकी रक्षा करनेसे मेरे भक्तगण असन्तुष्ट हो जाएँगे। भक्तोंको असन्तुष्ट करना मेरे सामर्थ्यसे बाहरकी बात है।

श्रीदुर्वासा ऋषि—यह कैसे सम्भव हो सकता है ? आप स्वयं भगवान् होकर भी स्वतन्त्र नहीं हैं। आप सब प्रकारसे भक्तोंके अधीन हैं। यह कैसे सम्भव हो सकता है ?

भगवान् श्रीनारायण—यही मेरा स्वभाव है। यदि कोई भक्त भजन करते-करते सम्पूर्ण रूपसे मेरी शरण ग्रहण करता है तो मेरा हृदय भी उस भक्तके लिए द्रवीभूत हो जाता है एवं मैं उसके अधीन हो जाता हूँ।
श्रीदुर्वासा ऋषि—हे भगवान्! आप तो इतने दयालु हैं कि किसीका भी दुःख देखनेसे आपका हृदय द्रवीभूत हो जाता है। मैं अभी दयनीय अवस्थामें हूँ। आपके शरणागत हुआ हूँ। तथापि मेरे लिए आपका हृदय द्रवीभूत क्यों नहीं हो रहा?
—हे ऋषि! समझनेका प्रयास करो। मेरा मन मेरे पास नहीं है, इसलिए मैं तुम्हारी दुरावस्थाकी चिन्ता नहीं कर पा रहा हूँ। मेरे भक्तोंने उसको चोरी कर लिया है। मैं किस प्रकार दया कर सकता हूँ? मैं भक्तोंकी सेवा द्वारा अधिकृत, वशीभूत हो गया हूँ। वे सदैव मेरी सेवा करते हैं। उनकी सेवा द्वारा सन्तुष्ट होकर मेरे द्वारा यदि उनको कुछ प्रतिदान या वर देना चाहने पर भी वे मेरी सेवाके अतिरिक्त कुछ भी प्रार्थना नहीं करते, इससे मैं उनका और भी अधिक ऋणी हो जाता हूँ। उनके नहीं चाहने पर भी मैं सर्वापेक्षा मूल्यवान वस्तु—मेरा हृदय उनको दे देता हूँ।
हे दुर्वासा! आप अच्छेसे समझ लो कि मेरी समस्त कृपा ही भक्तके हृदयमें सञ्चारित होती है। यदि वे किसी पर भी कृपा करनेकी इच्छा करते हैं तो मैं उनकी इच्छाको पूर्ण करता हूँ। कोई मेरे भक्तोंके प्रति जैसा व्यवहार करते हैं, मैं भी उनके प्रति वैसा ही व्यवहार करता हूँ। आपने कृत्या राक्षसीकी सृष्टि करके मेरे प्रिय महाराज अम्बरीषको ध्वंस करना चाहा था। उसको विपत्तिमें डालकर तुमने बहुत बड़ी भूल की है। अम्बरीष महाराज मेरे लिए अखिल भोग त्याग करके अखिल चेष्टापरायण हुए हैं। तुमने अब तक मेरी सेवाके लिए क्या प्रयास किया है? अखिल भोग त्याग और अखिल चेष्टापरायण तो बहुत दूरकी बात है, क्या तुम थोड़ा-सा भी त्याग और चेष्टापरायण हुए हो? आप अपने आपको ब्रह्मर्षि और अत्यधिक महान् समझते हो और दूसरी ओर महाराज अम्बरीष सर्वगुणसम्पन्न होनेपर भी अपने आपको दीन-हीन-पतित समझते हैं। आप स्वयं ही विचार करके बताइए कि ऐसी अवस्थामें सुदर्शन चक्रसे मैं आपकी कैसे रक्षा कर सकता हूँ?
श्रीदुर्वासा ऋषि—हे ब्रह्मण्य देव! ब्राह्मणोंको सम्मान देना तो आपका स्वभाव है और फिर मैं तो साधारण श्रेणीका ब्राह्मण भी नहीं हूँ, उच्च श्रेणीका हूँ। देवादिदेव महादेवके अंशसे उत्पन्न हूँ। आपके मेरे तत्त्वको सम्पूर्ण रूपसे जानने पर भी अकारण एवं अपने स्वभावके विपरीत व्यवहार करके मेरी अवहेलना क्यों कर रहे हैं, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।
भगवान् श्रीनारायण—हाँ! हाँ! मैं आपकी उपेक्षा कर रहा हूँ। आप क्या समझते हैं कि आपके लिए मैं अपने भक्तोंको त्याग दूँ? मेरे भक्तोंके शत्रुओंकी मैं कभी भी रक्षा नहीं कर सकता। आपके बारम्बार अनुरोध करने पर भी भक्तोंके विरुद्ध आचरण करनेमें मैं कभी भी समर्थ नहीं हूँ। हे ब्राह्मण! महाराज अम्बरीष मेरे लिए ही अपने स्वार्थको त्यागकर सम्पूर्ण रूपसे शरणागत हुए हैं और आपने मेरे लिए क्या किया है?
श्रीदुर्वासा ऋषि—भगवन्! मैं उच्च श्रेणीका ब्राह्मण हूँ और आप ब्रह्मण्य देव हैं अर्थात् ब्राह्मणोंके पालक और रक्षाकर्त्ता हैं। परन्तु एक क्षत्रिय राजा अम्बरीष महाराजकी भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे हैं। उसने आपके लिए क्या किया है?
भगवान् श्रीनारायण—आप नहीं जानते हैं कि मेरे शरणागत भक्त अपनी रक्षाके
लिए कोई प्रयास ही नहीं करते। आपने कृत्या राक्षसीकी सृष्टि करके महाराज अम्बरीषको जलाकर भस्म करनेकी इच्छा करने पर भी उन्होंने अपनी रक्षाके लिए कोई भी प्रयास नहीं किया। उनकी इतनी क्षमता है कि वे स्वयं जिस किसी भी विपत्तिसे अपनी रक्षा करके तत्क्षणात् आपको सजा दे सकते थे। किन्तु मेरे शरणागत होनेके कारण उन्होंने कुछ भी नहीं किया। मैं आपको अभी इसी समय सजा दे सकता था, किन्तु मेरे प्रिय भक्त अम्बरीषने तुम्हारी रक्षाके लिए प्रार्थना की है, इसलिए मैं

आपको सजा नहीं दे पा रहा हूँ। आप अपनेको आत्माराम, आप्तकाम समझते हैं, तथापि सुदर्शन चक्रके भयसे प्राण रक्षा हेतु चारों ओर दौड़ रहे हैं। ब्रह्मा, शिव आदि देवताओंके भी शरणागत हुए हैं। और मेरे भक्त Not at all fearful, but always cheerful. हे ऋषि! आप समझ लीजिए एवं संसार भी जान ले कि मैं योगीवत्सल भगवान् नहीं हूँ, तो केवल भक्तवत्सल भगवान् हूँ और यही सर्वापेक्षा महद्गुण है। श्रीदुर्वासा ऋषि—कौन अधिक गुरुत्वपूर्ण है? एकादशी व्रतका समयानुसार पारण करना अथवा ब्राह्मणोंको यथायोग्य सम्मान करना।
भगवान् श्रीनारायण—आपके निरर्थक प्रश्नोंका उत्तर देनेका समय मेरे पास नहीं है। अम्बरीष महाराजके पास जाओ। वे आपके प्रश्नका उत्तर यथायोग्य दे पाएँगे। वे इस विषयमें मुझसे अधिक जानते हैं।
श्रीदुर्वासा ऋषि—अम्बरीष महाराज क्या कुछ देर और अपेक्षा नहीं कर सकता
था? मुझे भोजन कराके एकादशी व्रतका पारण नहीं कर सकता था?
भगवान् श्रीनारायण (कुछ क्रोधित होकर)—मैंने तो पहले ही आपसे कहा है कि आपके निरर्थक प्रश्नोंके उत्तर देनेके लिए वास्तवमें मेरे पास समय नहीं है। अम्बरीष महाराजका क्या दोष हुआ है? उन्होंने कुछ खाया है क्या? उन्होंने क्या अन्याय किया है? उन्होंने तो कुछ खाया ही नहीं है। केवल मात्र मेरा चरणामृत ही पान किया है। महापण्डित दुर्वासाजी! आपमें इतना भी सामर्थ्य नहीं कि इतनी छोटी-सी बातको भी समझ सको। एकादशीका निर्जला उपवास करके व्रत भङ्ग व पारण हेतु एक बूँद चरणामृतका सेवन करना कभी भी खानेमें गिनती नहीं किया जा सकता। श्रीदुर्वासा ऋषि—हे ब्रह्मण्य देव! मैं तो ब्राह्मण हूँ और आप तो केवल मेरे ही दोषोंको देख रहे हैं। अम्बरीष महाराजके दोषोंको भी देखिए। मैं साधारणतः किसीका भी निमन्त्रण स्वीकार नहीं करता हूँ। अम्बरीष महाराज ब्राह्मणोंका सम्मान करते हैं, इसलिए मैंने उनका निमन्त्रण स्वीकार किया है। उन्होंने मेरेसे पहले खाकर मेरी अवमानना की है। आप उसके दोषको क्यों नहीं देखते? वे अपनेको बुद्धिमान और चतुर समझते है। चतुराई पूर्वक ही मुझे भोजन करानेसे पहले उन्होंने जलपान किया है।
भगवान् श्रीनारायण—आप अम्बरीष महाराजके पास जाकर इन प्रश्नोंका उत्तर पूछिए। उन्होंने तो केवल वेद आदि श्रुति शास्त्रोंके नियमका पालन किया है। एकादशी व्रत पालन एवं पारण हेतु जो शास्त्रोंकी आज्ञा है, उन्होंने उसीका पालन किया है। जिससे भक्ति नष्ट न हो, उनके लिए एवं मेरी प्रीति हेतु जो करणीय है, उन्होंने वही किया। अतः बिना विलम्ब किए तुम महाराज अम्बरीषके पास जाओ। पैरमें काँटा लगनेसे क्या वह कन्धेसे बाहर निकलता है?
महर्षि दुर्वासा—मैं कैसे उनके पास जाऊँ? वे तो मेरे प्रति अत्यन्त क्रोधित होंगे।
भगवान् श्रीनारायण—आप जाइए। समदर्शी होनेके कारण वे कभी भी क्रुद्ध नहीं हो सकते। मेरे भक्तोंका एक महान् गुण है कि दूसरोंके द्वारा किए गए द्रोह आचरणोंको साथ ही साथ भूल जाते हैं। किन्तु दूसरोंके द्वारा किए गए सामान्य उपकारको कभी भी नहीं भूलते।
द्वारा अभय प्रदान किए जाने पर दुर्वासाजीके महाराज अम्बरीषके पास जाने
पर महाराज अम्बरीषने कहा—हे महर्षि! मुझे क्षमा कर दीजिए। मेरे कारण ही आपको भूखा, प्यासा होकर चारों तरफ घूमना पड़ रहा है।
श्रीदुर्वासा ऋषि—हे राजन्! अपराध तो मैंने किया है। आप मुझे क्षमा कीजिए एवं सुदर्शन चक्रके असहनीय तापसे मेरी रक्षा कीजिए। आपकी कृपाके अतिरिक्त सुदर्शनसे मेरी रक्षाका और कोई उपाय नहीं है।
अम्बरीष महाराजजीकी प्रार्थनासे चक्र अन्तर्हित हो गए और दुर्वासा ऋषिजी चक्रसे मुक्त होकर कहने लगे कि आज ही मैंने भक्तोंकी महिमाको समझा। मेरे अपराध करने पर भी भक्तने मेरे कल्याणके लिए ही प्रार्थना की है।

श्रीअम्बरीष महाराजके चरितसे यह शिक्षा मिलती है कि वैष्णव अपराधीको भगवान् भी क्षमा नहीं करते। भगवान् अघटन-घटन-पटीयसी शक्तिके अधिकारी होकर भी अपने भक्तोंकी अवमानना सहन नहीं करते। अतएव हमें सदैव वैष्णव-अपराधसे दूर रहना चाहिए। वैष्णवोंको प्रिय लगनेवाले कार्य करने होंगे, तभी हम भगवद् कृपा प्राप्त कर पाएँगे।

श्री कृष्ण -प्रेम -तरंगिणी ग्रंथ (नवम स्कंध) से अंबरीष महाराज का चरित्र

नभगेर पुत्र हैल नाभाग -नृपति।
तार पुत्र हैल ‘अम्बरीष ’ महामति॥ १४६॥

नभग के पुत्र का राजा नाभाग ऐसा हुआ। उन के पुत्र महामति अम्बरीष थे।

महाभागवत राजा , धर्म -अवतार।
सप्तद्वीप दण्डधर , एक-अधिकार॥ १४७॥

अम्बरीष महाराज महाभागवत एवं धर्म के अवतार थे। सातों द्वीपों के वे दंडधारी एकछत्र सम्राट थे।

ब्रह्मशाप नष्ट हैल यार विद्यमाने।
हेन अम्बरीष -राजा विदित भुवने॥ ” १४८॥

ब्राह्मण का शाप (ब्रह्मशाप) भी उनके सामने विनष्ट हो गया और उनका कुछ बिगाड़ नहीं पाया। ऐसे अम्बरीष महाराज सारे विश्व में प्रसिद्ध हुए।

तबे राजा जिज्ञासिल , “कह मुनिवर।
ब्रह्मशापे किरूपे तरिल क्षितीश्वर ? १४९

तब राजा परीक्षित् नें श्री शुकदेव गोस्वामी से प्रश्न किया , “हे सर्वश्रेष्ठ मुनि ! ब्रह्मशाप से महाराज अम्बरीष कैसे बच पाए ?

ए बड विस्मय , गुरु , कह विवरण। ”
तबे शुकदेव ता ’र कहेन कारण॥ १५०॥

यह बड़े विस्मय की बात है। श्रील गुरुदेव इस का विवरण हमें बताने की कृपा करे। तब श्रील शुकदेव गोस्वामी ने सविस्तर श्रीअम्बरीष महाराज की कहानी श्री परिक्षित महाराज को बताना आरंभ किया।

अम्बरीष महाभाग सप्तद्वीप -पति।

अतुल वैभव , राज्य , अनन्त -विभूति॥ १५१॥

अतिशय भाग्यशाली अम्बरीष महाराज सप्तद्वीप (सात द्वीपों) के अधिपति थे। वे अतुलनीय वैभव , राज्य और अनगिनत विभूति से भूषित थे।

हेन राज्य पदे ताँ ’र नैल वस्तुज्ञान।
सकल देखिल येन स्वपन -समान॥ १५२॥

अपने राज्य एवं श्रेष्ठ सम्राट के पद को वो तुच्छ समझते थे। ये सब ऐश्वर्य को वो सपने के समान क्षणभंगुर समझते थे।

[illegible]

कृष्ण -वैष्णवेर सेवा कैल निरन्तर।
जगत् देखिल येन लोष्ट्र -पाथर॥ १५३॥

[illegible]

श्रीअम्बरीष महाराज विष्णु (कृष्ण) एवं वैष्णवों की सेवा निरंतर करते थे। वे इस समस्त विश्व को एक पत्थर के समान क्षुद्र समझते थे।

कृष्ण -पदयुगे मन कैल नियोजने।
हरिगुण बिने आन ना कहे वदने॥ १५४॥

अपना मन श्रीकृष्ण के चरण कमलों में नियोजित किया। भगवान् श्रीहरि के गुणों के अतिरिक्त वे अन्य कोई भी कथा नहीं मुख से उच्चारण नहीं करते थे।

करयुगे करे गृह -मार्जन -लेपने।
हरिकथा विने आर ना शुने श्रवणे॥ १५५॥

दोनों हाथों से वे भगवान् श्रीकृष्ण के मंदिर का मार्जन करते थे। उन के दोनों कान हरिकथा के विना अन्य कोई भी विषय सुनने में वे नियुक्त नहीं करते थे।

दुइ चक्षे देखे सबे मुकुन्द -मन्दिरे।
भकत-शरीर सबे परशे शरीरे॥ १५६॥

दोनों आंखों से वे भगवान् श्रीमुकुन्द के मंदिर का दर्शन करते थे। और अपने शरीर से सभी भक्तों के शरीर को स्पर्श करते थे।

गोविन्द -चरण-श्रीतुलसी -आघ्राण।
ताहा विने नासिकार ना सेविल आन॥ १५७॥

श्रीगोविन्द के चरण को अर्पित तुलसी ही वे अपने नासिकाओं से सुंघते थे। अन्य किसी भी वस्तु का गंध वे नहीं लेते थे।

मुकुन्द -नैवेद्य -अन्नपान -उपहार।
ताहा विने रसनाय ना सेविल आर॥ १५८॥

श्रीमुकुन्द के महाप्रसाद के सिवा अन्य कोई व्यञ्जन की वे अपने जीभ द्वारा नहीं सेवा नहीं करते थे।

पदयुगे कैल हरिक्षेत्र पर्यटन।
निरवधि करे शिरे चरण वन्दन॥ १५९॥

अपने चरणों से वे हरिक्षेत्र (के लीला स्थलियों) की परिक्रमा करते थे। और अपने उत्तमांग (सर) वे भगवान् के चरण एवं पद चिह्नों की वन्दना करते थे।

गन्ध -माल्य , राजवेश दासभावे परे।
सुखभोग -हेतु किछु विलास ना करे॥ १६०॥

महाराज अंबरीष राजा का वेश , और उपयुक्त गन्ध एवं माल्य धारण तो करते थे , लेकिन उनके हृदय में सब समय ‘मैं कृष्ण का दास हूँ ’, यह भाव ही परिलक्षित होता था। अतएव वे अपने सुख एवं आनंद हेतु कोई भी विलास में उद्युक्त नही होते थे।

निरवधि उत्तमश्लोकेर शुने मति।
कभु अन्य चित्ते ना चिन्तिल नरपति॥ १६१॥

सतत उत्तमश्लोक भगवान् श्रीहरि का गुणगान अपने कानों से श्रवण करते थे। वे अपने चित्त में कोइ नही विचार नहीं आने देते थे।

[illegible]

तमु ताँ ’र दण्डभंग नहिल संसारे।
एकचक्रे क्षितितल शासिल सकले॥ १६२॥

[illegible]

इस पृथ्वीतल पर कोई भी उनका विरोध नहीं कर सका। उन्होंने संपूर्ण पृथ्वीपर निष्कंटक राज्य किया।

विप्र -वैष्णवेर आज्ञा लञा निज -माथे।
तबे कर्म करे राजा , हञा सावहिते॥ १६३॥

ब्राह्मण एवं वैष्णवों की आज्ञा अपने माथे पर धारण कर अम्बरीष महाराज यज्ञ में प्रवृत्त होते थे।

राजसूय , अश्वमेध बहु यज्ञ करि ’।
विविध दक्षिणा दिया भजिला श्रीहरि॥ १६४॥

अम्बरीष महाराज ने बहुत सारे राजसूय एवं अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान किया। एवं वैष्णवों को प्रचुर दक्षिणा देकर उन्होंने भगवान् श्रीहरि का भजन किया।

वशिष्ठ , गौतम -आदि मुनिगणे आनि ’।
नाना -यज्ञ करिया भजिला चक्रपाणि॥ १६५॥

वशिष्ठ और गौतम आदि विविध मुनियों को लाकर राजाने अनेक यज्ञों का अनुष्ठान इस तरह राजाने भगवान् चक्रपाणि का भजन किया।

बहुविध धन -रत्न , विविध सम्भार।
बहुविध अन्न -पान , दिव्य उपहार॥ १६६॥

बहुत सारे धन , रत्न और द्रव्य सामग्री , अनेक प्रकार के अन्न व्यंजन एवं दिव्य उपहार प्रदान कर के राजा ने सभी को संतुष्ट किया।

दिव्य वेश , वसन, भूषण , अलङ्कार।
याँ ’र यज्ञे नर -नारी गन्धर्व -आकार॥ १६७॥

दिव्य वेश , वस्त्र , भूषण , अलंकार इत्यादि से सुशोभित होकर उन के यज्ञ में नर एवं नारी गंधर्व के समान सुन्दर रूप धारण कर सम्मिलित होते थे।

केबा सुर , केबा नर , केह ना चिनिल।
याँ ’र यज्ञे देवगण स्वर्ग पासरिल॥ १६८॥

कौन देवता है और कौन मनुष्य है , कोई भी पहचान नहीं पा रहा था। जिन के यज्ञ में देवता गण स्वर्ग तक भूल गये थे।

हरि -गुण -चरित्र -अमृत पान करि ’।
आनन्दे रहिल देव स्वर्ग परिहरि ’॥ १६९॥

श्रीहरि के गुण एवं चरित्र रूपी अमृत का पान करते हुए देवता लोग स्वर्ग को छोड़कर आनन्दपूर्वक राजा के राज्य में निवास करने लगे।

हेन महायज्ञ राजा कैला शते शते।
कत महादान , पुण्य कैल कत मते॥ १७०॥

इस तरह राजाने हजारों यज्ञों का अनुष्ठान किया। बहुत सारी संपत्ति का दान कर के राजा ने अनेक प्रकार के पुण्य कार्य संपन्न किए।

कत कोटि महारथ कत कोटि घोड़ा।
कोटि कोटि गज , येन पर्वतेर चूड़ा॥ १७१॥

राजा ने कई करोड़ बड़े बड़े रथ एवं घोडों का दान किया। राजा ने कई करोड़ पर्वत के शिखर के समान विशाल काय हाथियों का भी दान किया।

पशु , वित्त , सूत , दार , अनन्त भाण्डार।
ए-सब देखिल जेन बुद्बुद -आकार॥१७२॥

राजा पशु , वित्त , पुत्र , पत्नियाँ एवं अनंत भांडार को इस प्रकार तुच्छ एवं नश्वर रूप में देखता था , जैसे ये पानी के उपर प्रकट हुआ क्षणिक बुदबुदा हो।

श्रीअम्बरीषेर रक्षक श्री -सुदर्शन -चक्र

हेन भागवत अम्बरीष नरेश्वर।
चक्र याँ 'रे पाठाञा दिलेन गदाधर॥ १७३॥

श्रीअम्बरीष महाराज के रक्षक —श्री सुदर्शन चक्र

महाराज अम्बरीष ये परम भागवत थे। उन की रक्षा के लिए गदाधर श्रीकृष्ण ने अपना सुदर्शन चक्र भेज दिया था।

निरवधि विष्णुचक्रे याँ 'रे रक्षा करे।
ताँहार महिमा केबा कहिबारे पारे ? १७४

समय भगवान् विष्णु का चक्र उनकी रक्षा करता था। उनकी महिमा कौन बता सकता है ?

श्रीअम्बरीषेर सस्त्रीक एकादशीव्रत -पालन

ताँ 'र सम गुण -शीले आछिल महिषी।
ता 'र सहे व्रत आरंभिलेन द्वादशी॥ १७५॥

श्रीअम्बरीष महाराज के द्वारा अपनी पत्नी के साथ एकादशी व्रत का पालन

उनकी महारानी भी उतनी ही गुण एवं शील से युक्त थी। अपनी महारानी के साथ उन्होंने द्वादशी का व्रत आरंभ किय।

एक वत्सरेर व्रत पूर्ण यदि हैल।
कार्तिक -मासेर एकादशी -व्रत आइल॥ १७६॥

एक साल का व्रत पूर्ण हुआ था। अभी कार्तिक महिने का एकादशी का व्रत आया।

त्रिरात्रि करिया राजा द्वादशीर दिने।
यमुनार जले स्नान करिया विधाने॥ १७७॥

तीन रात का व्रत कर के राजा ने द्वादशी के दिन यमुना के जल में विधि -विधान से स्नान किया।

मधुवने कैल राजा कृष्ण -आराधने।
महाराज -अभिषेक कैल नारायणे॥ १७८॥

में राजा ने भगवान् कृष्ण की आराधना की और श्रीनारायण का अभिषेक किया।

गन्ध , पुष्प , धूप , दीप , विविध सम्भार।
बहुविध दिव्य वस्त्र दिव्य अलङ्कार॥ १७९॥
दिव्य परिच्छद करि ' पूजिल श्रीहरि।
ब्राह्मण पूजिला तबे कृष्णे मन धरि '॥ १८०॥

गंध , पुष्प , धूप , दीप एवं विविध द्रव्य -सामग्री , विविध दिव्य वस्त्र , दिव्य अलंकार , दिव्य पोशाक आदि अर्पण कर के उन्होंने श्रीहरि की आराधना की। उस के उपरांत उन्होंने कृष्ण को मन में रखकर ब्राह्मणों की भी पूजा की।

रजतेर खुर , शृङ्ग कनके रचित।
षड़र्बुद धेनु नाना भूषणे भूषित॥ १८१॥
भकत, ब्राह्मणगण विचार करिया।
ता 'र घरे दिल राजा आपने पाठाञा॥ १८२॥

उस के उपरांत राजाने विचारपूर्वक छह अर्बुद (साठ करोड़) गौएँ भक्त एवं ब्राह्मणों को अर्पण कर दी। उन के खुर चाँदी से एवं उनके सिंग सोने से सजाए थे। उन्हें नाना प्रकार के आभूषणों से विभूषित भी किया गया था।

दिव्य अन्न द्विजगणे करा 'ये भोजने।
पारणा करिते आज्ञा मागिल ब्राह्मणे॥ १८३॥

उस के उपरांत उन्होंने दिव्य अन्न -प्रसाद द्वारा ब्राह्मणों को भोजन करवाया। उसके उपरांत उन्होंने ब्राह्मणों से पारण करने की आज्ञा माँगी।

□□□□□□□□-□□□□□□□-□□□

हेनकाले दुर्वासा मुनिर आगमन।
देखिया सम्भ्रमे राजा उठिला तखन॥ १८४॥

□□□□□□□□ □□□ □□□□□□□□ □□ □□□ □□□ □□□□□

उस समय दुर्वासा मुनि का आगमन हुआ। उन्हें देखकर राजा सम्भ्रमपूर्वक उठकर खडे हुए।

पाद्य -अर्घ्य दिया राजा पूजिल विधाने।
चरणे धरिया राजा कैला निवेदने॥ १८५॥

पाद्य और अर्घ्य देकर राजा ने विधि विधान से मुनि की पुजा की। राजा ने दुर्वासा मुनि के चरण पकड कर उन्हें निवेदन किया।

‘कृपा यदि कर , गोसाञि , करह पारण। ’
राजार वचन मुनि ना कैल लङ्घन॥ १८६॥

हे दुर्वासा गोस्वामी आप कृपा कर के पारण करिए। राजा की प्रार्थना को मुनि ने नकारा नही।

स्वीकार करिया गेला यमुनार जले।
स्नान करि ’ महामुनि नित्यकर्म करे॥ १८७॥

राजा का पारण का निमंत्रण स्वीकार कर के दुर्वासा मुनि यमुना के जल में स्नान करने गए। स्नान करने के उपरांत महामुनि नित्य कर्म करने में लग गए।

□□□□□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□-□□□□

हेनकाले द्वादशीर क्षण बहि ’ जाय।
ब्राह्मणेर सहे राजा विचारिया चाय॥ १८८॥

□□□□□□□□□□□ □□□□□□ □□ □□ □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□-□□□□

इस समय द्वादशी का क्षण बिता जा रहा था। ब्राह्मण के साथ के राजाने विचारणा की।

‘ब्राह्मण लंघिले दोष हय अतिशय।
द्वादशीर क्षण गेले व्रतभंग हय॥ १८९॥

ब्राह्मण की अवज्ञा करने से महान दोष होगा। और द्वादशी की तिथि व्यतीत होने से व्रत भंग हो जाएगा।

कर्म कैले आमि ना पडि संकटे ?
विचार करिया , देव , कह तुमि झाटे॥ ’ १९०॥

कौन-सा कर्म करने से हम संकट में नहीं पड़ेंगे ? हे ब्राह्मण -देवता , आप विचार कर के हमें झटसे ऐसा उपाय बताने की कृपा करें।

द्विजगणे बले , तुमि कर जल पान।
व्रतरक्षा हय , नहे विप्र -अवज्ञान॥ १९१॥

द्विज गण (ब्राह्मणों के समुह) ने उत्तर दिया की हे राजा ! आप चरणामृत का पान करिए। इस से आप के व्रत की रक्षा होगी एवं ब्राह्मण दुर्वासा महर्षि की अवज्ञा भी नहीं होगी।

भक्षणेर माझे जलपान नाहि लेखि।
एइ सनातन -धर्म वेद -विप्र साक्षी॥ ” १९२॥

जलपान को किसी भी हालत में भक्षण या भोजन के समान नहीं समझा जा सकता। यही सनातन धर्म की शिक्षा है। इस के लिए धर्म एवं वेद साक्षी हैं।

ए बोल शुनिञा राजा करि ’ जलपाने।
मुनिर विलम्बे राजा रहे सावधाने॥ १९३॥

वाक्य सुनकर राजा ने भगवान् के चरणामृत का पान किया। मुनि के आने में हुए विलंब के कारण राजा सावधान हो गए थे।

हेनकाले दुर्वासा मुनिर आगमन।

आगुबाडि ’ कैल राजा चरण -वन्दन॥ १९४॥

इसी समय दुर्वासा मुनि का आगमन हुआ। आगे आते हुए राजाने मुनि के चरणों में प्रणाम किया।

[illegible]

राजार चरित्र मुनि जानिल धेयाने।

प्रकोपे जलिल येन दीप्त -हुताशने॥ १९५॥

[illegible]

राजा का चरित्र मुनि ने अपने ध्यान में जान लिया। वे क्रोध के कारण ऐसे जल रहे थे जैसे प्रदीप्त आग।

एके त दुर्वासा मुनि , ताहे उपवासी।

जगत् दहिते पारे , जाँ 'र क्रोधराशि॥ १९६॥

एक ओर तो वे क्रोधी दुर्वासा मुनि , एवं उस में भी वो उपवासी थे। उन में क्रोध -राशि मे पूरे विश्व जलाने की शक्ति थी।

“अतिथि -विधाने आमा ’ करि ’ निमन्त्रण।

आमाके ना दिया आगे करिलि भोजन ? १९७

“हे अम्बरीष महाराज ! अतिथि के रूप तुमने मुझे निमंत्रण दिया। और मुझे भोजन न अर्पण कर के तुम ने स्वयं ही भोजन पा लिया।

धन-राज्य -मदे तोर एत अहंकार ?

भाल मन्द ना बुझिस् ,आरे दुराचार ? १९८

हे दुराचारी राजा ! धन एवं राज्य के मद के कारण तुम्हें इतना अहंकार हो गया हैं ? क्या अच्छा हैं एवं क्या बुरा है , इसका भी विवेक तुम्हे नही रहा है ?

विष्णुभक्त आपनाके बोलाह संसारे।

गुरु - ना मानिस् - एइ अहंकारे ? १९९

तुम अपने आपको विष्णुभक्त कहलाते हो। इस अहंकार के कारण तुम गुरु एवं ब्राह्मणों की मर्यादा का उल्लंघन कर रहे हो।

[illegible]

आजि से करिब तोर सवंशे संहार। ”

ए बोल बलिया जटा छिंडे आपनार॥२००॥

[illegible]

आज मैं तुम्हारा वंश के साथ संहार करूंगा। ” ऐसा बोलकर श्रीदुर्वासा मुनि ने अपनी जटा से कुछ बाल उखाड लिए।

सेइ जटा दिया मुनि कृत्या निरमिल।

प्रलय -आनले जेन खाईते आईल॥२०१॥

उसी जटा से मुनि ने कृत्या नामक राक्षसी का निर्माण किया। वह राक्षसी प्रलय के अग्नि के समान अंबरीष महाराज को खाने आई।

तमु अम्बरीष -राजा ना चिन्तिल मने।

विष्णुचक्रे मुनि -कृत्या पुडिल तखने॥ २०२॥

भी अंबरीष महाराज ने मन में चिंता नही की। उसी समय भगवान् श्री विष्णु के सुदर्शन चक्र ने आकर कृत्या नामक राक्षसी को जलाकर भस्म कर दिया।

[illegible]

त्रैलोक्यदहन -चक्र देखि ' भयंकर।

पलाञा दुर्वासा मुनि चलिल सत्वर॥ २०३॥

[illegible]

तिनों लोकों का दहन करने वाला चक्र देखकर उस के भय से डरे हुए दुर्वासा मुनि तुरंत वहाँ से भाग निकले।

सुमेरु -पर्वत -आदि यत गिरि -दरी।
दिग् , आकाश, भ्रमिल सुरपूरी॥ २०४॥

दुर्वासा मुनि चक्र के डर मे मारे सुमेरु पर्वत , गिरि , दरी , दसों दशाएं , आकाश एवं स्वर्गलोक में भ्रमण करने लगे।

सप्त -द्वीप , सप्त -सिन्धु ए -सप्त पाताल।
कोथाह ना देखे मुनि आपन -निस्तार॥ २०५॥

सात द्वीप , सात समुद्र एवं सात पाताल —इन सब स्थानों पर भ्रमण करने के बावजूद मुनि अपने आप को सुदर्शन चक्र के प्रभाव से बचा नहीं पा रहे थे।

यथा यथा जाय , चक्रे देखे सेइ स्थाने।
ब्रह्मलोके गेल तबे ब्रह्मार शरणे॥ २०६॥

जहाँ जहाँ दुर्वासा मुनि जाते थे , वहाँ वहाँ चक्र उन का पीछा कर रहा था। तब बे ब्रह्म लोक में ब्रह्माजी के शरण गए।

भये कम्पमान मुनि कैल निवेदन।
विष्णुचक्र हैते कर आमारे रक्षण॥ ” २०७॥

भय से कम्पित होकर मुनि ने निवेदन किया की इस विष्णु के चक्र से मेरी रक्षा कीजिए।

□□□□□□□-□□□□□□ □□□□□□□□□□□□-□□□

ब्रह्मा बले ,—“शुन मुनि , कहि तत्त्व -कथा।
प्रभु ये करिब , ताहा ना हय अन्यथा॥ २०८॥

□□□□□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□ □□□ □□□□□□□□□□□□

ब्रह्माजी कहा —“हे मुनि ! को मैं तत्त्व कथा बता रहा हूँ। भगवान् विष्णु जो करते है उस का विरोध नहीं हो सकता हैं।

क्रीड़ाकाले करे प्रभु जगत् निर्म्माण।
प्रलय -समये सब हरे भगवान्॥ २०९॥

के समय प्रभु विश्व का सृजन करते है। प्रलय के समय भगवान् सब हरण कर लेते हैं।

कोटि कोटि ब्रह्माण्ड सृजये भुरुभङ्गे।
आपने संहार करे आपनार रङ्गे॥ २१०॥

श्रीकृष्ण अपनी भौंओं (भृकुटी) को किंचित वक्र करने मात्र से करोड़ो ब्रह्मांडोंका सृजन करते हैं। एवं खेल -खेल में ही उन का संहार भी कर देते है।

आमि, भव, शशी, सूर्य , सुरेश सत्वर।
याँ ’र आज्ञा शिरे धरि ’ वहि निरन्तर॥ २११॥

मै (ब्रह्मा), शंकर , चन्द्रमा , सूर्य , और अन्यान्य देवताएं भगवान् श्रीकृष्ण की आज्ञा को निरन्तर अपने सर पर धारण करते हैं।

ताँ 'र कालचक्र एइ संहार -मूरति।
इहा निवारिते पारि काहार शकति ?” २१२

का ही यह काल चक्र साक्षात् संहार की मूर्त्ति है। इस का निवारण करने की शक्ति या सामर्थ्य किस में हो सकता हैं।

शिवलोके धाञा मुनि चलिल सत्वर।
शरण पशिल गिया शंकरगोचर॥ २१३॥

मुनि तेज़ी से दौडते हुए शिव लोक गए और उन्होंने शंकर जी शरण ले ली।

□□□□□□□□□□ □□□□□ □□□□□

शिव बले —“शुन मुनि ,आमार वचन।

प्रभुर उपरे प्रभु आछे कोन् जन ? २१४

[illegible]

शंकर ने कहा —"हे मुनि ! वचन सुनिए। भगवान् श्रीकृष्ण असमोर्ध्व तत्त्व हैं। उन के समान याँ उन से श्रेष्ठ कोई भी नहीं हैं।

आमि—भव महेश्वर , ब्रह्मा —लोकपिता।
जगतेर गति , पति जगत -विधाता॥ २१५॥
सनकादि , नारद , मुनीन्द्र , योगेश्वर।
याँ 'र मायापाशे बन्दी सब चराचर॥ २१६॥

मैं (शंकर अथवा महेश्वर), लोकपिता ब्रह्माजी , सब लोकपाल , चतुःसन , नारद , मुनीन्द्र , योगेश्वर एवं समस्त चराचर उनके माया पाश में बन्दी है।

बुझिते ना पारि याँ 'र माया बलवती।
ताँ 'र निजचक्रतेज अतुल -शकति॥ २१७॥

उनकी बलवती माया को कोई भी समझ नहीं सकता है। उनके चक्र का तेज अतुलनीय शक्ति से युक्त हैं।

सर्वभावे लह गिया गोविन्द -शरण।
हरि से करिते पारे चक्र -निवारण॥ " २१८॥

शरणागति के भाव में श्री गोविन्द भगवान् को शरण जाइए। श्रीहरि ही उस चक्र का निवारण कर पाएंगे। "

[illegible]

शिवेर वचन शुनि ' दुर्वासा चलिल।
वैकुण्ठनगरे गिया त्वरिते उठिल॥ २१९॥

[illegible]

शंकरजी का वचन सुनकर दुर्वासा तुरंत चल पडे। वे उड़कर वैकुण्ठ नगर में पहुँच गए।

भये कम्पमान मुनि , देखिया तरास।
कमलार सने यथा वैसे श्रीनिवास॥ २२०॥

भय से काँप रहे थे। अत्यंत त्रस्त होकर दुर्वासा मुनिने भगवान् श्रीनिवास को कमला (लक्ष्मी) के साथ सिंहासन पर विराजमान देखा।

'हा नाथ , हा नाथ ' बलि ' पड़िल चरणे।
"परित्राण कर , प्रभु , पशिनु , शरणे॥ २२१॥

'हा नाथ ! हा नाथ !' कहते हुए श्रीदुर्वासा मुनि श्रीमन्नारायण भगवान् के चरण पर गिर पडे।

मोर अपराध , प्रभु , क्षेम एकबार।
ना जानिया मुञि बड़ कैलुँ दुराचार॥ २२२॥

हे प्रभु ! आप मेरे अपराध को एक बार क्षमा कर दिजिए। अनजान में मैंने बड़ा दुराचार किया है।

तोमार भकत -स्थाने कैल अपराध।
एकबार क्षेम प्रभु , सर्वलोकनाथ॥ २२३॥

आप के भक्त प्रति मैंने अपराध किया हैं। हे प्रभु ! हे सर्व लोकों के एकमेव नाथ (स्वामी)! एक बार आप इस अपराध को क्षमा कर दिजिए।

याँर नाम शुनिञा नारकी -सब तरे।
शरण पशिलुँ ताँ 'र चरणकमले॥ " २२४॥

आपका नाम श्रवण करने मात्र से नारकी (नरक में दुःख पाने वाले) लोग भयमुक्त एवं पापमुक्त हो जाते है। ऐसे परम दयालु आप के चरण में मैंने शरण ग्रहण की हैं।

[illegible]

मुनिर बचन शुनि’ पुरुष-पुराण।
आपनार तत्त्व-कथा कहे भगवान्॥ २२५॥
के वचन सुनकर पुराण पुरुष भगवान् (आदि पुरुष गोविन्द) अपने संबंधी कुछ
तत्त्व-सिद्धान्त बताने लगे।
“भकतेर बन्धु आमि, भकत-अधीन।
भकत-जनेर संगे मोर नाहि भिन॥ २२६॥
”मैं भक्तों का परम बन्धु, आप्त, स्वजन एवं हितचिंतक हुँ। मैं भक्तों के
अधीन हुँ। मैं और मेरे भक्तों में कोई अन्तर नहीं हैं।
हृदय हरिया मोर लैल साधुजने।
आपने ईश्वर नहि साधुजन बिने॥ २२७॥
साधु पुरुषों ने मेरे हृदय का हरण कर लिया है।
आपनाके बड़ मुञि ना बलि आपने।
लक्ष्मीदेवी बड़ मोर नहे साधु-हने॥ २२८॥
मैं साधुओं से अपने आप बड़ा नहीं समझता हुँ। मेरी पत्नी लक्ष्मीदेवी भी
साधुओं से बड़ी नहीं है।
अष्टैश्वर्य्य देख मोर वैकुण्ठ-सम्पत्ति।
वैष्णव हइते बड़ नहे अष्टसिद्धि॥ २२९॥
वैकुण्ठ में विद्यमान आठ प्रकार के ऐश्वर्य एवं संपत्ति भी वैष्णवों से श्रेष्ठ नहीं हैं। अष्ट सिद्धियाँ भी वैष्णव से श्रेष्ठ नहीं हैं।
सूत-वित्त, गृह-दार, प्राण, बन्धुगण।
सकल तेजिल जेबा आमार कारण॥ २३०॥
अपने पुत्र, धन, घर, द्वार, प्राण, बन्धुगण इत्यादि सब कुछ का उन्होंने मेरे लिए त्याग किया हैं।
इहलोक, परलोक, सर्व्वसुख तजे।
शरण पशिया मोर पदयुग भजे॥ २३१॥
इहलोक, परलोक, सभी सुखों का त्याग कर वे मेरे चरणों में शरण आकर मेरा भजन करते हैं।
मनेह ना लय मोर तेजिते ताहारे।
हृदये बान्धिया मोरे तिलेक ना छाड़े॥ २३२॥
मेरा मन उन को त्यागने का विचार भी नहीं कर सकता। उन्हों ने मुझे कस कर हृदय में बाँध कर रखा हैं और वो तिल भर भी मुझे मुक्त होने का स्वातंत्र्य नही देते।
भकति करिया मोरे राखे वश करि’।
स्वामी वश करे येन पतिव्रता नारी॥ २३३॥
भक्ति के माध्यम से उन्होंने पुरी तरह वश कर के रखा है। जिस प्रकार पतिव्रता स्त्री अपने स्वामी (पति) को वश कर लेती है।
चतुर्विध मुक्ति मोर भजनेर फल।
दिलेह ना लय मुक्ति भकति-कुशल॥ २३४॥
जो वैष्णव गण भक्ति के अनुष्ठान के कुशल होते हैं, वे चार प्रकार की मुक्ति (सारुप्य, सालोक्य, सार्स्ति एवं सामीप्य) मेरे द्वारा आग्रह पूर्वक प्रदान करने के बावजूद भी स्वीकार नहीं करते।
आमार सेवाय पूर्ण अन्तर-बाहिरे।
मुक्तिपदे वस्तुज्ञान नाहिक जाहारे॥ २३५॥
मेरे सेवा में अन्दर एवं बाहर पुर्ण रूप से वे मग्न रहते है। उन्हें
मुक्ति पद का वस्तु ज्ञान उन्हें नहीं होती।
भकत-हृदये आमि थाकि सर्वक्षण।
सतत हृदये मोर थाके साधुजन॥ २३६॥

मैं भक्तों के हृदय में सब समय विराजमान रहता हूँ और साधु गण भी मेरे हृदय मे सब समय विराजमान होते है।

ताहा बिने आमि किछु ना जानिये आने।
आमि बिने ता 'र चित्त अन्य नाहि जाने॥ २३७॥

उनके सिवा मैं किसी और को नहीं जानता हूँ। और मेरे बिना वे किसी और को नहीं जानते।

श्रीहरि -आदेशे दुर्वासार अम्बरीष -समीपे गमन

ए बोल बुझिया , मुनि , चल तुमि झाटे।
शीघ्र चलि ' जाह तुमि राजार निकटे॥ २३८॥

भगवान् श्रीहरि के आदेश से दुर्वासा मुनि का महाराज अम्बरीष के निकट गमन

हे मुनि ! मेरी बात समझकर तुम तुरंत महाराज अंबरीष के निकट जाइए।

अपराध क्षेमाह विनयवाक्य बलि '।
विनये सकल कार्य साधिबारे पारि॥ " २३९॥

'मेरे अपराध को क्षमा करो ' ऐसा विनयपूर्वक कहकर आप उनके निकट क्षमा याचना करना। विनय के द्वारा सभी कार्य संपन्न होता है।

शुनिञा दुर्वासा मुनि प्रभुर वचने।
चक्रभये गेला मुनि त्वरित -गमने॥ २४०॥

प्रभु के यह वचन सुनकर दुर्वासा मुनि ने चक्र के द्वारा भयभीत अवस्था में त्वरित अम्बरीष महाराज के निकट गए।

श्रीअम्बरीषेर निकट दुर्वासार क्षमा प्रार्थना

अम्बरीष -चरण धरिय़ा दुइ हाते।
लोटाञा दुर्वासा मुनि पड़िला भूमिते॥ २४१॥

श्रीअम्बरीष महाराज के निकट दुर्वासा मुनि की क्षमा प्रार्थना

तब अम्बरीष महाराज के दोनों चरण अपने हातों से पकड़कर दुर्वासा मुनि भूमि पर लेट गये।

लाजे , भये व्याकुलित राजा अम्बरीष।
देखिया मुनिर दुःख हैला बिमरिष॥ २४२॥

लज्जा एवं भय से अम्बरीष महाराज व्याकुल हो गए थे। वे दुर्वासा मुनि का दुःख देखकर विचार करने लगे।

दुर्वासार मुक्ति -निमित्त अम्बरीषेर श्रीसुदर्शन -स्तव ओ दुर्वासार परित्राण

तबे अम्बरीष -राजा कोन कर्म करे।
नाना स्तुति करि ' चक्र साधिल विस्तरे॥ २४३॥

दुर्वासा मुनि के मुक्ति के लिए अम्बरीष के द्वारा श्रीसुदर्शन चक्र की स्तव स्तुति एवं दुर्वासा मुनि का परित्राण

तब अम्बरीष महाराज ने एक अद्भुत कार्य किया। उन्होंने नाना प्रकार से स्तुति कर के सुदर्शन चक्र को संतुष्ट किया।

"तुमि सब सत्य , धर्म , तुमि यज्ञमय।
तुमि काल , तुमि यम , तुमि लोकभय॥ २४४॥

"हे सुदर्शन चक्र ! तुम सत्य , धर्म एवं यज्ञ स्वरूप हो। तुम्हीं काल , यम एवं सभी लोकों के लिए भय स्वरूप हो।

कोटि कोटि कर तुमि ब्रम्हाण्ड प्रलय।
तोमार प्रताप तेज का ’र प्राणे सय **?** २४५

हे सुदर्शन चक्र ! आप करोड़ो ब्रह्मांडों में प्रलयकालीन विनाश लाने की क्षमता रखते हो। आप का तेज एवं प्रताप कौन सह सकता है ? आप का तेज एवं प्रताप सभी के प्राणों के लिए असह्य हैं।

मोर यत पुण्य तप **,** आछे यज्ञदाने।
सकल तेजिलुँ मुञि ब्राह्मण **-**कारणे॥ २४६॥

मैने जितना भी पुण्य , तपस्या , यज्ञ एवं दान किया है , उस सब का मैं इन ब्राह्मण देवता (दुर्वासा मुनि) के लिए त्याग करता हुँ।

एइ पुण्ये ब्राह्मणेर हउक प्रतिकार।
ब्राह्मणेर अपराध क्षेम एकबार॥ २४७॥

इस पुण्य के द्वारा इन ब्राह्मण देवता (दुर्वासा मुनि) की रक्षा हो। इन ब्राह्मण देवता (दुर्वासा मुनि) का अपराध एकबार क्षमा करें।

कृपा यदि थाके मोरे **,** विप्र रक्षा कर।
क्षेमिया सकल दोष ब्राह्मणे उद्धार॥ **”** २४८॥

यदि आप की मेरे उपर कृपा हो तो आप इन विप्र की रक्षा करिए। इस ब्राह्मण के समस्त दोष क्षमा कर दिजिए।

शुनिञा से **-**सुदर्शन अम्बरीष **-**स्तुति।
शान्त हैल विष्णुचक्र अतुल **-**शकति॥ २४९॥

सुदर्शन चक्र ने जब अम्बरीष महाराज की स्तुति श्रवण की , विष्णु भगवान् का वह अतुलनीय शक्तिशाली चक्र शान्त हो गया।

शङ्कटे तरिया मुनि सुस्थ हैला मने।
आशीर्वाद करि ' मुनि कि बले बचने **?** २५०

संकट से तरने के बाद दुर्वासा मुनि का मन स्वस्थ हो गया। आशीर्वाद देकर उन्होंने क्या वचन कहे ?

[illegible] [illegible] [illegible]-[illegible]

“आमि से देखिलुँ हरिभक्तेर महिमा।
ब्रह्मा **-**आदि देवे याँ ’र दिते नारे सीमा॥ २५१॥

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]—[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

आह! हमने हरि भक्तों की महिमा का दर्शन किया। ब्रह्मा आदि देवता गण भी उन के माहात्म्य की सीमा नही जानते है।

अपराध देखि क्षमा करे साधुजने।
भकत**-**महिमा त्रिभुवने नाहि जाने॥ २५२॥

साधुजन अन्यों का अपराध देखकर भी उसे क्षमा कर देते है। तीनो लोकों में कोई भी भक्त का महिमा नहीं जानता है।

याँ ’र नाम श्रवणे पातकि **-**सब तरे।
ताहार भकत **-**तत्त्व के जानिते पारे **?** २५३

श्रीकृष्ण के नाम का श्रवण करने मात्र से पातकी व्यक्ति भव सागर से तर जाता है। उन श्रीकृष्ण के भक्तों के तत्त्व को कौन जान सकता है।

अनुग्रह कैले **,** राजा **,** तुमि दयामय।
क्षेमिया सकल दोष खण्डाइले संशय॥ **”** २५४॥

हे राजा ! आप बहुत ही दयामय हो। मेरे उपर आप ने अनुग्रह कर के मेरे सभी दोषों को आपने क्षमा कर दी है और मेरे संशय को भी दूर कर दिया है।

तबे राजा दुर्वासार धरिया चरण।
प्रसन्न करिया ता 'रे कराय भोजन॥ २५५॥

तब राजा ने दुर्वासा मुनि के चरण पकड लिए। राजा ने उन्होंने प्रसन्न कराकर उन्हें भोजन कराय।

पारणा करिया विप्र शिरे दिया हात।
सन्तोषित हैया तबे कैला आशीर्वाद॥ २५६॥

पारण करने बाद ब्राह्मण ने (दुर्वासा मुनि ने) राजा के सर पर अपना हात रख दिया। अत्यंत संतोषित मन से उन्होंने राजा को आशीर्वाद दिया।

"तोमार प्रसादे कृष्ण देखिल साक्षाते
भकतजनेर तत्त्व जानिलुँ विदिते॥ २५७॥

"आपके प्रसाद (कृपा) आज मैने साक्षात् श्रीकृष्ण का दर्शन किया। आज मैंने भक्त=जनों का तत्त्व प्रत्यक्ष अनुभव किया।

तोमार आलाप-दरशन-परशने।
खण्डिल सकल दोष, मोर अभिमाने॥" २५८॥

आप के साथ संभाषण करने से, आप का दर्शन करने से एवं आप के गात्रों के स्पर्श से मेरे सब दोष एवं मेरा झुठा अभिमान भी नष्ट हो चुका है।

एतेक वचन बलि' दुर्वासा चलिल।
एइरूपे गेल काल, वत्सर पूरिल॥ २५९॥

इतना बोलकर दुर्वासा मुनि चले गए। इस प्रकार एक साल बित गया था।

[illegible]

वत्सरेक छिला राजा करि' जलपान।
पारणा करिते तबे करे अवधान॥ २६०॥

श्रीअम्बरीष महाराज ने एक साल तक केवल जल पान ही किया

[illegible]

दिव्य अन्न-पान दिया भुञ्जा'ल ब्राह्मणे।
द्विज-अवशेष दिया करये पारणे॥ २६१॥

उन्होंने दिव्य भोजन एवं पानीय प्रदान कर के ब्राह्मण दुर्वासा मुनि को संतुष्ट किया। उस के उपरांत उन्होंने ब्राह्मण के अवशेष से पारण संपन्न किया।

[illegible]

नाना गुण धरे मतिमान्।
अम्बरीष-राजा छिल भकतप्रधान॥ २६२॥

[illegible]

इस प्रकार अत्यन्त बुद्धिमान अंबरीष महाराज एक श्रेष्ठ भक्त थे। वे विविध प्रकार के सद्गुणों के आकर थे।

श्रवण, कीर्तन, सेवा, स्तवन, वन्दन।
दान, यज्ञ करिया भजिल नारायण॥ २६३॥

श्रवण, कीर्तन, सेवा, स्तव-स्तुति, वन्दन, दान एवं यज्ञ का अनुष्ठान करके भगवान् नारायण (कृष्ण) का भजन किया॥ २६३॥

पुत्र हैल ता'र महाबलवान्।
विभजिया दिल राज्य करिया समान॥ २६४॥

अंबरीष महाराज ने तीन अतिशय बलशाली पुत्रों को जन्म दिया। उन्होंने अपना राज्य इन तीन पुत्रों में समान रूप से बाँट दिया।

वने गेला अम्बरीष सकल तेजिया।
विष्णुपदे गेला राजा कृष्ण आराधिया॥ २६५॥

अंबरीष महाराज ने सब कुछ त्यागकर वन मे गमन किया। उस के उपरांत अंबरीष महाराज कृष्ण की आराधना कर के विष्णु पद (विष्णु के नित्य धाम वैकुंठ) में चले गए।

धन्य, पुण्य, पापहर अम्बरीष-कथा।
कृष्णगुण-संकीर्तन, भक्त-गुण-गाथा॥ २६६॥
अंबरीष महाराज की कथा धन्य, पुण्य प्रदायक, पाप हरण करने वाली है। इस कथा
में कृष्ण के गुणों का संकीर्तन एवं भक्त के अप्राकृत चरित्र का गुणगान है।
येबा कहे, येबा शुने, ए-पुण्य-चरित्र।
पुण्यकर, पापहर, परम-पवित्र॥ २६७॥
जो व्यक्ति इस पवित्र एवं परम पावन अंबरीष चरित्र को अन्यों के समक्ष वर्णन करता हैं अथवा योग्य वक्ता के मुख श्रवण करता है, उस के सभी पाप नष्ट हो जाएंगे और उसे भक्ति उन्मुख सुकृति की प्राप्ति होगी।
सर्व पाप हरे ता’र, विष्णुलोके गति।”
भागवत-आचार्येर मधुर-भारती॥ २६८॥
जो व्यक्ति इस उपाख्यान को ध्यानपूर्वक एवं श्रद्धापूर्वक सुनता है, उस
के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं, एवं उसे विष्णुलोक की प्राप्ति होती है। यह कृष्ण-प्रेम-तरंगिणी ग्रंथ श्रीभागवत आचार्य की मधुर पद्य रचना है।

एकादशी माहात्म्य (भद्रशील का चरित्र)
गालव नामक एक तपस्वी मुनि थे। उनके पुत्रका नाम भद्रशील था। ध्रुव, प्रह्लाद आदि जिस प्रकार बाल्यकालसे ही हरिभजन में रत थे, उसी प्रकार भद्रशील भी समस्त धर्मोंका परित्याग करके शिशु अवस्थासे ही भगवद् पादपद्मोंकी सेवामे लग चुके थे। वेदपाठ, तप-जप, शास्त्र अध्ययनके साथ दीनहीन भावसे भद्रशील हरिमन्दिरका मार्जन करते थे एवं शुद्ध चित्तसे प्रत्येक कृष्ण और शुक्ल दोनों पक्षके एकादशी-व्रतोंका पालन करते थे।
पुत्रकी इस प्रकारकी भक्ति देखकर उसके पिता गालवमुनिको आश्चर्य हुआ एवं
वे भद्रशीलसे पूछने लगे कि धर्म आचरणका फल क्या है? भद्रशीलने कहा,—“हे पिताजी! इस एकादशी-व्रतका फल भाषा द्वारा प्रकाशित नहीं किया जा सकता। आकाशके तारोंकी गणना करनेकी क्षमता किसीकी हो भी सकती है, समुद्रका जल भी कलशीसे भरा जा सकता है, पृथ्वीके धूलिकणोंकी गणना करना सम्भव हो सकता है; किन्तु इस एकादशी-व्रतके फलका वर्णन किसीके द्वारा भी सम्भव नहीं है। जब आप इतने ही अधीर हो रहे हैं तो कहता हूँ, आप श्रवण करें।”
पूर्व जन्ममें मैंने सोमवशंमें जन्मग्रहण किया था। मेरा नाम धर्मकीर्त्ति था। मैं जम्बुद्वीपका एकछत्र राजा था। मैं खूब दुष्ट प्रकृतिका था। सदैव अधर्ममें रत रहकर साधुओं एवं प्रजा आदिको कष्ट पहुँचाता था। इस प्रकार मैंने पाप कार्योंमें जीवन काटा था। दैवयोगसे एकदिन मैं सेना लेकर रथमें बैठकर शिकार करने गया। वनमार्गमें एक हरिणको देखकर मैंने उसको पकड़नेके लिए घेरा एवं कहा—“इस हिरणको तुम यदि नहीं मार सके, तो तुम्हारी खैर नहीं। जिसकी तरफसे हरिण भाग जाएगा, उसका वंश सहित वध कर दूँगा। इस बातसे सेना भयभीत हो गई एवं सावधानी पूर्वक हरिणको पकड़नेके लिए तैयार हो गई। हरिण भी शङ्काकुल होकर विचार करने लगा—“मैं जिस सैनिककी ओरसे भागूँगा, राजा वंशसहित उसे मृत्युदण्ड दे देगा। मेरे जैसे एक नगण्य प्राणीके लिए अनेक लोग मृत्युको प्राप्त होंगे। आज शुभ एकादशी तिथि है। यदि आज ही के दिन एकादशी तिथिमें मेरी मृत्यु हो जाती है तो खूब अच्छा होगा। एकादशी तिथिमें मृत्यु होने पर मैं पशुयोनिसे मुक्तिलाभ कर सकूँगा। जो होगा सो होगा, मैं राजाकी ओरसे भागूँगा। राजाके हाथसे निधन होने पर यह पापयोनि प्राप्त पशुत्व समाप्त होगा एवं मोक्ष प्राप्त होगा। और यदि किसी प्रकार भागकर मेरे प्राणोंकी रक्षा होती है, तो राजा लज्जित होगा एवं सैन्यदलकी भी रक्षा हो जाएगी।” ऐसा सोचकर हरिण मेरी तरफ होकर भाग गया। मैंने उसको निशाना बाँधकर बाण छोड़ दिया। किन्तु नियतिका ऐसा परिहास हुआ कि मेरा बाण चूककर व्यर्थ हो गया। मैं खूब लज्जित हुआ। क्रोधसे काँपने लगा तथा घोड़ेकी पीठ पर बैठकर घोर वनमें प्रवेश कर उस हरिणको खोजने लगा। किन्तु बहुत खोज करने पर भी हरिणको नहीं देख सका। अत्यन्त परिश्रम करने पर मेरे घोड़ेकी मृत्यु हो गई। मैं भी खूब थक गया था। अतः भूख, प्याससे दुःखित होकर वृक्षके नीचे सो गया। मेरी सेना द्वारा मेरी बहुत खोज करने पर भी मुझे न पाकर वापस लौट गए। इधर रात्रिके अन्तिम प्रहरमें उस वृक्षके नीचे मेरी मृत्यु हो गई। महा भयङ्कर दो यमदूत आकर बड़ी रस्सीसे बाँधकर मुझे यमराजके पास ले गए। महाजन यमराजने दूतोंका तिरस्कार करते हुए कहा—“अकारण इनको यहाँ क्यों लाये हो? यह राजा समस्त पापोंसे मुक्त हो चुका है। कारण एकादशी उपवासके दिन इसने देहत्याग किया है। मैं तुम सबको सावधान कर रहा हूँ कि जो एकादशी व्रत पालन करते हैं, हरि मन्दिर मार्जन करते हैं एवं गोविन्दके नामका कीर्तन करके हरि भजनमें रत रहते हैं, उनको कभी भी यहाँ लेकर मत आना। बल्कि उनका यथोचित सम्मान करना।” यमराजके इस प्रकारके वाक्योंको सुनकर दूतगण आर्श्चयमें पड़ गए और हाथ जोड़कर धर्मराजका स्तव करने लगे। महाजन यमराजके मुखसे यह कथा सुनकर मैं आश्चर्यमें पड़ गया! यमराजने मेरी विधिपूर्वक सेवा की। तब आकाशसे एक दिव्य रथ आया एवं मुझे दिव्य गति प्राप्त हुई। अनजानेमें एकादशी व्रत पालन करके मुझे

ब्रह्मलोकमें स्थान प्राप्त हुआ। मैंने ही वर्तमानमें आपके पुत्ररूपमें जन्मग्रहण किया है। मेरे दिव्य ज्ञानका अपहरण नहीं हुआ है। इसलिए मैंने समझा है कि हरिभजन ही सार वस्तु है एवं एकादशी व्रत पालनके समान मैं अन्य कोई साधन न जानकर एकादशी व्रतका पालन करता हूँ।
पुत्रकी बातसे गालव मुनि अत्यन्त आनन्दित हुए एवं इस प्रकारके भक्त-पुत्रको प्राप्त कर स्वयंको गौरवान्वित और भाग्यवान समझकर बार-बार उसका चुम्बन करने लगे। एकादशी व्रतपरायण हरिभक्त पुत्रका संग पाकर गालवमुनि हरिपरायण होकर एकादशी व्रतका पालन करने लग गए।
माधव तिथि, भक्ति जननी, यतने पालन करि।
कृष्ण वसति, वसति बलि, परम आदरे वरि॥

अपरा एकादशी
(रुक्मांगद राजा को एकादशी के माहात्म्य की उपलब्धि होना)
इस ज्येष्ठ कृष्ण-पक्षीय ‘अपरा’ नामक एकादशी के व्रत की कथा ब्रह्माण्ड पुराण के युधिष्ठिर-श्रीकृष्ण संवाद में वर्णित है।
इस ग्रन्थ में इस प्रकार का वर्णन आता है कि एक बार महाराज युधिष्ठिर जी ने श्रीकृष्ण जी से पूछा—हे जनार्दन! ज्येष्ठ कृष्ण-पक्षीय एकादशी का क्या नाम है व इस व्रत की क्या महिमा है—आप कृपा करके मुझे बतायें।
युधिष्ठिर जी के प्रश्न के उत्तर में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं— महाराज युधिष्ठिर! लोगों के कल्याण के लिये आपने बड़ा अच्छा प्रश्न पूछा है। सचमुच ये एकादशी बहुत ही पुण्यदायक और बड़े-बड़े पापों के ढेरों को खत्म करने वाली है। ये एकादशी असीम फलों को प्रदान करने वाली है। इसीलिए इस एकादशी का नाम ‘अपरा’ है।
देवपुराधिपति महाभागवत् महाराज रुक्मांगद ने अपने राज्य में एक सुन्दर पुष्पोद्यान लगाया। यह उद्यान इतना मनोरम था कि लोगों के लिये वह एक दर्शनीय-स्थल बन गया। उस उद्यान में आने वाले लोग वहाँ आकर खिले हुए फूल तोड़-तोड़ करके ले जाते थे। परिणामस्वरूप राजा को एक भी फूल मिलना मुश्किल हो गया। फूलों के अभाव में वह उद्यान उजाड़-वीरान हो जाता। उद्यान की ऐसी दुर्दशा देखकर राजा बहुत उदास हो गया। राजा ने चौकीदारों की संख्या बढ़ा दी। लोगों ने फूल तोड़ने बन्द कर दिये किन्तु फूलों की चोरी होती ही रही, कोई ठोस परिणाम नहीं निकला। इसके अतिरिक्त अन्य बहुत सारे उपाय किये परन्तु कोई प्रभाव नहीं पड़ा, क्योंकि अब फूलों की चोरी करने वाले मनुष्य तो थे नहीं कि पकड में आ सकें। वे तो थे—स्वर्ग के देवी-देवता और अप्सरायें, इसलिए वे पकड़ में नहीं आ सके।
अन्त में राजा ने अपने कुल-पुरोहित से इस समस्या के समाधान के लिये कुछ करने की प्रार्थना की। कुल-पुरोहित ने इसका समाधान बताते हुए कहा कि यदि सायंकाल में उद्यान के सभी पौधों के आसपास, का चरणामृत या भगवान् के विग्रह के से उतारी हुई प्रसादी माला के फूल या भगवान् के चरणों में चढ़े पुष्पों को बिखेर दिया जाये तो सम्भव है कि चोरों को पकड़ा जा सकेगा। राजा ने वैसा ही किया। रात्रि होने पर स्वर्ग के देवी-देवता एवं अप्सरायें रोज़ की तरह उस उद्यान
में उतर आयीं। उनमें से एक अप्सरा का पाँव पौधों के आस- बिखरे भगवान् के चरणों में चढ़े पुष्पों के ऊपर जैसे ही पड़ा उसके सारे पुण्य उसी समय समाप्त हो गये। उसकी वापस स्वर्ग जाने की सारी शक्ति भी खत्म हो गई। अन्य देवता व देवियाँ पहले तो उसे देखते रहे परन्तु उसे साथ ले जाने का कोई उपाय न देख हताश होकर, उसे उसी असहाय अवस्था में छोड़ कर वापस स्वर्ग में चले गये, वह बेचारी अकेली रह गई क्योंकि पुण्यों के समाप्त हो जाने से वह उडान नहीं भर सकी तथा वापस स्वर्ग नहीं जा सकी। अपने साथियों से बिछुड़ जाने पर तथा इस मृत्युलोक में व्याप्त जरा, व्याधि आदि दुखों के बारे में सोच-सोच कर कि हाय, मुझे अब इस मृत्युलोक में रहना पड़ेगा, दुखी होकर रोने लगी।
प्रातः होते ही उद्यान के चौकीदारों व मालियों ने उसे देखा तो वे उसके दिव्य तेज व अद्वितीय रूप को देखकर आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने राजमहल में जाकर राजा को खबर दी। राजा वहाँ आया व उसने भी उस अप्सरा को देखा। उसके अलौकिक रूप को देखते ही वह उसके प्रति दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती आदि देवियों की कल्पना कर बैठा तथा इसी भावना से राजा ने उसे नमस्कार किया।
अप्सरा को रोते हुए देखकर राजा को बड़ी दया आई। राजा ने पूछा—देवी! आप क्यों रो रही हैं? आपको क्या कष्ट है?
उस अप्सरा ने सारा वृतान्त कह सुनाया और कहा कि मैं स्वर्ग वापस जाना चाहती हूँ क्योंकि मनुष्य-लोक में बुढ़ापा बहुत जल्दी आ जाता है। शरीर रोगग्रस्त हो जाता है। विषय भोग भी इच्छानुसार भोगे नहीं जा सकते। महाराज! यदि

आपकी प्रजा का कोई भी स्त्री अथवा पुरुष मुझे अपनी एक एकादशी का फल दान दे देगा तो मैं वापस जा सकती हूँ। एक एकादशी के फल से मैं एक कल्प काल तक स्वर्ग का दिव्य सुख भोग सकती हूँ।
राजा रुक्मांगद को एकादशी के बारे में कुछ भी पता नहीं था। उसने अपने राजगुरु से पूछा तो उन्होंने भी अनभिज्ञता प्रकट की और कहा इस एकादशी व्रत के बारे में मैं आज ही सुन रहा हूँ। जब कुलगुरु को ही पता नहीं तो भला प्रजा को कैसे पता होता। राजा ने अपने नगर में ढिंढोरा पिटवां दिया कि जो नागरिक एक एकादशी व्रत का फल देगा उसको ईनाम दिया जायेगा। जब तीन-चार दिन तक कोई भी नागरिक आगे नहीं आया तो ईनाम की राशि बढ़ाते-बढ़ाते आधे राज्य तक कर दी किन्तु अनुकूल परिणाम नहीं आया तो अप्सरा ने मन ही मन यमराज के गणक चित्रगुप्त को स्मरण किया। चित्रगुप्त जी की प्रेरणा से अप्सरा को मालूम पड़ा कि राजा के राज्य में एक सेठ है जिसकी स्त्री ने एक बार मजबूरी से एकादशी व्रत किया था। सेठ का पता व परिचय बताते हुए अप्सरा ने राजा को उस सेठ के बारे में कहा कि
एक दिन यूँ ही उस सेठ की स्त्री वैसे ही घूमते-घूमते अपने घर के पास ही एकांत में बने गोदाम में वहाँ रखे सामान को देखने चली गयी, सेठ के नौकरों को मालूम न था की सेठानी अन्दर गोदाम में है। वे तो सेठ के बुलाने पर गोदाम के दरवाज़े का ताला लगा कर चले गये।
नौकर तो चले गये परन्तु सेठानी वहीं बन्द रह गयी उसने काफ़ी दरवाज़ा पीटा
पर उस एकान्त में किसी ने वह आवाज़ न सुनी। परेशान सेठानी क्या करती; रात में वहीं सो गयी, यह सोचकर कि सुबह कोई तो गोदाम खोलेगा, परन्तु सेठानी का भाग्य ऐसा कि अगले दिन दुकान की छुट्टी थी। सो गोदाम की तरफ कोई आया ही नहीं। भूख प्यास से सेठानी व्याकुल हो गयी। इधर सेठ और उसके घरवाले सभी परेशान, उन्होंने बहुत ढूँढा पर मिलती कैसे, वह वहाँ थी ही नहीं। गोदाम की तरफ़ किसी का ध्यान नहीं गया क्योंकि सेठानी वहाँ जाती ही नहीं थी। उस दिन तो वह यूं ही कौतूहल-वश चली गयी थी।
छुट्टी से अगले दिन जब सेठ के नौकरों ने किसी सामान के लिये दरवाज़ा खोला
तो अन्दर बेहोशी की हालत में सेठानी को गिरा पाया। ये खबर तुरन्त सेठ को दी गयी। सेठ पडोस के वैद्य को साथ ले आया। पानी का छींटा मारकर व उसके हाथ-पैरों की मालिश करके उसे होश में लाया गया तथा उसके लिये भोजन की व्यवस्था की गयी। धीरे- धीरे सेठानी अपने को स्वस्थ अनुभव करने लगी। संयोग से जिस दिन सेठानी गोदाम देखने गयी, वह दशमी तिथि थी व उसके अगले दिन एकादशी। इस तरह उस सेठानी के द्वारा अनजान में परम पवित्र एकादशी का व्रत हो गया।
अप्सरा से पूरी बात सुनकर राजा ने अपने मन्त्री व सैनिकों को उस सेठ को व
उसी स्त्री को ससम्मान लाने को कहा। सेठ-सेठानी के आने पर उन्होंने राजा को व उस अप्सरा को प्रणाम किया और कहा कि आपके मन्त्रियों ने हमें सारी बात बता दी है, अब आप आज्ञा करें कि हमें क्या करना होगा।
अप्सरा ने सेठानी से कहा कि यदि आप कृपा करके अपने इस व्रत का फल मुझे संकल्प पढ़कर दान दे दोगी तो मैं इस व्रत के पुण्य के प्रताप से स्वर्ग वापस जा सकती हूँ। तब राजा ने अपने राजगुरु के द्वारा सेठानी से संकल्प करा कर स्वर्ग की देवी को दिला दिया तो वह देवी राजा व सेठ-सेठानी को धन्यवाद व सभी का आभार प्रकट करती हुई स्वर्ग को चली गई। राजा ने अपनी घोषणा के अनुसार सेठानी को अपना आधा राज्य दे दिया। महाराज रुक्मांगद को इस घटना को प्रत्यक्ष देखने से पूर्ण विश्वास हो गया कि एकादशी का बहुत महात्म्य है, इसकी बहुत महिमा है। एक दिन राजा ने यह विचार किया कि इतनी पुण्यदायिनी और कल्याणकारी एकादशी का व्रत मेरे राज्य के प्रत्येक नागरिक को अवश्य ही करना चाहिए। अतः उसने इसे नियमित रूप से लागू कर दिया।
राजा ने कहा—
अष्टवर्षाधिको मर्त्यो ह्यशीतिर् नैव पूर्यते।

यो भुङ्क्ते मामके राष्ट्रे विष्णोरहनि पापकृत्॥
स मे वध्यश्च निर्वास्यो देशतः कालतश्च मे।
एतस्मात् कारणाद् विप्र एकादश्यामुपोषणम्।
कुर्यान्नरो वा नारी वा पक्षयोरुभयोरपि॥
(नारदीय पुराण)
जिनकी उम्र आठ वर्ष से अधिक अथवा अस्सी साल से कम है, ऐसा कोई व्यक्ति यदि मेरे राज्य में एकादशी के दिन अन्न-भोजन करेगा तो मैं उसको मृत्यु दण्ड दूँगा या फिर मैं उसे अपने राज्य से निकाल दूँगा। इसलिए स्त्री हो या पुरुष, सभी को शुक्ल एवं कृष्ण पक्ष की दोनों एकादशी तिथियों में उपवास जरूर करना होगा। यह नियम मेरे पुत्र, पिता-माता, पत्नी, मित्र, रिश्तेदार कोई भी हों, सभी के लिये लागू होगा। न करने पर सभी को दण्ड दूँगा। इस प्रकार की घोषणा, राजा ने अपने पूरे राज्य में ढिंढोरा पिटवां कर करा दी। राजा के इस आदेश को मानते हुए उस राज्य के सभी लोग एकादशी व्रत पालन करते हुए वैकुंठ को जाने लगे।
ब्रह्मपुराण में लिखा है कि यह एकादशी बहुत पुण्य देने वाली है। महापाप
नाश करने वाली है। अनन्त फल देने वाली है। ब्रह्म-हत्या, गोहत्या, भ्रूणहत्या, पर-स्त्री-गमन, झूठ बोलना, झूठी गवाही देना, किसी की झूठी प्रशंसा करना, कम तोलना, वेद पढ़ने व पढ़ाने के नाम पर दूसरों को ठगना व काल्पनिक ग्रन्थ लिखना आदि बहुत से बड़े-बड़े पाप इस व्रत से समाप्त हो जाते हैं।
ठग, झूठे-ज्योतिषी व झूठे डाक्टर भी झूठी गवाही देने के समान पापी हैं परन्तु ये व्रत इन सब दोषों को समाप्त कर देता है। यदि क्षत्रिय अपने क्षत्रिय धर्म को त्यागकर युद्ध से भाग खड़ा होता है अथवा कोई शिष्य अपने गुरु से दीक्षा लेकर भ्रमवश फिर उसी गुरु की निन्दा करने लग जाता है तो उसे जो पाप लगते हैं, वे सभी इस एकादशी के व्रत को पालन करने से नष्ट हो जाते हैं।
हे राजन्! इस एकादशी की महिमा इतनी है कि पवित्र कार्तिक मास में तीन दिन प्रयागराज में स्नान करने का, मकरराशि में जब सूर्यदेव अवस्थान कर रहे हों, ऐसे माघ मास में गंगा, यमुना व सरस्वती के संगमस्थली पर स्नान करने से, काशी में शिवरात्रि का व्रत करने से व गया में विष्णु पादपद्मों में पिण्ड दान करने से जो फल मिलता है, वही फल इस एकादशी के व्रत से अनायास ही मिल जाता है। हे राजन्! यह व्रत पाप रूपी वृक्षों को काटने को तीखी कुल्हाड़ी की तरह, पापों को भस्म करने के लिए दावानल की तरह, पाप रूपी अन्धकार को मिटाने के लिए तेजोमय सूर्य की तरह तथा पाप रूपी मृग के लिए सिंह स्वरूप है। हे राजन्! अपरा एकादशी के दिन श्रद्धापूर्वक यह व्रत करने के साथ- जो त्रिविक्रम भगवान् विष्णु जी का अर्चन करता है, उसका परम मंगल होता है व मृत्यु के पश्चात विष्णुलोक को प्राप्त करता है। सिंह राशि में बृहस्पति की स्थिति में गौतमी नदी में स्नान, कुंभपर्व में केदारनाथ जी के दर्शन, बद्रीनाथधाम की यात्रा, दर्शन और सेवा, सूर्यग्रहण में कुरुक्षेत्र स्नान तथा स्नान के समय हाथी, गाय, घोड़े व सोने तथा भूमि के दान का जो फल है वह सब ‘अपरा’ एकादशी के पालन से स्वतः ही मिल जाता है, यहाँ तक कि इसका महात्म्य सुनने से भी बहुत पुण्य मिलता है।
इति ज्येष्ठ कृष्ण-पक्षीय ‘अपरा एकादशी’ महात्म्य समाप्त।

राजा रुक्मांगद की कथा
पुराणों में राजा रुक्मांगद का वर्णन मिलता है—राजा रुक्मांगद सार्वभौम राजा थे। वे भगवद् भक्ति परायण तथा एकादशी व्रत पालन के विशेष मनोयोगी थे। वे स्वयं तो व्रत करते ही थे समस्त प्रजा को भी राज-आज्ञा के द्वारा एकादशी व्रत कराते थे। राजा के इस आदेश से सभी राज्यवासी एकादशी व्रत पालनकर वैकुण्ठ जाने लगे और यम लोक खाली हो गया। यमराज और पाप-पुण्य का लेखा रखने वाले उनके सहायक चित्रगुप्त ने देवर्षि नारद के साथ सत्यलोक में ब्रह्मा के निकट सब वृत्तांत कह सुनाया। ब्रह्मा ने यमराज की परेशानी सुनकर कुछ देर चिन्ता की और एक परम सुंदरी नारी की सृष्टि की। उसको मोहिनी नाम प्रदान करते हुए राजा रुक्मांगद को अपने रूप सौंदर्य से मोहित करने का आदेश दिया।
मोहिनी ने राजा के राज्य के निकट गमन किया और अपूर्व रूप सौंदर्य बिखेरती
हुई अत्यन्त मधुर स्वर में गान करने लगी। राजा उस समय प्रजा की रक्षा के उद्देश्य से घोड़े पर चढ़कर भ्रमण कर रहे थे। वहाँ उन्होंने अद्भुत संगीत ध्वनि सुनी। उस ध्वनि से आकृष्ट होकर पशु-पक्षी भी उसी दिशा की ओर दौड रहे थे। राजा भी कौतूहलवश वहाँ पहुँचे। उन्होंने गौर वर्णा परमसुन्दरी नारी मोहिनी को देखा। उसके रूप और संगीत से मुग्ध होकर उन्होंने मोहिनी से विवाह का प्रस्ताव रखा। मोहिनी ने कहा—मैं ब्रह्मा की कन्या हूँ, आपकी यश कीर्ति श्रवण करके आपको पति रूप में पाने के लिए संगीत द्वारा शंकरजी की उपासना कर रही थी। आप से विवाह करने के लिये मेरी शर्त है कि आप मेरी कही हर बात मानेंगे। राजा ने मोहिनी के हाथ पर हाथ रख कर शपथ ली, “मोहिनी, तुम जो अभिलाषा करोगी, मैं उसे पूर्ण करूँगा।” मोहिनी के साथ राजा अपनी राजधानी में लौट आए।

अपने पुत्र धर्मांगद को राज्य देकर वह मोहिनी के साथ रहने लगे। कई वर्ष
बीत गए सुख विलास में मग्न रहने पर भी उन्होंने एकादशी व्रत पालन की अवहेलना नहीं की। अब उनके हृदय में कार्तिक व्रत पालन की इच्छा हुई और उन्होंने मोहिनी से इसकी आज्ञा मांगी। उसी समय राजा को अपने पुत्र धर्मांगद के द्वारा कराई घोषणा जो सुनाई दी—कि आगामी कल एकादशी तिथि है सभी प्रजाजन इसका पालन करें। यह श्रवण कर राजा ने मोहिनी से कहा, “मोहिनी तुम्हारी इच्छानुसार मैंने ज्येष्ठा रानी संध्यावली को कार्तिक व्रत पालन के लिये नियुक्त किया है, किन्तु एकादशी व्रत मैं स्वयं करूँगा। तुम भी संयमपूर्वक मेरे साथ यह व्रत पालन करो।” मोहिनी ने उन्हें स्मरण कराया कि आपने मेरी सभी इच्छा पूर्ण करने की शपथ
ली थी। राजा ने कहा, “अवश्य ही पूर्ण करूँगा, तुम कहो।” उत्तर में मोहिनी ने कहा, “मेरी इच्छा है आप एकादशी व्रत न करें और मेरे साथ भोजन करे।” राजा ने कहा, “मोहिनी! मेरा व्रत भंग मत करो, मैं तुम्हारी अन्य कोई भी इच्छा पूर्ण करूँगा। एकादशी व्रत पालन करने का प्रचार मैंने स्वयं किया है, मैं स्वयं ही उसे भंग कर दूँ। यह संभव नहीं है।”
राजा का उत्तर सुनकर मोहिनी अत्यन्त क्रोधित हो उठी और व्यंग्यपूर्वक बोली, “यदि व्रत भंग नहीं करोगे तो प्रतिज्ञा भंग होगी और नरकवास मिलेगा और मैं भी आपको छोड़कर चली जाऊँगी।” उसी समय धर्मांगद वहाँ आए और समस्त वृत्तांत को मोहिनी से श्रवण किया। उसने पिता से विमाता मोहिनी की इच्छा पूर्ण करने का अनुरोध किया। राजा रुक्मांगद ने उत्तेजित होकर कहा—“मोहिनी रहे या जाये, जिये या मरे मैं एकादशी व्रत से विरत नहीं होऊँगा।”
धर्मांगद अपनी माता संध्यावली को लेकर आए और मोहिनी को समझाने के लिये कहा। बहुत अनुनय-विनय करने पर भी मोहिनी अपनी बात पर अड़ी रही। उसने कहा—“राजा यदि एकादशी को भोजन नहीं करेंगे तो उसके बदले में अपने प्रिय पुत्र का मस्तक छेदन कर मुझे प्रदान करें।” यह सुनते ही संध्यावली काँपने लगी कुछ संभलने के बाद मोहिनी तुम्हारी इच्छानुसारउसने राजा से कहा—“हे महाराज! धर्म हानि की अपेक्षा पुत्र का प्राण नाश करना ही कल्याणप्रद है। पुत्र पर माता का अत्यधिक स्नेह होता है किन्तु आपकी प्रतिज्ञा भंग होने पर धर्म हानि की आशंका से मैं पुत्र ममता की तिलांजलि दे रही हूँ, आप स्नेह-ममता का परित्याग कर पुत्र का बलिदान दें।” उसी समय राजपुत्र धर्मांगद ने एक पैनी तलवार राजा के हाथ में दी और कहा, “पिताजी! आप विलम्ब न करें और अपनी प्रतिज्ञा की रक्षा हेतु मेरा वध करें।” मोहिनी ने पुनः कहा—“या तो एकादशी को भोजन करो, अन्यथा पुत्र का वध करो।”
राजा ने हाथ में तलवार ग्रहण की, धर्मांगद भी बलि देने को प्रस्तुत हो गये। पृथ्वी कम्पित होने लगी, में ज्वार आ गया। उसी समय भगवान् श्रीहरि वहाँ प्रकट हो गये उन्होंने राजा के हाथ से तलवार ले ली और कहा—राजन! मैं तुम्हारे व्रत पालन की दृढता से अति प्रसन्न हुआ हूँ। तुम स्त्री पुत्र सहित मेरे साथ वैकुंठ धाम गमन करो। श्रीहरि ने राजा को स्पर्श किया और अदृश्य हो गये।

एकादशी के प्रभाव से पापियों का नरक से उद्धार
पद्मपुराण में श्री व्यासदेव-जैमिनी ऋषि संवाद में कथा आती है—एक समय पुरुषोत्तम श्रीभगवान् गरुड पर आरोहण कर यमपुरी को गए। यमराज के साथ वार्तालाप करते समय उन्होंने क्रन्दन ध्वनि सुनी और उसका कारण पूछा। यमराज ने उत्तर दिया—हे देव! पातकी मर्त्य जीव अपने पापकर्मों के दोष से अत्यन्त दुखजनक नरक-यंत्रणा झेल रहे हैं। ये क्रन्दन ध्वनि उन्हीं की हैं।
यह सुनकर श्रीकृष्ण उन जीवों को देखने पहुँचे। उन पापियों को असह्य यंत्रणा से पीड़ित देखकर, उनका हृदय करुणा से विगलित हो गया। वे चिन्ता करने

लगे, यह मेरी सृष्ट प्रजा है। इनके पापों के निवारण के लिये मुझे कुछ उपाय करना होगा। यह सोचकर उन्होंने स्वयं ही एकादशी तिथि का रूप धारण कर लिया। उन समस्त पापियों को एकादशी व्रत का आचरण कराया। उसके प्रभाव से वह सभी पापी पापमुक्त हो गये और परमधाम वैकुण्ठ को गमन किया। इसलिये हे वत्स जैमिनी! तुम एकादशी तिथि को श्रीविष्णु की मूर्ति कहकर ही जानना। एकादशी समस्त सुकर्मों में श्रेष्ठ और समस्त व्रतों में उत्तम है।
करुणामय भगवान् श्रीकृष्ण ने एक समय विचार किया कि मुझे भूल जाने के कारण प्राणी दुख-कष्ट भोग रहे हैं। वे पतित और असहाय हैं। उन्हें मैं अपने धाम में किस प्रकार ला सकता हूँ? यह सोचकर उन्होंने स्वयं ही एकादशी तिथि का रूप धारण कर लिया। सभी चिन्मय समय श्रीकृष्ण के ही अन्तर्गत है। जैसे श्रीमती राधिका श्रीकृष्ण का प्रकाश हैं और उनके वामांग से प्रकट हुई हैं। श्रीकृष्ण के स्वयं एकादशी रूप धारण करने के कारण यह ‘माधव तिथि’ कहलाई और भक्ति को जन्म देने वाली बनी। एकादशी के दिन श्रीकृष्ण इस धराधाम पर आते हैं और इस व्रत का पालन करने वालों को विशेष कृपा दान करते हैं।
कुछ समय व्यतीत होने पर पाप-पुरुष ने श्रीकृष्ण के समीप जाकर हाथ जोड़कर दीनतापूर्वक प्रार्थना की। आपके द्वारा पाप विनाशक एकादशी सृष्टि करने से मैं क्षीण होता जा रहा हूँ, क्योंकि इस व्रत के पालन करने वालों पर मेरा प्रभाव नहीं पड़ता। अब मैं इस जगत में किसका आश्रय करके वर्तमान रहूँ। हे केशव! एकादशी तिथि के भय से मेरी रक्षा कीजिए।
श्रीभगवान् ने हँसते हुए उस पापपुरुष से कहा, “अहो! तुम दुखी मत होओ। त्रिभुवन पवित्रकारिणी एकादशी के दिन तुम पंचशस्य (गेहूँ, जौ, धान, उड़द-दालें, राई, तिल आदि) में निवास करो मैं तुम्हें यह स्थान देता हूँ। जो लोग एकादशी के दिन अन्न का भोजन करते हैं, वह ब्रह्म हत्या आदि के समान भयंकर पापों का भोजन करते हैं तथा पितरों सहित नरकवास भोगते हैं।”
एकादशी के दिन न तो अन्न का दान करे और न ही किसी को अन्न खाने की प्रेरणा
दे। ऐसा व्यक्ति भी उक्त पापों का भागी बनता है। एकादशी व्रत नित्य और सर्वदा पालनीय है। यह नहीं कि कभी एकादशी व्रत कर लिया और कभी छोड़ दिया। इसकी नित्यता का मुख्य कारण है कि इसमें श्रीकृष्ण का संतोष विधान होता है। श्रीरूप गोस्वामी पाद ने भक्ति के चौसठ अंगों में एकादशी व्रत का पालन भी आवश्यक बताया है। प्रत्येक मास में कृष्ण तथा शुक्ल पक्ष में एकादश दिवस को एकादशी तिथि आती है। इसके अतिरिक्त लगभग ढाई वर्ष में अधिक मास या पुरुषोत्तम मास के समय भी दो एकादशियाँ आती है।
कभी विशेष योग के कारण महाद्वादशी भी उपस्थित होती है। उस अवसर पर एकादशी
के स्थान पर महाद्वादशी का व्रत करना चाहिए।

के प्रति सम्पूर्ण आत्मनिर्भरता
श्रीविनोदविहारी ब्रह्मचारी सम्पूर्ण रिक्तहस्त होकर मायापुरसे निकले
थे। वे पूर्णतः अकिञ्चन और निष्किञ्चन वैष्णव थे। बोसपाड़ा लेनमें रहते समय इनके साथ बहुत-से मठवासी वैष्णव थे। किन्तु शामके महाप्रसादके लिए भी हाथमें कुछ नहीं था। ऐसी अवस्थामें एक समय एकादशीका दिन था, मठमें पन्द्रह-बीस मठवासी थे। निर्जला एकादशीका संकल्प ग्रहण किया गया। उसी दिन पूर्वाह्नके समय श्रील गुरुपादपद्मके गुरुभ्राता श्रीपाद नारायण मुखर्जी उनसे मिलने आए। अतिथि- अभ्यागतों एवं सतीर्थोंका बड़े आदरसे सत्कार करना श्रील गुरुदेवका एक बड़ा ही उदार स्वभाव था। किन्तु आज एक भी पैसा उनके हाथमें नहीं था। वे बड़े चिन्तित हो गए। इतनेमें एक गौरैया पक्षीने उनके सामने मेजपर एक कपड़ेकी पोटली गिरा दी। श्रीगुरुमहाराजने आश्चर्यचकित होकर सामने पड़ी पोटलीको उठाकर देखा। उसमें साढ़े छः आने खुले पैसे थे। प्रसन्नतासे उनका मुख खिल उठा। तत्क्षण एक

ब्रह्मचारीको भेजकर बाजारसे कुछ मिठाइयाँ और एकादशीके अनुकल्पका सामान मँगाकर अतिथिका प्रीतिपूर्वक सम्मान किया। थोड़ी देर बाद ही रंगूनसे उनके गुरुभ्राता पूज्यपाद भक्तिसर्वस्व गिरि महाराजका भेजा हुआ सौ रुपयेका मनीआर्डर प्राप्त हुआ। श्रीगौरसुन्दरकी ऐसी अहैतुकी करुणा देखकर उनकी आँखें छलछला आईं। इस घटनासे उनको जीवनभर शुद्ध भक्तिके प्रचार कार्यमें प्रेरणा मिलती रही। यदि कोई भगवत्-आश्रित भक्त अपना देह-गेह सब कुछ छोड़कर भगवत्-भजनके लिए निष्कपट रूपसे प्रस्तुत हो जाता है, भगवान् उसे कभी भी त्याग नहीं करते। अपने ऐसे अनन्य आश्रित भक्तोंका योग और क्षेम वे स्वयं वहन करते है।

परमपूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान

केशव गोस्वामी महाराजजीकी अप्रकटलीलाका स्मरण —श्रीश्रीमद्भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराज
किसी एक समय (सम्भवतः १९४१-४२ ई. को) स्वामीजी ३३/२ बोसपाड़ा लेनस्थ श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिमें बैठे हुए थे। उसी समय महाराजजीके सतीर्थ श्रीपाद नारायणदास मुखोपाध्याय ‘सेवासुहृद्’ प्रभु उनसे मिलनेको आए। एकादशीका दिन था। बातों बातोंमें समय अधिक हो गया था, वे भी लौटना चाह रहे थे। परन्तु महाराजजीके पास एक पैसा भी नहीं था कि गुरुभाईके लिए अत्यन्त साधारण रूपमें भी कुछ प्रसादकी व्यवस्था कर सकें। उच्च वंशमें जन्म हुआ था। अतः मनमें दुःख हुआ उसी समय भगवानके द्वारा भेजे हुए एक गौरैया पक्षीने ऊपरसे एक छोटी-सी पोटली गिरा दी। उठाकर देखा तो उसमें तत्कालीन साढ़े छह आना पैसे थे। दैवप्रेरित जानकर एक ब्रह्मचारी द्वारा उन्होंने कुछ सन्देश मिठाई मंगवाई और भोग लगवाकर उस प्रसादसे अत्यन्त प्रीतिके साथ उनको जलपान करवा दिया। परन्तु वैष्णवोंके अनुकल्पके लिए कुछ नहीं था। तभी डाकियेने आकर दरवाजा खटखटाया। डाकियेने बताया त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिसर्वस्व गिरि महाराजजीने स्वामीजीके नामसे एक सौ रूपये भेजे हैं। धन्य है! धन्य है! भगवान्‌ श्रीगौरसुन्दर, धन्य है गुरुपादपद्मकी अहैतुकी कृपा है। ऐसी अप्रत्याशित घटनाको देखकर सभी लोग स्तम्भित हो गए तथा रोते-रोते बारंबार उपस्थित सभी वैष्णव गुरु-गौरांगका जयगान करने लगे। पूज्यपाद महाराज अयाचित करुणाका इंगित पाकर अत्यधिक आनन्दित चित्तसे श्रीहरि-गुरु-वैष्णवोंकी महिमाका वर्णन करने लगे।

श्रीनन्द महाराज द्वारा एकादशी का पालन
श्रीमद् भागवत में वर्णन है कि श्रीकृष्ण के पिता श्री नन्द महाराज एकादशी के दिन निराहार रह कर व्रत पालन करते थे। श्रीमद्भागवत १०/२८/१-३, १० और १३-१४ में वरुणलोकसे श्रीनन्द महाराजके उद्धारका वर्णन इस प्रकार किया गया है
—

एकादश्यां निराहारः समभ्यर्च्य जनार्द्दनम्।
स्नातुं नन्दस्तु कालिन्द्यां द्वादश्यां जलमाविशत्॥
तं गृहीत्वानयद् भृत्यो वरुणस्यासुरोऽन्तिकम्।
अवज्ञायासुरीं वेलां प्रविष्टमुदकं निशि॥
भगवांस्तदुपश्रुत्य पितरं वरुणाहृतम्।
तदन्तिकं गतो राजन् स्वानामभयदो विभुः॥
श्रीशुकदेवजी ने राजा परिक्षित से कहा—एक समय नन्द बाबाने एकादशीके दिन निराहार रहकर जनार्दनका अर्चन किया तथा द्वादशी तिथिमें कालिन्दीके जलमें स्नानके लिए प्रवेश किया। श्रीनन्दने रात रहते ही जलमें प्रवेश किया है, इसलिए (वरुणके सेवकों द्वारा कल्पित) आसुरी बेलाकी अवज्ञाके दोषके कारण वरुणके सेवक उन्हें पकड़कर वरुणलोकमें ले गये। स्वजनोंके अभय प्रदाता श्रीकृष्णने (श्रीनन्द महाराजके अनुचरोंसे ऐसा) सुनकर पिताके उद्धारके लिए वरुणलोकमें प्रस्थान किया।

श्रीकृष्ण के पिता श्रीनन्द महाराज की एकादशी व्रत निष्ठा

(श्रीमद्भागवत १० .२८)

श्रीबादरायणि उवाच —

एकादश्यां निराहारः समभ्यर्च्य जनार्दनम्।
स्नातुं नन्दस्तु कालिन्द्या द्वादश्यां जलमाविशत्॥१॥

अन्वयः —श्रीबादरायणिः उवाच (श्रीशुकदेवजी बोले) नन्दः तु एकादश्यां निराहारः (नन्द महाराजने एकादशीका उपवासकर) जनार्दनं समभ्यर्च्य (जनार्दनकी पूजाकर) द्वादश्यां स्नातुं (द्वादशी तिथिमें स्नान करनेके लिए) कालिन्द्यां जलम् आविशत् (यमुना जलमें प्रवेश किया)॥१॥

अनुवाद —श्रीशुकदेवजीने कहा —परीक्षित्! नन्द महाराजने कार्त्तिक शुक्लपक्षकी एकादशीका उपवास करके भगवान् जनार्दनकी पूजा की तथा द्वादशी तिथिमें स्नान करनेके लिए यमुनाके जलमें प्रवेश किया॥१॥

सारार्थदर्शिनी टीका

अष्टाविंशेऽभवन्नन्दाहरणं वरुणस्तुतिः।
विस्मयौत्सुक्याद्ब्रह्मवैकुण्ठदर्शनम्॥
इन्द्रस्यागश्च तत्क्षतिमुक्त्वा स्वस्मृतिमागते।
वरुणस्यापि ते वक्तुमाह लीलान्तरं मुनिः॥

'जलमाविशत्' इत्यरुणोदयादपि पूर्व कलामात्रावशिष्टायां द्वादश्यां पारणाप्राप्त्यर्थं शास्त्राज्ञा-बलेनैवेति ज्ञेयम्। तथा च शास्त्रम् —'कलार्द्धां द् निशीथादूर्ध्वमेव हि। आमध्याह्नाः क्रियाः सर्वाः कर्त्तव्याः शम्भुशासनात्॥' इति॥१॥

भावानुवाद —इस अट्ठाइसवें अध्यायमें श्रीकृष्णके द्वारा वरुणालयसे श्रीनन्द महाराजको लौटा लाना, वरुणदेव-द्वारा श्रीकृष्णकी स्तुति एवं गोपोंका विस्मय और उत्सुकतावश ब्रह्मलोक एवं वैकुण्ठका दर्शन करना आदि लीलाओंका वर्णन हुआ है।

इन्द्रका अपराध और श्रीकृष्णके द्वारा उनका मान-मर्दन आदि लीलाओंका वर्णन करनेके बाद श्रीशुकदेवजीके स्मृतिपटपर वरुणका अपराध भी उदित हुआ जिसका वर्णन करनेके लिए वे एक अन्य लीलाका वर्णन कर रहे हैं।

'जलम् आविशत्'—श्रीनन्द महाराजजीने एकादशीका उपवासकर भगवान् श्रीजर्नादनकी भली-भाँति पूजा अर्चना की एवं कलामात्र अवशिष्ट द्वादशीमें अपने उपवासका पारण करनेके लिए उन्होंने अरुणोदयसे पहले ही शास्त्रोंकी आज्ञानुसार स्नान करनेके लिए यमुना जलमें प्रवेश किया।

शास्त्रोंकी आज्ञा इस प्रकार है —

"द्वादशी दृष्ट्वा" अर्थात् पारणके दिन यदि द्वादशी अर्द्धकला रहती है, तब निषिथ काल (मध्यरात्रि) के पश्चात् ही प्रातःकृत्य और मध्याह्नकृत्य करने चाहिए —यही श्रीमहादेवका आदेश है॥१॥

तं गृहीत्वानयद् भृत्यो वरुणस्यासुरोऽन्तिकम्।
अवज्ञायासुरीं वेलां प्रविष्टमुदकं निशि॥२॥

अन्वयः —वरुणस्य भृत्यः असुरः (वरुण देवका भृत्य कोई एक असुर) आसुरीं वेलां अवज्ञाय निशि उदकं प्रविष्टं तं (आसुरी वेलाके विषयमें न जानकर रात्रि कालमें ही जलमें प्रवेश करनेपर नन्द महाराजको) गृहीत्वा (पकड़कर) अन्तिकं (वरुणदेवके समीप) अनयत् (ले गया)॥२॥

अनुवाद—उस समय असुरोंकी वेला है, नन्दबाबाको यह मालूम नहीं था। अतः रात्रिमें ही जलमें प्रवेश करनेके कारण वरुणका सेवक कोई एक असुर उन्हें पकड़कर अपने शासक वरुणके समीप ले गया॥२॥
सारार्थदर्शिनी टीका—वरुणस्य भृत्योऽसुरः, वरुणस्यान्तिकम् अनयत्।
तत्र हेतुः—आसुरीं वेलामवज्ञाय उदकं प्रविष्टमित्यज्ञानेनैव तस्मिन् दोषकल्पनम्, श्रीनन्देन तु शास्त्राज्ञाबलेनैवोदके प्रविष्टत्वात्। अतएवाग्रे वक्ष्यते ‘अजानता मामाकेन मूढेन’ इति॥२॥
भावानुवाद—वरुणदेवका सेवक कोई असुर ‘अवज्ञाय आसुरीं वेलां’ आसुरिक समयका अनादरकर निषिथ कालमें ही जलमें प्रवेश करनेके कारण श्रीनन्द महाराजको पकड़कर जलाधिपति वरुणदेवके समीप ले गया। यहाँ श्रीनन्द महाराजने शास्त्रोंकी आज्ञानुसार ही रात्रिमें जलमें प्रवेश किया था, किन्तु उस मूढ़ असुरने यह न जानकर श्रीनन्द महाराजको दोषी समझ लिया। अतएव आगेके सात श्लोकोंमें स्वयं वरुणदेव कहेंगे—”मेरा मूर्ख सेवक भूलवश ही आपके पिताको यहाँ ले आया है॥”२॥
चुक्रुशुस्तमपश्यन्तः कृष्ण रामेति गोपकाः।
भगवांस्तदुपश्रुत्य पितरं वरुणाहृतम्।
तदन्तिकं गतो राजन् स्वानामभयदो विभुः॥३॥
अन्वयः—गोपकाः (नन्द महाराजके अनुचर गोपगण) तं (नन्द महाराजको) अपश्यन्तः (न देखकर) कृष्ण राम इति चुक्रुशुः (हे कृष्ण! हे राम!—इस प्रकार उच्चस्वरसे पुकारने लगे) राजन् (हे महाराज!) स्वानां (अपने भक्तोंका) अभयदः (अभयदान करनेवाले) विभुः भगवान् (विभु श्रीकृष्ण) तत् उपश्रुत्य (उस पुकारको सुनकर) पितरं वरुणाहृतं (पिताका वरुणदेवने अपहरण किया है, यह जानकर) तदन्तिकं गतः (वरुणदेवके समीप गये)॥३॥
अनुवाद—नन्दके अनुचर गोपगण उन्हें देख न पानेके कारण “हे कृष्ण, हे राम”
इस प्रकार उच्च स्वरसे पुकारने लगे। हे राजन्! भक्तोंको अभय प्रदान करनेवाले भगवान् श्रीहरि दूर रहकर भी उस पुकारको सुनकर जान गये कि उनके पिताको वरुणने
अपहरण किया है और वे वरुणके निकट उपस्थित हो गये॥३॥
सारार्थदर्शिनी टीका—‘गोपकाः’ स्नानार्थं रात्रौ गतस्य तस्य रक्षकाः।
तत् क्रोशनम् उपश्रुत्य तदानीं दूरतः पुष्पशय्यायां शयानोऽपि उप निकट एव श्रुत्वेति तस्य सर्वदेशवर्त्तित्वात् पितरं वरुणाहृतं ज्ञात्वेति शेषः। तदानीमेव
निकटमेत्य क्व मे तातो निममज्जेति दृष्ट्वा तत्रैव तटात् सझम्पं निमज्य
तदन्तिकं वरुणान्तिकं गतः। स्वानामभयदः। ततः सकाशान्नन्दमानीय ज्ञातीनामभयं दास्यन्नित्यर्थः॥३॥
भावानुवाद—‘गोपकाः’—रात्रिकालमें स्नानके लिए गये श्रीनन्द महाराजके
रक्षक जलमें प्रविष्ट श्रीनन्द महाराजको न देखकर हे कृष्ण! हे राम! कहकर उच्चस्वरसे कृष्णको बुलाने लगे। ‘तत उपश्रुत्य’—उस समय सर्वव्यापक भगवान् श्रीकृष्ण उस स्थानसे दूर अपनी कुसुम-शय्यापर शयन कर रहे थे। किन्तु सर्वदेशवर्त्तित्व होनेके कारण उन्होंने रक्षकोंकी पुकार श्रवणकर यह जान लिया कि मेरे पिता नन्द बाबाका वरुणदेवने अपहरण कर लिया है। अतः वे नन्द बाबाके रक्षक गोपोंके निकट जाकर उनसे पूछने लगे कि मेरे पिताश्री कहाँ स्नान कर रहे थे? गोपोंने श्रीकृष्णको नन्द बाबाके स्नान करनेका स्थान दिखाया। तब श्रीकृष्णने तटसे ही उस स्थानपर छलाँग लगायी एवं जलमग्न होकर वे वरुणदेवके निकट उपस्थित हुए। ‘स्वानाम् अभयदः’—गोप जातिके अभय प्रदाता श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् हैं। अतः वे वरुणदेवके निकटसे अपने पिता नन्द बाबाको लौटाकर गोप जातिको अभय प्रदान करेंगे॥३॥
प्राप्तं वीक्ष्य हृषीकेशं लोकपालः सपर्यया।
महत्या पूजयित्वाह तद्दर्शनमहोत्सवः॥४॥

अन्वयः—लोकपालः (वरुणदेव) प्राप्तं हृषीकेशं (श्रीकृष्णको समागत)
वीक्ष्य तद्दर्शनमहोत्सवः (देखकर अतीव आनन्दित होकर) महत्या सपर्यया (विशेष
पूजाके उपकरणोंके द्वारा) पूजयित्वा आह (पूजनकर कहने लगे)॥४॥
अनुवाद—लोकपाल वरुणने हृषीकेश श्रीकृष्णको अपने लोकमें देखा, तो वे
उनके दर्शन-महोत्सवसे अतीव आनन्दित हो गये और उनकी विशेष पूजा-सामग्रियोंसे अर्चना की।
बाद वरुण भगवान्से निवेदन करने लगे॥४॥
भावप्रकाशिका-वृत्ति—परमहंस-शिरोमणि श्रीशुकदेव गोस्वामी इन्द्रकी ही
भाँति कृष्णके द्वारा जलाधिपति वरुणदेवके गर्वका खण्डनका वर्णन करनेके लिए श्रीकृष्णकी एक अन्य अभिनव लीलाका वर्णन कर रहे हैं।
कार्त्तिक मासकी शुक्लपक्षीय एकादशी तिथिको इन्द्रादि देवोंने एवं
गोमाता सुरभिने व्रजमें आकर व्रजराजनन्दनका अभिषेक महोत्सव किया था एवं उसी दिन रात्रिके शेष भागमें यह अभिनव लीला संघटित हुई थी।
नन्द, उपनन्द आदि व्रजवासी गोपगण सभी परम वैष्णव थे एवं वे सभी एकादशीके
दिन यथाविधि उपवास, और श्रीभगवान्की कथाओंके श्रवण-कीर्त्तनमें रात्रि जागरण कर द्वादशीके दिन यथाविधि पारण आदिका अनुष्ठान करते थे। कार्त्तिक मासकी शुक्लपक्षीय एकादशी तिथिको भी नन्दादि गोपोंने उपवास, भगवत् पूजा और कथा प्रसङ्गमें रात्रि जागरण आदिका अनुष्ठान किया। किन्तु दूसरे दिन प्रातःकाल द्वादशी तिथि अधिक क्षण नहीं थी, इसलिए वे शास्त्रीय विधिके अनुसार एकादशीके दिन ही अर्द्धरात्रिके पश्चात् स्नान और नित्य कार्योंमें प्रवृत्त हो गये।
द्वादशीं दृष्ट्वा निशिथादर्द्धमेव हि।
आमध्याह्नाः क्रियाः सर्वाः कर्त्तव्याः शम्भु शासनात्॥
(स्कन्दपुराण)
स्कन्द पुराणमें वर्णन आता है कि एकादशी व्रतके दूसरे दिन यदि स्वल्पमात्र भी द्वादशी रहती है, तब एकादशीके दिन ही अर्द्धरात्रिके पश्चात् स्नानादि करके मध्याह्न कृत्य तक सभी नित्य कर्मोंको करके द्वादशीका पारण करना चाहिए। यही वैष्णव चूड़ामणि श्रीशंकरजीका आदेश है।
परम वैष्णव नन्द महाराज आदि गोप भी इस शास्त्र आज्ञाका पालन करते हुए एकादशी व्रतके दिन अर्द्धरात्रिके पश्चात् स्नान आदि कार्य करने लगे। अन्य व्रजवासी गोपोंने तो अपने-अपने घरोंमें ही कुँएके जलसे स्नान कर लिया। किन्तु नन्द महाराज अपने कुछ सेवकोंको साथमें लेकर श्रीभगवद्भक्ति वर्द्धनकारिणी पुण्यसलिला यमुना नदीमें स्नान करनेके लिए एवं यथाविधि यमुना जलमें उतरकर स्तवपाठ आदि करते हुए स्नान करने लगे।
अर्द्धरात्रिके पश्चात् सूर्योदयसे चार दण्ड पूर्व तकके समयको शास्त्रोंमें आसुरिक काल कहा गया है एवं उस समय स्नान आदि समस्त कार्य निषिद्ध हैं। उस समय जलाधिपति वरुणके असुर भृत्यगण नद-नदी आदि जलाशयोंकी रक्षा करते हैं। यदि कोई उस समय जलाशयोंमें स्नान करता है, तो वे उसको दण्ड देते हैं। नन्द महाराज शास्त्र-निषिद्ध आसुरिक कालमें यमुनामें स्नान करने गये थे, किन्तु उन्होंने किसी प्रकारकी स्पर्द्धा या नास्तिकताके कारण शास्त्रोंकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं किया। वे तो अपने उपवासका पारण करनेके लिए शास्त्रोंकी आज्ञासे ही आसुरिक कालमें स्नान करने गये थे। किन्तु वरुणके असुर भृत्यगण अपने असुर स्वभावके कारण शास्त्र-आज्ञा या वैष्णव-आचार आदिसे परिचित नहीं थे। अतः वे गोपराज नन्दको आसुरिक कालमें यमुनामें स्नान करते देखकर अपराधी समझकर पकड़कर वरुणलोक ले गये।
इधर गोपराज नन्दके सेवकगण नन्द महाराजको यमुनामें स्नान करते-करते अचानक अदृश्य देखकर अत्यन्त भयभीत हो गये एवं “हे कृष्ण! हे राम!” कहाँ हो, जल्दी आओ, देखो, तुम्हारे पिताको मगरमच्छ आदि किसी हिंसक जन्तुने पकड़ लिया है। हाय! हाय! आज व्रज अनाथ हो गया है। यह कहकर अपनी छाती और मस्तकपर अपने

हाथोंसे प्रहार करते हुए आर्त्तनाद करने लगे। व्रजराजनन्दन श्रीकृष्ण यद्यपि उस समय अपने निभृत कक्षमें शयन कर रहे थे, तथापि सर्वव्यापक होनेके कारण उन्हें अपने भक्तोंका वह आर्त्तनाद निकट ही सुनायी दिया एवं वे अपने भक्तोंकी रक्षा करनेके लिए व्यग्र हो उठे। श्रीभगवान् स्वभावसे ही भक्तजनके परिपालक हैं। वे स्वरूपतः निर्विकार हैं, किन्तु अपने एकान्त चरणाश्रित भक्तोंके किसी भी प्रकारके दुःखसे वे विचलित हो जाते हैं। फिर व्रजवासियोंके विषयमें कहना ही क्या, उनके जैसे एकनिष्ठ भक्त और कौन हैं?
वे तो अपना सबकुछ त्यागकर एकान्तिक रूपसे श्रीकृष्णमें अपने चित्तको लगाकर अपने-अपने सम्बन्धके अनुसार निरन्तर यथायोग्य सेवाकर उनका आनन्द वर्द्धन कर रहे हैं। उनमें भी गोपराज नन्दके विषयमें क्या कहें, उनके वात्सल्य प्रेममें मुग्ध होकर जगत्पिता श्रीकृष्णने उन्हें अपने पिताके रूपमें अङ्गीकार किया है एवं समस्त शास्त्रोंमें नन्दनन्दन कहकर अपना परिचय प्रदान किया है। अतः नन्द बाबाके समान उनका एकान्तिक भक्त और कौन हो सकता है? गोपोंके आर्त्तनादसे जब गोपराजनन्दनने सुना कि उनके पिता यमुनागर्भमें अदृश्य हो गये हैं, तब वे समझ गये कि अवश्य ही वरुणदेवके दास उन्हें वरुणलोक ले गये हैं। तब उन्होंने क्षणभरका भी विलम्ब न करके तत्क्षणात् वरुणलोककी ओर गमन किया। जलाधिपति वरुणदेव, अकस्मात् अपने गृहमें श्रीकृष्णका आगमन देखकर अतिशय विस्मय एवं सम्भ्रमसे अभिभूत होकर मन-ही-मन चिन्ता करने लगे कि जो सम्पूर्ण इन्द्रियोंसे अतीत एवं सर्वनियन्ता हैं, वे आज मेरे नयनगोचर हुए हैं, यह कैसे संभव है? इससे बढ़कर आश्चर्यका विषय और क्या हो सकता है? मेरे किस जन्मके महत् पुण्यसे यह संभव हुआ है, कह नहीं सकता। आज मैंने अपने निवास स्थानमें ही करोड़ों योगीन्द्र, मुनीन्द्र, शेष, शिव-सनक-नारद-ब्रह्मादिके भी तीव्र ध्यानके अगोचर स्वयं भगवान् श्रीकृष्णके सुदुर्लभ दर्शन प्राप्त किये हैं। मैं मूढ़ देवताओंमें अधम हूँ। मैं यह भी नहीं जानता कि स्वयं सर्वेश्वर भगवान्को अपने गृहमें पाकर किस प्रकार उनका सत्कार करना चाहिए? इस प्रकार विचार करते हुए जलाधिपति वरुण, स्वयं अपने मस्तकपर स्वर्ण सिंहासन उठाकर लाये एवं उन्होंने
अखिल ब्रह्माण्डपति श्रीकृष्णको उसपर बैठाकर अपने हाथोंसे उनके चरण धोये एवं
उस चरणोदकका पानकर उसे अपने मस्तकपर धारण किया।
इसके पश्चात् उन्होंने अपनी बुद्धि और सामर्थ्यके अनुसार महामहेश्वर श्रीकृष्णकी पूजा-अर्चना की एवं उनके श्रीचरणोंमें गिरकर पुनः-पुनः उन्हें प्रणाम हुए गद्गद कण्ठसे उनकी स्तुति करने लगे॥१-४॥

निमाई का शचीमाता से एक अनुरोध

एक दिन मातार पदे करिया प्रणाम।
प्रभु कहे,—माता मोहे देह एक दान॥
माता बले,—ताइ दिब, या तुमि मागिबे।
प्रभु कहे,—एकादशीते अन्न ना खाइबे॥
शची कहे,—ना खाइब, भाल-इ कहिला।
सेई हैते एकादशी करिते लागिला॥
(चैतन्य चरितामृत आदि-लीला १५/८,९,१०)
एक दिन श्रीगौरसुन्दर ने शची माँ के चरणों में प्रणाम करते हुए कहा—‘माँ
आप मुझे एक दान प्रदान करें।’ शची माँ ने कहा—‘तुम जो माँगोगे वही दूँगी।’ प्रभु बोले—'माँ आप एकादशी के दिन अन्न मत खाया करें।' माँ ने कहा—‘तुमने ठीक कहा मैं उस दिन अन्न नहीं खाऊँगी।’ उस दिन के पश्चात् शची माँ एकादशी का पालन करने लगी।
स्मार्त-ब्राह्मणों के बीच एक पूर्वाग्रह है कि एक विधवा को एकादशी का व्रत रखना चाहिए, एक सधवा महिला अर्थात् जिस महिला का पति अभी जीवित हैं, उसे को उपवास करने की ज़रुरत नहीं हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान् चैतन्य महाप्रभु के अनुरोध से पहले शचीमाता एकादशी का पालन नहीं करती थी, क्योंकि वह सधवा थी, उसका पति जीवित था। हालांकि, चैतन्य महाप्रभु ने इस प्रणाली की शुरुआत की कि एक महिला, भले ही वह विधवा न हो, उसे एकादशी के व्रत का पालन करना

चाहिए और एकादशी के दिन किसी भी प्रकार के अनाज को नहीं छूना चाहिए, यहां तक कि श्रीविष्णु को अर्पित किये हुए अन्न-प्रसाद का भी स्पर्श नहीं करना चाहिए। अपनी माँ को उपलक्ष्य करके श्री चैतन्य महाप्रभु ने प्राणी मात्र को एकादशी व्रत पालन करने का निर्देश दिया है।

श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी

श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी और एकादशी का सबक
श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी प्रभु के एक शुद्ध भक्त थे। साधारण लोग उनकी गतिविधियों को समझ नहीं सकते। यदि कोई उन के व्यवहार पर संदेह करता हैं, तो उस का पतन अवश्यम्भावी हैं।
गोपाल भट्ट गोस्वामी को बहुत सारे शिष्य थे—जैसे श्रीनिवास आचार्य, हरिवंश ब्रजवासी, विद्वान गोपीनाथ पुजारी, शंभु-राम और गुजरात के मकरंद। गोपाल भट्ट गोस्वामी श्रीश्रीराधारमण की सेवा की जिम्मेदारी गोपीनाथ पुजारी को दे दी थी। गोपाल भट्ट गोस्वामी के शिष्य हरिवंश ने उनके आदेश का पालन नहीं किया, तो गोपाल भट्ट गोस्वामी ने उनका परित्याग कर दिया। उस के पश्चात हरिवंश ने सारा सौभाग्य और अच्छे गुण खो दिये। उस के बाद ये हुआ—
हरिवंश ब्रजवासी एक प्रसिद्ध विद्वान थे। वो हमेशा ईमानदारी से अपने आध्यात्मिक गुरु की सेवा करते थे। गोपाल भट्ट गोस्वामी उन के साथ प्रसन्न थे। फिर भी, दुर्भाग्य क्रम से हरिवंश ने अपने गुरु के आदेश का पालन नहीं किया।

एक बार एकादशी के दिन, हरिवंश पान चबाते हुए, अपने आध्यात्मिक गुरु के पास
गये। जब गोपाल भट्ट गोस्वामी ने उन से पान के बारे में पूछा, तो उन्होंने कहा कि
वह श्रीराधा का प्रसाद हैं। गोपाल भट्ट गोस्वामी ने कहा, “एकादशी के दिन आप कुछ भी न यहां तक की भगवान् हरि का महाप्रसाद भी नहीं। शास्त्र कहता है: ‘ ग्राह्यं हरेर् विना। —भगवान् हरि के उच्छिष्ट महाप्रसाद का सेवन अवश्य करना चाहिए, सिर्फ एकादशी के दिन नहीं।’ फिर से ऐसा नहीं करना; अन्यथा, यह अपराध हो जाएगा।” हरिवंश
ने उन को दंडवत प्रणाम किया और वहाँ से निकल गये। दुर्भाग्य से, वे पान चबाने का आदी हो गये थे और इस के कारण वे इस आदत को रोक नहीं सकें। अगले एकादशी को श्रीमती राधिका जी को अर्पण किया हुआ तांबूल चबाते हुए लाल होंठ लेकर वे अपने आध्यात्मिक गुरू को मिलने के लिए गये।
गोपाल भट्ट गोस्वामी ने कहा, “तुम एक पढ़े लिखे व्यक्ति हों। क्यों आप एक अज्ञानी व्यक्ति के तरह आचरण कर रहें हो? एकादशी के दिन पान चबाकर आप सब प्रकार के पापों का संग्रह कर रहें हो। सुशिक्षित विद्वान होने के बावजूद आप ने मेरे आदेश का पालन नहीं किया हैं। मैं इस अपराध की वजह से आप का त्याग करता हूं।” हरिवंश ने अनुरोध किया, “ये प्रसादी पान हैं और मैं इसे चबाने की आदत छोड़ नहीं सकता। मैं आप के आदेश का उल्लंघन करके अपराध तो किया हैं, लेकिन मैं राधिका के उच्छिष्ट प्रसादी पान की उपेक्षा नहीं कर सकता।” गोपाल भट्ट गोस्वामी इस तर्क को सुनने के बाद कुपित हो गये। इसलिए हरिवंश जल्दी ही वह स्थान छोड़कर चलें गये। इस तरह वे श्रीश्रीराधारमण की सेवा से वंचित हो गये।
बाद में, हरिवंश ने स्वतंत्र रूप से वृन्दावन में श्रीश्रीराधावल्लभ के विग्रहों की प्रतिष्ठापना की। उन्हें पहले पत्नी से वनचन्द्र और वृन्दावन-चन्द्र नामक दो पुत्र हुए। और दूसरे पत्नी से कृष्ण दास और सूर्य दास नामक दो पुत्रों की प्राप्ति हुई। अंततोगत्वा हरिवंश ने श्रीश्रीराधावल्लभ की सेवा अपने बेटों को सौंप दी और वन में रहने के लिए घर छोड़ दिया। यह समझना कठिन हैं कि नियति कैसे काम करती हैं। उन के प्रस्थान के थोड़े समय बाद ही, वन में लुटेरों ने हरिवंश पर प्राणघातक हमला किया और उन का सिर काट कर उसे यमुना नदी में फेंक दिया। कटा हुआ सिर नदी में बहता हुए उस स्थान पर पहुँचा जिस स्थान गोपाल भट्ट गोस्वामी स्नान कर रहे थे। बड़े आश्चर्य की बात थी की वह कटा हुआ सिर अभी भी राधा-नाम का उच्चारण कर रहा था। गोपाल भट्ट गोस्वामी को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ की एक कटा हुआ सिर “राधा, राधा” जप कर रहा हैं। लेकिन जब उन्हें यह पता चला की यह कटा हुआ सिर हरिवंश का हैं तो उन के हृदय में पीड़ा का अनुभव हुआ। उस के बावजूद भी उन्हों ने उस कटे हुए सिर का स्वागत किया।
कटा हुए सिर धीरे-धीरे गोपाल भट्ट गोस्वामी के पास में आया और उसने उनके चरणकमलों का स्पर्श किया। सिर ने कहा, “हे गुरुदेव, कृपया मुझे बतायें—क्या आप मेरे अपराध को क्षमा कर दोगे?” गोपाल भट्ट गोस्वामी ने उत्तर दिया, “हाँ, मैंने तुम्हें माफ कर दिया।” तब गोपाल भट्ट गोस्वामी ने कटे हुए सिर पर अपने चरणकमल रख दिये। अपने गुरु के चरणकमलों का आश्रय प्राप्त होने के बाद, हरिवंश मुक्ति के लिए पात्र बन गये। गोपाल भट्ट गोस्वामी अपने कुटिया में लौट आने बाद उन्हों ने घटी हुई घटना का वृत्तान्त सब को सुनाया।
यह निश्चित जान लें कि कृष्ण एक अपराधी को अपनी दया तभी प्रदान करेंगे जब
जिस वैष्णव के चरणों में उसने अपराध किया हैं, वह वैष्णव उसे क्षमा कर दें। जब तक कोई अपने अपराधों से मुक्त नहीं होता हैं, तक उसे भगवान् की दया पाने का कोई रास्ता नहीं है। यह एक महान भक्त के लिए भी सच है। अपराधी की बात ही क्या करें, यहां तक की उस के बच्चे भी अपराध के प्रतिक्रियाओं से बच नहीं सकते, और वे अक्सर वैष्णवों द्वारा अस्वीकार कर दिये जाते हैं।
संदर्भ: प्रेम-विलास (दिव्य प्रेम की लीलाएँ)
रचयिता: श्री नित्यानन्द दास
टचस्टोन पुस्तक संस्था के द्वारा प्रकाशित।

पृष्ठ-संख्या: १८९-१९०।

श्रीश्रीमद्भक्तिगौरव वैखानस गोस्वामी महाराज

एकादशी के फलार्पण से ब्रह्म-दैत्य की मुक्ति (श्रीमद्भक्तिगौरव वैखानस गोस्वामी महाराज के जीवन की सत्य घटना)

बाल्यकाल से ही असाधारण प्रतिभा सम्पन्न श्रीमद्भक्तिगौरव वैखानस गोस्वामी महाराज कार्तिक मास में कृष्ण प्रतिपदा तिथि को उड़ीसा के गञ्जाम जिले में बड़गड़ ग्राम में कुलीन ब्राह्मण कुल में आविर्भूत हुए थे। वे श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद के अन्यतम शिष्यों में से एक थें। श्रील महाराज का माता-पिता द्वारा प्रदत्त नाम ‘श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ’ था। इनके पूर्वज बड़गड़ राजा के राजपुरोहित होने के गुरुत्वपूर्ण दायित्व को पीढ़ी-दर-पीढ़ी अति सम्मान के साथ सम्पन्न करते आ रहे थे।
एक समय बड़गड़ के राजा ने श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ की प्रतिभा की बात को सुनकर अपने राजपुरोहित के पुत्र के सम्बन्ध सूत्र से स्नेहवशतः उन्हें राजसभा में सादर आमन्त्रित किया जहाँ राजकीय कवि एवं विद्बत-मण्डली उपस्थित थी। सभा में सभाजनों के साथ प्रश्नोत्तर करते हुए विभिन्न आलोचनाओं के द्वारा श्रीउज्ज्वलेश्वर ने अपने पाण्डित्य का प्रकाश किया तथा विद्वत्-मण्डली को परास्त कर दिया। राजा ने श्रीउज्ज्वलेश्वर की प्रतिभा से मुग्ध होकर उन्हें

’ अर्थात् विद्या में प्रवीण’ की उपाधि प्रदान की एवं उसके साथ ही उन्हें 'श्रेष्ठ सभाकवि' के रूप में एवं ‘राजगुरु' के पद पर आसीन किया।

प्रेत के साथ वार्त्तालाप
एक समय राजगुरु श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ किसानों को किराये पर दी हुई अपनी भूमि पर उपजी फसल को बेचकर धन लेकर अपने घर की ओर आ रहे थे कि मार्ग में भयंकर आँधी-तूफान उपस्थित हुआ। इस कारण वे आगे नहीं बढ़ पाये तथा किसी एक ग्राम में पान वाले की दुकान को खुला देखकर उन्होंने दुकानदार से पूछा, “भाई, क्या यहाँ एक रात रहने की कहीं व्यवस्था हो सकती है?”
उस दुकानदार ने पूछा, “आपके पास अपना बिस्तर इत्यादि है?”
उन्होंने उत्तर दिया, “हाँ, है।”
दुकानदार ने कहा, “तब तो आप सामने खाली पड़े घर में ही रह सकते हैं।”
वह उन्हें वहाँ ले गया तथा उन्हें स्थान दिखलाकर वहाँ से चला गया। अभी श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ थोड़ी देर सोये ही थे कि उस स्थान पर रहने वाला प्रेत कुछ उत्पात करने लगा। श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ की निद्रा भङ्ग हो गयी, उन्होंने अपने समक्ष एक विराट शरीरधारी दैत्य को देखा। उन्होंने दैत्य से संस्कृत भाषा में पूछा, “तुम कौन हो?”
दैत्य ने कहा, “मैं ब्रह्म दैत्य हूँ।”
(ब्रह्म दैत्य = संस्कार के पश्चात् अकाल-मृत्यु को प्राप्त करने वाले किसी ब्राह्मण का प्रेत। यदि उपनयन संस्कार के उपरांत पांच दिन के अंदर आग में जलकर, एक्सीडेंट में या अन्य कोई अनैसर्गिक कारणवश यदि कोई ब्राह्मण मरता हैं तो ऐसा ब्राह्मण ब्रह्म-दैत्य बनता हैं।)
श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ ने पूछा, “तुम यहाँ क्यों आये हो?”
ब्रह्म दैत्य ने कहा, “मैं तो यहाँ पर ही वास करता हूँ, आये तो तुम यहाँ पर हो।”
श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ ने पूछा, “चाहते क्या हो?”
ब्रह्म दैत्य ने कहा, “मैं तुम्हें भक्षण करना चाहता हूँ।”
श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ ने पूछा, “तुम मुझे भक्षण क्यों करना चाहते हो?”
ब्रह्म दैत्य ने आश्चर्यचकित होकर कहा, “यह कैसा प्रश्न है? इस घर में जो
आता है, वह मेरा आहार बनता है।”
श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ ने पूछा, “मैं ब्राह्मण हूँ। तुम्हें ब्रह्म हत्या करने का भय नहीं है? मुझे भक्षण करके भी तुम्हारा क्या लाभ होगा? तुम तो प्रेत योनि में ही रह जाओगे।”
ब्रह्म दैत्य ने कहा, “ब्रह्महत्या का भय, इसमें भय की क्या बात है? मैं तो ब्रह्मदैत्य ही हूँ। मैं स्वयं भी कभी ब्राह्मण था। प्रेतयोनि में तो मुझे रहना ही है किन्तु तुम्हें भक्षण करके मुझे कुछ तो तृप्ति मिलेगी।” श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ ने कहा, “तुम अपने उद्धार की चिन्ता क्यों नहीं करते।”
दैत्य ने कहा, “ऐसा महानुभाव कौन है, जो मेरा उद्धार करेगा।” श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ ने कहा, “मैं तुम्हारा उद्धार करूँगा।”
दैत्य ने कहा, “देखिये, मेरा उद्धार इच्छा करने पर भी हर कोई नहीं कर सकता। जो व्यक्ति भागवत में वर्णित अम्बरीष महाराज की भांति दशमी को एकाहार, एकादशी को निर्जल, एकादशी की रात्रि में हरि-सङ्कीर्त्तन तथा द्वादशी में भी एकाहार करने वाला होगा, वैसा व्यक्ति यदि अपने द्वारा कृत एक एकादशी के फल को मुझे प्रदान करेगा, तभी मेरा उद्धार सम्भवपर है किन्तु ऐसा महानुभाव कहाँ मिलेगा?”
श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ ने कहा, “मैं उसी प्रकार की एकादशी तिथि का पालन करता हूँ। मैं ही तुम्हारा उद्धार कर दूँगा।” ऐसा कहकर श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ ने

अपनी अञ्जुली में जल लेकर एक एकादशी के फल को प्रदान करने का सङ्कल्प लेकर उस जल को उसके ऊपर छिड़क दिया। जिसके फलस्वरूप सोडे की बोतल को खोलते समय होने वाले शब्द की भाँति ध्वनि हुई तथा वह दैत्य उद्धार प्राप्त करके चला गया।
इस प्रकार श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ को सोने में बहुत देरी हुई तथा उसी के फलस्वरूप उन्हें उठने में भी देरी हुई। दूसरी ओर, पान के दुकानदार ने जब प्रातःकाल भी घर को भीतर से बन्द देखा तो वह अन्य ग्रामवासियों को बुलाकर भीतर की खबर जानने के लिए चेष्टान्वित हुआ। जब राजगुरु श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ ने बाहर का कोलाहल सुना तो उन्होंने द्वार खोला तथा उन्हें देखकर ग्रामवासियों ने आश्चर्यपूर्वक पूछा, “आपको कुछ हुआ नहीं?”
उन्होंने पूछा, “क्या होना था?”
तब ग्रामवासियों ने कहा, “यह तो प्रेत का निवास स्थान है। यहाँ पर रात्रि
में रहने वाला कोई भी व्यक्ति जीवित नहीं बचता। यह पान की दुकान वाला महामूर्ख है उसने आपको इसी स्थान पर रहने के लिए कहा। भगवान् का लाख-लाख धन्यवाद है कि आपको कुछ नहीं हुआ। क्या आपको प्रेत ने कुछ नहीं कहा?”
श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ ने उत्तर दिया, “वह आया था, उसने जो कहना था उसने
कहा, मैंने जो कहना था मैंने कहा। अब वह केवल मात्र एक एकादशी तिथि के माहात्म्य के फलस्वरूप उद्धार प्राप्त करके चला गया है। अब इस स्थान पर भविष्य में किसी को भी रहने में कोई असुविधा नहीं होगी।”
बाद में वार्तालाप करते-करते जब ग्रामवासियों को पता चला कि यह व्यक्ति राजगुरु श्रीउज्ज्वलेश्वर रथ है तब तो सभी पान के दुकानदार को कहने लगे, “तेरा भाग्य बहुत अच्छा है जो इन्हें कुछ नहीं हुआ, अन्यथा न जाने तेरे साथ-ही-साथ राजा ग्रामवासियों की भी क्या अवस्था करता!”

एकादशी व्रत का फल प्रदान करने से ब्रह्म-दैत्य की मुक्ति
परम-पुज्यपाद भक्ति-गौरव वैखानस गोस्वामी महाराजजी का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वे श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद के अन्यतम शिष्यों में से एक थें। श्रील प्रभुपाद से दीक्षा प्राप्त करने के पहले वे एक राजगुरु और राजपंडित थे। उन्होंने अपने निर्जला एकादशी के व्रत के फल को प्रदान कर के एक ब्रह्म-दैत्य का उद्धार किया था। श्रील भक्ति-विज्ञान भारती गोस्वामी महाराजजी ने यह लीला उनके शुभ-तिरोभाव तिथि के दिन २७ जनवरी २०१७ को बताई थी।
राजा ने उनको बहुत सारी ज़मीन-जायदाद भेट की थी। ज़मीन में उपजी हुई फ़सल बेचकर पैसा लेकर राजपंडितजी वापस लौट रहे थे। रास्ते में ओला-वृष्टि हुई। बारिश हुई, तूफान भी चलने लगा। राजपंडित सोचने लगे की वे कहां जायें। एक गांव में जाकर उन्होंने पूछा—“यहां कोई रहने का स्थान मिलेगा?” राजपंडित जी को उस समय पान खाने की आदत थी। तो एक आदमी, जो पान का दुकानदार था, उसने उन्हें बताया की पास वाला एक मकान खाली हैं और वहाँ वे रह सकते हैं। वो मकान प्रेत का था। ब्रह्म-दैत्य नें उसका क़ब्जा किया था। कौन सा मनुष्य ब्रह्म-दैत्य बनता हैं? यदि उपनयन संस्कार के वक्त पांच दिन के अंदर आग में जलकर, एक्सीडेंट में या अन्य कोई अनैसर्गिक कारणवश यदि कोई मनुष्य मरता हैं तो ऐसा मनुष्य ब्रह्म-दैत्य बनता हैं। राजपंडित रात को बारा बजे उस मकान में पहुँचे। तो वह ब्रह्म-दैत्य भी वहाँ पहुँच गया। उसे देखकर राजपंडित बिलकुल डरे नहीं।
उन्होंने उस प्रेत से पूछा—तुम कौन हों?
उसने कहां—मैं ब्रह्म-दैत्य हूं।
राजपंडित—यहां क्यों आये हों?
ब्रह्म-दैत्य—तुम्हें खाने के लिए।
राज-पंडित—क्या हमें भी खाओगे? ब्रह्म-हत्या के पातक का डर नहीं है? ब्रह्म-दैत्य—मैं ब्रह्म-दैत्य हूं। पाप से क्यों डरूँ?
राज-पंडित—कभी अपने उद्धार के बारे में सोचा हैं?
ब्रह्म-दैत्य—मेरे उद्धार के लिए कोन सोचेगा? कौन ऐसा महान व्यक्ति हैं
जो मेरे उद्धार के बारे में सोचेगा।
राज-पंडित—तेरा उद्धार कैसे होगा?
ब्रह्म-दैत्य—यदि कोई व्यक्ति दशमी के दिन एकाहार (सुबह एक ही बार भोजन करना), एकादशी के दिन निराहार (बगैर कुछ खाए या पिए), और द्वादशी के दिन एकाहार करें, और ऐसी एकादशी का फल मुझे समर्पण करें तो मेरा उद्धार जायेगा। राज-पंडित—मैं आप को मेरे एकादशी का फल दूँगा।
राज-पंडित ऐसी ही एकादशी करते थें। उन्होंने हात में जल लेकर आचमन किया,
और संकल्प किया की मैं एक एकादशी का फल इस प्रेतात्मा को समर्पण करता हुं। जैसे ही उन्होंने ऐसा बोला, उसी वक्त एक ज़ोरदार ध्वनि हुई और वह ब्रह्म-दैत्य उद्धार होकर चला गया। इस में रात के दो बज गये। उसके बाद राज-पंडित ने थोड़ा आराम किया।
गाव के लोगों में बड़ी चहल-पहल हो गयी। वे सोचने लगे—राजगुरु आये थे। उन्हें तो वो ही स्थान में रहने को कहा गया जिस स्थान पर ब्रह्म दैत्य ने क़ब्जा किया था। यदि उन्हें कुछ हो जायें तो राजा पूरे गाववालों की पिटाई करेगा। वह किसी को छोड़ेगा नहीं। इससे अच्छा हैं की राजा को खबर भेज दो।
हम लोगो को कुछ मालूम नहीं था की ये व्यक्ति राजगुरु हैं। अन्यथा हम उन्हें बड़े सन्मान के साथ रखते थें। हम को बिलकुल खबर नहीं की पान की दुकानदार ने उन्हें प्रेतात्मा के द्वारा आतंकित घर में भेज दिया हैं। यह खबर राजा को तुरंत भेज दो।

तब कुछ बुज़ुर्ग लोग बोलने लगे की पहले तो यह देख लो, क्या घटना घटी है। सब
लोग वहा जाकर दरवाजे पर खटखटाने लगे। बार बार खटखटाने से राजपंडित की नींद भंग हुई।
राजपंडित ने पूछा—क्या बात हैं?
गाव के लोग—आपने कुछ देखा नहीं?
राजपंडित—क्या देखना हैं?
गाव के लोग—कुछ भी देखा नहीं?
राजपंडित—वह ब्रह्म-दैत्य उद्धार होकर चला गया हैं।

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्रीश्रीमद् भक्तिगौरव वैखानस गोस्वामी महाराज

श्री नामदेवजी के एकादशी निष्ठा की श्री ठाकुरजी द्वारा परीक्षा
(श्रीभक्तमाल द्वितीय खंड छ. ४३ क. १४२ पृष्ठ संख्या २३६) कियौ रूप ब्राह्मण को दूबरो निपट अंग भयो हियै रंग व्रत परिचैको लिजिये। एकादशी अन्न मांगत बहुत भूखो आजुतौ न दैहौं भोर चाहौ जितौ दिजिये॥
दौऊ ताको शोर पर्यो
समझावै नामदेव याको कहा खीझिये।
बीते जाम चारि मरि रहे यों पसारिपांव
पै न जानै दई हत्या नही छिजिये॥१४२॥
भावार्थ: एकबार भगवानके मनमें यह उमंग उठी की श्रीनामदेवजीकी एकादशी व्रत-निष्ठाका परिचय लिया जाय। यह विचारकर उन्होंने एक अत्यन्त दुर्बल ब्राह्मणका रूप धारण किया। एकादशी व्रतके दिन श्रीनामदेवजीके पास पहुँचकर बड़ी दीनता करके अन्न मांगने लगे कि—मैं बहुत भूखा हूँ, कई दिनसे भोजन प्राप्त नहीं हुआ है, कुछ अन्न दो। श्रीनामदेवजीने कहा—आज तो एकादशी हैं, अतः अन्न न दूँगा। प्रातःकाल जितनी इच्छा हो उतना अन्न लीजियेगा। दोनों अपनी-अपनी बात पर भारी हठ कर बैठे। इस बात का शोर चारों और फैल गया। लोग इकट्ठे हो गए। श्रीनामदेवजीको समझाने लगे कि इस भूखे ब्राह्मणपर क्रोध क्या करें, तुम्हीं
मान जाओ, इसे कुछ अन्न दे दो। श्रीनामदेवजी नहीं माने, दिनके चौथे पहरके बीतनेपर उस ब्राह्मणदेवने इस प्रकार पैर फैला दिये कि मानो मर गए। गाँवके लोग श्रीनामदेवजीके भावको नही जानते थे अतः उन लोगोंने नामदेवजीके सिर ब्राह्मण-हत्या लगा दी और उनका समाजसे बहिष्कार कर दिया। पर नामदेवजी बिल्कुल चिन्तित नहीं हुए॥१४२॥
व्याख्या—अन्नमांगत.— ब्राह्मण रूपधारी भगवान् गाँव के लोगोंसे पूछते-फिरते
— अरे भाई! कोई नामा भगत हैं। सुनता हूँ वह भूखे-दुखे साधु-ब्राह्मणकी खूब

सेवा करते हैं। लोगोंने श्रीनामदेवजीका घर दिखा दिया, ये पहुँचकर रट लगाने लगे कि मैं बहुत भूखा हूँ, कुछ अन्नकी भिक्षा मिलनी चाहिए। श्रीनामदेवजीने कहा कि आज तो हम लोग व्रत हैं, आइये, आप भी फलाहार कर लीजिये। ब्राह्मण देवताने कहा—आज व्रत है तो तुम फलाहार करो, चाहे निराहार करो, हमें तो तुम अन्नकी भिक्षा दो। श्रीनामदेवजीने हाथ जोड़कर कहा—महाराज! दूध पी लीजिये। ब्राह्मण—वादी करता हैं, गरिष्ठ होता हैं। नामदेव—तो दही पी लीजिये। ब्राह्मण—अरे, ये तो खाँसी- जुकाम करता हैं। नामदेव—तो आज अन्न तो मिलेगा नहीं। एकादशीके दिन अन्न देना और लेना दोनों पाप हैं। यह सुनकर ब्राह्मण देवता बिगड़े कि—मैं तुम्हारे यहाँ उपदेश सुनने थोडे ही आया हूँ। मुझे तो जैसे हो तैसे दो मुट्ठी अन्न दो। नामदेव — आज तो मैं अन्न नहीं दे सकता हूँ। ब्राह्मण—तो मैं भी आज तुम्हारे यहाँसे अन्नकी भिक्षा लेकर ही जाऊँगा। इस प्रकार दोनों ही अपनी-अपनी बातपर डँट गये। धीरे-धीरे गांव एकत्रित हो गया। लोग ब्राह्मण देवताको समझाने लगे कि जब ये नहीं दे रहे हैं तो चलिये हमारे यहाँसे मन चाहे जितने अन्नकी भिक्षा ले लीजिये। छोड़िये इनको, ली गई इनकी साधु-ब्राह्मण निष्ठा, अतिथि-अभ्यागत सेवा। केवल ढोंग भर हैं। ब्राह्मण—भैया! अगर मैं सही ब्राह्मण हूँ तो लूँगा तो इन्हींसे, नहीं तो इनके द्वारपर प्राण दे दूँगा। यह सुनकर लोग नामदेवजीको समझाने लगे कि—भैया! क्यों शिरपर ब्रह्महत्या ले रहे हो। ब्राह्मण भूखा हैं, हठ पड़ गया हैं, दे न दो दो मुट्ठी अन्न, इसमें तुम्हारा क्या बिगडा जा रहा हैं। श्रीनामदेवजीने कहा—यदि मैं भी पक्का भक्त हूं, तो ये चाहे भले जाँय, परन्तु आज हरिवासरके दिन मैं इन्हें अन्न नहीं ही दूँगा। लोग हारकर अपने-अपने घर चले गये। मृतकवत् पड़ गये।

विप्र गोद लेकैं बैठें जाई दियो मुसुकाई मैं परीक्षा लीनी तेरी है।
मन भाई मेरे भए अन्तर्धान

परे पाँय प्रीति हेरी है॥
भावार्थ—(अपने नियम के अनुसार जागरण और कीर्तन करते हुये श्रीनामदेवजीने रात बिताई, प्रातःकाल) चिता बनाकर उस ब्राह्मणके मृतक शरीरको लेकर उसपर बैठ गए कि—हत्यारे शरीरको न रखकर प्रायश्चित्त स्वरूप उसे भस्मकर देना ही उत्तम हैं। [श्रीनामदेवने चितामें अग्नि लगा ली] भगवान् प्रकट हो गए और मुस्कुराकर कहने लगे कि—मैंने तो तुम्हारी परीक्षा ली थी। तुम्हारी एकादशी व्रतकी सच्ची निष्ठा मैनें देख ली, वह मेरे मनको बहुतही प्यारी लगी, मुझे हुआ। इस प्रकार दर्शन देकर भगवान् अन्तर्धान हो गए। लोगोंने जब यह लीला देखी तो चरणोंमें आकर गिरे और प्रीतिमय चरित्र देखकर सभी भक्त हो गए।

जगदीश और हिरण्य पण्डितका नैवेद्य ग्रहण
निमाई ऐसे जिद्दी थे कि उन्हें जब जो चीज चाहिए, वह उन्हें कहीं से भी
लाकर देनी पड़ेगी, नहीं तो रोते-रोते सबको परेशान कर देंगे। कभी-कभी आकाशमें उड़ते हुए पक्षियोंको देखते, तो उनकी ही माँग करने लगते। कभी रातके समय आकाशमें चन्द्रमाको देखते, तो उसीको लेनेकी जिद्द करने लगते तथा न मिलनेपर रोने लगते। सभी लोग उन्हें गोदमें उठाकर प्यारसे समझाते, परन्तु उनका रोना बढ़ता ही जाता। जब किसी प्रकारसे उनका रोना बन्द नहीं होता, तो सभी लोग हाथोंसे तालियाँ बजाते हुए हरिनामकीर्त्तन करने लगते, तब श्रीगौरसुन्दर रोना छोड़कर खिलखिलाकर हँसने लगते। परन्तु एक दिन उन्होंने रोना आरम्भ किया तो चुप होनेका नाम ही नहीं लिया। अन्य दिन हरिनाम सुनकर चुप हो जाते थे, परन्तु आज तो हरिनामके द्वारा भी चुप नहीं हो रहे थे तथा जमीन पर रोते-रोते लोट-पोट खा रहे थे। जब उन्हें किसी प्रकारसे भी शान्त नहीं कराया जा सका, तो सभी लोगोंने पूछा — “बेटा निमाई! तू क्यों रो रहा है? बोल तुझे क्या चाहिए? हम कहीं से भी वह वस्तु तुझे लाकर देंगे।”
गौरसुन्दर—“आज एकादशी है, अतः हिरण्य एवं जगदीश पण्डितने भगवानके लिए अनेक प्रकारके स्वादिष्ट व्यंजन तैयार किये हैं, यदि तुमलोग मुझे जिन्दा देखना चाहते हो, तो जल्दीसे उन सभी वस्तुओंको लाओ, मैं उन्हें खाऊँगा। नहीं तो रोते-रोते मैं प्राण त्याग दूँगा।” उनकी ऐसी बातें सुनकर शचीमाता कुछ दुःखी हो गईं। वे विचार करने लगीं कि वे लोग भगवानके लिए पकाये गये व्यंजन हमें क्यों देंगे? परन्तु जगन्नाथ मिश्र श्रीगौरसुन्दरको पुचकारते हुए बोले—“अच्छा बेटा! मैं स्वयं उनके पास जाकर उनसे तेरे लिए उन सभी वस्तुओंको माँगकर ले आऊँगा। इसलिए अब तू चुप हो जा।”
ऐसा कहकर जगन्नाथ मिश्र जगदीश एवं हिरण्य पण्डितके घर गये। वे दोनों परम वैष्णव थे तथा श्रीजगन्नाथ मिश्रके परम घनिष्ठ मित्र थे। उन्होंने जब सम्पूर्ण घटना सुनी तो उनके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। वे विचार करने लगे कि यह तो बहुत आश्चर्यका विषय है कि वह छोटा-सा बालक यह कैसे जान गया कि आज एकादशी है तथा हमने भगवानके लिए नाना प्रकारके व्यञ्जन बनाये हैं। क्योंकि एक तो वह अज्ञ बालक है, उसे एकादशीका ज्ञान कैसे हुआ? दूसरे जगन्नाथमिश्रके घरसे हमारा घर बहुत दूर है, फिर उसे हमारे द्वारा पकाये हुए पकवानोंके विषयमें कैसे पता चला? कुछ विचार करनेके बाद वे श्रीजगन्नाथमिश्रसे बोले—“मिश्रजी! यह तो बहुत आश्चर्यकी बात है। हमने अपने जीवनमें आज तक किसी अज्ञ बालककी ऐसी बुद्धि न देखी और न सुनी है। ऐसा प्रतीत होता है कि बालकके शरीरमें श्रीगोपालजीका अधिष्ठान है। क्योंकि वह बालक देखनेमें परमसुन्दर है, इसलिए उसके हृदयमें बैठकर गोपालजी ही ऐसी बातें उससे कहलवाते हैं।”
ऐसा कहकर वे दोनों ब्राह्मण बहुत प्रसन्नतापूर्वक सभी वस्तुओंको सजाकर स्वयं गौरसुन्दरके पास ले आये। ब्राह्मण (बहुत प्रेमसे)—“बेटा निमाई! लो, इन सब पकवानोंको तुम प्रसन्नतापूर्वक खाओ। आज हमारा परिश्रम सार्थक हो गया।

तुम्हारे ऊपर कृष्णकी असीम कृपा है, क्योंकि कृष्णकी कृपाके बिना किसीकी ऐसी बुद्धि सम्भव नहीं है।”
यह सुनकर श्रीगौरसुन्दरने मुस्कुराते हुए जन्म-जन्मान्तरोंके उन दो सेवकों पर कृपा दृष्टि की तथा बहुत प्रसन्नतापूर्वक अपने भक्तके द्वारा अत्यन्त प्रेमपूर्वक अर्पित किये हुए प्रत्येक पकवानोंमें से थोड़ा-थोड़ा खाया। प्रभुको प्रसन्न देखकर वहाँ पर उपस्थित लोग कीर्तन करने लगे तथा श्रीगौरसुन्दर भी अपने ही कीर्तनमें आनन्दपूर्वक खाते-खाते ही नाचने लगे। तात्पर्य: के प्राकट्य दिवस, एकादशी, और कुछ द्वादशीयों को हरिवासर कहा
है। इन दिनों भगवान् हरि के सेवक सभी प्रकार की भौतिक गतिविधियों से दूर रहते हैं उपवास करते हुए हरि की सेवा करने का संकल्प लेते हैं। लेकिन चूँकि भगवान्‌ सर्वोच्च व्यक्तित्व एवं परब्रह्म हैं, इसलिए उन्होंने हरिवासर पर उपवास जैसी लीलाएँ नहीं दिखाईं, जिन्हें उनके भक्तों द्वारा अवश्य पालन किया जाना चाहिए; बल्कि, उन्होंने विभिन्न खाद्य पदार्थों को स्वीकार किया जो उन्हें अर्पित किए गए थे।

श्रीरामनवमी-व्रत
“वन्दामहे महेशानं हरकोदण्ड-जानकी-हृदयानन्द- रघुनन्दनम्॥” — पद्मपुराण
जिन्होंने शिव के धनुष की डोरी को तोड़ा था और जो जानकी के हृदय को आनन्द प्रदान करने वाले चन्दन-स्वरूप हैं, उन्हीं सर्वेश्वर रघुनन्दन श्रीराम की वन्दना करता हूँ।

‘श्रीरामार्च्चन-चन्द्रिका’ में श्रीरघुनाथ जी के जन्मोत्सव-प्रसंग में
देखा जाता हैं कि,—”चैत्र शुक्ला नवमी में जब सूर्य, मंगल, बृहस्पति, शुक्र और शनि ये पाँच ग्रह अपने-अपने उच्च-स्थान में अवस्थित थे, बृहस्पति, चन्द्र के साथ कर्कट राशि में स्थित थे और सूर्य, मेष राशि मे अवस्थित थे, पुनर्वसु- नक्षत्र-युक्त उस समय में, अद्भुत गुण-रूप-विभूति-विशिष्ट अनिर्वचनीय (अवर्णनीय) भगवान् श्रीरामचन्द्र जी समस्त राक्षस-कुल रूपी लकड़ी के ढेर को जलाने लिए अति पवित्र अयोध्या रूपी यज्ञ-काष्ठ (यज्ञ की लकड़ी) आविर्भूत हुए थे।” ‘विष्णुधर्मोत्तर’-ग्रन्थ में राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न को क्रमशः वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध के अवतार के रूप में निर्देशित किया गया हैं। पुनः पद्म पुराण में राम को नारायण, भरत तथा शत्रुघ्न को शंख और चक्र एवं लक्ष्मण को शेषनाग के रूप में कीर्तन किया गया हैं। ‘वैवस्वत’-मन्वतर में २४वें चतुर्युग के त्रेतायुग में, परब्रह्म श्रीरामचन्द्र जी, महाराज दशरथ से के गर्भ में आविर्भूत हुए थे।—(लघुभागवतामृत)

श्रीरामचन्द्र जी की जन्म-तिथि
चैत्र मास की शुक्ल नवमी मे श्रीरामचन्द्र जी का जन्म हैं। शास्त्रकारों
के अनुसार उनके आविर्भाव का समय मध्याह्न हैं। हम अगस्त्य संहिता (२८/१,३-४) मे देख सकते हैं—
चैत्रे मासि नवम्यान्तु जातो रामः स्वयं हरिः।
श्रीरामनवमी प्रोक्ता कोटिसूर्यग्रहाधिका।
चैत्रशुक्ला तु नवमी पुनर्वसुयुता यदि॥
तेन ‘मध्याह्नयोगेन’ महापुण्यतमा स्मृता॥
की शुक्ला नवमी में भगवान् श्रीहरि, जी के रूप में आविर्भूत हुए थे।
श्रीरामनवमी कोटि-सूर्य-ग्रहण की अपेक्षा अधिक फलदायिनी कही जाती है। चैत्र मास की शुक्ल-नवमी तिथि में, ‘मध्याह्न’ यदि पुनर्वसु-नक्षत्र युक्त हो, तो वह महापुण्यतमा होती है।

श्रीरामनवमी-व्रत पालन करने व नहीं करने का फलाफल पालन करने का फल—
मुमुक्षवोऽपि हि सदा श्रीराम-
न त्यजन्ति सुरश्रेष्ठो देवेन्द्रोऽपि विशेषतः॥
सर्वात्मना सर्वे कृत्वैवं नवमी- सर्वपापेभ्यो याति ब्रह्म सनातनम्॥
— (अगस्त्य संहिता २७/३६-३७)
अर्थात जो लोग मुक्ति की कामना करते हैं वे, अधिक क्या समस्त देवता और यहाँ तक कि स्वयं देवराज इन्द्र भी इस श्रीरामनवमी-व्रत का परित्याग नहीं करते हैं। अतः सभी लोग पूर्ण रूप से इस रामनवमी-व्रत का अनुष्ठान कर सभी पापों से मुक्त होकर सनातन ब्रह्म को प्राप्त करते हैं।

नही पालन करने का अफल, यथा—
प्राप्ते श्रीरामनवमी-दिने मर्त्त्यो विमुढ़धीः।
उपोषणं न कुरुते कुम्भीपाकेषु पच्यते॥
— (अगस्त्य संहिता २७/९)
यस्तु रामनवम्यान्तु भुंक्ते मोहाद्विमूढ़धीः।
कुम्भीपाकेषु घोरेषु पच्यते नात्र संशयः॥
— (अगस्त्य संहिता २८/८)

जो मूर्ख व्यक्ति , श्रीरामनवमी का दिन आने पर भी उसमे उपवास नही करता हैं , वह कुम्भीपाक नरक में सड़कर मरता है। मूर्ख लोग मोहवश यदि रामनवमी के दिन भोजन करते हैं तो वे घोर कुम्भीपाक -नरक में सड़ेंगे , कोई संशय नही है।

उक्त चार श्लोकों के द्वारा प्रमाणित होता है कि , मात्र के लिए ही रामनवमी व्रत पालन करना कर्त्तव्य हैं ; नही करने पर नुकसान होता हैं , उसे भी दिखाया गया हैं।

‘श्रीरामनवमी ’-व्रत माहात्म्य

अगस्त्य -संहिता में कहा गया हैं —‘श्रीरामनवमी -व्रत करोड़ों सूर्यग्रहण से भी अधिक है ; उस महापवित्र दिन में भक्ति सहित श्रीरामचन्द्र जी के उद्देश्य से थोडा सा कर्म करने पर भी वह संसार से मुक्ति का कारण बन जाता हैं। जो आलस्य को त्यागकर श्रीरामनवमी के दिन उपवास करते हैं , वे पुनः मातृगर्भ में प्रवेश नहीं करते। बल्कि वे श्रीरामचन्द्रजी के प्रिय भक्त के रूप में गणित होते हैं। मनुष्यों के द्वारा भक्ति सहित एक श्रीरामनवमी व्रतोपवास करने से वे , पूर्व तथा समस्त पापों से विमुक्त हो जाते है। अतएव सभी लोग , हर प्रकार से , शरीर -मन-वाणी के द्वारा , यह श्रीरामनवमी -व्रतोपवास कर , सभी पापों से मुक्त होकर सनातन ब्रह्म श्रीरामचन्द्र जी को प्राप्त होते हैं।

श्रीरामचन्द्र जी के वनवास काल में ‘दण्डक ’-वन में मुनियों ने उनके दर्शन कर जब उन्हें पति -रूप में प्राप्त करने की इच्छा व्यक्त की , तब एक-पत्नी - भगवान् ने , उन कामना को पूरा करने के लिए बहु -वल्लभा -वल्लभ श्रीकृष्णचन्द्र की प्रिय गोपियों के रूप में , उन्हें स्वीकार किया। अतः श्रीरामनवमी - के द्वारा भगवान् श्रीरामचन्द्रजी को संतुष्ट करने पर श्रीकृष्ण -लीला में प्रवेश करने का अधिकार प्राप्त करना बिल्कुल असंभव नहीं है।

श्रीरामनवमी -व्रत -विधि
(हरिभक्तिविलास में द्रष्टव्य)

उल्लिखित हुआ है कि , मध्याह्न योग में पुनर्वसु -नक्षत्र -युक्त होने से यह दिन महापुण्यतमा हो जाता है। हरिभक्तिविलास (१४/१७) से हमें पता चलता है —

शंखपात्रासनार्च्चांच कुर्यादमामेष्वतन्त्रितः।
द्वितीये संपूज्य मध्याह्ने जन्मभावयेत्॥

शंख , पात्र और आसन —प्रत्येक याम (प्रहर) में इन सभी की अवश्य पूजा करेंगे। द्वितीय याम में इस प्रकार पूजा करके मध्याह्न में जन्म चिन्ता करेंगे।

में प्रत्येक याम में किस प्रकार व्रत करना चाहिए उसे बताया गया है। एवं व्रत में क्या -क्या करना कर्तव्य हैं इस सम्बन्ध में भी सम्पूर्ण रूप में ४०वें में वर्णित हुआ है। प्रबन्ध विस्तृत होने के भय से यहाँ उसका उल्लेख नहीं कर रहा हूँ। व्रत पालन के इच्छुक वैष्णव वृन्द , पूज्यपाद श्रील सनातन गोस्वामी के हरिभक्तिविलास के १४वें विलास (अध्याय) में श्रीरामनवमी प्रसंग की विशेष भाव से चर्चा करेंगे।

‘श्रीराम -नवमी ’ व्रतकाल निर्णय

नवमी चाष्टमीविद्धा त्याज्या विष्णुपरायणैः।
नवम्यां वै दशम्यामेव पारणम्॥
— (हरिभक्तिविलास धृत अगस्त्य संहिता २८ /१४)

, विष्णुपरायण वैष्णवगण अष्टमी -विद्धा नवमी का परित्याग कर नवमी में उपवास तथा दशम ही पारण करेंगे। यहाँ दशमी में पारण करने पर जोर देखा जाता है। अर्थात् दशमी में करना जरूरी है इसलिए नवमी का उपवास यदि अष्टमी -विद्धा भी हो , तब भी उसी विद्धा

दिवस में ही वैष्णवों के द्वारा उपवास करना कर्तव्य हैं। किन्तु यदि एकादशी के उपवास में बाधा नही हो तो अष्टमी-विद्धा नवमी मे किसी प्रकार से भी उपवास नहीं होगा।
हरिभक्तिविलास में कहा गया हैं—
दशम्यां पारणायाश्च निश्चयान्नवमीक्षये।
नवमी ग्राह्या वैष्णवैरप्यसंशयम्॥
— (हरिभक्तिविलास १४/९१)
, दशमी में पारण की निश्चयता के कारण नवमी क्षय होने पर वैष्णवगण भी बिना
किसी संशय के उपवास के सम्बन्ध में अष्टमी-विद्धा नवमी को ग्रहण करेंगे।

श्रीरामनवमी-व्रत-विधि
चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी में संयत-चित्त रहकर दूसरे दिन
प्रातःकाल दन्त-धावन कर, यथाविधि स्नान, सन्ध्या आदि समस्त कर्मों को शीघ्र पूरा करना पश्चात् मंदिर में भगवान् के समक्ष व्रतोपवास-पालन का संकल्प ग्रहण करेंगे— “उपोष्या नवमी त्वद्य यामेष्वष्टासु राघव। प्रीतो भव त्वम्भोः संसारात् त्राहि मां हरे॥” हे राघव, आज मैं आठ-प्रहर नवमी का उपवास करूँगा। इस व्रत के द्वारा आप
मेरे प्रति प्रसन्न होंवे। हे श्रीहरि मुझे संसार सागर से मुक्त करें।
बाद सपार्षद भगवान् श्रीरामचन्द्रजी के श्रीविग्रह या चित्रपट को नाना प्रकार के पत्र-पुष्प से सजाकर, श्रीराम नवमी व्रत-माहात्म्य एवं दिव्य रामकथा, भक्तों के साथ श्रवण, कीर्तन और स्मरण करते-करते मध्याह्न (दोपहर १२ बजे) भगवान् की जन्म-लीला को स्मरण करेंगे।

जन्म-भावन-विधि—
“उच्चस्थे ग्रहपंचके सुरगुरौ सेन्द्रौ नवम्यां तिथौ
लग्ने कर्कटके पुनर्वसुयुते मेघं गते पूषणि। निदर्ग्धुं निखिलः पलाश-समिधो मेध्यादयोध्यारणे- यत्किंचिदेकं महः॥”
“चैत्र-शुक्ला नवमी मे जब सूर्य, मंगल, बृहस्पति, शुक्र तथा शनि ये पाँच
ग्रह अपने-अपने उच्च-स्थान में अवस्थित थे, बृहस्पति, चन्द्र के साथ कर्कट-राशि
में स्थित थे और सूर्य मेष-राशि गत थे, पुनर्वसु-नक्षत्र-युक्त उस समय अद्भुत गुण-रूप-विभूति- अवर्णनीय मुख्यतेज भगवान् श्रीरामचन्द्र समग्र राक्षस-कुल
के ढेर को जलाने के लिए अति पवित्र अयोध्या रूपी यज्ञकाष्ठ से आविर्भूत हुए
थे।”
इस प्रकार की विभिन्न स्तव- के द्वारा भगवान् की महिमा का संकीर्तन करते
पूजा-अभिषेक, पुष्पांजलि और भोग निवेदन करेंगे। आलस्य त्यागकर निरन्तर प्रत्येक प्रहर भगवान् को बार- अर्पण करते हुए दिव्य भगवत्-कथा में दिन-रात व्यतीत करेंगे।
दिन नित्यकर्म सम्पन्न कर यथाविधि भगवान् श्रीरामचन्द्र जी का अर्चन कर
उनकी उनकी जय- देते हुए भक्तों के साथ महाप्रसाद सेवन (भोजन) करेंगे।

श्रीनृसिंह चतुर्द्दशी
“प्रह्लाद- भक्ताविद्याविदारणम्।
वन्दे पारीन्द्रवदनं हरिम्॥”
— श्रीश्रीधर स्वामी
‘जो प्रह्लाद के हृदय में घनीभूत आनन्द के रूप में विराजमान हैं एवं भक्तों की अविद्या का नाश करने वाले हैं, शरत्कालीन पूर्णचन्द्र के समान अंग-कान्ति है, उन सिंहवदन श्रीहरि की वन्दना करता हूँ।’

वैशाख शुक्ला चतुर्दशी महातिथि की संध्या मे , प्रह्लाद के प्रति अत्याचार नहीं सह पाने के कारण परमपुरुष श्रीहरि तत्काल त्रास -सृष्टिकारी अतिभीषण शब्द सबको चौंकाते हुए लीला - में स्तम्भ से आविर्भूत हुए थे। —(हरिभक्तिविलास धृत आगमवाक्य)। अतः 'नृसिंह -चतुर्द्दशी ' का आशय विशेष रूप से प्रह्लाद -पालक तथा हिरण्यकशिपु -नाशक—श्रीनृसिंहदेव के आविर्भाव को ही समझा जाता है। हालांकि पद्म पुराण आदि में विविध वर्ण , आकृति और चेष्टा - भगवान् नृसिंहदेव का वर्णन देखा जाता है।

श्रीनृसिंह -चतुर्द्दशी व्रतोपवास अवश्य पालनीय

बृहन्नारसिंह -पुराण में प्रह्लाद को स्वयं श्रीनृसिंहदेव के श्रीमुख से ही इस का वर्णन हुआ है —'हे प्रह्लाद ! संसार भय से ग्रस्त मानवों को प्रतिवर्ष ही इस अति गोपनीय व्रत -राज (व्रतों के राज) चतुर्द्दशी - का अनुष्ठान करना चाहिए। मेरे इस विशेष दिन को जानकर भी जो व्यक्ति उल्लंघन करता है , उसे चन्द्र -सूर्य के रहने तक नरक में वास करना पड़ता है। मानव मात्र ही इस व्रतानुष्ठान के अधिकारी हैं , विशेष रूप से मेरे भक्तगण और मेरे प्रति निष्ठायुक्त व्यक्तियों के यह अवश्य पालनीय है। '

श्रीनृसिंह -चतुर्द्दशी का व्रत -माहात्म्य

उक्त पुराण में ही इस व्रतोपवास के माहात्म्य -प्रसंग में कहा गया है कि , प्राचीन काल में अवन्ती -नगर मे वसुशर्मा नाम के एक वेदज्ञ ब्राह्मण रहते थे। किसी प्रकार के दुष्कर्म में प्रवृत्त नहीं होकर वे नियमपूर्वक समस्त प्रकार की वैदिक में रत रहते थे। इसलिए देवतागण उन पर अत्यधिक संतुष्ट थे। दूसरी ओर सुशीला नाम की उनकी पत्नी सदाचार एवं पातिव्रत्य -धर्म में सुविदिता थीं। उनके क्रमशः पाँच हुए —वे सभी पितृ -भक्त , सदाचार -सम्पन्न और सुविद्वान थे।

उनमें से 'वसुदेव ' नामक सबसे छोटा पुत्र ही बिगड़ा हुआ निकला। वह एक वेश्या के प्रति आसक्त होकर धीरे -धीरे मद्यपान तथा विभिन्न पाप कर्मों में लिप्त लगा। इसलिए उसके द्वारा किसी प्रकार का अध्ययन भी संभव नहीं हो पाया। बाद में उस विलासिन ही उसका निवास स्थल बन गया। एक दिन किसी कारण से दोनों में बहुत झगडा हुआ और दोनों ने क्षुब्ध होकर बिना कुछ खाये सारी रात जागकर बिता दी। सौभाग्य से उसी दिन भगवान् जी की आविर्भाव -तिथि थी। अतः अज्ञानता के कारण भी उस बहुत पुण्यवान व्रतराज का अनुष्ठान होने से उनकी देह -शुद्धि हो गयी। उक्त वेश्या भी अज्ञानता के वश में उस व्रत को करने के कारण त्रिभुवन में सुखचारिणी , यहाँ तक कि श्रीनृसिंहदेव की प्रियपात्री तक बन गयी। तथा वह वेश्या - वसुदेव भगवान् श्रीनरहरि के प्रति उत्तमा भक्ति लाभ कर , परवर्त्ती जन्म में प्रह्लाद नाम से विश्व - हुआ।

इस व्रत को करके ही देवगण देवलोक में आनन्द भोग करते हैं। ब्रह्मा इसी उत्तम व्रत के प्रभाव से ही चराचर जगत की सृष्टि करते हैं। महेश्वर भी इसी व्रत का अनुष्ठान कर श्रीनृसिंहदेव के अनुग्रह से त्रिपुर (मयदानव द्वारा निर्मित स्वर्ण , चाँदी और लोहे के तीन नगर) विनाश करने में सफल हुए थे। अन्यान्य बहुत देवता , प्राचीन ऋषि और महामति राजाओं ने इस व्रत के प्रभाव से अपने -अपने कार्य में सिद्धि लाभ की हैं। इस व्रत की महिमा त्रिभुवन में व्याप्त हैं।

इस व्रत का अनुष्ठान करने से फिर कभी संसार में नहीं आना पडता है ; फिर को भगवद् -भक्ति -युक्त पुत्र की प्राप्ति , दरिद्र -व्यक्ति को धन की प्राप्ति , तेजस्कामी को तेज की प्राप्ति , आयुष्कामी को आयु -लाभ, राज्याकांक्षी को राज्य - है। स्त्रियों के लिए यह व्रत चरित्रवान् पुत्र -दायक, सौभाग्यजनक , अवैधव्यकर (जिससे विधवा नहीं होना पड़ता है), पुत्रशोकनाशक , धन-धान्यप्रद और पतिप्रियकर है। सभी नर -नारी ही इस व्रत के प्रभाव से सुख लाभ तथा अन्त में मुक्ति लाभ किया करते हैं।

इस व्रत की इतनी महिमा है कि, भगवान् श्रीहरि या शिव-ठाकुर भी इसका कीर्तन शेष नही कर सकते हैं। ब्रह्मा यदि आजीवन चारो मुखों से कीर्तन करते हैं तो भी इस व्रत की महिमा पूरी करने में समर्थ नही होते। इस व्रतानुष्ठान के प्रभाव से पापासक्त व्यक्ति की मति भी गलत पथ पर नहीं जाती है। महात्माओं को इस व्रत का पालन करने पर हजारों-द्वादशी का फल लाभ होता है। भक्तिपूर्वक इस व्रत के विषय में श्रवण करने से ब्रह्म-हत्या जनित पाप नष्ट हो जाते हैं और कीर्तन में सारे अभीष्ट प्राप्त होते है।

श्रीनृसिंह-चतुर्द्दशी व्रतोपवास का काल निर्णय ‘स्वाती’-नक्षत्र, शनिवार एवं सिद्धियोग—इन सबके समन्वय से श्रीनृसिंह-चतुर्द्दशी-व्रत होने पर वह करोड़ों हत्या से जनित पाप को विनष्ट कर देता हैं। फिर मंगलवार को चतुर्द्दशी होने पर वह व्रतानुष्ठान समस्त पापों को नष्ट करता हैं। उपर बताये गये समस्त योग नहीं होने पर भी केवल मात्र शुद्धा चतुर्दशी को
ही उपवास करना होगा। किन्तु त्रयोदशी-विद्धा चतुर्द्दशी को उक्त समस्त योग होने पर उस दिन वैष्णवों को उपवास नहीं करना चाहिए।

श्री नृसिंह-व्रतोपवास-विधि श्रीनृसिंह चतुर्द्दशी के पहले दिन, यथाविधि संयमित रहकर, व्रत के दिन
प्रातः दंत-धावन, स्नान, सम्पन्न कर भगवान् श्रीनृसिंहदेव को स्मरण करते हुए व्रत के नियम ग्रहण करेंगे—
(दंत-धावन = दातुन, मंजन आदि से दाँत और मुँह का भीतरी भाग साफ करने की क्रिया।)
“श्रीनृसिंह महाभीम दयां कुरु ममोपरि। अद्याहं ते विधास्यामि व्रतं निर्विघ्नतां नय॥” , ‘हे श्रीनृसिंहदेव, आज मैं तुम्हारा व्रत पालन करूँगा। हे महाभीम, तुम
पर दया करो—इस व्रत को निर्विघ्न रूप से सम्पन्न कराओ।’ इस प्रकार का संकल्प ग्रहण कर, व्रती व्यक्ति, निराहार रहकर, व्यर्थ-वाक्य, पापियों के साथ वार्तालाप, स्त्री के साथ बातचीत, द्यूतक्रीड़ा (जुआ) का वर्जन करेंगे। भगवान्‌ के श्रीविग्रह या चित्रपट को सुन्दर रूप से सजाकर उन्हें पुष्पांजलि अर्पण कर, उनके समक्ष शास्त्रों से व्रत-महिमा, पवित्र नृसिंह-कथा का श्रवण-कीर्तन तथा नाम-संकीर्तन करेंगे।
प्रकार सारा दिन बिताकर शाम को जिस समय भगवान् का स्तम्भ से आविर्भाव
हुआ था, वह समय उपस्थित होने पर नाम-संकीर्तन तथा दिव्य स्तव-स्तुति करते-करते विशेष पूजाभिषेक करेंगे। भगवान् के चरणों में पुष्पांजलि, समय-अनुसार-उपलब्ध द्रव्यों के द्वारा विशेष भोगराग निवेदन, आरति आदि यथाविधि सम्पन्न करेंगे। इसके बाद नृत्य, गीत, वाद्य आदि के साथ नाम- तथा भगवत्‌-कथा, श्रवण-कीर्तन कर रात्रि- करेंगे। प्रातः स्नान कर यथानियम भगवान् का अर्चन करेंगे। इसके बाद श्रेष्ठ और ब्राह्मणों को भोजन कराकर भगवान् का चिन्तन करते-करते परिजनों के साथ भोजन करेंगे।

श्रीबलदेव पूर्णिमा

श्रीहरिभक्तिविलास ग्रंथ आदि में श्रीबलदेव प्रभु के सम्बन्ध में व्रत उल्लिखित नही होने पर भी गौड़ीय महाजनों के अनुभव और विचार अनुसार श्रावण मास की पूर्णिमा में श्रीबलदेव प्रभु के आविर्भाव के उपलक्ष में श्रीबलदेव - व्रतोपवास साधक - को अवश्य करना चाहिए। श्रीबलदेव प्रभु ही श्रीगौर अवतार में परम श्रीमन् नित्यानन्द -प्रभु है ; उनकी कृपा के बिना श्रीगौरहरि तथा श्रीराधाकृष्ण के चरण कमल की प्राप्ति बिल्कुल ही असम्भव है —

“ बिने भाई , नाई , करि ’ धर निताइयेर पाय। ” (के बिना भाई , राधाकृष्ण को पाना संभव नही है , दृढ़ होकर नित्यानन्द जी के चरणों को पकड़ो)।

अतः गौड़ीय महाजनों के निर्देश अनुसार साधक - अति यत्नपूर्वक श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु तथा श्रीबलदेव प्रभु के आविर्भाव के समय व्रतोपवास पालन कर , उनकी अहैतुकी कृपा प्रार्थना करते हैं।

श्रीबलदेव -तत्त्व एवं महिमा

व्यासावतार श्रीश्रील वृन्दावन दास ठाकुर ने अपने ‘श्रीचैतन्य भागवत ’- ग्रंथ में श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रीबलदेव प्रभु की महिमा का विशेष रूप से कीर्तन किया है। जगद्गुरु श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त प्रभुपाद जी ने उक्त ग्रंथ के ‘गौड़ीय भाष्य ’ में उस समस्त महिमा की जिस प्रकार व्याख्या की है , उसकी चर्चा करने पर श्रीबलदेव -तत्त्व , उनका माहात्म्य तथा उनकी आविर्भाव तिथि की महिमा आदि को अनुभव करना संभव होगा।

‘स्वयंरूप ’ श्रीगौरकृष्ण के अभिन्न ‘स्वयंप्रकाश ’ श्रीनित्यानन्द -बलदेव प्रभु ही ‘मूल -संकर्षण ’ हैं। वे ही —‘संकर्षण ’ एवं ‘कारणाब्धिशायी ’-‘गर्भोदकशायी ’-‘क्षीराब्धिशायी ’ तीनों पुरुषावतार तथा सहस्त्र फन युक्त ‘अनन्तदेव ’ या ‘शेष ’, इस विष्णुतत्त्व -वर्ग के मूल आकर (आधार) या अंशी हैं।

“श्रीनित्यानन्द-संकर्षण प्रभु स्वयं विष्णु-परतत्त्व वस्तु हैं, अतः
समान धर्मवशतः ‘स्वयंरूप’ श्रीकृष्ण के ही प्रकाश- हैं। अर्थात् समग्र चित्सत्ता या शुद्ध-सत्त्व का प्रकाश करने वाली ‘संधिनी’-शक्ति के अधिष्ठातृ- देवता ही—श्रीनित्यानन्द-बलराम हैं।”
“ आगे बलरामेर स्तवन। करिले से-मुखे स्फुरे चैतन्य-कीर्तन॥” (चैतन्य भागवत आदि १/१४) (सर्वप्रथम बलराम जी का स्तव करने पर उसी मुख से चैतन्य-कीर्तन स्फुरित होता है)। “सात्त्वत- के विग्रह स्वरूप श्रीमन् नित्यानन्द-बलराम जी के अर्थात् नाम-गुणानुकीर्तन के फल से ही जीव का अविद्या जनित अचेतन-‘उपाधि’ या बंधन नष्ट होता है। तब शुद्ध-जीव श्रीनित्यानंद को गुरु मानकर उन्हीं के आनुगत्य में अप्राकृत सेवोन्मुखी जिव्हा से अपने अभीष्टदेव श्रीकृष्णचैतन्य का कीर्तन किया करते हैं।”
“जो मोक्ष के इच्छुक सभी व्यक्ति, से श्रीअनन्तदेव का गुणचरित श्रवण कर पूर्ण रूप से उनका ध्यान करते हैं, उनके सत्त्व-रज-तमो-गुणमय हृदय में प्रविष्ट होकर अनादि काल से संचित कर्मवासना-जनित संसार को शीघ्र ही नष्ट कर देते हैं।”
“ निताई चाँदेर करुणा हइबे। संसार-वासना मोर कबे तुच्छ हबे॥” (फिर कब
की करुणा होगी। संसार वासना मेरी कब समाप्त होगी)। —(श्रीनरोत्तम ठाकुर) “शिव के अन्तर्यामी हैं—श्रीसंकर्षण प्रभु! पार्वती आदि के साथ महेश (शंकर जी), श्रीसंकर्षण प्रभु की अनेक अभीष्ट-देवता के रूप में नित्यकाल स्तव आदि द्वारा आराधना करते हैं। (—भागवत ५/१७/१६-२४ द्रष्टव्य) अतएव जो मूल-संकर्षण श्रीनित्यानन्द-बलदेव प्रभु के चरित्र का श्रवण या कीर्तन करते हैं, महेश तथा पार्वती उन्हें अपने आराध्य देवता के सेवक समझकर उनके प्रति संतुष्ट होते हैं।”
“जो बलदेव को विषय-विग्रह- अर्थात् श्रीविष्णु- नही मानते हुए उनके भोक्तृत्व को अस्वीकार करने का प्रयास करते हैं, वे अनभिज्ञता के दोष में दोषी होते हैं।” श्रीमद्भागवत के १०वें स्कन्ध के ३४वें एवं ६५वें अध्याय में तथा ५वें स्कन्ध १७वें एवं २५वें अध्याय में छठे स्कन्ध के १६वें अध्याय में समस्त जीवों के सेव्य-तत्त्व श्रीबलराम अथवा संकर्षण की महिमा व्यक्त हुई है। उसके प्रति जो लोग उदासीन रहते हैं, वे भी भक्ति-मार्ग में उन्नति नहीं कर सकते। वे अपने मनोधर्म से उत्पन्न मायिक विचारों के कारण अप्राकृत विष्णु-तत्त्व के आकर (आधार)-स्वरूप श्रीबलराम या संकर्षण-तत्त्व में प्रवेश करने में असमर्थ होते हैं।” —(श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती प्रभुपाद)।
‘संधिनी’-शक्ति के अधिष्ठाता श्रीबलदेव-प्रभु से ही श्रीकृष्ण के समस्त सेवा-उपकरण और सकल ‘सेवक’-तत्त्व का प्रकाश है। अतः उनकी कृपा के बिना श्रीकृष्ण की सेवा में नियुक्त हो पाना असंभव है। फिर “नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः”— ‘चिद्- व्यक्ति भगवान् को प्राप्त नहीं कर सकता है’—इस उपनिषद् वाक्य में देखा जाता है कि, जीव चिद्बल के अभाव में ही माया के द्वारा वश-योग्य हो जाता है। अतः सुबुद्धिमान व्यक्ति गुरुतत्त्व के आधार-स्वरूप तथा विष्णु- तत्त्व के अंशी-स्वरूप और सर्व-चिद्बल के आधार-स्वरूप उन बलदेव प्रभु के शरणागत होते हैं और उनसे ही वे चिद्बल में संचारित होकर गुणमय माया को अतिक्रम कर ‘निर्गुण’- लाभ करते हैं तथा अभीष्ट भगवद् सेवा प्राप्त कर धन्यातिधन्य होते इसलिए भजन-चतुर व्यक्ति मात्र ही बलदेव-पूर्णिमा में आदर सहित व्रतोपवास पालन करते हुए श्रीबलदेव प्रभु के संतोष विधान में व्रती होते हैं।

श्रीबलदेव जी की आविर्भाव-लीला
‘वैवस्वत’- के अठ्ठाइसवें चतुर्युग में द्वापर तथा कलि के संधि-क्षण में, भगवान् श्रीबलराम तथा बीसवें अवतार भगवान् श्रीकृष्ण ने वृष्णिवंश (यदुवंश) में अवतीर्ण होकर पृथ्वी का भार हरण किया था। श्रीबलदेव जी ने पहले देवकी देवी के

गर्भ में आविर्भूत होकर सात मास अवस्थान किया था। तब स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने योगमाया को आदेश किया—
“ जठरे गर्भं शेषाख्यं धाम मामकम्। सन्निकृष्य रोहिण्या उदरे सन्निवेशय॥” — (भागवत १०/२/८)
, ‘देवकी के गर्भ में ‘शेष’ नामक मेरा जो अंश अवस्थित है, उसे आकर्षण कर रोहिणी के गर्भ में स्थापित करो।’ श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने इस श्लोक की व्याख्या में बताया है कि,—‘मेरा अंश बलदेव हैं। उन्हें ‘शेष’ नाम से जाना जाता है, चूंकि वे अपने ही अंश ‘शेष’ के द्वारा पृथ्वी को धारण करते हैं। रोहिणी देवी इस बलदेव-स्वरूप की नित्य माता हैं। मैं देवकी के गर्भ में प्रविष्ट होऊँगा, वे पहले ही गर्भ में प्रवेश कर गये और शैय्या-आसन-स्वरूप अपने अंश ‘शेष’
को वहाँ स्थापित कर उन्होंने स्वयं अपनी माता रोहिणी के गर्भ मे प्रवेश किया।’ योगमाया ने श्रीहरि के आदेश से देवकी देवी के उस सप्तम गर्भ के सप्तम मास
में (माघ मास में) उक्त गर्भ को श्री रोहिणी देवी के गर्भ में स्थानांतरित किया। श्रीरोहिणी देवी, उस समय कंस के भीषण अत्याचार से पीड़ित—श्रीवसुदेव महाराज के द्वारा प्रेरित होकर, गोकुल के नन्दभवन में अवस्थान कर रही थीं। उस समय वे भी सप्तम मास की गर्भवती थीं। एक दिन आधी रात को गहरी नींद के दौरान स्वप्न में गर्भ को गिरते हुए देखने पर वे शोक करने लगीं। तब योगमाया ने उनसे कहा,—हे शुभे, दुःख मत करो, का गर्भ आकर्षित होकर तुम्हारे गर्भ में स्थापित हुआ है। तुम्हारे इस पुत्र का नाम होगा संकर्षण।
श्रीबलदेव जी, श्री रोहिणी देवी के गर्भ में सात महीने तक अवस्थान कर, कुल
चौदह मास मे गर्भ-वास के बाद श्रीकृष्ण के अग्रज (भाई) रूप में आविर्भूत हुए।
श्रीचैतन्य-चरितामृत आदिलीला (५/१४९-१५४) में श्रीबलदेव जी की इस अग्रज-भूमिका का वर्णित हुआ है—
“नित्यानन्द-स्वरूप पूर्वे हञा लक्ष्मण।
लघुभ्राता हञा करे रामेर सेवन॥
रामेर चरित्र सब,—दुःखेर कारण।
स्वतंत्र-लीलाय दुःख सहेन लक्ष्मण॥
निषेध करिते नारे, छोट भाइ।
मौन धरि’ रहे लक्ष्मण, दुःख पाई॥
कृष्ण- ज्येष्ठ हैइला सेवार कारण।
कराइल नाना सुख-आस्वादन।
राम-लक्ष्मण—कृष्ण-रामेर अंश-विशेष।
अवतारे-काले दोंहे दोहाँते प्रवेश॥
अंश लञा ज्येष्ठ-कनिष्ठाभिमान।
अंशांशी-रूपे शास्त्रे करये व्याख्यान॥” (श्रीनित्यानन्द-स्वरूप, युग मे लक्ष्मण के रूप में आये। छोटे भाई बनकर राम
की बहुत सेवा की। श्रीराम का सम्पूर्ण चरित्र दुःख से भरा हुआ है एवं स्वतन्त्र लीला ने उन सभी दुःखों को सहन किया। छोटे भाई होने के कारण वे श्रीराम की क्रियाओं
को निषेध नहीं कर सकते थे, मन ही मन दुख पाकर चुप रह जाते थे। (अपनी इसी) सेवा के कृष्णावतार में लक्ष्मण बड़े भाई बनकर आये और श्रीकृष्ण को अनेक प्रकार की सेवा कर उन्हें सुख का आस्वादन कराया। राम-लक्ष्मण—कृष्ण-बलराम के अंश विशेष हैं। श्रीकृष्ण अवतार के समय श्रीकृष्ण में राम और बलराम में लक्ष्मण प्रवेश
कर गये। उसी अंश को लेकर ज्येष्ठ-कनिष्ठ अभिमान विद्यमान रहता है, शास्त्र अंशी एवं अंश के रूप में व्याख्या करते हैं)।
श्रीजीव-गोस्वामी द्वारा रचित ‘श्रीगोपाल-चम्पू’-ग्रंथ में श्रीबलदेव जी
के आविर्भाव- का इस प्रकार से वर्णन हुआ है—“अत योगमाया रोहिण्याः साप्तमासिक स्त्रस्तं विधाय देवक्याः तद्विधं तं (गर्भं) तस्यां नियोजमास। ततश्च लब्ध

सर्वसमय - चतुर्दशे मासि श्रावणतः प्राक् श्रवणर्क्षे समस्त सुख -रोहिणी रोहिणी गुणगणनया सुषमं सितसुषमं सुतं सुषाव॥ ”

योगमाया ने रोहिणी देवी के सप्तम मास के गर्भ को नष्ट कर देवकी देवी के सप्तम मास के गर्भ को उसमें स्थापित किया। इसके बाद समस्त शुभसमय -सूचक चौदहवें मास में , श्रावण मास के प्रथम -अर्द्ध में , श्रवण -नक्षत्र -युक्त समय (पूर्णिमा) में समस्त सुखलाभ -कारिणी रोहिणी ने गुणगण -समन्वित परम सुन्दर श्वेत वर्ण के एक पुत्र को प्रसव किया (जन्म दिया)।

“शुभ्रांशुवक्त्रं तड़िदालि -लोचनं , नवाब्दकेशं शरदभ्र -
भानुप्रभावं तमसूत रोहिणी , तत्तच्च युक्तं स हि दिव्यबालकः॥ ”

(गोपाल चम्पू पूर्व ३ /७०)

के गर्भ से पुत्र उत्पन्न हुए , उनका चन्द्र के समान श्रीमुखमण्डल , विद्युतपुंज के समान नयनज्योति , काले बादलों के समान केशराशि , शरद काल के मेघ के समान श्वेत वर्ण देह , सूर्य के समान तेज था। ये समस्त ही उपयुक्त हैं , क्योंकि वे तो दिव्यबालक (मूलसंकर्षण) हैं।

इस श्रावण - के बाद जो कृष्णपक्ष आरम्भ हुआ था , उसी की अष्टमी तिथि को पूर्णचन्द्र श्रीकृष्णचन्द्र , एक साथ श्रीयशोदा मैया तथा श्रीदेवकी देवी के गर्भ से अष् आविर्भूत हुए थे। श्रीबलदेव जी श्रीकृष्ण से मात्र सात दिन बड़े हैं —इसलिए दोनों का गर्गमुनि द्वारा एक ही साथ नामकरण , नन्दालय -आंगन में घुटनों के बल चलने की लीला आदि देखी जाती है।

श्रीबलदेव पूर्णिमा व्रत -विधि

एकादशी -व्रत के पहले दिन , व्रत के दिन तथा अगले दिन में एकादशी के विधि -विधान जिस प्रकार पालनीय हैं , उसी प्रकार से ही इस पूर्णिमा के पिछले दिन में , व्रत के दिन में तथा दूसरे दिन में भी समस्त विधियों को मानना होगा। व्रत के दिन , सुबह किये जाने वाले नित्य कर्म और सन्ध्या -वन्दन आदि के बाद उपवास के साथ श्रीबलदेव -प्रभु के सुसज्जित चित्रपट के समक्ष उन्हें पुष्पांजलि प्रदान कर , इस प्रकार से उपवास का संकल्प लेंगे , यथा —‘हे बलदेव प्रभु , हे कृपामय , आज तुम्हारी आविर्भाव -तिथि के उपलक्ष में व्रतोपवास करूँगा। तुम मुझे यथाशक्ति कर नित्य भगवत् सेवा में नियुक्त करो। ’ इसके बाद बलदेव -महिमा , उनकी आविर्भावादि -लीला श्रीमद्भागवत , श्रीचैतन्य -भागवत , श्रीचैतन्य -चरितामृत इत्यादि अनुष्ठान करना कर्त्तव्य है। इस प्रकार शाम को यथानियम श्रीबलदेव प्रभु को विशेष पूजाभिषेक , भोगराग और पुष्पांजलि निवेदन करेंगे। नाम -संकीर्तन आदि के रात्रि जागरण करते हुए सुबह उनकी अर्चन के बाद श्रेष्ठ वैष्णवों को महाप्रसाद भोजन कराकर स्वयं भोजन करेंगे।

श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी
‘जन्माष्टमी’-शब्द श्रीकृष्ण के आविर्भाव दिवस के लिये प्रयुक्त होता
है। सिंह राशि में सूर्य, वृष राशि में चन्द्र, रोहिणी-नक्षत्र में, बुधवार को, भाद्र मास की कृष्णाष्टमी- में आधी रात को करुणा के सागर स्वयं भगवान् अपनी इच्छा आविर्भूत होते हैं। सर्वमंगलमंगला वह तिथि सभी मनुष्यों के लिए नित्य पालनीय है।
जागतिक विचार में ‘जयन्ती’-शब्द को किसी प्रसिद्ध व्यक्ति के जन्म के सम्बन्ध में उपयोग करते हुए देखा जाता है। वास्तव में श्रावणी कृष्णपक्ष की अष्टमी में रोहिणी-नक्षत्र का योग होने पर ही उक्त सर्वपापहारिणी उस तिथि को ‘जयन्ती’ कहा जा सकता है। “रोहिणी च यदा कृष्णपक्षेऽष्टम्यां द्विजोत्तम। ‘जयन्ती’ नाम सा प्रोक्ता सर्वपापहरा तिथिः॥” (विष्णु-धर्मवाक्य)। इस विशेष तिथि के ‘जयन्ती’ नाम से सुपरिचित होने का कारण यह है कि, सभी कारणों के कारण स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र इस तिथि को अवलम्बन करके ही भूलोक में अवतीर्ण होते हैं। “जयं पुण्यंच कुरुते जयन्ती तेन सा स्मृता”—(ब्रह्मवैवर्त्त पुराण)। यह जन्माष्टमी (तिथि), व्रत पालन करने वाले को जय तथा पुण्य प्रदान करती है, इसीलिए इसे ‘जयन्ती’ नाम दिया गया है। अतः यह ‘जयन्ती’-शब्द केवल श्रीकृष्ण के जन्माष्टमी-प्रसंग में ही प्रयोग किया जाता है।
श्रीकृष्णचन्द्र ने अपने अचिन्त्य-शक्ति के बल पर गोकुल में माता यशोदा
के गर्भ से जिस प्रकार गोपाल के रूप में जन्म ग्रहण किया, उसी प्रकार ही एक ही समय में माता देवकी के गर्भ से चतुर्भुज वासुदेव के रूप में आविर्भूत हुए। — ‘गर्भकाले त्वसम्पूर्णे अष्टमे मासि ते स्त्रियौ। देवकी च यशोदा च सुषुवाते समं तदा॥’—(हरिवंश) गौड़ीय भक्तों के लिए जन्माष्टमी-तिथि—विशेष रूप से यशोदानन्दन श्रीकृष्ण की जन्म-तिथि के रूप में ही विशेष आदरणीय है।

श्रीजन्माष्टमी-व्रत की उत्पत्ति
भविष्योत्तर-पुराण में श्रीकृष्ण-युधिष्ठिर-संवाद मे इस व्रत की उत्पत्ति की कथा वर्णित हुई है। महाराज युधिष्ठिर का प्रश्न—हे अच्युत, मुझे

जन्माष्टमी-व्रत का विस्तार से वर्णन कीजिये—किस समय इस व्रत की उत्पत्ति हुई, इसका फल क्या है तथा इसकी विधि क्या है?
इसके उत्तर में श्रीकृष्ण कहने लगे,—मथुरा में रंग-स्थल में कंस का वध
होने पर, मल्ल-युद्ध समाप्त होने पर ‘कुकुर’ वंश तथा ‘अंधक’ वंश के लोग सभी देवकी देवी श्रीवसुदेव जी के पास गये और बहुत आनन्द के साथ वे दोनों आपस में कई दिनों के बाद मिले। उन आत्मीय-परिजनों से घिरे देवकी-वसुदेव के पास जब हम पहुँचे तो उन दोनों ने मुझे और बलभद्र को गोद में बिठाकर रोना शुरु कर दिया। श्रीवसुदेव जी रोते- स्वर में कहने लगे,—“आज मेरा जन्म सफल हो गया, मुझमें प्राण लौट आये,
आज अपने दोनों पुत्रों के साथ मेरा मिलन हुआ है।” तब वसुदेव-देवकी जी आनन्द को देखकर सब लोग भी अत्यन्त प्रफुल्लित हो उठे। प्रसन्नता से वे कहने लगे—
हे जनार्दन, आनन्द आजही सम्पूर्ण रूप से उदय हुआ है। दुष्ट कंस का वध हो
गया है। अतः हम सब को आज बहुत आनन्द हो रहा है। आप हमारे प्रति प्रसन्न होंवे। हे वैकुण्ठ! जिस दिन देवकी माता ने आपको प्रसव किया (जन्म दिया) था, वह दिन हमें बता दिजिए। हम उस दिन को महोत्सव के रूप में पालन करेंगे। हे केशव, हम आपके चरणों में शरणागत हैं, अतः हम पर प्रसन्न होइये।
लोग जब इस तरह से कहने लगे तो पिता वसुदेव जी, आनन्द से रोमांचित होकर मेरी और बलभद्र की ओर देखकर कहने लगे,—‘तुम सब इन समस्त लोगों की इच्छा को पूर्ण करो।’ तब मैंने पिता के आदेश पर जन्माष्टमी व्रत के विषय में बताया, — सूर्य सिंह राशि में अवस्थित होने पर, भाद्र मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी में मेघाच्छन्न (बादलों से घिरी हुई) अर्द्ध-रात्रि में, चन्द्र वृष-राशि में ‘रोहिणी’ नक्षत्रयुक्त होने पर, मैंने, वसुदेव द्वारा देवकी से अपनी इच्छा अनुसार जन्म ग्रहण किया। मेरे इस जन्मदिवस के व्रत को ८ वर्ष से ८० वर्ष तक के सभी लोग पालन करें—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और यहाँ तक कि, अन्य धर्मों के सभी लोग भी इस व्रत का अनुष्ठान करें। देवी भगवती (योगमाया) का भी उसी दिन महोत्सव पालन करें। यह जन्माष्टमी-व्रत पहले मथुरा में, बाद में समस्त जगत में प्रचारित होगा। यह सुनकर लोगों ने तब से जन्माष्टमी-व्रत पालन करना आरम्भ कर दिया।

श्रीजन्माष्टमी-व्रत का माहात्म्य भविष्योत्तर-पुराण में, श्रीकृष्ण-युधिष्ठिर संवाद में, श्रीजन्माष्टमी- का माहात्म्य वर्णित हुआ है,—‘हे पाण्डव! जिस स्थान पर मानवगण वर्णमाला में लिखित मेरे नाम या चित्रपट में अंकित मेरी श्रीमूर्ति को चन्दनचूर्ण आदि से सजाकर तथा सर्वालंकारो से भूषित कर मेरे पुण्य-जन्मदिन में सर्वदा पूजा करते हैं, उस देश में कभी भी शत्रु सेना का भय नहीं रहता, यथासमय वर्षा होती है तथा अति-वृष्टि (अधिक वर्षा), अना-वृष्टि (सूखा), कीट-पतंग, चूहे इत्यादि के भय की आशंका भी नहीं रहती है। देवकी देवी का चरित्र और मेरे जन्म का वृत्तांत जिस घर में लिखा रहता है और पूजित होता है, उस स्थान पर सभी प्रकार की समृद्धि का समागम होता है और किसी प्रकार से उपद्रव का भय नहीं रहता। किसी प्रकार से भी, व्यक्ति यदि जन्माष्टमी-व्रत पालन करता है तो निःसन्देह उसे विष्णु लोक प्राप्त होता है। हे पार्थ! नन्द-गोप को आनन्द प्रदान करने वाली वह जन्माष्टमी तिथि जीवों को भी परमानन्द प्रदान करती है, उनके समस्त पाप उसी क्षण हर लेती है। अतः उस दिन नन्द-यशोदा के साथ उनके पुत्र की पूजा करने पर विष्णु के परमपद लाभ होते है।’
‘ के दिन भोजन करने से त्रिभुवन के समस्त पापों का ही भोजन हुआ करता है।
तिल मात्र भी पेट भरने से यमदूतों के द्वारा वह व्यक्ति तिल-तिल कर यातना प्राप्त करता है। द्वादशी-व्रतानुष्ठान करने पर भी उसका नरक से उद्धार नहीं है।’ जयन्ती-व्रत (जन्माष्टमी-व्रत) के प्रति जो विमुख हैं, उन्हें ब्रह्म-हत्या, सुरापान, गो-हत्या, स्त्री-हत्या इत्यादि महापापों में लिप्त होना पड़ता

है—इस लोक तथा परलोक, किसी भी लोक में उसे सुख नहीं मिलता है। जो नारी प्रति वर्ष इस परम पवित्र व्रत का पालन नहीं करती हैं, वह साँप बनकर वनवास करती है और इस व्रत के प्रति विमुख पुरुष, क्रूर-राक्षस के रूप में जन्म ग्रहण करता है। श्रीजन्माष्टमी- को त्यागकर यदि कोई अन्य व्रत करता है तो उस- व्रत का कोई भी पुण्य (फल) उसे प्राप्त नहीं होता है। अपने धन के अनुसार और यहां तक कि, कम खर्च में भी इस व्रत का पालन करना होगा—नही तो चौदह इन्द्रों के शासन काल तक नरक में रहना पड़ेगा। —(विष्णु-रहस्य में ब्रह्म-नारद संवाद)।
कलियुग में जो सब भाग्यशाली व्यक्ति सर्व पापों को हरण करने वाली श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी तिथि में उपवासी रहकर श्रीहरि की पूजा करते हैं, संसार में किसी से कोई भय नहीं रहता तथा जहाँ वे निवास करते हैं, वहाँ कलि नहीं रहता है।— (ब्रह्मपुराण, पूर्वखण्ड में श्रीसूतवाक्य) ‘कंस आदि असुरों के विनाश के लिए श्रीहरि जिस दिन आविर्भूत हुए थे, वह दिन परम पवित्र है और सभी प्रकार के मंगल की खान है। सनातन पुराण-—श्रीकृष्ण की पृथ्वी में साक्षात् अवतरण की वह महातिथि, अनायास ही मुक्ति प्रदान करने में समर्थ है, इसमें आश्चर्य की क्या बात है? इस व्रत को करना ही परम मंगलमय है, यही है परम तपस्या तथा यही है परम धर्म’—(ब्रह्मपुराण में श्रीशुक-जनमेजय संवाद)
‘श्रावणी कृष्ण-अष्टमी तिथि धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष प्रदान करने वाली है। जो
लोग यह व्रतानुष्ठान स्वयं करते हैं तथा दूसरों से भी करवाते हैं, लक्ष्मी देवी उनके घर में अचल होकर अवस्थान करती हैं। इस व्रत को करने से जो फल प्राप्त होता है, उसके समान या उससे अधिक फल वेद या पुराणों में भी नहीं देखा जाता हैं— श्रीकृष्णप्रेम ही पंचम-पुरुषार्थ है, जिसके समक्ष मोक्ष भी हीन प्रतीत होता है। यह शुद्ध भक्तों के आनुगत्य में इस व्रत का पालन करने से लाभ हुआ करता है।’ ‘यथाविधि श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी-व्रत अनुष्ठित होने पर श्रीयमराज दुःखी मन से उक्त व्यक्ति की पाप-सूची मिटा देते हैं। जो व्यक्ति जन्माष्टमी के दिन देवकी देवी के साथ श्रीहरि की आराधना करते हैं, वे भीषण यमपथ पर नहीं जाकर विष्णु के परमपद (श्रीचरणों) में आश्रय लाभ करते हैं। यह व्रत करने से सभी कार्य सिद्ध हो
है तथा मृत्यु के समय श्रीकृष्ण का स्मरण होता है। अतएव हे नारद! परम मंगल लाभ के लिए मेरी आज्ञा से जयन्ती-व्रत (जन्माष्टमी-व्रत) पालन करो।’—(स्कन्द पुराण में ब्रह्म-नारद संवाद)।

जन्माष्टमी-व्रतकाल निर्णय गंगा जल से भरे कलश में केवल में केवल मात्र एक बूंद शराब मिल जाने से जैसे वह वर्जनीय हो जाता हैं, उसी प्रकार एक पल मात्र भी सप्तमी-विद्धा होने से पवित्रा अष्टमी तिथि परित्यज्य हो जाती है (पद्मपुराण)। फिर भी वह्नि पुराण आदि तामसिक शास्त्रों मे सप्तमी-विद्धा अष्टमी-व्रत पालन करने की जो विधि वर्णित है, उसे अवैष्णवगण देवमाया से मोहित होकर ही पालन करते हैं (याज्ञवल्क्य) देवताओं तथा ऋषियों ने अपने-अपने पद को खोने की आशंका से इस प्रकार के मोहजाल की सृष्टि कर शुद्धा-अष्टमी तिथि को गुप्त रखा था। (स्कन्दपुराण)। गौतमीय- के इस प्रसंग में वर्णित हुआ है कि,—सप्तमी-विद्धा अष्टमी व्रत करने से पूर्व-अर्जित समस्त पुण्य क्षय हो जाते है। हरि-विमुखता के कारण इस प्रकार अष्टमी का उपवास करने पर भी उससे ब्रह्म-हत्या का फल भोगना पड़ता है; किसी प्रकार का शुभफल उदय नहीं होता।
‘सप्तमी-विद्धा अष्टमी’ कहने से यहाँ ‘सूर्योदय-विद्ध’-अवस्था को ही समझा जाता है, सूर्योदय के बाद एक क्षण भी सप्तमी रहने से उक्त अष्टमी, सप्तमी- विद्धा मानी जाती है। एकादशी व्रत के सम्बन्ध में ‘अरुणोदय-विद्धत्व’ त्याज्य है, किन्तु जन्माष्टमी, रामनवमी इत्यादि अन्यान्य समस्त तिथियाँ ‘सूर्योदय-विद्ध’ होने पर ही परित्यज्य हैं। श्रीहरिभक्तिविलास में श्रील सनातन गोस्वामी कृत टीका में कहा गया हैं—“एकादशी तराशेष-तिथीनां रव्युदयतः

प्रवृत्तानामेव सम्पूर्ण-त्वेनारुणोदय-वेधासिद्धेः” ‘एकादशी ’ तिथि के सम्बन्ध में जिस प्रकार ‘अरुणोदय-विद्धा-नियम’ प्रयोग किया जाता है, अन्य सभी तिथियों के सम्बन्ध मे ऐसा नही है—अन्य समस्त तिथियाँ सूर्योदय के समय से आरम्भ होने पर ही संपूर्ण मानी जाती हैं, वहाँ ‘अरुणोदय-विद्धा’ का नियम प्रयोग नहीं किया जाता है।
श्रावणी (शुद्धा) अष्टमी में, दिन-रात के भीतर, रोहिणी नक्षत्र का योग,
भर मात्र के लिए होने पर भी, उक्त पुण्य तिथि में ही उपवास करना होगा— (विष्णुरहस्य)। विशेष रूप से वह रोहिणी युक्ता अष्टमी यदि बुधवार या सोमवार अथवा नवमी-युक्ता होती है तो वह करोड़ो कुलों को मुक्ति प्रदान करती है—(- पुराण)। नवमी-युक्ता अष्टमी में (‘उमा-माहेश्वरी’ तिथि में) रोहिणी का योग नहीं रहने पर भी व्रत पालन किया जायेगा; किन्तु उक्त नक्षत्र-युक्ता होने पर भी सप्तम-विद्धा अष्टमी कभी भी ग्रहण योग्य नहीं है। तिथि विशुद्ध होने पर भी विभिन्न योगों का विचार आदरणीय है—अन्यथा नहीं।

श्रीजन्माष्टमी-व्रत पालन करने की विधि
व्रतोपवास के उपलक्ष में दशमी, एकादशी तथा द्वादशी इन तीन दिनों में साधारण तौर पर व्रत के जो नियम बताये गये हैं, उन्हीं सब नियमों को जन्माष्टमी- व्रत में सप्तमी, अष्टमी और नवमी में पालन करना होगा। व्रत के दिन दन्त-धावन आदि समस्त प्रातःकृत्य सम्पन्न कर संकल्प लेंगे।
संकल्प-मंत्र—
“अद्य स्थिता निराहारः श्वोभूते परमेश्वर। देवकीपुत्र अस्मिन् जन्माष्टमीव्रते॥”
‘हे परमेश्वर देवकीनन्दन, इस जन्माष्टमी व्रत में आज निराहार रहकर कल
भोजन करूँगा।’ इसके बाद सुबह श्रीकृष्ण को तिल-जल के द्वारा स्नान आदि कराकर शिष्टाचार अनुसार नये वस्त्र आदि समस्त अर्पण करेंगे।
इस व्रत में शुद्ध-भक्तगण निराहार रहकर, दिन-रात श्रीकृष्ण-नाम-संकीर्तन, रूप-कीर्तन, गुण-कीर्तन, लीला-कीर्तन आदि में निमग्न रहते हैं। “यज्ञैः संकीर्तन-प्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः” (भागवत ११/५/३२)—‘सुबुद्धिमान व्यक्ति संकीर्तन-रूपी यज्ञ के द्वारा पूजा किया करते है’—इस भागवतीय निर्देश के अनुसार वे ग्रंथराज ‘श्रीमद्भागवत’ अथवा श्रीगौर-पार्षद श्रीरघुनाथ भागवत-आचार्य द्वारा रचित ‘श्रीकृष्णप्रेम-तरंगिणी’ ग्रंथ के दशम स्कंध से श्रीकृष्ण के आविर्भाव तथा बाल्य-लीला- कथाओं की चर्चा करते हैं। जगद्गुरु श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती प्रभुपाद जी इस दिन में ‘श्रीचैतन्य भागवत’ तथा ‘श्रीचैतन्य चरितामृत’ ग्रंथ से ‘श्रीराधाकृष्ण-मिलित-तनु’ (श्रीराधाकृष्ण के मिलित रूप) शचीनन्दन श्रीगौरसुन्दर की आविर्भाव आदि लीला की चर्चा करने का विशेष उपदेश देते थे।
के उपलक्ष में भगवान् के मंदिर को सामर्थ्य अनुसार विविध पत्र-पुष्प तथा विभिन्न वर्णों के कागज आदि से सजायेंगे। समर्थ होने पर गोप-गोपियाँ तथा गायों से घिरे गोकुल का चित्र बनाकर उसमें माता यशोदा की गोद में स्थित श्रीकृष्ण, नन्द बाबा, रोहिणी मैया, बलदेव जी आदि को स्थापित करेंगे।
बाद आधी रात को भगवान् की आविर्भाव-लीला का स्मरण और कीर्तन करते हुए पंचामृत, दूध आदि के द्वारा तथा शुद्ध गंगा जल के द्वारा नृत्य-गीत-वाद्य आदि के साथ श्रीयशोदा सहित श्रीकृष्ण का सोलह-उपचारों से स्नान आदि कर पूजा करेंगे। और विविध खाद्य सामग्री, फल तथा ताम्बूल (पान) अर्पण करेंगे।
इसके बाद गीत, आदि के साथ भगवान् की बाल्य-लीला आदि का श्रवण करते हुए आनन्द से रात्रि-जागरण करेंगे। जन्माष्टमी में रात्रि-जागरण करने से आजन्म-

अर्जित पाप तत्क्षण ध्वंस हो जाते है। दूसरे दिन सुबह नित्यकर्म संपन्न कर की अर्चना (पूजा) करके, पारण-उत्सव करेंगे।

श्रीजन्माष्टमी पारण-विधि पारण के समय नियम यही है कि, व्रतोपवास के दूसरे दिन, तिथि के अंत मे और नक्षत्र के अंत में पारण करना कर्त्तव्य है। असमर्थ व्यक्ति किसी भी पक्ष में पारण कर सकते हैं। किन्तु ब्रह्मवैवर्त्त में बताया गया है कि,—‘अष्टमी तिथि तथा रोहिणी नक्षत्र वर्तमान रहते हुए पारण करने पर पूर्वाजित सुकर्म तथा उपवास जनित फल नष्ट हो जाते हैं। तिथि के भीतर पारण करने से अष्टगुण पुण्य क्षय होते है नक्षत्र के भीतर पारण करने से चतुर्गुण पुण्य क्षय हो जाते हैं। इसलिए यतन के साथ दोनों के अंत में ही पारण करेंगे।’
भक्तगण इस दिन श्रीनन्द-महाराज द्वारा अनुष्ठित “श्रीनन्द-महोत्सव”-
लीला के स्मरण में चर्व्य-चूष्य-लेह्य-पेय भोजन आदि के द्वारा यथाशक्ति महोत्सव का आयोजन कर सर्वसाधारण को महाप्रसाद सेवा करायेंगे।

श्रीकृष्ण जयन्तीके उपलक्ष्यमें
—ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान
केशव गोस्वामी महाराज
‘जन्माष्टमी’ कहनेसे साधारणतः श्रीकृष्ण-आविर्भावका बोध होता है। परन्तु सूक्ष्मरूपसे विचार करनेपर ऐसा प्रतीत होगा कि साधारणतः जन्माष्टमी जिस प्रकारसे मनायी जाती है, वह कृष्णकी जन्माष्टमी न होकर वासुदेवकी जन्माष्टमी है। ‘हरिवंश’ के विचारके अनुसार श्रीकृष्ण (गोकुलमें) और वासुदेव (मथुरामें)—दोनों एक ही समय एक ही उमा-महेश्वरी तिथिमें आविर्भूत हुए थे। ‘कृष्ण’ और ‘वासुदेव’—ये दोनों शब्द हमारे हृदयमें दो तत्त्वोंका आविर्भाव कराते हैं। केवल माध्वगौड़ीय वैष्णव सम्प्रदायमें ही नहीं, अपितु सभी सम्प्रदायोंमें जन्माष्टमीका व्रत रखा जाता है। यहाँ तक कि आचार्य शंकर भी इस व्रतका उल्लंघन करनेका साहस नहीं कर सके हैं। स्मार्त्त लोग भी आचार्य शंकरका पदांकानुसरण कर आज भी घर-घरमें जन्माष्टमीका व्रत पालन करते हैं। परन्तु ध्यानपूर्वक विचार करनेपर पता चलता है कि गौड़ीय-वैष्णवोंके अतिरिक्त दूसरे समस्त सम्प्रदायों या स्मार्त्त आदि व्यक्तियों द्वारा जिस जन्माष्टमीका व्रत अनुष्ठित होता है, वह वासुदेवकी जन्माष्टमीका व्रत अनुष्ठित होता है, वह वासुदेवकी जन्माष्टमी है, कृष्णकी जन्माष्टमी नहीं। कृष्ण-जन्माष्टमीका पता बहुतोंको नहीं है। वासुदेवका दूसरा नाम कृष्ण है, इसलिए वासुदेवकी जन्माष्टमीको कृष्णकी जन्माष्टमी कहा जाता है। परन्तु वास्तवमें गंभीररूपसे विचार करनेपर इनमें कुछ रसगत वैशिष्ट्य वर्तमान रहनेके कारण भेदकी प्रतीति होगी।
गीताके प्रतिपाद्य कुरुक्षेत्रके कृष्णको हम वासुदेव कहते हैं। वही वासुदेव कृष्ण गीताके चौथे अध्यायके ९ वें श्लोकमें कहते हैं—
जन्म कर्म च में दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥
अर्थात् अचिन्त्य शक्तिके द्वारा मैं जो जन्म और कर्म स्वीकार करता हूँ,
उसे जो व्यक्ति तत्त्वतः दिव्य जान लेता है, वह शरीर त्यागकर पुनः जन्म नहीं ग्रहण करता। तात्पर्य यह है कि जो व्यक्ति भगवानके जन्म-तत्त्वको तत्त्वसे जान लेते हैं कि वह सम्पूर्ण दिव्य अर्थात् अप्राकृत है, तब वह कर्म-बन्धनसे छुटकारा प्राप्तकर भगवानके परम धाममें गमनकर उनके चरण कमलोंकी सेवा लाभकर कृतार्थ हो जाता है।
जिनको तत्त्वज्ञान नहीं है, वे भगवानके जन्म और कर्मको प्राकृत समझते हैं। इस प्राकृत-बुद्धिके कारण वे संसार-बन्धनमें पड़कर जन्म-मरण्के चक्करमें घूमनेके लिए बाध्य होते हैं। भगवान श्रीकृष्ण स्वयं कहते हैं—मेरा जन्म दिव्य है अर्थात् अप्राकृत है। श्रीरामानुजाचार्यने ‘दिव्य’ शब्दका अर्थ किया है—‘अप्राकृत’। ‘अद्वैतसिद्धि’ नामक ग्रन्थके रचियता मधुसूदन सरस्वतीने भी

श्रीजीव गोस्वामीकी शिक्षाके प्रभावसे अद्वैतवादका मार्ग छोड़कर ‘दिव्य’ शब्दका अर्थ ‘अप्राकृत’ ही ग्रहण किया है। श्रीधर स्वामीने भी ‘दिव्य’ शब्दका अर्थ ‘अलौकिक’ स्वीकार किया है। अतएव स्वयं भगवानने ही अपने जन्मका अप्राकृतत्व, अलौकिकत्व एवं अस्वाभाविकत्व स्थापित किया है। श्रीगीता भगवानकी साक्षात् वाणी होनेके कारण वेदतुल्य अपौरुषेय है। इसमें तर्ककी तनिक भी गुंजाइश नहीं। हम वासुदेवके जन्ममें ही अलौकिकत्व लक्ष्य करते हैं। वसुदेव और देवकी कंसके कारागारमें बन्द हैं। वहीं पर वासुदेव चतुर्भुज मूर्त्तिमें आविर्भूत होते हैं, चारों हाथोंमें शंख, चक्र, गदा और पद्म सुशोभित हैं, गलेमें वैजयन्ती माला शोभा पा रही है, कटि-प्रदेशमें पीताम्बर झलमल कर रहा है, कानोंमें कुण्डल और सिरपर मुकुट है। प्रकट होते ही माता-पिताको अभय प्रदान करते हैं। ऐसी बातें इस लोकमें नर-चरित्रमें सम्भव नहीं है। इसलिए ‘वासुदेव’ का जन्म अलौकिक है। परन्तु कृष्णके जन्ममें कोई अलौकिक बात नहीं देखी जाती। साधारण रूपमें प्रकटित होते हैं। फिर भी कृष्णकी यह नर-लीला ही परतत्त्व है यही गूढ़ रहस्य है।
अपने आविर्भावके पहले ही कृष्णने असुरोंके अत्याचारसे पीडि़त ब्रह्मा
आदि देवताओंको आश्वासन दिया था कि वे शीघ्र ही देवकीके आठवें गर्भसे आविर्भूत होकर कंस आदि अत्याचारी राजाओं और असुरोंको मार कर उनकी रक्षा करेंगे। देवकीके विवाहके समय दैव-वाणीके द्वारा कंसको भी यह संवाद मिल गया था। देवकीका आठवाँ गर्भ था। कंस और उसके साथी अत्यन्त भयभीत और त्रस्त हो पड़े। वे किंकर्त्तव्यविमुढ़ हो गए। कंस उस समय देशका राजा था। अतएव उसपर भावी विपत्तिकी खबर चारों ओर फैल गई। सोऽहंवादी असुर अत्यन्त चिन्तित हुए। परन्तु इस खबरसे असुर-द्रोही देवता और निर्लिप्त भक्तजन बड़े आनन्दित हुए। उनके आनन्दकी सीमा न रही। वे आहार-निद्रा-भय-मैथुन आदि सबकुछ छोड़कर कंसनिसूदन वासुदेवके जन्मकी प्रतिक्षा करने लगे। इसीलिए आपलोग भी उसी प्रकार आनन्द-स्वरूप पूर्णब्रह्म श्रीकृष्णके आविर्भावके उपलक्ष्यमें आज सूर्योदयसे लेकर रात्रि १२ बजे तक बिना अन्न-जल खाये-पीये निर्जला उपवास रखा है। सबका उद्देश्य है—कृष्णके आविर्भावकी प्रतीक्षा। इसीका नाम उपवास है।
उपवासमें दुःख-क्लेश अनुभव करना प्राकृत देह-स्मृतिका लक्षण है। यह अप्राकृत कृष्ण-स्मृतिका लक्षण नहीं है। अप्राकृत आनन्दमयके आविर्भावकी प्रतिक्षा करनेमें किसी प्रकारका क्लेश या थकान अथवा भूख-प्यासकी अनुभूति नहीं होती। जिस प्रकार सूर्योदयके पहले ही अन्धकार नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार कृष्णके आविर्भाव-चिन्तनमें अथवा कृष्ण-सेवामें मग्न रहनेसे जीवमात्रके सारे सांसारिक क्लेश सम्पूर्णरूपसे दूर हो जाते हैं। सूर्योदयकी आभास-ज्योतिका अर्थात् अरुणोदयकालका माहात्म्य ही ऐसा है कि उसकी शीतल और स्निग्ध आलोक-मालाएँ सोलह कलाओंसे पूर्ण चन्द्रके आलोकसे भी अधिक जीवोंके अज्ञानान्धकारको दूरकर ज्ञानोन्मेषक हुआ करती हैं। अतएव कृष्णकी जन्माष्टमीके दिन उपवास ही आनन्दोत्सव है। इससे दिव्यज्ञानका उन्मेष हुआ करता है।
हरिभक्तिविलासमें उपवासके लक्षण निरूपण प्रसंगमें ऐसा कहा गया है कि
— ‘नोपवासस्तु लंघने।’—अर्थात् केवलमात्र खाना-पीना परित्याग करना ही उपसासका लक्षण नहीं है। कृष्ण-सेवामय श्रवण-कीर्तनमें विभोर होकर आहार, निद्रा आदि स्थूल और सूक्ष्म शरीरकी सारी क्रियाओंको भूल जाना ही उपवास है। मैंने पहले ही कहा है कि वासुदेव अर्थात् देवकीनन्दन कृष्ण और यशोदानन्दन कृष्ण दोनोंका जन्म युगपत् एक ही मुहूर्तमें हुआ था। अतएव जन्माष्टमी कहनेसे हम यहाँपर यशोदानपन्दन कृष्णको भी लक्ष्य करते हैं। नन्द महाराजके गृहमें माँ यशोदाके गर्भसे आज श्रीकृष्ण जन्म लिए। अनन्तर योगमाया देवी भी यशोदाके गर्भसे पैदा हुई। माँ यशोदा अधिक उम्रमें पुत्र और कन्या दो सन्तान एक ही साथ प्रसव करनेके कारण कुछ अचेतन सी हो पड़ती हैं।

सर्वशक्तिसमन्वित आनन्दके मूर्तिमान विग्रहके आविर्भूत होनेपर निरानन्द या क्लेशकी संभावना नहीं होती। परन्तु माँ यशोदामें इसके विपरीत लक्षण देखा जाता है। ऐसा देखकर कुछ हेतुवादी कृष्णको तथा कृष्ण-जन्मको प्राकृत कहनेका दम भरते हैं। परन्तु इसमें एक तात्त्विक गूढ़ रहस्य है, जिसे प्राकृत ज्ञानी समझ नहीं पाते। मैं आज इस विषयमें दो-एक बातें बतला रहा हूँ।
श्रीमद्भागवत (१०/३/४६) में श्रीशुकदेव गोस्वामी महाराज परीक्षितको कह
रहे हैं—वसुदेव और देवकीकी स्तुति सुनकर भगवान वासुदेव महाराज वसुदेव और देवकीजीको अपने और उन दोनोंके पूर्वजन्मका परिचय बतलाकर चुप हो गए। तदनन्तर माता-पिताके देखते-देखते ही अपना चतुर्भुज रूप गोपन कर तुरन्त एक साधारण बालक — प्राकृत शिशु हो गए। पूरा श्लोक यह है—
इत्युक्तवाऽऽसीद्धरिस्तूष्णीं भगवानात्ममायया। पित्रोः सम्पश्यतोः सद्यो बभूव प्राकृतः शिशु॥
उपर्युक्त श्लोकके “सद्यो बभूव प्राकृतः शिशु” इस अंशको लेकर अद्वैतवादी सम्प्रदाय ही नहीं, अपितु श्रीरामानुज आदि आचार्योंने भी श्रीकृष्णकी स्वयं भगवत्ताके प्रति संदेहकर कटाक्ष किए हैं। फल-स्वरूप श्रीकृष्णचन्द्रको कोई-कोई प्राकृत (मरणशील) मनुष्य मानते हैं और कोई-कोई परतत्त्व, अवतारी, अंशी अथवा मूल-पुरुष न मानकर अवतार या अंश मानते हैं। इन चोटीके और प्रसिद्ध आचार्यों द्वारा अपने मूल उपास्य-तत्त्वके प्रति कटाक्षपूर्ण वचनोंको लक्ष्यकर श्रीगौड़ीय वैष्णवोंने उन विचारों और वचनोंका सम्पूर्णरूपसे खण्डन किया है। दूसरी तरफ श्रीमध्वाचार्यने श्रीकृष्णके परमतत्त्वके सम्बन्धमें जैसा सर्वांगसुन्दर विचार प्रस्तुत किया है, उसे श्रीचैतन्य महाप्रभुजीने सर्वतोभावेन अंगीकार कर उनको ही अपने सम्प्रदायका आचार्य माना है। श्रीधर स्वामीचरणने इस श्लोकके ऊपर कोई टीका-टिप्पणी लिखकर श्रीकृष्णका परतमत्व स्थापन नहीं किया है। श्रीमद्भागवतके उक्त श्लोकके द्वारा शंख, चक्र, गदा और पद्मधारी चतुर्भुज वासुदेव ही प्राकृत शिशुकी तरह द्विभुज रूप अंगीकार किए हैं—यही शुकदेव गोस्वामीकी परीक्षितके निकट उक्ति है। श्रीशुकदेव गोस्वामीने महाराज परीक्षितके बहाने समग्र विश्ववासी और सभी धार्मिक सम्प्रदायोंको शिक्षा दी है कि द्विभुज कृष्णकी परतत्त्व है, चतुर्भुज वासुदेव परतत्त्व नहीं हैं। ‘प्राकृत’—शब्दसे यहाँ ‘प्रकृतिके गुणोंसे उत्पन्न’ ऐसा नहीं समझना चाहिए। ‘प्राकृत’—शब्दका तात्पर्य है— प्रकृतिजात अर्थात् प्रकृतिसे उत्पन्न। ‘प्रकृति’—शब्दका अर्थ सभी कोषकारोंने ‘स्वभाव’ स्वीकार किया है। इस विषयमें कोई दो मत नहीं हैं। अतएव यहाँ प्रकृतिका अर्थ स्वभाव ही मानना युक्तिसंगत है। ग्रन्थकारका यही अभिप्रेत अर्थ है।
‘स्वभाव’—कहनेसे ‘निजत्व भाव’ अथवा स्वरूपगत भावका बोध होता है। अतएव ‘सद्यो बभूव प्राकृत शिशुः’ कहनेसे ऐसा समझना चाहिए कि वासुदेव अपने निज स्वभाव अर्थात् स्वरूपको प्राप्त हुए। भगवानने वसुदेव और देवकीको जो चतुर्भुज वासुदेव रूप कुछ देर पहले दिखलाया था, वह उनका प्रकृतिगत या स्वभावगत निजस्व रूप नहीं है। अर्थात् द्विभुज रूप ही जिसे पीछेसे देवकी और वसुदेवको दिखलाया—उनका प्रकृतिगत या स्वभावगत निजस्वरूप है। अतएव श्रीमद्भागवतके उपर्युक्त श्लोक द्वारा ही श्रीरामानुज आदि आचार्योंके मतोंका खण्डन हो जाता है तथा उसीके द्वारा परतत्त्वका द्विभुजत्व भी स्थापित होता है। यही द्विभुज परतत्त्व मथुरासे वसुदेव महाराजद्वारा गोकुलमें लाये गए और वहाँ वे नन्दभवनमें आविर्भूत कृष्ण-परतत्त्वमें अर्पित हुए। द्विभुज कृष्णने तत्क्षण ही द्विभुज वासुदेवको आत्मसात कर लिया।

श्रीवामन -द्वादशी

"लब्धा वैरोचनाद्भूमिं पद्भ्यां द्वाभ्यामतीत्य यः।
भुवनं क्रांतं वामनं तं नमाम्यहम्॥ "

—(बृहन्नारदीय पुराण)

'जिन्होंने विरोचन के पुत्र —'बलि ' से त्रिपाद स्थान दान प्राप्त कर , दो पद के द्वारा भूलोक पार कर ब्रह्मलोक तक अधिकार कर लिया था , श्रीभगवान् वामनदेव को करता हूँ। ' इस कल्प में तीन बार वामनदेव जी का आविर्भाव हुआ।

सबसे पहले उन्होंने 'स्वायम्भुव ' मन्वन्तर में वास्कलि -नामक दैत्य के यज्ञ में तथा दूसरी बार 'वैवस्वत ' मन्वन्तर में धुन्धु -नामक असुर के यज्ञ में गमन किया। तथा अंत में इस 'वैवस्वत ' के सप्तम चतुर्युग में कश्यप से अदिती के गर्भ में आविर्भूत हुए तथा उन्होंने ही 'बलि ' के यज्ञ में गमन किया। इन तीन वामन - ने ही अनुग्रह के लिए त्रिविक्रम रूप प्रकट किया था —(लघु -भागवतामृत)।

श्रीवामन-द्वादशी-व्रत का काल-निर्णय
श्रीमद्भागवत (८/१८/५, ६) भगवान् श्रीवामनदेव के आविर्भाव के प्रसंग में वर्णित है,—
“श्रोणायां श्रवणद्वादश्यां मुहुर्त्तेऽभिजिति प्रभुः। नक्षत्रताराद्याष्चक्रुस्तज्जन्म दक्षिणम्॥
द्वादश्यां सवितातिष्ठन्मध्यन्दिन-गतो नृप।
विजया नाम सा प्रोक्ता यस्यां जन्म विदुर्हरेः॥” ‘श्रवण-द्वादशी में चन्द्र श्रवणस्थ होने पर, -मुहूर्त्त में परम शुभ-
में प्रभु अवतीर्ण हुए थे। उस समय समस्त नक्षत्र तथा ग्रहों ने उनके जन्म-दिवस को प्रशस्त किया था। उक्त द्वादशी तिथि में उस समय सूर्यदेव दिन के मध्य भाग में अवस्थित थे, इस द्वादशी तिथि को श्रवणा नक्षत्र का योग होने पर, उस दिन उपवासी श्रीवामनदेव की पूजा करनी चाहिए। किन्तु द्वादशी को किसी भी समय श्रवणा का योग न होने पर अथवा एकादशी और द्वादशी—दोनों ही दिनों में श्रवणा की अप्राप्ति होने पर एकादशी में उपवास रखकर द्वादशी को श्रीवामनदेव की पूजा करनी होगी।’

श्रीवामन-द्वादशी-व्रत-माहात्म्य श्रीवामन- करने पर भगवान् इच्छुक सभी सत्- को पूरा कर देते है। श्रीवराहपुराण में इस व्रत-माहात्म्य के प्रसंग में वर्णित है कि, पुत्रहीन राजा हर्यश्व द्वारा पुत्र लाभ की कामना से इस व्रत का अनुष्ठान करने पर उन्हें उग्राश्व-नाम का एक महाबल- पुत्र लाभ हुआ था, जो बाद में राजचक्रवर्ती बने थे। इस व्रत के अनुष्ठान से पुत्रहीन को पुत्र, धनार्थी को धन, राज्य-च्युत
जो राज्य-सुख प्राप्त होकर अन्त में विष्णुलोक में गति होती है। किन्तु शुद्ध-भक्तगण किसी प्रकार की जागतिक प्राप्ति की आशा या अपेक्षा नही रखकर केवल श्रीहरि की के लिए ही ये समस्त हरिवासर व्रतों का अनुष्ठान किया करते हैं।

श्रीवामन-द्वादशी-व्रत-विधि
व्रत का संकल्प मंत्र—
“एकादश्यां निराहारः स्थित्वा चैवापरेऽहनि।
भोक्ष्ये श्रीवामनानन्त शरणागत-वत्सलः॥”
, ‘हे श्रीवामनदेव, हे अनन्त, हे शरणागत-वत्सल इस श्रीवामन-व्रत के उपलक्ष्य मे मैं एकादशी को उपवासी रहकर दूसरे दिन भोजन करूँगा।’ अतः इस व्रत में एकादशी व्रत की तरह ही उपवास करने की विधि है। लेकिन उक्त भाद्र मास की शुक्ला-द्वादशी में ‘श्रवणा’-नक्षत्र का योग होने पर जिस श्रवण-महाद्वादशी का उदय होता है, में तब उपवास करना चाहिए। उपवास के साथ भगवान् श्रीवामनदेव के चित्रपट को सुसज्जित कर शास्त्र से उनके संबंध में कथा श्रवण-कीर्तन करेंगे। ग्रंथराज श्रीमद्भागवत के आठवें स्कंद के १६वें अध्याय से २३वें अध्याय तक श्रीवामनदेव की लीला वर्णित है। संभव होने पर श्रीवामन-पुराण से भी उनके बारे में अध्ययन किया जा सकता है।
के दूसरे दिन यथाविधि भगवान् श्रीवामनदेव की पूजा अवश्य करनी चाहिए। बहुत
समय के लिए द्वादशी रहने पर भी उक्त पूजा को द्वादशी में ही सम्पन्न करना होगा। यदि रात रहते ही द्वादशी समाप्त हो जाय, तो वह पूजा रात में द्वादशी रहते ही अवश्य करनी होगी। इस प्रकार पूजा समाप्त करने बाद सुबह वैष्णव-ब्राह्मणों को महाप्रसाद भोजन कराने के बाद स्वयं पारण करेंगे।

श्रीवराह-द्वादशी
योऽनन्तः समुद्धृत्यार्णवाद्धराम्। कृत्स्नं तं वराहं नमाम्यहम्॥
— (बृहन्नारदीय पुराण)
‘जिन अव्यय देव ने दाँतो के अग्र-भाग के द्वारा समुद्र से पृथ्वी को
निकालकर समग्र जगत को स्थापित किया, उन श्रीवराह देव को मैं नमस्कार करता हूँ।’ कल्प में वराहदेव का दो बार आविर्भाव हुआ था। इसमें पहले ‘स्वायम्भुव’-मन्वन्तर में के उद्धार के लिए ब्रह्मा की नासिका से तथा बाद में छठे ‘चाक्षुष’-मन्वन्तर में
वध कर पृथ्वी का उद्धार करने के लिए जल से आविर्भूत हुए थे।
वे कभी चतुष्पाद-मूर्ति (चार पैरों वाले होकर) और कभी नर-वराह मूर्ति (वराह-मुख-युक्त-नर के रूप) प्रकट हुए, एवं कभी अपने बादलों के समान श्याम-वर्ण (कृष्ण-वराह) और कभी चाँद की तरह श्वेत वर्ण (श्वेत-वराह) करते हैं। —(लघु-)।

श्रीवराह-द्वादशी का व्रतकाल और व्रत-विधि
श्रीवराह-पुराण के इस प्रसंग में इस प्रकार उल्लिखित है कि,—माघ मास में शुक्लपक्ष की द्वादशी तिथि को वराह-द्वादशी व्रत का अनुष्ठान किया जाता है। पहले की तरह विधि के अनुसार एकादशी के दिन में उपवास रखकर सुगंध, पुष्प, विविध उपचारों के द्वारा भगवान् श्रीहरि की पूजा करनी चाहिए। श्रीहरि के समस्त का कीर्तन तथा मनन करते हुए पूरा दिन और रात व्यतीत करेंगे। श्रीमद्भागवत के तीसरे स्कंद के १३वें और १४वें अध्याय से श्रीवराह अवतार-कथा की इस प्रसंग में चर्चा करनी होगी। श्रीवराह पुराण से भी वह चर्चा की जा सकती है। दूसरे दिन सुबह श्रीवराहदेव की पूजा करनी होगी तथा पूजा के बाद विष्णु-भक्त, वेद-विद्या में पारंगत, श्रोत्रिय (श्रुति शास्त्रों में निपुण) ब्राह्मणों को पूजा के द्रव्य
दान करने होंगे।

श्रीवराह-द्वादशी व्रत-माहात्म्य श्रीवराह-द्वादशी का माहात्म्य श्रीवराह पुराण में श्रीदुर्वासा ऋषि द्वारा इस वर्णित हुआ है—संवर्त नामक ऋषि के वेद-अध्ययन-रत पचास पुत्रों ने एक दिन वन
में जाकर देखा कि, एक हिरणी ने पाँच बच्चों को जन्म दिया और उसी समय उन्हें छोड़कर

गई। मुनि-पुत्रों ने यह देखकर हिरणी के उन नवजात बच्चों को जैसे ही गोद में उठाया तो वहीं पर उन सब की मृत्यु हो गयी। दुःखी मन से ऋषि पुत्रों ने पिता के पास आकर सारी की जानकारी दी तथा प्रायश्चित के लिए प्रार्थना की। संवर्त ऋषि ने इसके उत्तर
में कहा—”मेरे पिता एक जीव- थे और उनसे भी अधिक हिंसक मैं था। इसलिए तुम लोगों
ने यह पाप कार्य किया है। अब तुम सब हिरण की छाल पहनकर पाँच साल तक व्रत करो।” ऋषि-पुत्र, तदनुसार वन में जाकर हिरण की छाल पहनकर ब्रह्म-ध्यान में
हो गये। इस तरह से एक साल बीत जाने पर राजा वीरधन्वा हिरण के शिकार के लिए उस वन उपस्थित हुए। राजा ने हिरण की छाल पहने हुये ब्रह्म-ध्यान-रत उन ऋषि-पुत्रों को मृग समझकर मार डाला। जब राजा को समझ मे आया कि, उन्होंने वास्तव में ब्रह्म हत्या कर दी है, तब राज भय से काँपने लगे और शोकाकुल होकर दुख से व्याकुल हो उठे। रोते-रोते उन्होंने मुनिवर देवरात के आश्रम में आकर उन्हें सारा वृत्तान्त सुनाया और उसका उपाय जानना चाहा।
ऋषि-देवरात ने राजा को अनुताप मे अत्यंत कातर देखकर उन्हें आश्वासन प्रदान किया कि—“राजन भय की बात नही है, तुम ब्रह्म- के पाप मुक्त हो जाओगे। पृथ्वी देवी के पाताल तल में निमज्जित होने पर देवादिदेव श्रीविष्णु ने वराह
रूप में जिस प्रकार उद्धार किया था, उसी प्रकार तुम्हारा भी इस पाप से उद्धार करेंगे।” यह कहकर उन्होंने राजा को वराह-द्वादशी व्रत की कथा सुनाई।
इस व्रतानुष्ठान के फलस्वरूप राजा ब्रह्म-हत्या के पाप से मुक्त हो गये।
यही नहीं नाना प्रकार के सुख भोगने के बाद मृत्यु के समय स्वर्ण विमान में विराजमान होकर जब इन्द्रलोक (स्वर्ग) में पहुँचे, तब स्वयं इन्द्र उनका अभिनन्दन करने किन्तु भगवान् विष्णु के सेवकों ने इन्द्र को रोकते हुए कहा,—“देवराज! वीरधन्वा के मिलने के लिए आपका तपोबल पर्याप्त नहीं है।” लोकपालगण भी वीरधन्वा से मिलने की इच्छा पर इसी प्रकार तिरस्कृत हुए थे। इसी प्रकार क्रमशः राजा वीरधन्वा सत्यलोक में हुए—जहाँ मृत्यु या प्रलय-अग्नि प्रवेश नहीं करती है। यज्ञपुरुष नारायण के प्रसन्न होने से इस प्रकार की घटना का होना असंभव नहीं है। नारायण-व्रत यथा
विधि अनुष्ठित होने से जब इस जन्म में सौभाग्य, दीर्घायु, आरोग्य तथा सम्पद लाभ
करने के बाद परलोक में भी अमृत लाभ होता है, तब यथार्थ भक्ति के साथ व्रत पालन
करने से श्रीनारायण अपना दास्यपद प्रदान करेंगे, इसमें आश्चर्य क्या हैं?

अद्वैत आचार्य

-सप्तमी

माययाः यः सृजत्यदः।
तस्यावतार एवायमद्वैताचार्य ईश्वरः॥
हरिणाद्वैतादाचार्यं भक्तिशंसनात्।
भक्तावतारमीशं तमद्वैताचार्यमाश्रये॥
— (श्रीस्वरूप-गोस्वामि कड़चा)

“अद्वैत- गोसाञि साक्षात् ईश्वर।
जाँहार महिमा नहे जीवेर गोचर॥
महाविष्णु सृष्टि करेन जगदादि-कार्य।
अवतार साक्षात् अद्वैत-आचार्य॥
महाविष्णुर अंश—अद्वैत गुणधाम।
ईश्वरे अभेद, तेंइ ‘अद्वैत’ पूर्णनाम॥
वैष्णवेर गुरु तेंह जगतेर आर्य।
-मिलने हैल ‘अद्वैत-आचार्य’॥”
— (श्रीचैतन्यचरितामृत आदि-लीला षष्ठ परिच्छेद)
(अद्वैत- प्रभु साक्षात् ईश्वर हैं—इनकी महिमा, जीव नही जान सकता है। जो महाविष्णु जगत आदि की सृष्टि करते हैं, साक्षात् अवतार हैं—श्रीअद्वैतआचार्य।

का अंश श्रीअद्वैत प्रभु—समस्त गुणों के आधार हैं। ईश्वर से अभिन्न होने के कारण नाम ‘अद्वैत’ सार्थक है। वे वैष्णवों के गुरु हैं एवं जगत के ‘आर्य’ है। इसलिए दो के मिलन से उनका नाम हुआ ‘अद्वैताचार्य’)।
इन समस्त शास्त्र प्रमाणों से यह प्रमाणित होता है कि, प्रभु ‘विष्णु- तत्त्व’ हैं। किन्तु विष्णु-तत्त्व होकर भी कृष्ण-दास्य के माधुर्य का आस्वादन करने के लोभ में भक्त- को स्वीकार करते हैं इसलिए वे ‘भक्तावतार’ हैं।
“ समता हैइते बड़ भक्तपद।
आत्मा हैते कृष्णेर भक्त हय प्रेमास्पद॥
कृष्णसाम्ये नहे ताँर माधुर्यास्वादन।
भक्तभावे करे ताँर माधुर्य चर्वण॥
भक्तभाव अंगीकरि’ बलराम, लक्ष्मण।
अद्वैत, नित्यानन्द, शेष, संकर्षण॥
कृष्णेर माधुर्यरसामृत करे पान।
सुखे मत्त, किछु नाहि जाने आन॥”
— (चैतन्य चरितामृत आदि-लीला षष्ठ परिच्छेद)
(कृष्ण के समान होने के विचार से भी बड़ा है उनकें ‘भक्त’ का पद क्योंकि कृष्ण के उनके भक्त उनकी आत्मा से भी अधिक प्रिय होते हैं। कृष्ण की समता करने से उनके माधुर्य का आस्वादन नहीं होता है। भक्त के रूप में उनके माधुर्य का आस्वादन हो सकता है। श्रीबलराम, श्रीलक्ष्मण, प्रभु, श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीशेष () तथा श्रीसंकर्षण भक्तभाव को स्वीकार कर कृष्ण का माधुर्य-रसामृत पान करते हैं। वे उसी सुख में मत्त रहने के कारण और कुछ नही जानते हैं।)
अतः भक्त के जैसे उनके आचरण को देखकर उन्हें किसी प्रकार के ‘शक्ति- तत्त्व’ के रूप में माना नहीं जा सकता है। वास्तव में वे विष्णु- ही हैं। अतएव वे जिस तिथि को अवलम्बन करके इस जगत में अवतीर्ण होते हैं, वे ‘हरिवासर’ या ‘हरि-
’ आदि नाम से उल्लिखित हुआ करती हैं। अतः उन तिथियों में व्रतोपवास करना कर्तव्य हो जाता है। शुद्ध-भक्ति के अभिलाषी व्यक्ति मात्र ही इन समस्त तिथियों में परम आदर के साथ व्रतोपवास किया करते हैं।
माघ मास की शुक्ला-सप्तमी-तिथि में ‘वारेन्द्र’-ब्राह्मण वंश में श्रीकुबेर पण्डित तथा श्रीमती नाभा देवी को आश्रय कर पूर्व बंगाल में श्रीहट्ट के में आविर्भूत हुए थे।
“माघे शुक्लातिथि, सप्तमीते अति,
उथलाय महा-आनन्द-सिन्धु।
नाभागर्भ धन्य, करि अवतीर्ण, हैल शुभक्षणे अद्वैत-इन्दु॥” — (भक्तिरत्नाकर १२वाँ तरंग)
(माघ मास की शुक्ला सप्तमी तिथि को परमानन्द रूपी सागर में उफान आ गया। नाभा गर्भ को धन्य करते हुए शुभ क्षण में श्रीअद्वैतचन्द्र का अवतरण हुआ)। “अद्वैताचार्य जी ने गुरुवर्ग के साथ प्रकट होकर देखा कि,—जगत अत्यन्त कृष्ण-भक्ति- हो गया है। इस अवस्था में कोई अंश-अवतार अवतीर्ण होकर जगत का मंगल नही कर सकते हैं, कृष्ण को अवतीर्ण करा पाने पर ही जगत का कल्याण होगा। यह सोचकर व तुलसी को कृष्ण पादपद्म में प्रदान कर उन्होंने निरुपाधिक कृष्णतत्त्व (स्वयं कृष्ण) अवतीर्ण कराने के लिए हुँकार (गरजन) करने लगे।"
“शुन, श्रीनिवास, गंगादास, शुक्लाम्बर।
कृष्णे सर्वनयन-गोचर॥
जबे नाहि पाँरो, एइ देह हैते।
चारिभुज चक्र लइमु हाते॥
पाषण्डीरे काटिया करिमु स्कन्धनाश।
तबे कृष्ण प्रभु मोर, मुञि ताँर दास॥”

—(चैतन्य भागवत आदि द्वितीय अध्याय)

हे श्रीनिवास ! गंगादास ! शुक्लाम्बर ! सुनो , कृष्ण को सबके सामने लाऊँगा। यदि ऐसा नहीं कर सकता तो इस देह से चतुर्भुज प्रकट कर चक्र हाथ में ले लूँगा। पाषण्डियों के सिर काट लूँगा। तब ही कृष्ण मेरे प्रभु हैं और मैं उनका दास हूँ —

प्रभु के इस वाक्य से दो बातों का पता चलता है कि ,—वे वास्तव में 'विष्णु -तत्त्व ' हैं और साथ ही कृष्णदास्य -आस्वादनकारी 'भक्तावतार ' हैं। उन्हीं के आह्वान पर ही हुए। इसलिए श्रीअद्वैत प्रभु गौड़ीय भक्तों के लिए "गौर -आना-ठाकुर " (गौर को लाने वाले ठाकुर) रूप में परम आदरणीय हैं। श्रीमन् महाप्रभु ने भी इसी कारण से उन्हें "नाड़ा " (हिलाने वाला) नाम देकर , की अपने अवतार के कारण के रूप में घोषणा की है। "अद्वैत - ' कथा कह जार। सेइ 'नाड़ा ' लागि ' मोर एइ अवतार॥ "—(चै : भा : मध्य —५/५१) जिन अद्वैत -आचार्य की बात तुम लोग करते हो , उन्हीं हिलाने वाले के कारण मेरा यह हुआ है।

शुद्ध -भक्तगण श्रीगौरचन्द्र के सेवाभिलाषी होकर 'गौर -आना-ठाकुर ' (गौर को लाने वाले ठाकुर) श्रीअद्वैताचार्य जी शरण ग्रहण कर धन्य होते हैं। श्रीमन्महाप्रभु ने प्रभु को वर प्रदान किया था ,—"तिलार्ध्देको जे तोमार करये आश्रय। से केने पतंग , कीट , पशु , पक्षी नय॥ यदि मोर स्थाने करे शत अपराध। तथापि ताँहारे मुञि करिब प्रसाद॥ " —(चैतन्य भागवत १९ /१६८ , १६९)

आधे क्षण के लिए भी जो तुम्हारा आश्रय करते हैं , वे पतंग , कीट , पशु , पक्षी क्यों न हों , यदि मेरे प्रति शत अपराध भी करते हैं तब भी मैं उन पर कृपा करूँगा। इसीलिए समग्र गौड़ीय भक्त समाज के लिए महा -वट-वृक्ष के समान महा -आश्रय -स्वरूप हैं ; वह आश्रय यथार्थ रूप से ग्रहण करने पर , प्रभु के आकर्षण से अतिशीघ्र जीव के हृदय में श्रीमन्महाप्रभु प्रकट हो जाते हैं।

महाप्रभु तथा श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु

श्रीनित्यानन्द -त्रयोदशी

संकर्षणः कारणतोयशायी
गर्भोदशायी च पयोऽब्धिशायी।
शेषश्च यस्यांशकलाः स नित्या -
नन्दाख्यरामः शरणं ममास्तु॥

'संकर्षण , कारणाब्धिशायी विष्णु , गर्भोदशायी विष्णु , पयोब्धिशायी विष्णु तथा शेष जिनके अंश और कला है ; वे 'नित्यानन्द ' रूप श्रीबलराम मेरे शरण्य (शरण प्रदान करने वाले) हों। '

तत्त्व - में श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु तथा श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु — दोनों ही परात्पर -तत्त्व हैं। फिर भी श्रीनित्यानन्द प्रभु , श्रीमन्महाप्रभु के प्रति सदैव सेवा -निष्ठ हैं। "भक्त - मूल श्रीबलरामे। सेईभावे अनुगत ताँर अंशगणे। " (चैतन्य चरितामृत) अर्थात् भक्त -भाव का मूल श्रीबलराम में है। उनके अंशों में भी वह भक्त - विद्यमान है। श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु , स्वयं विषय -विग्रह होकर भी मूल -विषय -विग्रह के प्रति सेवक -भाव - होते हैं इसलिए उनसे प्रकाशित बाकी सब स्वांश -तत्त्व (उनसे प्रकाशित विष्णु -तत्त्व) तथा विभिन्नांश (जीव) तत्त्व में सेवक -भाव युक्त हैं। इसलिए वे आकर (मूल) गुरुतत्त्व के रूप में प्रसिद्ध हैं। वे श्रीनित्यानन्द प्रभु , श्रीचैतन्य महाप्रभु की से उनके पहले ही जगत में अवतीर्ण हुए।

"ईश्वर - आगे श्रीअनन्त -धाम।
अवतीर्ण हइला नित्यानन्द -राम॥
माघ -मासे शुक्ला त्रयोदशी शुभ -दिने।
पद्मावती -गर्भे एकचाका -नाम ग्रामे॥
नामे शुद्धविप्रराज।
मूले सर्वपिता , ताने करे पिता -ब्याज॥

कृपासिन्धु, भक्तिदाता, प्रभु बलराम। अवतीर्ण हैला धरि’ नित्यानन्द-नाम॥” — (चैतन्य भागवत आदि-खण्ड २/१२८-१३१)
, का आश्रय-स्वरूप श्रीनित्यानद-बलराम, ईश्वर के आदेश से, उनसे पहले, बंगाल के ‘राढ़’-प्रदेश में अवतीर्ण हुए थे। माघ-मास की शुक्ला त्रयोदशी के शुभ-दिन में, ‘पद्मावती’-देवी के गर्भ से एकचाका (एकचक्र) ग्राम में हाड़ाई पंडित नामक ब्राह्मणराज के घर में आविर्भूत हुए। वे मूल में सबके पिता है परन्तु उन्हें अपना पिता मान लिया। कृपासिन्धु, भक्तिदाता, प्रभु बलराम ने अवतीर्ण होकर ‘नित्यानन्द’-नाम धारण किया।
माघ मास की शुक्ला त्रयोदशी तिथि गौड़ीय भक्तों के लिए परम आदरणीय है। वे
उक्त तिथि को ‘हरि-’ मानकर सम्मान प्रदान करने के लिए व्रतोपवास करते है। किन्तु
- श्रीनित्यानन्द प्रभु को केवल ‘गुरुतत्त्व’ मानकर, उक्त तिथि में ‘व्रतोपवास’ पालन नहीं करते हैं। वे गुरुतत्त्व होने पर भी मूल रूप से ‘विष्णुतत्त्व’ हैं— इसे किसी भी तरह से अस्वीकार नहीं किया जा सकता हैं। किन्तु उनकी आविर्भाव तिथि को व्रतोपवास के द्वारा सम्मान नहीं करने पर वास्तव में उनका विष्णुत्व अस्वीकृत ही होता है। इस प्रसंग में श्रीचैतन्य लीला के व्यास, श्रीवृन्दावन दास ठाकुर ने कहा है,
नित्यानन्द-जन्म माघी-शुक्ला त्रयोदशी।
गौरचन्द्र-प्रकाश फाल्गुणी पौर्णमासी॥
सर्व- एई दुई पुण्यतिथि।
सर्व-शुभ-लग्न अधिष्ठान हय इथि॥
ए दुइ तिथि करिले सेवन।
कृष्णभक्ति हय, खण्डे अविद्या-बंधन॥
— (चैतन्य भागवत आदि-खण्ड ३/४५-४७)
नित्यानन्द प्रभु का जन्म, माघी शुक्ला त्रयोदशी में तथा गौरचन्द्र का प्रकाश फाल्गुणी पौर्णमासी में हुआ। ये दोनो पुण्य तिथियाँ हर प्रकार से मंगलदायक हैं। इनमें सब प्रकार के शुभ-लग्न अधिष्ठान करते हैं। अतः इन दोनों तिथियों का पालन करने से कृष्ण-भक्ति होती है तथा अविद्या-बंधन टूट जाता हैं।

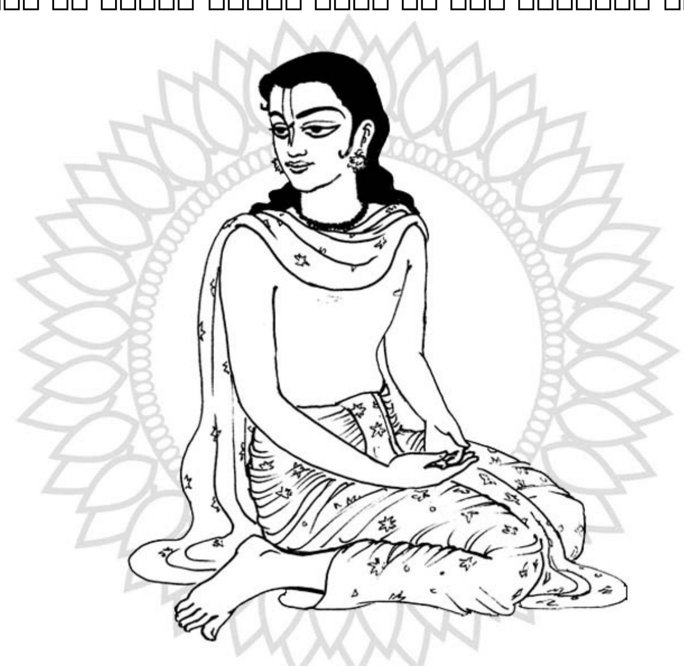

नित्यानन्द प्रभु

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती प्रभुपाद जी ने अपने ‘गौड़ीय-भाष्य’ में
कहा है कि,—“ दो पुण्य तिथियाँ—अर्थात् माघी शुक्ला त्रयोदशी और फाल्गुणी पूर्णिमा, इन दोनों तिथियों की सेवा (पालन) करने से बद्ध-जीवों का अविद्या-बंधन टूट जाता है और कृष्ण-सेवा की प्रवृत्ति उदित होती है। ये दोनो तिथियाँ— जयन्ती- या भगवान् के आविर्भाव का दिन हैं; उपवास आदि के द्वारा तथा महोत्सव आदि के द्वारा इन दोनो तिथियों की सेवा होती है।” अतः इन दोनो तिथियों में व्रतोपवास अवश्य करना चाहिए—इसमें कोई संशय नहीं रह सकता हैं। फिर श्रील प्रभुपाद ने इस प्रसंग में, उक्त भाष्य में ब्रह्म- से उद्धृति करते हुए बताया है,—
“ विष्णुतिथौ केचिद् धन्याः कलियुगे जनाः।
येऽभ्यर्च्चयन्ति देवेशं जाग्रतः समुपोषिताः।
तेषां विद्यते क्वापि संसारभयमुल्वणम्।
यत्र तिष्ठन्ति ते देशे कलिस्तत्र न तिष्ठति॥
इदमेव परं श्रेयः इदमेव परं तथा।
परो धर्म यद्विष्णुव्रतधारणम्॥”
, कलियुग में विष्णु तिथि में जो लोग उपवास व जागरण के द्वारा देवादिदेव श्रीविष्णु का अर्चन करते है, वे ही धन्य हैं। उन्हें फिर कभी घोर संसार का भय नहीं रहता और जहाँ वे निवास करते हैं, वहाँ कलि निवास करने में असमर्थ होता है। अतः श्रीविष्णु जिस प्रकार सर्वश्रेष्ठ-तत्त्व हैं, उसी प्रकार विष्णु-व्रत का पालन, सर्व-लाभदायक है तथा यही जीव का परम धर्म है।
से श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु की कृपा लाभ करने के लिए ही गौड़ीय भक्तगण इस
में परम आदर के साथ उनकी अप्राकृत लीला कीर्तन करते हुए व्रतोपवास पालन करते हैं। उनकी कृपा से अलभ्य भी सहजता से प्राप्त हो जाता है। श्रीवृन्दावनदास ठाकुर, श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर आदि गौड़ीय महाजनों ने उच्च स्वर में कीर्तन करके जगत को नित्यानन्द प्रभु की महिमा से अवगत कराया है—
“संसारेर पार हञा भक्तिर सागरे। डूबिबे से भजुक निताइचान्देरे॥” — (श्रीचैतन्य-भागवत)
संसार से पार होकर भक्ति के सागर में जो डूबना चाहता है, निताई चाँद का
भजन करे।
“जय जय नित्यानन्द, राम। जाँहार कृपाते पाइनु वृन्दावन-धाम॥
जय जय नित्यानन्द, कृपामय। जाँहा हइते पाइनु रूप-सनातनाश्रय॥
जय जय नित्यानन्द- हइते पाइनू श्रीराधागोविन्द॥”
— (चैतन्य चरितामृत आदि-लीला पंचम अध्याय)
जय जय नित्यानन्द, नित्यानन्द- जिनकी कृपा से प्राप्त हुआ वृन्दावन-धाम।
जय जय नित्यानन्द, कृपामय। जिनकी कृपा से प्राप्त हुआ रूप-सनातन का आश्रय। जय जय नित्यानन्द जी के चरणारविन्द। जिनके कारण प्राप्त हुए श्रीराधागोविन्द।
“ बिने भाई, नाइ,
करि धर निताइर पाय॥”
— (श्रीनरोत्तम ठाकुर)
भाई! निताई के बिना, को प्राप्त करने की इच्छा नहीं करनी चाहिए, दृढ़ता से
के चरणों को पकड़ो।
श्रीबलदेव-पूर्णिमा में उल्लिखित बलदेव-तत्त्व तथा महिमा, व्रत-विधि आदि
यहाँ भी उसी प्रकार चर्चा करने योग्य तथा पालनीय है।

शिव-रात्रि-व्रत
श्रीमहादेव अथवा शम्भु यथार्थमें ‘सदाशिव’ विष्णु-तत्त्व हैं। सदाशिव और
कोई भेद नहीं। सदाशिव एक अंशसे तमोगुणका अवलम्बन कर जगत्का ध्वंस करते हैं और जीवोंकी कामनाओंको पूर्ण करते हैं। विमुख जीवोंको मोहित कर और उन्मुख जीवोंको कृष्ण-भक्ति प्रदानकर उनका पालन भी करते हैं। ये काशी एवं कैलाशमें रहकर श्रीकृष्ण-भजन करते हैं। ये वैष्णवोंमें प्रधान एवं श्रीहरिके अतिप्रिय हैं। प्रिय होनेके नाते ही ये हरिसे अभिन्न-तत्त्व हैं।
किन्तु जो लोग रावण, कुम्भकरण, मेघनाद, कंस, जरासंध और भस्मासुरकी भाँति श्रीहरिसे विद्वेष रखते हुए शंकरजीकी उपासना करते हैं, वे असुर कहलाते हैं तथा श्रीहरिके द्वारा निहत होते हैं। श्रीमद्भागवतमें पुण्डरीक (पौण्ड्रक) वासुदेव और उनके सखा काशी नरेशने श्रीकृष्णका विरोध किया। श्रीकृष्णने शृगाल, पुण्डरीक (पौण्ड्रक) वासुदेवका तो वध किया ही काशी नरेशका भी सिर काटकर काशीके राजद्वार पर फेंक दिया। इसपर काशी नरेशका पुत्र श्रीकृष्णपर आक्रमणकी तैयारी करने लगा। श्रीकृष्णने समस्त काशीको सुदर्शन चक्रके तापसे जलाकर भस्म कर दिया। शंकरजीने परिकरोंके सहित काशी छोड़कर इसी स्थान पर शरण ली थी। शिवतत्त्व बहुत ही रहस्यपूर्ण है। श्रीरामचन्द्रजीके द्वारा रामेश्वरकी स्थापनाके समय एकत्र समुदाय ‘रामस्य ईश्वरः’ (षष्ठीतत्पुरुष) रामेश्वरकी जय देने लगा अर्थात् 'शिव ही रामके ईश्वर हैं,’ ऐसा समझा। देवताओंने विरोध किया और रामेश्वर शब्दका अर्थ किया—‘रामश्च असौ ईश्वरः’ अर्थात्‌ द्वन्द समासके द्वारा ‘राम और शंकर दोनों ही ईश्वर हैं।’ इस पर शंकरजी क्षुब्ध होकर श्रीशिवलिंगमें से बोले, “रामेश्वरके ये दोनों अर्थ ठीक नहीं, रामेश्वरका अर्थ है—रामः यस्य ईश्वरः स रामेश्वरः।” यहाँ बहुब्रीहि समास द्वारा अर्थ

हुआ राम ही जिनके ईश्वर हैं , वे रामेश्वर हैं। इस तरह श्रीकृष्ण ही एकमात्र समस्त ईश्वरोंके ईश्वर हैं। शंकरजी इनके प्रिय सेवक हैं। श्रीमद्भागवतमें ऊषा-विवाहके समय बाणासुर व श्रीकृष्णके बीच युद्धमें शंकरजीने ऊपरसे बाणासुरका पक्ष लिया , किन्तु वे श्रीकृष्णसे हार गये और बाणासुरके प्राणोंकी रक्षा हेतु प्रार्थना करने लगे। शंकरजीकी प्रार्थना पर श्रीकृष्णने बाणासुरकी हजार भुजाओंमें से केवल चार भुजाओंको छोड़ दिया और उसे शंकरजीका परिकर बना दिया। वैष्णवजन भगवान्का प्रिय और वैष्णव - गुरु मानकर उनका आदर एवं सम्मान करते हैं। भगवद् धामोंमें सर्वत्र ही शंकरजी क्षेत्रपाल धाम -रक्षकके रूपमें गोपीभाव अंगीकार कर श्रीगोपीश्वरके नामसे प्रसिद्ध हैं और योग्य जीवोंको कृष्ण -प्रेम दानकर वृन्दावनमें प्रवेश कराते हैं। श्रीमद्भागवतमें भी ‘वैष्णवानां यथा शम्भुः ’ शंकरजीको वैष्णव - माना गया है। भगवान्का कोई भी आदेश अप्रिय होने पर भी सर्वथा पालन करनेके लिए तत्पर रहते हैं। समुद्र -मंथनके बाद विष्णुकी इच्छा जानकर विषको जगत्की रक्षा की। अपने प्रभु श्रीकृष्णकी इच्छा जानकर श्रीशंकराचार्यके रूपमें वेद -विरुद्ध मायावादका प्रचार कर शुद्ध - और भगवत् -तत्त्वज्ञानको आच्छादित किया। नास्तिक बौद्धोंका दमन कर निरीश्वर कर्मकाण्डको ध्वस्त किया। इसप्रकार भगवानके आदेशको सदैव पालन कर प्रभुकी मनोऽभीष्ट सेवा करते हैं।

यद्यपि वैष्णवों के सम्बन्ध में शिवरात्रि व्रतानुष्ठान का कोई प्रयोजन नहीं है , तथापि सदाचार निबन्धन यहाँ उसका वर्णन किया जाता है। फाल्गुन मास की कृष्ण चतुर्दशी तिथि सें इस व्रत का अनुष्ठान करना चाहिये। श्रीकृष्ण प्रीति के निमित्त सर्वदा इस व्रत का अनुष्ठान वैष्णवों को करना चाहिये।

अतएव पद्मपुराण के व्रतखण्ड में लिखित है —सूर्योपासक हो , अथवा वैष्णव , किंवा अन्य देवोपासक हो , शिवरात्रि विमुख होने से उनकी पुजा फलवती नहीं होती है। और भी लिखित है कि —शिवरात्रि व्रत के प्रति अवज्ञा करने पर दोष होता है। शिवरात्रि व्रत के प्रति द्वेष करने पर जो फल होता है , उसका वर्णन कूर्मपुराण में भृगु प्रभृति मुनि वृन्द के निकट में स्वयं हरि किये हैं। नारायण परायण व्यक्तिगण की गति वैकुण्ठ में होती है , यह कथन सत्य है। किन्तु महेश्वर द्वेषी होने पर उनकी श्रीविष्णुधाम प्राप्ति नहीं होती है। शिव निन्दा पूर्वक सतत एकान्तभाव से मेरी पूजा करने से भी अयुत संख्यक नरक में प्रस्थान करना पड़ता है। अन्यत्र है —मद्भक्त शिव द्वेषी होने से किंवा शिव भक्त मद् द्वेषी होने से चन्द्र सूर्य स्थिति अर्थात् प्रलयकाल पर्यन्त उन सबको नरक में पच्यमान होना पड़ता है। अतएव हयशीर्ष में भी हरिहर प्रतिष्ठा में श्रीभगवान् ने कहा है —जो शिव हैं , सो ही मैं हूँ , और जो मैं हूँ , सो हो शिव है। आकाश और वायु के भेद समान -कार्य -कारण के अभेद के तुल्य , दोनों को भी अभेद समझना चाहिये। वह्वृच परिशिष्ट में लिखित है —विष्णु ही शिवरूपी और शिव ही विष्णु -रूपी हैं। विष्णु ही शिव का हृदय ओर शिव ही विष्णु का हृदय हैं। विष्णु जिस प्रकार शिवमय हैं तद्रूप शिव भी विष्णुमय हैं। उभय में प्रभेद दिखाई नहीं देता है। ऐसे ही मदीय परमायु की सत्ता हो।

गुणावतारता रूप में एकत्व हेतु शिव , वैष्णवाग्रगण्य हैं , अतएव सदाचारवशतः शिवरात्रि व्रतानुष्ठान करना वैष्णवों के पक्ष में उचित है। कतिपय वैष्णव श्रीमद्भागवत के चतुर्थ स्कन्ध के प्रति लक्ष्य करके शिवव्रतानुष्ठान में विरत होते हैं। श्रीमद्भागवत के उक्त स्कन्ध में भृगुशाप कथन (४.२.२८) में वर्णित हुआ है , जो शिव व्रतानुष्ठान करेंगे अथवा उनके अनुगामी होंगे , उन सबको सर्व शास्त्र के प्रति कूलाचारी जानना होगा। सुतरां वे सब पाषण्ड नाम से अभिहित होते हैं [(भृगुजीने कहा —)जो शिवका व्रत पालन करेंगे अथवा जो शिवभक्तोंके अनुयायी होंगे , वे सत्शास्त्रोंके प्रतिकूल आचरण करेंगे और पाषण्डी होंगे।]।

शिवरात्रि -व्रत -निर्णय

स्कन्द पुराण में लिखित है—माघ एवं फाल्गुन इन दोनों के मध्यवर्ती कृष्णा चतुर्दशी ही शिवरात्रि कही गई है। यह तिथि सब यज्ञों की अपेक्षा श्रेष्ठ है। महीखण्ड में लिखित है—माघ मास के अन्तिम में एवं फाल्गुन मास के आदि में जो कृष्ण चतुर्दशी तिथि है, उसका नाम ही शिवरात्रि है। और भी नागरखण्ड में लिखित है—भूलोक में स्थावर वा चर, जितने शिवलिङ्ग विद्यमान हैं, चतुर्दशी को रात्रि में देवदेव श्रीमहादेव उन सबमें अधिष्ठित होते हैं। इसी कारण, चतुर्दशी तिथि को शिवरात्रि कही जाती है। अतएव यह तिथि श्रीशिव की प्रिय तिथि है।
सबके पक्ष में शुद्धा चतुर्दशी तिथि में उपवास करना चाहिये। किन्तु
विद्धा चतुर्दशी यदि प्रदोष व्यापिनी वा तदपेक्षा अधिक काल व्यापिनी होती है तो वैष्णव भिन्न अन्योपासकगण कर्त्तृक वह तिथि ग्रहणीया है। उस विषय में कथित है—महादेव के प्रियपात्रवृन्द, प्रदोष व्यापिनी शिवरात्रि में ही व्रत पालन करें। कारण, उसमें ही उपवास निर्धारित हुआ है। उक्त शिवरात्रि में रात्रि जागरण करना पड़ता है। और भी कथित है—विज्ञगण के मत में चतुर्दण्डात्मक समय ही सूर्यास्त पश्चात् प्रदोष नाम से अभिहित है। उभय दिन प्रदोष व्यापिनी चतुर्दशी होने पर प्रथम दिन में उपवास रहना वैष्णव भिन्न अपर के पक्ष में विहित है। प्रथम दिन त्रयोदशी विद्धा होने पर प्रथम दिन व्रत करना वैष्णव के पक्ष में उचित नहीं है। यह साधुगण सम्मत सिद्धान्त है। कारण उक्त है—शिवरात्रि व्रत में त्रयोदशीविद्धा परित्याग करने के योग्या है। अतएव पराशर कहते हैं—हे राजन्‌! माघी कृष्णा चतुर्दशी में अमावस्या का योग होने पर शिवरात्रि व्रत पालन करना चाहिये। यह व्रत श्री महादेव को प्रसन्न करनेवाला है। किन्तु श्रीशिव के प्रीतिप्रद यह है। किन्तु यह उक्त त्रयोदशी संयुक्ता चतुर्दशी वर्जनीय है।

योग एवं वेध
लोकाक्षि ने कहा है—दो मुहूर्त्त समय को योग कहते हैं एवं एक मुहूर्त्त
समय को वेध कहते हैं। शिवरात्रि में उपवास, रात्रि में श्रीशिवपुजा, एवं जागरण
यह त्रिविध अनुष्ठान यथाविधि सम्पन्न करना विज्ञजन के पक्ष में एकान्त कर्त्तव्य है।

शिव-व्रत की विधि
व्रती व्यक्ति, पवित्र भाव से सन्ध्या समय में शिव-मन्दिर में जाकर आचमन पूर्वक
के सम्मुख में सङ्कल्प करे। तत्पश्चात् पूजा में प्रवृत्त होना चाहिये। द्विजातिगण, पञ्चाक्षर “नम: शिवाय” मन्त्र से वा शतरुद्र मन्त्र से क्षीरादि
एवं घृत, मधु, द्राक्षारस, दधि प्रभृति के द्वारा तथा शुद्ध जलधारा के द्वारा महादेव को स्नान करावे। विधानानुसार गन्ध, पुष्प, तिल इत्यादि द्वारा पूजा समापन करके धूप, दीप अर्पणपूर्वक शङ्ख द्वारा अर्घ्य प्रदान करे।

शिव प्रार्थना मन्त्र गौरीवल्लभ देवेश सर्पाढ्य शशिशेखर। वर्षपापविशुद्ध्यर्थमर्घ्यं मे प्रतिगृह्यताम्॥
अनुवाद—हे गौरीवल्लभ! हे देवेश! हे सर्पाढ्य! हे शशिशेखर! संवर्षकृत पापों के शोधनार्थ मैं यह अर्घ्य समर्पण करता हूँ, ग्रहण कीजिये।
इस मन्त्र से अर्घ्य प्रदान कर आचार्य की अर्चना करके उनको दक्षिणा अर्पण करे एवं यथाविधि रात्रि जागरण पूर्वक प्रातःकाल में व्रत का पारण करे।
वृन्दावनावनिपते! जयसोम! सोममौले! सनक-सनन्दन सनातन-नारदेड्य।
गोपीश्वर! व्रजविलासि युगांघ्रिपद्मे

प्रेम प्रयच्छ निरूपाधि नमो-नमस्ते॥
हे वृन्दावन के द्वारपाल! हे सोम (आप उमा सहित कृष्ण भक्ति करते हैं)! आपकी जय हो! हे आप, जिनका मस्तक चन्द्रमा से सुशोभित है, और जो सनक, सनंदन, सनातन और नारद के नेतृत्व वाले ऋषियों के लिए पूजनीय हैं! श्री श्री राधा-माधव व्रज-धाम में आनंदमय लीला करते हैं। हे गोपीश्वर! उन युगल किशोर के चरण कमलों में आप मुझे प्रेम प्रदान करें। इसी इच्छा से, मैं आपको बार-बार प्रणाम करता हूं। मुदा गोपेन्द्रस्यात्मज-भुजपरिष्वङ्ग-निधये स्फुरद्गोपीवृन्दैर्यमिह भगवन्तं प्रणयिभिः। तैर्भक्त्या स्वमभिलषितं प्राप्तमचिराद्- यमीतीरे गोपीश्वरमनुदिनं तं किल भजे॥
(श्रीश्रीव्रजविलास-स्तवः श्लोक ८७,
श्रीरघुनाथदास-गोस्वामि-पाद प्रणीता)
व्रजेन्द्रनन्दन श्यामसुन्दरकी भुजाओंके आलिंगनरूपी रत्नकी
प्राप्तिके लिये कृष्ण के प्रति प्रणय रखनेवाली गोपियोंने भक्तिपूर्वक जिन सदाशिवका भजन करके अत्यन्त शीघ्र ही अपनी मनोकामनाको प्राप्त किया था, यमुनाके तीरपर विराजमान उन गोपीश्वर महादेवका मैं प्रतिदिन भजन करता हूँ॥८७॥

शिवरात्रि-व्रत पारण का निर्णय यदि त्रयोदशी विद्धा चतुर्दशी में उपवास हो ओर दूसरे दिन दिवस व्यापिनी
चतुर्दशी हो तो, चतुर्दशी तिथि में ही पारण करना चाहिये। इस विषय में कहा गया है—परदिन अर्थात् पारण दिन में सूर्यास्त काल पर्यन्त व्यापिनी चतुर्दशी तिथि होने पर
दिन में ही पारण करना चाहिये। इसमें दोष नहीं है। एकादशी तिथि में अरुणोदय विद्धा का नियम है, तद्भिन्न समस्त तिथियों में सूर्योदय विद्धा का सिद्धान्त
गृहीत हुआ है, पूर्णा लक्षण से ही वेध लक्षण में द्वैविध्य हुये हैं।
शिवरात्रि व्रत विधान का वर्णन विस्तृत रूप से हुआ है। इस विषय में विशेष
विधि को जानने की इच्छा हो तो, शिवधर्म्मोत्तरादि ग्रन्थ से जानना आवश्यक होगा। इस व्रत का माहात्म्य सर्वत्र प्रसिद्ध है। लिङ्गपूजा एवं रात्रि जागरण करने पर ताद्दृश पापरूप व्याध भी मुक्त हुआ था।

शिवरात्रि-व्रत-माहात्म्य नागरखण्ड में लिखित है—एक चण्डाल ने शिवरात्रि को न जानकर भी उपवास और जागरण पूर्वक अनादि लिङ्ग की पूजा करके पापरहित हो, शिव का पार्षद पद प्राप्त किया था। स्कन्द पुराण में लिखित है—चतुर्दशी में शिव पूजन करके निशा जागरण करने पर पुनर्वार जननी का स्तन्य पान नहीं करना पड़ता है, उस प्रकार आचरणकारि का पुनर्जन्म नहीं होता है। अन्यत्र और भी वर्णित है—उपवासादि नियम रहित होकर भी किसी प्रकार पुण्य विशेष से शिवरात्रि में जागरण करने पर अन्त्यज व्यक्ति भी रुद्र के सारूप्यादि युक्त पार्षदत्व प्राप्त करता है। वैष्णव होकर शिवरात्रि व्रत करने से कृष्ण-भक्ति रस-सारवर्षी रुद्र के प्रसाद से श्रीकृष्ण में प्रेम-भक्ति वर्द्धित होती है।

श्रीगौर-पूर्णिमा
वन्दे फाल्गुनपूर्णिमाम्। यस्यां श्रीकृष्णचैतन्योऽवतीर्णः कृष्णनामभिः॥
— (चैतन्य चरितामृत आदि-लीला १३/१९)
श्रीराधाकृष्ण-मिलित-रूप, मूल-अवतारी, गोलोकनाथ श्रीगौरचन्द्र अपने गौर-प्रकोष्ठ से, श्रीकृष्णनाम सहित, भौम- में जिस पूर्णिमा में अवतीर्ण हुए थे, मैं, उस सभी सद्गुणों से पूर्ण, अप्राकृत सेवा मूलक—फाल्गुनी-पूर्णिमा तिथिवरा (तिथि-श्रेष्ठा) की वन्दना करता हूँ।
“चौद्दशत सातशके मास जे फाल्गुन। पौर्णमासीर संध्याकाले हैले शुभक्षण॥
अ-कलंक गौरचन्द्र दिला दरशन।
स- चन्द्रे आर कोन् प्रयोजन?”
— (चैतन्य चरितामृत)
१४०७ शकाब्द में फाल्गुण मास की पूर्णमासी की संध्या में शुभ क्षण उपस्थित होने पर अ- गौरचन्द्र प्रकट हुए। तब स-कलंक चन्द्र की और क्या आवश्यकता है? इस प्रकार समस्त गुणों का आश्रय स्वरूप तथा सर्व-दोषहीन पूर्णचन्द्र गौरहरि ने श्रीशची-गर्भ-सिन्धु (शचीमाता के गर्भ) से नवद्वीप के अन्तर्गत श्रीमायापुर-धाम में प्रकाशित होकर अपने अनर्पितचर (जो पहले कभी दिया नहीं गया, ऐसे) परम-औदार्य (परम उदारता)-गुण के आलोक द्वारा समग्र विश्व को उद्भासित (प्रकाशित) तथा प्लावित (सरोभार) किया था।
इस विशेष दिन में, गौरांग महाप्रभु के गुणगान में मत्त होकर पूरा दिन व्रत-उपवास पालन, शाम को महाप्रभु का अभिषेक व नृत्य- करते हुए रात्रि जागरण तथा दूसरे दिन महाप्रभु की पूजा के बाद यथाविधि पारण,—यह शुद्ध-भक्ति-पिपासु जीव को ही करना चाहिए। श्रीहरिभक्ति-विलास में स्पष्ट रूप से आदेश दिया गया है कि, के जन्म- में या जयन्ती मात्र में ही अवश्य उपवास करना चाहिए। “तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ”—(गीता १६/२४) वाक्य के समस्त शास्त्रों के प्रमाण द्वारा श्रीगौरसुन्दर स्वयंरूप भगवान् के रूप में हुए हैं। “अतः जिस प्रकार श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी में उपवास आदि व्रत का पालन करना होता है, उसी प्रकार श्रीगौरसुन्दर की आविर्भाव तिथि—फाल्गुनी पूर्णिमा में भी उपवास आदि नियम परिपालित किये जायेंगे।”—(साप्ताहिक गौड़ीय ९ वाँ वर्ष,
४०वीं संख्या, ६६९ पृष्ठ)।
श्रीहरिभक्तिविलास-ग्रन्थ में, इस व्रतोपवास के संबंध में स्पष्ट
उल्लेख न मिलने के कारण, - व्यक्ति इस व्रत को पालन करने के विषय में उदासीन
रहते हैं। जिस कारण से उक्त ग्रंथ के प्रणेता (रचयिता) ने उसका स्पष्ट रूप से
उल्लेख नहीं किया है, वह है कि, गौर-अवतार—‘छन्न कलौ’ (भागवत ७/९/३८) गुप्त रूप से -तत्त्व हैं। किन्तु श्रीचैतन्य-लीला के व्यास नित्य-गौरपार्षद श्रीवृन्दावनदास ठाकुर हमारे लिए इस गोपनीय वेद-तिथि के परम-उपास्यत्व को ही प्रकाशित किया है,—
चैतन्येर जन्मयात्रा फाल्गुणी-पूर्णिमा। ब्रह्मा-आदि ए तिथिर करे आराधना॥
— (चैतन्य भागवत आदि-खण्ड ३/४३)
श्रीचैतन्य महाप्रभु की जन्मयात्रा फाल्गुणी-पूर्णिमा तिथि को है।
ब्रह्मा-आदि सभी देवता इस तिथि की आराधना करते हैं।
ब्रह्मा आदि देवता भी श्रीचैतन्य महाप्रभु जी की जन्म-तिथि में उपवास
आदि व्रत- के द्वारा आराधना किया करते हैं। “प्रत्येक व्यक्ति के लिए हि उपवास आदि व्रत के द्वारा श्रीगौर-जन्म-तिथि की आराधना करना एकान्त कर्तव्य है।
गोस्वामियों के द्वारा पूर्व-आचरित अनुष्ठान—जो सिद्ध महाजनों तथा आचार्यों

में प्रचलित रहे हैं, उससे बिना किसी संदेह से प्रमाणित होता है कि, गोस्वामीगण, आचार्यगण, शुद्ध भक्तगण—सभी ने श्रीमन्महाप्रभु की जन्म-तिथि में उपवास आदि व्रत का पालन किया है। भोग-विलासी, स्मार्तपदावलेही (स्मार्त विचारधारा के तलवे चाटने वाले), प्राकृत-सहजिया, उत्पथगामी (कुपथगामी), आचार्य-संतान-ब्रुव (आचरणहीन होने पर भी स्वयं को आचार्यों की संतान कहने वाले), गोस्वामी-ब्रुव (स्वयं को गोस्वामी कहने वाला) आदि कोई व्यक्ति यदि विरुद्ध आचरण करता है तो उसे श्रीगोस्वामि-वर्ग के मत-विरोधी भोगमय आचरण के रूप में जानकर, त्यागना होगा—इसमें कोई संदेह नहीं है।"—(‘साप्ताहिक गौड़ीय’ ९वाँ वर्ष, ४०वीं संख्या, २३ मई, १९३१)।
श्रीचैतन्य महाप्रभु जी ने स्वयं भी श्रीसनातन गोस्वामी से कहा है,— “एकादशी, जन्माष्टमी, वामनद्वादशी। श्रीरामनवमी आर नृसिंह-चतुर्द्दशी॥
सबे बिद्धा-त्याग, अबिद्धा-करण।
अकरणे दोष, कैले भक्तिर लभन॥”
— (चैतन्य चरितामृत मध्य-लीला २४/३३६, ३३७)
, एकादशी, जन्माष्टमी, वामन-द्वादशी, श्रीरामनवमी और नृसिंह-चतुर्द्दशी,
सब में विद्धा तिथिओं को त्यागकर अविद्धा- का पालन करना चाहिए। इनका पालन नहीं करने से दोष होता है और करने से भक्ति लाभ होती है।
— इस उपदेश के द्वारा पता चलता है कि, समस्त भगवत्-जन्म तिथियों को ही विद्धा- छोड़कर पालन करना चाहिए तथा नहीं पालन करने से दोष लगता है और पालन करने पर शुद्ध-भक्ति लाभ होती है। इसके द्वारा समझना होगा कि, महाप्रभु ने दूसरी ओर फाल्गुनी पूर्णिमा, श्रीनित्यानन्द- तथा श्रीअद्वैत-सप्तमी के सम्बन्ध में भी एक ही प्रकार के व्रतोपवास को पालन करने के नियम तथा पालन-अपालन करने के फल-अफल के विषय में बताया हैं। जिन्हें शुद्ध- लाभ करने के लिए उपयुक्त सुकृति प्राप्त हुई है, वे ही मात्र इन सब बातों के समस्त प्रकार के तात्पर्य को अनुभव कर सकते हैं।

चातुर्मास्य
(जगद्गुरु श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती प्रभुपाद)

सभी शास्त्रों में ही चातुर्मास्य का उल्लेख
वेद-शास्त्रों में कई स्थानों पर चातुर्मास्य पालन करने की कथा एवं चातुर्मास्य के कृत्यों का उल्लेख है। धर्म-शास्त्रों भी सत्कर्मी के लिए चातुर्मास्य-व्यवस्था का अभाव नही है। पुराणों में भी कई स्थानों पर चातुर्मास्य-व्रत की बात देखने को मिलती है।
आधुनिक स्मृति के लेखों में भी चातुर्मास्य-विधान, परमार्थी तथा स्मार्त
के लिए अपरिचित नहीं है। परमार्थ-स्मृति श्रीहरिभक्तिविलास अथवा रघुनन्दन ठाकुर के कृत्य-तत्त्व में भी हम चातुर्मास्य-व्रत की बात देखते हैं।

तथा त्रिदण्डी—सभी के लिए ही चातुर्मास्य-व्रत कर्मकाण्डीय विचार में ही केवल चातुर्मास्य-पालन का फल वर्णित है, ऐसा नहीं है। ‘काठक गुह्यसुत्र’ में भी हम यति धर्म-निरुपण में पाठ करते हैं कि—
“ ग्रामे नगरे पंचरात्रकम्। वर्षासु मासांश्च चतुरो वसेत्॥” (वर्षा के अलावा, अन्य समय ग्राम में एक रात और नगर में पाँच रात तक निवास
कर सकते हैं परन्तु वर्षा के चारों महीने निरन्तर वास कर सकते हैं)।
एकदण्डी ज्ञानीगण तथा त्रिदण्डी भक्तगण दोनों ही चातुर्मास्य-व्रत धारण (पालन) करते हैं। श्रीशंकर- के अनुयायिओं में भी चातुर्मास्य-व्रत की व्यवस्था है।

श्रीगौरसुन्दर के द्वारा चातुर्मास्य-व्रत पालन
गौरसुन्दर ने भी चातुर्मास्य उपस्थित होने पर कावेरी के तट पर श्रीरंग-मंदिर में चार महीने तक निवास किया। भक्तगण चार महीनों के लिए श्रीनीलाचल (पुरी) में श्रीगौरांग महाप्रभु के श्रीचरणों में प्रत्येक वर्ष ही जाया करते थे और वहाँ उनके अवस्थान की बात लीला-लेखकों के ग्रंथों में देखी जाती है।

आश्रमों के हिन्दु मात्र के लिए ही चातुर्मास्य-व्रत
चारो प्रकार के आश्रमों में ही चातुर्मास्य व्रत पालन करने की व्यवस्था
है। कष्टकर होने के कारण वे समस्त प्राचीन रीतियाँ धीरे-धीरे समाज से खत्म होती जा रही हैं। फलकामी कर्मी लोगों में अथवा निष्काम भक्त-सम्प्रदाय में व्रत-पालन का तरीका कुछ-कुछ अलग होने पर भी सभी हिन्दू लोग इस व्रत का सम्मान अवश्य करते हैं।

चातुर्मास्य में भोग-परित्याग का आदर्श
इसमें भोग-त्याग की विधी पूरी तरह से व्यक्त हुई है। भोग-त्याग की विधि— कर्मी, ज्ञानी तथा भक्त तीनों प्रकार के समाज में ही समान रूप से आदरणीय वस्तु है। अतः तीनों पथों के समस्त अनुयायी आर्यगण (भारतवासी) चारों आश्रमों में चातुर्मास्य का सम्मान करते हैं। जो लोग बिल्कुल असमर्थ हैं, वे बहुत दिनों तक नियमों के अधीन होने को सुविधाजनक नहीं मानकर धीरे-धीरे उन सभी व्रत आदि नियमों में शिथिलता प्रदर्शित कर रहे हैं।

त्याग के उद्देश से ही गृहस्थों के द्वारा भोग-स्वीकार

आश्रमों में से तीन आश्रमों में अर्थात् ब्रह्मचारी, तथा भिक्षुओं के
में भोग का कोई माहात्म्य नहीं है। केवल गृहस्थों के द्वारा कर्त्तव्य-पालन के विषय में जो निर्दिष्ट-भोग का भाव (शास्त्रों के द्वारा) आदेशित है, वह भी भोग-त्याग के उद्देश्य से ही है। जिन लोगों को आठ महीनों के दौरान गृहस्थ-धर्म के पालन का अधिकार बीच-बीच में प्राप्त होता है, वर्ष के वर्षाकाल अर्थात् चार महीनों तक भोग-त्याग-विधि पालन कर बाकी आश्रमियों के साथ भोग त्याग करके रहते हैं।

लिए कार्तिक अर्थात् ऊर्जा-विधि पालन करना कर्त्तव्य

जो लोग चार महीनों तक नियम सेवा पालन करने में असमर्थ हैं, लिए भी केवल अर्थात् कार्तिक मास में विशेष रूप से नियम- पालन करने की विधि है। कोई- भक्त चातुर्मास्य-व्रत पालन करने में असमर्थ होकर केवल दामोदर-व्रत का पालन करते हैं, देखकर कोई यह मत समझे कि, के लिए चातुर्मास्य-नियम की आवश्यकता नहीं है। वह लोगों के लिए अनुकल्प (वैकल्पिक, alternate) व्यवस्था मात्र है। चार महीनों तक नियम के अधीन रहकर हरि-सेवा करने से निसर्गतः (स्वाभाविक रूप से) मन में हरिसेवा की प्रवृत्ति उत्पन्न होगी। जीव स्वाभाविक रूप से हरि-परायणता का प्रदर्शन कर सकते हैं।

चातुर्मास्य का काल-निरूपण
चातुर्मास्य का समय वराह-पुराण में इस प्रकार लिखित है— “आषाढ़-शुक्लद्वादश्यां पौर्णमास्यामथापि वा। चातुर्मास्य- कुर्यात् कर्कट-संक्रमे॥
अभावे तु तुलार्केऽपि मंत्रेण नियमं व्रती। विधिवत्तत् समापयेत्॥”
आषाढ मास में शुक्ला द्वादशी तिथि से कार्तिक की शुक्ला द्वादशी तक ये
चार ‘चान्द्र-मास’ में इस व्रत के नियमों का पालन करेंगे। अथवा आषाढ़-पूर्णिमा से कार्तिक-पूर्णिमा तक चार ‘चान्द्र-मास’ तक इस व्रत को करने का नियम है। अथवा कर्कट- अर्थात् सौर-श्रावण से सौर-कार्तिक के अंत तक श्रीचातुर्मास्य व्रत का समय है। जो लोग चार महीनों तक ऊपर लिखित तीन प्रकार के विचारों के आधार पर चातुर्मास्य व्रत पालन करने में असमर्थ हैं, वे नियम-सेवा पालन करते हुए कार्तिक मास में अपने मंत्र-जाप आदि के द्वारा विधिपूर्वक व्रत पालन करेंगे। ऊर्ज्जाव्रत का पालन करना विशेष-कर्त्तव्य है, यह चौसठ प्रकार के भक्ति-अंगों के अन्तर्गत भी उल्लिखित हुआ है। कार्तिक शुक्ला द्वादशी से व्रत परिहार करना करेंगे अर्थात् पच्चीस दिन तक अवश्य ही व्रत का पालन करेंगे।

श्रीहरि-शयन के समय चातुर्मास्य-व्रत नहीं करने पर हानि वर्षा के चारों महीने शयन करते हैं। इस शयन काल में कृष्ण सेवा की प्रवृत्ति में वृद्धि के लिए, चातुर्मास्य-व्रत को पालन करना चाहिए। यह नित्य व्रत है। व्रत नहीं करने पर प्रत्यवाय (नुकसान) होता है। शास्त्रों मे कहा गया है—
इत्याश्वास्य प्रभोरग्रे गृहणीयान्नियमं व्रती। चातुर्मासेषु कर्त्तव्यं कृष्णभक्ति-विवृद्धये॥
— (हरिभक्तिविलास १५/५९)
, व्रती व्यक्ति, “हे जगन्नाथ! आपके शयन करने पर यह जगत सुप्त होत जाता है
एवं आपके जागने से यह जगत जागृत हो जाता है। हे अच्युत! हमारे ऊपर प्रसन्न होइये”—इस

प्रार्थना करते हुए, प्रभु के सामने कृष्ण- की वृद्धि के लिए आवश्यक-कृत्यों का नियम ग्रहण करेंगे।
यो विना नियमं मर्त्यो व्रतं वा जप्यमेव वा।
चातुर्मास्यं नयेन्मूर्खो जीवन्नपि मृतो हि सः॥
— (हरिभक्तिविलास १५/६० संख्या-धृत भविष्यपुराण-वचन)
, जो लोग नियम, व्रत अथवा जप के बिना चातुर्मास्य आदि बिता देते हैं, वे मूर्ख हैं तथा जीवित अवस्था में मृत के समान हैं।

व्रत में ग्रहणीय तथा वर्जनीय
की ग्रहणीय विधि में—भगवान् का नियमपूर्वक सेवा तथा जप-संकीर्तन आदि
है। स्कन्द पुराण के ब्रह्म-नारद संवाद में कहा गया है—
जप-होमाद्यनुष्ठानं नाम-संकीर्तनस्तथा।
स्वीकृत्य प्रार्थयेद्देवं गृहीतनियमो बुधः॥
— (हरिभक्तिविलास १५/६५)
नियम धारण करने वाले पण्डित व्यक्ति, जप, होम आदि का अनुष्ठान एवं नाम-
हुए भगवान् के सामने “हे देव! आपके समक्ष यह व्रत ग्रहण करता हूं; हे केशव! आपके अनुग्रह से यह बिना किसी बाधा से पूर्ण हो”—इस प्रकार की प्रार्थना करेंगे।
चातुर्मास्य-व्रत के वर्जनीय-विचार में लिखा गया है—
श्रावणे वर्ज्जयेच्छाकं दधि भाद्रपदे तथा।
मासि कार्तिके चामिषं त्यजेत्॥
— (हरिभक्तिविलास १५/६१)
चातुर्मास्य के प्रथम मास में साग, भाद्र मास में दही, आश्विन में दूध तथा कार्तिक में ‘आमिष’ भोजन का वर्जन करेंगे। ‘साग’- से कोई- व्यक्ति (रसोई में) हूई सब्ज़ी को समझते हैं। (वस्तुतः) भोग त्यागकर हरि-संकीर्तन का ही उपदेश दिया गया है।
‘रुच्य तत्तत्काल-लभ्यं फल- वर्ज्जयेत्।’ मौसम अनुसार फलमूल, जिसके आस्वादन में जीव को लोभ होता है तथा हरि की विस्मृति होती है, उसे अधिक मात्र में सेवन करने से जड़-वस्तु में अतिरिक्त अभिनिवेश (आसक्ति) होता है; अतः चातुर्मास्य मे उनका वर्जन कर संयत होकर हरि- कीर्तन करेंगे।
हरि-शयन में सीम, अर्थात् बरबटी, कलिंग या इन्द्रजौ, परवल, बैंगन तथा बासी
द्रव्य ग्रहण नहीं करेंगे। सफेद बैंगन अशुद्ध है, वह पूरी तरह से वर्जित है। समर्थवान लोगों को परवल, बैंगन आदि सुखकर खाद्य भी त्याग करना होगा।

लोगों के लिए रुचि के अनुकूल विषयों को

संकुचित करना ही हरि सेवा में उत्साह-वर्धक
कई प्रकार का त्याग एक ही साथ संभव नही है; जितना संभव हो सके समर्थवान
लोग उतना ही त्याग करेंगे। कर्मीगण भोग परायण होते है; त्याग के फल आदि रुचि उत्पन्न के लिए बताये गये हैं। कुल मिलाकर, त्याग के द्वारा अभिनिवेश (आसक्ति) कम होने पर -उन्मुखता का अवसर प्राप्त होता है। आत्म- अर्थात् नित्य हरिसेवन-धर्म को उदय करने लिए, रुचि के अनुकूल शरीर तथा मन के धर्म को जितना संकुचित किया जा सकता है, उतनी ही हरिसेवा में उत्साह की वृद्धि होगी।

के लिए व्रत-पालन की विधि चातुर्मास्य-काल में संभव होने पर व्रती एक बार मात्र प्रसाद पायेंगे, प्रतिदिन स्नान करेंगे, हरिनिष्ठ होंगे तथा चारों मास हरि की अर्चन (पूजा)

करेंगे। हरि के शयनकाल में विलासपूर्ण शैय्या आदि का ग्रहण निषिद्ध है, भूमि पर शयन करना ही उचित है।
व्रती व्यक्ति योग का अभ्यास करेंगे। सभी योगों में भक्तियोग ही प्रशस्त
है, क्योंकि वही है आत्मा की नित्य वृत्ति। राजयोग या ज्ञानयोग—मन की अनित्य-है तथा कर्मयोग या हठयोग—शरीर और कुछ हद तक मानसिक वृत्तिमय अर्थात् अनित्य है।
चार महीनों तक मौन व्रत ग्रहण करने पर केवल अविमिश्र (शुद्ध) हरि-कीर्तन
का अवसर प्राप्त होता है। पात्र के बिना, भूमि पर भोजन करने से स्वाभाविक हरि- सेवामयी दीनता उपस्थित होती है। भजन की सुष्ठुता में बाधा नहीं पड़ती है।
भक्तों की चातुर्मास्य-विधि को अनुकूल-रूप से भजन के सहायक मानना होगा। हरिशयन के समय नियम में रहना—विधि शास्त्रों का आदेश है।
च मद्भक्तो यो मासांश्चतुरः क्षिपेत्। व्रतैरनेकैर्नियमैः पाण्डव श्रेष्ठमानवः॥
— (हरिभक्तिविलास १५/१३)
हे पाण्डव! उस समय (के चार मास शयन के समय) मेरे जो भक्त बहुत सारे व्रत-नियमों के द्वारा उक्त चार महीनों का समय व्यतीत करते हैं, वे ही मनुष्यों में श्रेष्ठ है।
इसके अलावा केवल रात्रि-भोजन, पंचगव्य-भोजन, तीर्थ-स्नान, अयाचित (बिना माँगे) भोजन, हरिमंदिर में गीत-वाद्य (कीर्तन), शास्त्रामोद के द्वारा लोक-प्रमोदन (शास्त्र- से आनन्द लेते हुए लोगों को आनन्दित करना), बिना तेल के स्नान आदि भी चातुर्मास्य में नियम के रूप में ग्रहण किये जा सकते है।

के लिए व्रत-पालन के निषेध समर्थवान व्रती व्यक्ति नमक, तेल, मधु, पुष्पों का भोग त्याग करेंगे। सभी प्रकार के रस—कड़वा, अम्ल (खट्टा), तीखा, मधुर, क्षार (खारा), कषैला आदि का वर्जन करेंगे।
पान का सेवन करना निषेध है। समर्थवान् लोग पका हुआ द्रव्य ग्रहण नहीं करेंगे। दही, दूध, छाछ आदि का परित्याग कर सकते है। हांडी में पकाये भोजन का त्याग करना चातुर्मास्य का नियम है। शराब, मधु, मांस आदि वर्जनीय हैं। समर्थवान व्यक्ति एक दिन छोड़कर एक दिन उपवास करेंगे। हरिशयन में नाखून-केश आदि नहीं चाहिए। इसमें भद्रता अर्थात् विलासिता आ जाती है।

कृष्ण-सेवा तात्पर्य ही चातुर्मास्य का फल
व्रत के सभी फल, कर्मी लोगों के लिए हैं; ज्ञानी या भक्तों को लौकिक और पारलौकिक फल की आवश्यकता नहीं है। मोक्ष के इच्छुक ज्ञानियों का मुक्ति-फल भी लिए वर्जनीय है। भगवद्-भक्ति होने पर मोक्ष की कामना भी छोटी पड़ जाती है। पूरी तरह से कृष्ण सेवा में तत्पर होने पर ही चातुर्मास्य का चरम फल प्राप्त होता है।

’चातुर्मास्य-व्रत’ के सम्बन्ध में कुछ और तथ्य ‘ऊर्जादर-विशेषण’ का तात्पर्य जगद्गुरु श्रील प्रभुपाद द्वारा लिखित ‘चातुर्मास्य’ प्रबंध में चातुर्मास्य-व्रत के सम्बन्ध में समस्त शास्त्रीय उपदेश उल्लिखित हैं। ‘श्रीहरिभक्तिविलास’-ग्रंथ में इस व्रत को चारो वर्णों तथा चारों आश्रमों के सभी के लिए अवश्य-पालनीय के रूप में वर्णित किया गया है। ‘श्रीभक्तिरसामृत-सिन्धु’-ग्रंथ में, ६४ प्रकार के भक्ति-अंगों के विवरण में उल्लिखित “ऊर्जादरो विशेषेण”—वाक्य के द्वारा कई लोग समझते है कि, चातुर्मास्य में केवल मात्र

कार्तिक- ही गौड़ीय भक्तों के लिए पालनीय है। यहाँ वास्तविक विचार यह है कि, — “विशेष रूप से कार्तिक-व्रत या दामोदर-व्रत का पालन कहने पर—चातुर्मास्य का पालन अवश्य ही करना होगा। इनमें से कार्तिक-व्रत या दामोदर-व्रत को विशेष रूप से अर्थात् पूरी तरह से पालन करना होगा—यही समझाया गया है। कार्तिक-व्रत— चातुर्मास्य का अन्तिम आनुष्ठानिक व्रत है। अंतिम व्रत मात्र की रक्षा के सम्बन्ध में शास्त्रों में ‘विशेष’-शब्द का उल्लेख देखा जाता है।”

चातुर्मास्य-व्रत कर्मांग नहीं, शुद्ध-भक्तंग
फिर चातुर्मास्य-व्रत को ‘कर्म’ के अंग के रूप में विचार करना उचित नहीं
है। श्रीमन्महाप्रभु अपने पार्षदों के साथ जिस चातुर्मास्य-व्रत का पालन करते थे, वह कभी भी ‘कर्म’ का अंग नही हो सकता है। उन्होंने “कर्मनिन्दा कर्मत्याग— कय। कर्म हइते प्रेमभक्ति कृष्णे कभु नहे॥” सभी शास्त्रों में कर्म की निंदा
की गई है तथा कर्म का त्याग करने को कहा गया है। कर्म के द्वारा कभी भी कृष्ण
में प्रेम-भक्ति नहीं हो सकती है।—इस वाक्य में सर्वदा ‘कर्म’ के अंग को त्याग करने ही उपदेश दिया गया है। अतएव महाप्रभु के द्वारा इस व्रत का पालन होने के कारण
वह शुद्ध-भक्ति के विशेष-अंग के रूप में प्रमाणित होता है।
वास्तव में चातुर्मास्य-व्रत-विधान के द्वारा भोगोन्मुखी कर्मी जीवों
को भोग-विलास त्याग करने का अभ्यास कराकर सुकृति उत्पादन के माध्यम से उन्हें धीरे-धीरे प्रेम-भक्ति- परिचालित कराना ही भगवान् मूल उद्देश्य है। इसलिए इस व्रत को ‘’ का अंग नहीं समझना चाहिए। ‘कर्म’ के अंग को परित्याग करने के बहाने व्रत-वर्जित होकर गृह-व्रत-धर्म-पालन, तम्बाकू-पान-सेवन या प्रसाद-सेवा के नाम पर इन्द्रिय-तृप्तिकर भोजन-ग्रहण आदि निश्चय ही शुद्ध-भक्ति के अनुकूल नहीं हो सकते हैं। सामर्थ्य रहने पर भी आलस्य के कारण इस व्रत का अनादर करने पर श्रीहरि
को प्रसन्न करना असंभव है—यही समस्त शास्त्रों का उपदेश है।

व्रत के नियमों को पालन करने का फल
“ विष्णु योग-निद्रा धारण कर शेष रूपी सर्प-शय्या के उपर शयन करते हैं, क्षीर-समुद्र की सलिल तरंगों के द्वारा उनके दोनों चरण प्रक्षालित होते हैं तथा लक्ष्मी के कर- द्वारा उनके श्रीचरण परिमार्जित होते हैं। उस समय जो भगवद्‌- भक्त बहुत से व्रत-नियमों द्वारा चार मास व्यतीत करते हैं, वे नित्यकाल विष्णुलोक में अधिष्ठित होते हैं।”
”विष्णु-रहस्य-ग्रंथ में ब्रह्मा जी नारद से कहते हैं—हे नारद! विस्तृत
रूप से चातुर्मास्य-व्रत के नियम आदि को श्रवण करो; मनुष्य यदि व्रत के समय भक्ति सहित उन समस्त नियमों का पालन करते हैं तो उन्हे परम गति प्राप्त होगी। यह चातुर्मास्य वैष्णव-व्रत कोई व्यक्ति मन ही मन भी पालन करता है तो भी उसके सैकड़ो जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। जो व्यक्ति एकाहारी, शांत, नित्यस्नायी (प्रतिदिन स्नान करने वाला) और दृढ़-व्रती होकर चार मास श्रीहरि की पूजा करते हैं, श्रीविष्णुलोक में गमन करते हैं। जो भूमि में शयन करते हुए वर्ष के चार महीनों तक श्रीहरि का अर्चन करते हैं, उन्हें वैष्णवी गति प्राप्त होती है। जो व्यक्ति केशव को उद्देश्य कर व्रत-परायण होकर चातुर्मास्य बिताते हैं, मुक्ति उनकी मुट्ठी में होती है।
भविष्योत्तर- में भगवान्‌, युधिष्ठिर को उक्त व्रत की महिमा का वर्णन कर
रहे हैं,—”व्रत के समय वर्ष के चारों मास स्त्री हों या पुरुष हों, जो मेरे भक्त हैं, वे धर्मार्थ में दृढ़-व्रती होकर दंत-धावन कर व्रत के समस्त नियमों का पालन करेंगे। नियम- करने वाले व्यक्तियों के लिए समस्त नियमों के अलग-अलग फल वर्णित हो रहे हैं,—चातुर्मास्य- पालन करते हुए जो नमक का वर्जन करते है, मधुर स्वर तथा तले हुए आहार का वर्जन करने से दीर्घ-आयु धार्मिक पुत्र लाभ

होता है। हे पार्थ ! अभ्यंग (तेल मालिश) करने पर सुन्दर स्वास्थ्य तथा पका हुआ तेल वर्जन करने पर शत्रु का नाश होता है। मधुक (महुआ) परित्याग करने पर अतुल सौभाग्य और पुष्प -उपभोग वर्जन करने पर 'विद्याधर ' के समान कान्ति लाभ होती है। इस प्रकार योगाभ्यास -परायण व्यक्ति उन्नत लोक के अधिकारी होते हैं। जो व्यक्ति तीखा , कड़वा , खट्टा , मधुर , खारा तथा कषैला (कसैला)—इन समस्त रसों का वर्जन करते हैं , वे कभी भी वैरूप्य (कुरूपता) तथा वैगन्ध (बदबू) नही प्राप्त करते पान त्याग करने से सुखी और पका हुआ भोजन त्यागने से निर्मलता लाभ करते हैं। हे ! या पत्थर पर शयन करने से विष्णु का अनुचर हुआ जा सकता है। मधु तथा मांस का करने पर मुनि तथा योगी और सुरा एवं मद्य का वर्जन करने पर नीरोग और तेजस्वी हुआ जाता है। 'नाखुन ' तथा लोम 'केश ' धारण करने से प्रतिदिन गंगा -स्नान का फल लाभ होता है।

चातुर्मास्य -व्रत के समय मौनी होने से उनका आदेश कभी भी अपूर्ण नहीं होता तथा में भोजन करने से पृथ्वी का अधिपति हुआ जा सकता है। "नमो नारायणाय " मंत्र का जप करने पर सैकडों दान का पल लाभ होता है। विष्णु के श्रीचरणों की वंदना करने से गोदान का फल , उनके चरण -कमल के स्पर्श से मनुष्य सफलता प्राप्त करते हैं। विष्णु के मंदिर को मार्जन करने से कल्प काल तक स्थायी राज्य लाभ तथा उनका स्तव -स्तोत्र पाठ हुए तीन बार मन्दिर की परिक्रमा करने से विमान मे आरूढ़ होकर विष्णुलोक में जाया जा सकता है। विष्णु -मंदिर मे गीत - करने से भगवत् -पार्षदत्व लाभ होता है। जो नित्य शास्त्र व्याख्या के द्वारा लोगों को प्रोत्साहित करते हैं वे व्यास होकर अंत में विष्णुलोक में गमन करते हैं। पुष्प माला द्वारा पूजा तथा भगवान् के मंदिर में जल छिड़कने से , बैकुण्ठ लोक प्राप्त होता है। तीर्थादि मे स्नान करने से निर्मल देह और पंचगव्य (गाय सम्बन्धित पाँच वस्तुएँ —गाय का दूध , दही , घी , मूत्र , गोबर , इन सब) के भोजन से समस्त व्रत का फल प्राप्त किया जा सकता है। एकाहारी होने से अग्निहोत्र -यज्ञ तथा सभी तीर्थों की यात्रा का फल लाभ होता है। जो मनुष्य नित्य स्नान और जप -परायण होते हैं , उन्हें और नरक दर्शन नहीं करना पड़ता है। धातु के पात्र आदि को छोड़कर पत्ते में या पत्थर की शिला के उपर भोजन करने से पुष्कर -कुरुक्षेत्र -प्रयाग -स्नान आदि का फल लाभ होता है। इस प्रकार शरीर -मन-वाणी के द्वारा आचरण करने से व्रत करने वाले व्यक्ति के प्रति श्रीकेशव संतुष्ट होते हैं।

चातुर्मास्य -व्रत -विधि

" मास की शुक्ला द्वादशी में भगवान् श्रीहरि शयन की इच्छा करते हैं। उस समय आरती करते हुए पालकी में विराजमान कराकर गीत -वाद्य ध्वनि के साथ पवित्र सरोवर के तट ले जाना होगा। इसके बाद पुष्पांजलि प्रदान कर यान से भगवान् को अवतरण (उतार) कर तट पर विराजमान करके अपने हाथ -पैर धोकर और आचमन -न्यास आदि के बाद "जय जय महाविष्णो विश्वमनुगृहाण "—हे महाविष्णो ! आपकी जय हो , विश्व के प्रति आप अनुग्रह करें —इस प्रकार प्रार्थना कर जल में उन देवता की यथाविधि सुगंध -पुष्पादि के द्वारा प्रसन्नतापूर्वक स्नान और महापूजा करना कर्त्तव्य है। "हे देव ! श्वेतदीप में फणा -मणि सुशोभित शेष रूपी इस शैय्या में आप सुख से निद्रा लीजिए , आपको नमस्कार है। हे जगन्नाथ ! आपके शयन करने से यह जगत सुप्त हो जाता है और आपके जागरण से समग्र जगत जागृत हो जाता है। हे अच्युत ! मेरे प्रति आप प्रसन्न होवें "—चातुर्मास्य -व्रती व्यक्ति इस प्रकार प्रार्थना कर प्रभु के सामने ' भक्ति की वृद्धि के लिए ' चार मास तक आवश्यक कृत्यों का संकल्प ग्रहण करेंगे।

व्रती -व्यक्ति , श्रीकृष्ण के स्तव , पूजा और विविध अनुष्ठान आदि के द्वारा उन्हें प्रसन्न कर वैष्णवों के साथ श्रीचरणामृत और महाप्रसाद ग्रहण करेंगे। नृत्य - आदि के द्वारा भगवान् को परितुष्ट कर वैष्णवों के आनुगत्य में उन्हें उनके मंदिर में लाना होगा। अंत में व्रत - को सम्मानपूर्वक विदाई देकर भगवान् की आरती के कराकर भगवान् विष्णु को स्मरण करते हुए स्वयं भी भूमि पर शयन करेंगे। इस

प्रकार व्रताचरण करने से चार मास सुख से व्यतीत होंगे, अन्यथा दुःख, अधिक-वर्षा या अल्प-वर्षा द्वारा अकल्याण होगा।
स्कन्द पुराण में वर्णित चातुर्मास्य-व्रत के विधि-निषेध नीचे लिखित हैं,—
श्रावणे वर्जयेच्छाकं, दधि भाद्रपदे तथा। दुग्धमाश्वयुजे मासि, चामिषं त्यजेत्॥
श्रावण मास में साग, भाद्र मास में दही, आश्विन मास में दूध और कार्तिक
मास में ‘आमिष’ परित्यज्य है। धर्म में रत व्यक्ति जिन्होंने स्वाभाविक रूप से ही ‘आमिष’ का त्याग किया है, यहाँ ‘माषकलाइ’ (उड़द की दाल) को ही निषिद्ध किया गया है।
हे विप्रेन्द्र! जनार्दन के शयन करने पर जो व्यक्ति सीम और राजमाष बरबटी खाते हैं, उन्हें चाण्डाल से भी अधिक निकृष्ट समझना और वे महाप्रलय तक नारकी होंगे। हे मुनिश्रेष्ठ! जो व्यक्ति हरिशयन (चातुर्मास्य) के दौरान कलिंग (कलमी साग), पटल, बैंगन और सुरा (नशा)—ये समस्त भोजन करते हैं, उनके सात जन्मों के पुण्य नष्ट हो जाते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है। चातुर्मास्य के समय उत्पन्न होने वाले कुछ मनोहारी फल-मूल आदि में से ख़ुद को प्रिय लगने वाले कुछ फल-मूल का वर्जन करेंगे। नियम पालनकारी पंडित व्यक्ति-जप-होम आदि के अनुष्ठान और नाम-के द्वारा भगवान् से इस प्रकार प्रार्थना करेंगे, —“हे देव! आपके समक्ष मैं इस व्रत का संकल्प ग्रहण कर रहा हुँ; हे केशव! आपकी कृपा से यह बिना किसी बाधा के पूर्ण हो। हे जनार्दन! व्रत के समय, यदि मेरी मृत्यु भी हो जाये, तो भी आपके प्रसाद से ही वह संपूर्ण हो।” चातुर्मास्य-व्रत के अन्य जो समस्त कृत्य हैं, उनकी कार्तिक व्रत के प्रसंग में चर्चा की जायेगी। कृष्ण- में वृद्धि के लिए चार मास आवश्यक-कृत्यों का नियम ग्रहण करेंगे।

चातुर्मास्य के दौरान विभिन्न व्रत तथा व्रतोपवास चातुर्मास्य-व्रत के दौरान शयन एकादशी (आषाढ़ी शुक्ला एकादशी) अथवा आषाढ़ी पूर्णिमा के बाद श्रावण-कृत्यों में शुक्ला एकादशी से पूर्णिमा तक श्रीश्रीराधा-गोविन्द की झूलन-यात्रा, द्वादशी में श्रीकृष्ण का पवित्रारोपण, पूर्णिमा में श्रीबलदेव-आविर्भाव-व्रतोपवास आदि; भाद्र-कृत्यों में श्रीश्रीजन्माष्टमी-व्रतोपवास और नन्दोत्सव, पार्श्वैकादशी (श्रीहरि का करवट बदलना), श्रवण-द्वादशी, वामन-द्वादशी आदि; आश्विन-कृत्यों में शुक्ला दशमी को शुभ विजयोत्सव (दशहरा) और द्वादशी तथा पौर्णमास्य-आरम्भ पक्ष से कार्तिक-व्रत आरम्भ आदि एवं कार्तिक-कृत्यों में श्रीश्रीराधा-दामोदर की नित्य-पूजा, अर्चन, दान आदि, दीपदान, दीपमाला या आकाशदीप दान, बहुलाष्टमी, कृष्ण त्रयोदशी में यम-दीपदान, शुक्ल-प्रतिपद में श्रीगोवर्द्धन-पूजा, अन्नकूट महोत्सव, गो-क्रीडा और गो-पूजा, श्रीबलिराजपूजा, यमद्वितिया, गोपाष्टमी- गोष्ठाष्टमी, उत्थान-एकादशी, एकादशी से पूर्णिमा तक भीष्मपंचक, शुक्ला- द्वादशी और पूर्णिमा में चातुर्मास्य और कार्तिक व्रत या दामोदर व्रत का समापन आदि अनुष्ठान सात्वत-स्मृति श्रीहरिभक्ति-विलास आदि में विशेष रूप से और व्यवस्थित हुए हैं।
शयन-एकादशी, पार्श्व-एकादशी और उत्थान-एकादशी का पालन चातुर्मास्य व्रत के विशेष प्रयत्न के साथ करना चाहिए। आषाढ़, भाद्र और कार्तिक—इन तीन महीनों की शुक्ला द्वादशी में अनुराधा, श्रवणा और रेवती नक्षत्र के आदि, मध्य और अंत में श्रीहरि का शयन, पार्श्व-परिवर्तन (करवट बदलना) तथा उत्थान (जागरण) होता है। रात्रि में शयन, संध्या में पार्श्व-परिवर्तन, और दिन में श्रीहरि को जागरण करने की विधि है। भविष्योत्तर-पुराण में कहा गया है,—”हे पार्थ! जो श्रीहरि के शयन और उत्थान-तिथि का पालन करते हैं, उन्हें श्रीहरि का लोक प्राप्त होता है। भाद्र मास की शुक्ला एकादशी में, - व्यक्तियों के लिए, के साथ भगवान् का कटिदान-

उत्सव (पार्श्व-परिवर्तन) कर्त्तव्य है। भगवान् पहले बाएँ अंग मे शयन करते हैं और पार्श्व- के समय दक्षिण अंग मे शयन करते हैं। पद्म-पुराण में कहा है कि, क्षीर- में शेष रूपी शैय्या पर भगवान् श्रीहरि जिस दिन शयन करते हैं और जिस दिन उठते हैं, उन दिनों में जो लोग एकाग्र चित्त से उपवास करते हैं, श्रीहरि उन्हें उनके वांछित फल प्रदान करते हैं।”

चातुर्मास्य-व्रत
—त्रिदण्डि स्वामी श्रीभक्तिवेदान्त
नारायण गोस्वामी महाराज

चातुर्मास्य व्रतारम्भ वर्षाके चार महीने शयन करते हैं। इस शयनकालमें मनुष्यमात्रको अपनी हरि- सेवा- प्रवृत्तिको क्रमशः बढ़ाना चाहिए। इसलिये आगामी ३० आषाढ़, २८ जुलाई, बुधवारसे श्रीगौड़ीय वेदान्त-समितिके समस्त मठोंमें चातुर्मास्य-व्रत आरम्भ होगा। मठके समस्त त्रिदण्डि संन्यासीवृन्द, ब्रह्मचारी और वानप्रस्थीगण एवं समितिके अनुगत समस्त गृहस्थ भक्तजन उसी दिनसे चार महीनों तक नियम-सेवाका विधिवत पालन करना आरम्भ करेंगे।
कुछ लोगोंका ख्याल है कि चातुर्मास्य व्रत एक कर्मकाण्डीय व्यापार है। किन्तु उनका यह ख्याल सम्पूर्णतः निराधार है। क्या कर्मी, क्या ज्ञानी, क्या भक्त और क्या गृहस्थ, ब्रह्मचारी, संन्यासी, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यादि, प्रत्येक हिन्दूके लिये चातुर्मास्य व्रतका पालन करना कर्त्तव्य है। कोई-कोई चार महीनों तक नियम-सेवा पालन करनेमें असमर्थ होते हैं, इसलिये वे चार महीनेमें से केवल एक महीने तक दामोदर व्रत-या कार्त्तिक व्रतका ही पालन करते हैं। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि चातुर्मास्य-व्रत पालन करनेकी आवश्यकता ही नहीं है।

चातुर्मास्य व्रतकी समय गणना
चातुर्मास्यकी गणना तीन प्रकारसे होती है। (१) आषाढ़ महीनेकी शुक्ला द्वादशीसे कार्त्तिक शुक्ला द्वादशी तक। (२) आषाढ़ी पूर्णिमासे कार्त्तिकी पूर्णिमा तक, और (३) सौर श्रावणसे सौर कार्त्तिक तक। इनमें से किसी भी एकके अनुसार चार महीनों तक नियम-सेवाका विधिवत् पालन करना चाहिये।

चातुर्मास्य व्रतकी विधि
सर्व- व्रतका संकल्प ग्रहण करना चाहिए। संकल्प ग्रहणका नियम यह है कि भगवान्के भगवान्के सामने हाथ जोड़ कर एकान्त मनसे ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए—“हे भगवन्! मैं आपके सामने चातुर्मास्य-व्रत धारण करता हूँ। हे केशव! आप ऐसी कृपा करें कि मेरा यह व्रत बिना किसी विघ्न-बाधाके सिद्ध हो जाय।”
व्रतके दिनोंमें तीर्थ वास, जमीन पर सोना, ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन,
पत्तलमें भोजन, अल्प आहार, शयन आदि उत्तम है। प्रतिदिन स्नान कर भगवान्की विधिवत् पूजा करनी चाहिए। पुराण-श्रवण, अखण्ड दीप-दान, इष्टदेवकी विधिवत् पूजा करना कर्त्तव्य है।
इन दिनोंके लिये एक दैनिक कार्यक्रम बना लेना अच्छा होता है। खूब तड़के बिछौनेसे उठ कर शौचादि नित्यक्रियासे निबट कर अपने अधिकारके अनुसार नियमपूर्वक संध्या-आह्निक, पूजा-पाठ और हरिनाम करना चाहिए। कोई संख्या कर नियमितरूपसे हरिनाम करना चाहिए। भगवान्के प्रेमी भक्तोंके निकट श्रीमद्भागवत आदि भक्ति-ग्रन्थोंका श्रवण करना चाहिए। उसके अभावमें नियमितरूपसे स्वयं ही पाठ करना चाहिए। नियमितरूपसे साधुसङ्गमें श्रीतुलसी महारानीकी, भगवानके मन्दिरोंकी और मथुरा, वृन्दावन, पुरी, द्वारका आदि धामोंकी परिक्रमा करनी चाहिए। साधुसङ्गमें नवधा भक्तिका पालन करना सर्वोत्तम विधि है। नवधा भक्ति इस प्रकार है—
(१) श्रवण— नाम, रूप, गुण और लीला-कथाओंका श्रवण।
(२) कीर्त्तन— नाम, रूप, गुण और लीला-कथाओंका कीर्त्तन करना।

(३) स्मरण—भगवानके नाम, रूप, गुण और लीला-कथाओंका स्मरण करना।
(४) पादसेवन—देशकालादिके अनुसार परिचर्या और धामादि परिक्रमा।
(५) अर्चन—षोडशोपचार द्वारा भगवानका पूजन।
“आसनं स्वागतं पाद्यमर्घमाचमनीयकम्।
मधुपर्काचमस्नानं वसनाभरणानि च।
गन्धपुष्पे धूपदीपौ नैवेद्यं वन्दनं तथा॥”
षोडशोपचार—आसन, स्वागत, पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, मधुपर्क, स्नान, वस्त्र, उपवीत, भूषण, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, और नैवेद्य, माल्य या वन्दना।)
(६) वन्दन—विविध प्रकारके स्तोत्रके द्वारा वन्दना करना।
(७) दास्य—मैं भगवानका दास हूँ—ऐसी भावना करना।
(८) सख्य—सख्यभावकी भावना करना।
(९) आत्मनिवेदन—शरीरसे लेकर शुद्ध आत्मा तक सब कुछ भगवानको अर्पण करना।
यूँ तो नवधा भक्तिके किसी भी अङ्गका विधिवत् पालन करनेसे अभीष्ट पूर्ण
हो सकता है, फिर भी हरिनाम-संकीर्तन सर्वोपरि है। क्योंकि कृष्णनाम और कृष्ण-स्वरूप एक ही वस्तु हैं। अधिकन्तु कृष्ण-स्वरूपकी अपेक्षा कृष्णनाम अधिक दयालु और पतित-पावन हैं। नाम-संकीर्त्तनमें भक्तिके ६४ अङ्ग पूर्ण मात्रामें अनुस्यूत (गूँथे या पिरोये हुए) रहते हैं। नामसंकीर्तन करनेसे नवधा भक्तिका पालन करना हो जाता है। इसलिये इन दिनों प्रतिदिन सत्सङ्गमें, मन्दिरमें अथवा इनके अभावमें किसी निर्जन स्थानमें तुलसी महारानीके समीप श्रद्धापूर्वक भावपूर्ण हृदयसे हरिनाम करना चाहिए।
एक बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि चातुर्मास्यके समस्त विधि-निषेधोंका विधिवत् पालन करके भी यदि भगवद्भक्तिका आचरण न किया जाय, तो सब कुछ प्राण-रहित शरीरकी भाँति बिलकुल व्यर्थ होता है।
जिस प्रकार एकादशीके दिन असमर्थ व्यक्तियोंके लिये अनुकल्प—फल-फूल-और
दूध आदिकी व्यवस्था की गयी है, उसी प्रकार चातुर्मास्यके चार महीनों तक नियम-सेवा पालन करनेमें असमर्थ व्यक्तियोंके लिए भी एक अनुकल्पकी व्यवस्था दी गयी है। वह व्यवस्था है—दामोदर-व्रत या कार्तिक व्रत। किन्तु यह अनुकल्प व्यवस्था केवल असमर्थ व्यक्तियोंके लिए ही है।

चातुर्मास्य व्रतमें निषेध भोगोंमें आसक्त होकर भगवान्को भूल जाता है॥ भगवान्को भूलना ही समस्त दुःखोंकी जड़ है। इसलिये विषयभोगोंका अधिक-से-अधिक जितना त्याग किया जाय, उतना ही अच्छा है। अपने भोगोंको जितना ही संकुचित किया जायेगा—मन और शरीरके धर्मोंको जितना ही कम किया जायेगा, साधक हरि-सेवामें उतना ही अधिक अग्रसर होगा।
चातुर्मास्यके एक-एक महीनेमें कुछ-कुछ वस्तुओंका व्यवहार विशेष रूपसे वर्जित है। जैसे—(१) श्रावणमें पालक, बथुआ एवं अन्य साग-पत्ते, (२) भाद्रमें दधि, (३) आश्विनमें दूध और (४) कार्त्तिकमें आमिष अर्थात् मांस जातीय वस्तुएँ; जैसे सरसों तेल आदि। इनके अतिरिक्त सेम, बरबटी फली, परवल, साधुसङ्गमें बैंगन, मसूर और उड़दका परित्याग करना चाहिए। वासी और दूषित अन्न भोजन नहीं करना चाहिए। सामर्थ्यवानोंके लिये नमक, तेल, मधु आदिका उपभोग वर्जनीय है॥ प्याज, लहसुन, नागरमोथा, लौकी, छत्री, गाजरका परित्याग करना चाहिए। धूम्रपान, मद्य-मांस, ताम्बूल आदिका सर्वथा वर्जन उचित है। व्रतके दिनोंमें अंकुर और वीज युक्त स्थानोंमे आवागमन निषिद्ध है। हरिकथाके अतिरिक्त सर्वदा मौन रहना चाहिए। ऐसे लोगोंसे दूर रहना चाहिए, जो व्रतका पालन नहीं कर रहे हों। कुसङ्गसे सर्वदा बचना चाहिए। प्रधान कुसङ्ग दो हैं—एक, भगवद्भजन नहीं करते और दूसरे, जो स्त्री-संगी हैं। नख और केश आदि नहीं कटवाना चाहिए; क्योंकि इनसे विलासिता बढ़ाती है और विलासिता हरिभजनके मार्गमें प्रधान बाधा है।

चातुर्मास्य व्रतका उद्देश्य चातुर्मास्य व्रतका पालन सभी लोग करते हैं। कर्मी—लौकिक और पारलौकिक सुख-भोगके उद्देश्य से, ज्ञानी—मोक्षके उद्देश्यसे, योगी-तपस्वी—सिद्धि प्राप्तिके उद्देश्यसे चातुर्मास्य व्रतका पालन करते हैं। परन्तु इसका उद्देश्य इन्हीं नश्वर फलों तक ही सीमित नहीं है। इसका सर्व-प्रधान और चरम उद्देश्य कृष्णप्रेमकी प्राप्ति है। तब शास्त्रोंमें चातुर्मास्यका जो लौकिक और स्वर्गीय माहात्म्य वर्णन किया गया है, उसका तात्पर्य विषय भोगोंमें आसक्त कर्मियों और मोक्षसुखमें आबद्ध ज्ञानियोंको उन फलोंका लोभ दिखलाकर उन्हें भक्ति मार्गमें प्रवेश करानेके लिये है; जैसे किसी रोगी-बालकको मिठाईका लोभ दिखलाकर दवा दी जाती है। अतएव शुद्ध कृष्णसेवाकी प्राप्ति ही चातुर्मास्य व्रतका प्रधान और अन्तिम उद्देश्य है।

चातुर्मास्य-व्रत का शास्त्रोक्त माहात्म्य
अतःपरं प्रवक्ष्यामि शयनोत्सवमुत्तमम्।
आषाढ़ीमवधिं कृत्वा हरेः स्वापस्तु कर्कटे॥१॥
मासान् यावत्स्यात् कार्त्तिकी द्विजाः।
अयं पुण्यतमः कालो हरेराराधनं प्रति॥२॥
जैमिनिने कहा—द्विजगण! अब मैं भगवान् श्रीहरिके अत्युत्तम शयनोत्सवके सम्बन्धमें बतला रहा हूँ, आप लोग श्रद्धापूर्वक श्रवण करें। सूर्यके कर्कट राशिके ऊपर पहुँचने पर प्रतिवर्ष आषाढ़ माहकी एकादशीसे लेकर कार्तिक माहकी एकादशी तक चार मास भगवान् श्रीहरि शयन करते हैं। ये चारों महीने भगवदाराधनाके
लिए अत्यन्त पुण्यतम काल हैं॥१-२॥
चातुर्मास्ये निवसति क्षेत्रे श्रीपुरुषोत्तमे।
साक्षाद्दृष्टिर्भगवतस्तन्मयं भक्तिसाधनम्॥७॥
मुनिगण! अधिक क्या कहूँ, पुरुषोत्तम क्षेत्रमें (पुरीधाममें) वासकर जो
मनुष्य चातुर्मास्य-व्रतका पालन करता है, प्रति भगवान्की साक्षात् दृष्टि पड़ती है।
भक्तिका साधन तो भगवान्का ही स्वरूप है॥७॥
भोगिभोगासने सप्तश्चातुर्मास्येषु वै विभुः।
सान्निध्यं न करोति जगद्गुरुः॥९॥
जगद्गुरु भगवान् श्रीहरि उक्त चार महीनों तक शेष-शय्याके ऊपर निद्रित रहते हैं।
इन दिनोंमें समस्त पुण्यक्षेत्रोंको भगवान्का सान्निध्य प्राप्त नहीं रहता
है॥९॥
मुक्तिदश्चक्षुषा दृष्टश्चातुर्मास्ये विशेषतः॥११॥
दूसरे-दूसरे समयोंकी अपेक्षा उक्त चातुर्मास्य कालमें वे (भगवान्)
आँखोंद्वारा देखे जानेपर विशेष रूपमें मुक्तिपद हुआ करते हैं॥११॥
चातुर्मास्यमथैकं यः कुर्याद्वै पापकृत्तमः।
विहाय सर्वपापानि वहिरन्तश्च निर्म्मलः।
नरसिंह-प्रसादेन वैकुण्ठ-भवनं व्रजेत्॥१६॥
जो उक्त क्षेत्रमें अर्थात् पुरीधाममें एक वर्ष भी चातुर्मास्य-व्रतका
पालन करता है, वह अतिशय पापी होनेपर भी समस्त पापोंसे छुटकारा प्राप्तकर बाह्य और अन्तः शुद्धि लाभकर भगवान् नृसिंहदेवकी कृपासे वैकुण्ठ लाभ करता है॥१६॥
तस्मान्नरः सर्वभावैर्विष्णोः शयन-पावितान्।
वार्षिकांश्चतुरो मासान्निवसेत् पुरुषोत्तमे॥१७॥
इसीलिए मैं कहता हूँ कि भगवान् अपने शयन द्वारा जिन चार मासोंको पवित्रता प्रदान किया करते हैं, उन चार मासोंतक पुरी धाममें वास करना ही सब प्रकारसे श्रेष्ठ कर्त्तव्य है॥१७॥
कुर्यादन्यन्न वा कुर्याज्जन्मसाफल्यमृच्छति।
आषाढ़ शुक्लैकादश्यां कुर्यात् स्वाप-महोत्सवम्॥१८॥
— षट्त्रिंशोऽध्याये
हे तपोधन! जो व्यक्ति इस मनुष्य जन्मको सफल बनाना चाहता है, वह चाहे कोई
भी दूसरा सत्कर्म करे अथवा न करे, उसके लिए पुरी धाममें वासकर आषाढ़ मासकी शुक्ला
दिन भगवान्का शयन-महोत्सव अवश्य करना चाहिए॥१८॥
— उत्कलखण्ड ३६ वें अध्यायसे
सदा कर्त्तुं न शक्नोति व्रतानि यदि मानवः।
चातुर्मास्यमनुप्राप्य तदा कुर्यात् प्रयत्नतः॥८०॥
यदि कोई मनुष्य समस्त व्रतोंका पालन करनेमें असमर्थ है, तो उसे
यत्नपूर्वक चातुर्मास्य व्रतका पालन करना चाहिए॥८०॥
भू-शय्या-ब्रह्मचर्यञ्च कश्चित् भक्ष्य-निषेधनम्।
एक-भक्तादि-नियमो नित्यदानं स्वशक्तितः॥८१॥

चातुर्मास्य व्रतका पालन करनेवाले व्यक्तियोंको जमीन पर सोना चाहिए, ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन करना चाहिए, अल्प आहार करना चाहिए अथवा एकभक्तादि- नियमका पालन करना (नित्यप्रति एक वैष्णवको भोजन कराकर स्वयं भोजन करना) चाहिए और प्रतिदिन अपनी शक्तिके अनुसार दान देना चाहिए॥८१॥
पुराण-श्रवणञ्चैव तदर्थाचरणं पुनः।
अखण्ड-दीपोद्वोधश्च महापूजेष्टदैवते॥८२॥
व्रतधारण करनेवाले व्यक्तिको पुराण-श्रवण करना चाहिए और उसके अनुसार आचरण करना चाहिए। अखण्ड-दीप दान करना चाहिए तथा इष्ट-देवकी विधिवत् पूजा करनी चाहिए॥८२॥
प्रभूतांकुर-बीजाढ्ये देशे चापि गतागतम्।
यत्नेन वर्जयेद्धीमान् महाधर्म विवृद्धये॥८३॥
उनको धर्मकी वृद्धिके लिए अंकुर और बीजयुक्त स्थानोंमें आना-जाना यत्नपूर्वक बन्द करना चाहिए॥८३॥
असम्भाष्य न सम्भाष्याश्चातुर्मास्य-व्रतस्थितैः।
मौनञ्चापि सदा कार्यं तथ्यं वक्तव्यमेव वा॥८४॥
चातुर्मास्य व्रतका पालन करनेवाले व्यक्ति उस व्यक्तिके साथ कभी भी बातचीत न करेंगे, जो संभाषण करनेके अयोग्य हैं। वे सर्वदा मौन रहेंगे तथा सत्य वचन बोलेंगे॥८४॥
मसूरांश्च काद्रवान् वर्जयेद्व्रती।
सदा शुचिभिरास्थेयं स्प्रष्टव्यो नाव्रती जनः॥८५॥
वे सर्वदा पवित्र रहेंगे, व्रतका आचरण न करनेवाले व्यक्तियोंका स्पर्श न करेंगे। वे निष्पाव (एक प्रकारका धान) एवं मसूर और कोदोका अन्न त्याग करेंगे॥
८५॥
दन्त-केशाम्बरादीनि नित्यं शोध्यानि यत्नतः।
अनिष्ट-चिन्ता नो कार्या व्रतिना हृद्यपि क्वचित्॥८६॥
प्रतिदिन यत्नपूर्वक अपने दाँतोंको, बालोंको तथा कपड़ोंको साफ करना चाहिए। हृदयमें किसीके अनिष्टकी कोई भी कामना नहीं करनी चाहिए॥८६॥
द्वादशेस्वपि मासेषु व्रतिनो यत् फलं भवेत्।
चातुर्मास्य-व्रतभृतां तत्फलं स्यादखण्डितम्॥८७॥
बारह महीनों तक अन्यान्य व्रतोंका आचरण करनेवाले व्यक्तिको जो फल प्राप्त होता है, चातुर्मास्य-व्रतका आचरण करनेवाला भी ठीक वही फल प्राप्त करता है॥८७॥
— काशीखंड ६०वें अध्यायसे

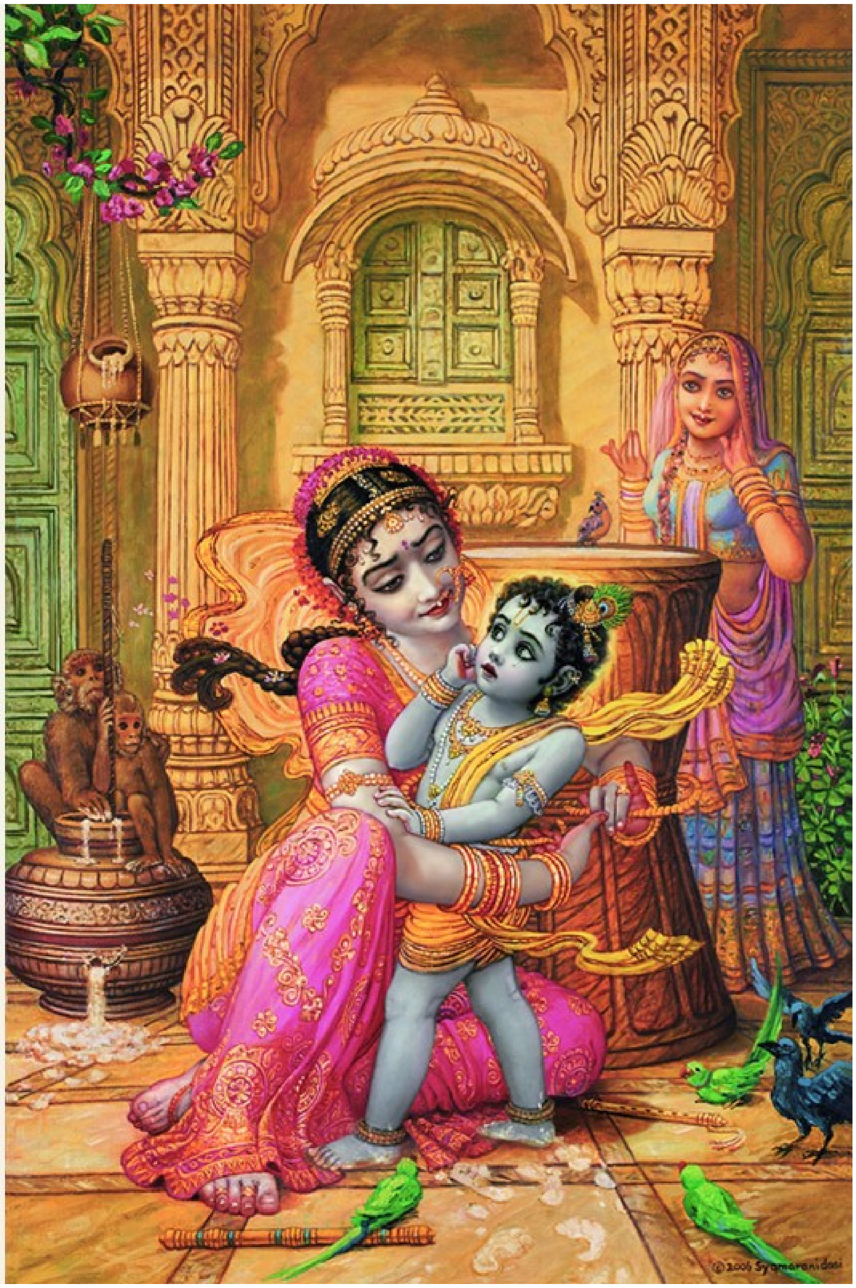

श्रीदामोदर-व्रत
चातुर्मास्य- के अंत में अर्थात् कार्तिक मास में यह दामोदर-व्रत किया जाता है। यह फिर ‘ऊर्ज्जाव्रत’, ‘कार्तिक-व्रत’, ‘नियम-सेवा’ आदि नामों से भी सुपरिचित है। परम-मनोहर श्रीदामबंधन-लीला कार्तिक-शुक्ला प्रतिपद में प्रकटित हुई थी, परमधन्य कार्तिक- ‘दामोदर’ नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस मास में व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण ने गिरिराज जी को धारण किया था, ‘वत्सपालक’ से वे गो- में उन्नत हुए, फिर वामन रूप में उन्होंने दैत्यराज-बलि को आत्मसात् किया था—इस प्रकार श्रीहरि की नाना मनोहर लीलाएँ घटित हुई हैं।

कार्तिक-मास का माहात्म्य

“स्कंद पुराण में ब्रह्मा जी नारद से कह रहे हैं— सभी तीर्थ स्थानों में
जो फल होता है, सभी प्रकार से दान से जो फल अर्जित होता है, वह, कार्तिक मास में अर्जित फल के कोटि अंश के एक अंश के बराबर भी नहीं होता। हे वत्स! एक ओर सभी तीर्थ, दक्षिणायुक्त यज्ञ, पुष्कर-कुरुक्षेत्र आदि में निवास, सुमेरु के समान स्वर्ण और समस्त दान तथा दूसरी ओर केशवप्रिय कार्तिक-व्रत है। हे नारद! विष्णु की के लिए कार्तिक मास में जो सत्कर्म हैं, वे समस्त ही अक्षय हैं। कार्तिक मास
सभी महीनों में उत्तम, पुण्यतम और पवित्रतम है। हे विप्रेन्द्र नारद! कार्तिक
मास में अर्जित पुण्य, समुद्र के समान अक्षय, हैं। हे ब्रह्मन्‌! कार्तिक मास के समान मास नहीं है, के समान कोई युग नहीं है; वेदों के जैसा कोई शास्त्र नहीं है, गंगा
के समान कोई तीर्थ नहीं है; कार्तिक मास वैष्णवों का सर्वदा प्रिय है। हे महामुने! जो वैष्णव भक्ति के साथ पूरे कार्तिक मास को व्यतीत करते है, वे पितृ- पुरुषों के उद्धारकर्ता होते हैं। श्रीदामोदर जिस प्रकार भक्त-वत्सल के रूप
में निखिल विश्व में सुविदित (प्रसिद्ध) हैं; उसी प्रकार उनसे संबंधित यह कार्तिक भी सबके लिए अत्यधिक प्रिय है। देहधारियों में मनुष्य-देह दुर्लभ और क्षण भंगुर है, किन्तु हरिवल्लभ कार्तिक मास अतिशय दुर्लभ है—जिस मास में प्रदीप मात्र करने से ही भगवान् श्रीहरि प्रसन्न हो जाते हैं और दूसरों का प्रदीप प्रज्ज्वलित करने से सुगति प्रदान करते हैं।

दामोदर व्रत का माहात्म्य
स्कन्द-पुराण में ब्रह्म-नारद संवाद में और भी कहा गया है,—
“हे नारद! जितने समस्त व्रत हैं, सभी का फल केवल एक जन्म के लिए होता है,
किन्तु कार्तिक में किये गये व्रतों का फल सैकडों जन्मों तक प्राप्त होता रहता है। हे विप्रेन्द्र! कार्तिक मास में वैष्णव व्रत श्रवण- आदि करते हुए कार्तिक-पूर्णिमा में उपवास के द्वारा अक्रूरतीर्थ में स्नान का फल लाभ होता है। वाराणसी, कुरुक्षेत्र, नैमिषारण्य, पुष्कर तीर्थ में जाने से पुण्य होता है, कार्तिक व्रत करने से वही प्राप्त किया जा सकता है। जिस व्यक्ति ने कभी भी यज्ञ नहीं किया है, कार्तिक व्रत के द्वारा उसकी विष्णु के परमपद में गति होती है। जिन समस्त पदार्थों का प्रतिदिन भोजन किया जाता है, कार्तिक मास में उनमें से कुछ को संकुचित करने पर अवश्य ही मुक्तिपद परम मंगलमय श्रीकृष्ण का सान्निध्य लाभ होता है। हे मुनिसत्तम! चारों वर्णों के लोगों द्वारा कार्तिक व्रत किये जाने पर कभी भी नीच योनि प्राप्त नहीं होगी। हे मुनिशार्द्दुल! जो व्यक्ति कार्तिक मास में यथाविधि व्रत धारण करते हैं, मुक्ति उनके हाथ में होती है। ऋषि-मुनियों द्वारा सेवित कार्तिक मास में किंचित मात्र व्रत पालन करने से भी महाफल लाभ करते हैं।”

दामोदर-व्रत नहीं करने का फल स्कंद-पुराण में ब्रह्मा जी नारद से कहते हैं—
"हे धार्मिक-श्रेष्ठ! जो व्यक्ति दुर्लभ मनुष्य जन्म प्राप्त कर कार्तिक व्रत का पालन नहीं करता है, वह पिता-माता की हत्या करने वाले पापी के समान पातकी है। जो व्यक्ति व्रत का कोई संकल्प न लेकर दामोदर प्रिय—कार्तिक मास को बिता देता है, वह सभी धर्मों से बहिष्कृत होकर तिर्यकयोनि (पशु-पक्षी योनि) प्राप्त करता है। हे मुनिश्रेष्ठ! जो मनुष्य कार्तिक मास में व्रत नहीं करता, उसे ब्रह्मघाती (ब्राह्मण हत्यारा), गो-घाती, स्वर्ण-चोर और सर्वथा मिथ्यावादी समझना। हे मुनिशार्द्दुल! करके यदि कोई विधवा-स्त्री कार्तिक मास में व्रत नहीं करती है तो, वह निश्चय ही नरकगामी होगी। गृहस्थ व्यक्तियों के द्वारा कार्तिक व्रत नहीं करने पर उनके इष्टापूर्त्त (यज्ञ, कुआँ खुदवाना, मन्दिर निर्माण आदि) कर्म विफल हो जायेंगे। ब्राह्मण यदि कार्तिक मास में व्रत नहीं

करता है तो इन्द्र आदि समस्त देवता उसके प्रति विमुख हो जाते हैं। हे विप्रेन्द्र! कार्तिक व्रत त्याग कर अन्य सैकडों याग-यज्ञ और बहुत श्राद्ध करने पर भी उत्तम गति लाभ नहीं होती। संन्यासी, विधवा और विशेष करके वर्णाश्रमी यदि कार्तिक मास में व्रत नहीं करते हैं, तो वे नरकगामी होंगे। हे विप्रेन्द्र! कार्तिक मास में व्रत पालन नहीं हुआ, तो उसके वेद-पुराण पाठ का क्या फल है? आजन्म पुण्यवान व्यक्ति भी यदि इस व्रत का पालन नहीं करता है तो उसके सारे संचित पुण्य नष्ट हो जाते हैं। सभी प्रकार का दान, जप एवं व्रत तपस्या, कार्तिक व्रत पालन नहीं करने से विफल हो जाते हैं। हे नारद! जो लोग कार्तिक मास में उत्तम वैष्णव-व्रत पालन नहीं करते हैं उन्हें इस संसार में पाप स्वरूप जानना। हे महामुने! जो व्यक्ति बिना नियम से कार्तिक मास अथवा चातुर्मास्य को व्यतीत करता है, वह कुलांगार ब्रह्महत्याकारी है। जो सभी व्यक्ति कार्तिक मास में व्रत, श्रावणी पूर्णिमा में ऋषि-तर्पण, चैत्र मास में विष्णु का दोलोत्सव, माघ-स्नान, श्रावण मास में रोहिण्यष्टमी और श्रवण-नक्षत्र-युक्ता द्वादशी व्रत नहीं करते हैं, उन सभी मूर्खों की अशेष दुर्गति का वर्णन करने में मैं अक्षम हूँ।"
पद्मपुराण में नारद जी शौनक आदि ऋषियों से कहते हैं—हे विप्रगण! नियम को
छोड़कर जो लोग धर्म-भूमि में कार्तिक मास त्याग देते हैं, श्रीकृष्ण उनके प्रति विमुख हो जाते हैं, क्योंकि कार्तिक मास उनका अत्यंत प्रिय है।
स्कन्द पुराण में ब्रह्म- संवाद में वर्णित हुआ हैं,—”हे पुत्र! जो समस्त
ब्राह्मण कार्तिक मास में दान, होम, जप, स्नान और श्रीहरि का व्रत नहीं करते हैं, वे नराधम हैं, निश्चय आत्म-वंचित और प्रार्थित फल की प्राप्ति में असमर्थ हैं। हे नारद! कार्तिक मास में जनार्दन की पूजा नहीं करने पर पितरों के साथ यमलोक में रहना पड़ता है। हज़ार करोड़ जन्मों के बाद दुर्लभ मनुष्य जन्म प्राप्त कर भक्ति भाव से कार्तिक मास में श्रीकेशव का अर्चन नहीं करने पर उसका जन्म ही निरर्थक है। जिसे
मास में भगवान् विष्णु की पूजा, विष्णु की कथा और वैष्णवों के दर्शन नहीं होते
हैं, उसके सभी पुण्य नष्ट हो जाते हैं।"

कार्तिक मास में विशेष कर्मों का माहात्म्य
हे द्विजोत्तम! मनुष्य कार्तिक मास में विष्णु को उद्देश्य कर जो भी कुछ
करता है, विशेष रूप से अन्न आदि का दान, होम, जप और तपस्या, उससे उसे अक्षय फल प्राप्त होता है। जो स्त्री कार्तिक मास में विष्णु के मन्दिर में चक्र का निर्माण करती है, वह वैकुण्ठ में नित्यकाल शोभायित होती है। कार्तिक मास में ब्रह्म-स्वरूप सर्वकाम-प्रदाता पलाश-पत्र (एक विशेष वृक्ष के पत्ते) में भोजन करने से पूरे जन्म में किये गये पाप नष्ट हो जाते हैं, सभी तीर्थों का फल प्राप्त होत जाते हैं और कभी भी नरक का दर्शन नहीं करना पड़ता। कार्तिक मास में गंगा-यमुना आदि में स्नान, सत्कथा का श्रवण, साधुओं की सेवा और ब्रह्म-पत्र (पलाश के पत्ते) में भोजन, ये सभी अभीष्ट प्रदान करते हैं।
हे विप्रेन्द्र! लोग कार्तिक मास में अरुणोदय या अंतिम प्रहर में भगवान्‌ दामोदर से पहले जाग जाते हैं, उन्हीं के होते हैं। हे ब्रह्मन्‌! साधु-सेवा, गोग्रास, विष्णु की कथा श्रवण, विष्णु का अर्चन और शेष प्रहर में जागरण, कलिकाल में कार्तिक मास में अति दुर्लभ हैं। जलदान, गोदान, सूर्य ग्रहण में कुरुक्षेत्र में स्नान का फल कार्तिक व्रत में एक ही दिन में लाभ हो जाता हैं। हे नारद! मनुष्य कार्तिक मास में भगवान् के गीति-शास्त्र की चर्चा करते हैं, उन्हें संसार में दोबारा आना नहीं पड़ता। जो नर कार्तिक मास में भक्तिपूर्वक नियम से विष्णु मंदिर की परिक्रमा, हरि के समक्ष भक्तिपूर्वक गीत, वाद्य और नृत्य करते हैं, विष्णु का सहस्त्रनाम, गजेन्द्र-मोक्षण का प्रसंग पाठ करते हैं, उन्हें परमपद प्राप्त होता है। कार्तिक में केशव के सामने कर्पूर के साथ अगुरु को जलाने और अंतिम प्रहर में स्तव और गान करने से श्वेतदीप

में निवास होता है। हे महामुने! सभी धर्मों को त्यागकर कार्तिक मास में केशव के सामने पुण्य-स्वरूप शास्त्रों की कथा श्रवण करना। कल्याण की इच्छा से ही हो या फिर भोग की इच्छा से, जो व्यक्ति हरिकथा श्रवण-कीर्तन रूपी शास्त्र-विनोदन के द्वारा कार्तिक मास का पालन करते हैं, वे अशेष दुर्गति से बच जाते हैं।
हे मुने! कार्तिक मास में यतन के साथ प्रतिदिन भागवत पाठ करने से अट्ठारह पुराणों को पाठ करने का फल लाभ होता है। मनुष्य ‘इष्टापूर्त्त’ आदि समस्त धर्मों का परित्याग कर कार्तिक मास में तीव्र भक्ति के साथ वैष्णवों के संग में निवास करेंगे। कार्तिक मास में जो प्रातःस्नान करते है, भूमि पर शयन करते हैं, ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, जप-परायण होते हैं और विष्णु का प्रसाद भोजी होकर दामोदर की अर्चन करते हैं, वे भजनानन्दी होकर हरि का सान्निध्य लाभ करते हैं। जो कार्तिक मास में, पलाश के पत्ते पर, विष्णु का नैवेद्य (प्रसाद) दिन में एक बार मात्र भोजन करते हैं, विशेष शक्तिमान्‌, और कीर्तिमान् होकर जन्म ग्रहण करते हैं। जो मनुष्य कार्तिक मास में श्रीहरि की पूजा के बाद विष्णु का प्रिय
खाण्ड और खीर भोग निवेदन करते हैं, यज्ञेश्वर उनके प्रति प्रसन्न होकर उन्हें
अपने लोक में स्थान प्रदान करते हैं।
स्कन्द पुराण में श्रीकृष्ण- संवाद में भी वर्णित हुआ है,—जो लोग
कार्तिक मास में स्नान, प्रातः जागरण, दीपदान और तुलसी-बागान की सेवा करते हैं, वे
के द्वारा वन्दनीय और विष्णु के प्रियतम होते हैं। हरि-जागरण, प्रातः स्नान, तुलसी-सेवन, व्रत का पालन और दीपदान—व्रती व्यक्ति, कार्तिक मास में इन पाँच व्रतों को भगवान् के सान्निध्य में स्थान लाभ करते हैं। विष्णु या शिव के निकट अथवा अश्वत्थ पेड़ के नीचे या तुलसी-बागान में हरि-जागरण करना कर्त्तव्य है। कार्तिक
मास में दीपदान में असमर्थ होने पर दूसरों के दीपों को जलाना अथवा वायु आदि से
उन दीपों की रक्षा करना, इसके अभाव में गाय, तुलसी और वैष्णव-ब्राह्मण की पूजा करनी

श्रीराधा-दामोदर इस मास के अधिदेवता श्रीदामोदर,—इस मास के अधिदेवता होने पर भी उनकी सर्वप्रियतमा श्रीमती
राधिका की पूजा उन्हीं के सान्निध्य में करना कर्त्तव्य है—() “सर्वशक्तिमान् दामोदर श्रीकृष्ण अपनी स्वरूप-शक्ति या ह्लादिनी-शक्ति के बिना पूजा ग्रहण नहीं करते हैं और फिर अंतरंगा या पराशक्ति श्रीराधादेवी अपने प्राणनाथ के बिना सब कुछ अस्वीकार कर देती हैं।” श्रीमती राधाराणी फिर “ऊर्ज्जेश्वरी”—नाम से भी परिचित हैं। श्रीश्रील रूप गोस्वामी ने “श्रीश्रीराधिका अष्टकम्” में उन्हें निखिल समय के अधिपति कार्तिक-मास की अधिष्ठात्री देवी के रूप में बताया हैं
— “निखिल-समय- कार्तिकस्याधिदेवीम्।”

“दामोदर-व्रत” के आरम्भ का समय
आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी में आलस्य रहित होकर इस व्रत का पालन करना
और फिर आश्विन की पूर्णिमा या तुला-संक्रमण में भी कार्तिक-व्रत आरम्भ करने का नियम है—“आश्विने शुक्लपक्षस्य प्रारम्भे हरिवासरे। अथवा पौर्णमासीतः संक्रातौ वा तुलागमे॥”—(हरिभक्तिविलास १६/१८२ धृत पाद्मवाक्य)। इनमें किसी भी समय व्रत आरम्भ क्यों न हो, सर्वत्र एक ही विधि मानी जायेगी।

“दामोदर-व्रत” पालन करने का स्थान
विशेष रूप से कार्तिक मास में, घर में रहकर इस व्रत का पालन नहीं करना
सभी प्रकार के यतन के साथ किसी तीर्थ स्थान में ही उक्त व्रत का पालन करना होता है—“ गृहे कार्त्तिके कूर्याद्विशेषेण तु कार्त्तिकम्। तीर्थे तु कार्तिकी सर्वयत्नेन भामिनी॥”—(स्कन्दपुराण)। जिस किसी भी स्थान पर ही क्यों न हो,

कार्तिक मास में स्नान, दान और विशेष रूप से श्रीदामोदर की पूजा फलदायक होती है। किन्तु साधारण स्थानों की अपेक्षा कुरुक्षेत्र में कोटि गुणा, गंगा में उसी प्रकार, पुष्कर में उससे भी अधिक और द्वारका में पूजा-स्नान करने से कृष्ण-सालोक्य (कृष्णलोक में निवास) लाभ होता है। किन्तु मथुरा (व्रजमण्डल एवं व्रजमण्डल-अभिन्न श्रीनवद्वीप धाम) सबसे अधिक फल प्रदान करते हैं, क्योंकि इसी धाम में ही श्रीकृष्ण का दामोदरत्व प्रकाशित हुआ। यदि श्रीहरि की मथुरा के अलावा अन्य स्थानों पर पूजा होती है तो वे सेवकों को भुक्ति-मुक्ति आदि फल प्रदान कर देते हैं, किन्तु भक्ति प्रदान नहीं करते, चूंकि वे सर्वदा भक्ति के वशीभूत हैं। लेकिन कार्तिक मास में, मथुरा में एक बार मात्र श्रीदामोदर की पूजा करने से सुदुर्लभ हरिभक्ति सहज में ही लाभ हो जाती है; यहाँ तक कि, उक्त पूजा यदि मंत्र-द्रव्य के बिना या विधि के बिना क्यों न हो, भी भगवान् उसे स्वीकार करते हैं—(हरिभक्तिविलास १६/१५०-१५९)।

“दामोदर-व्रत” पालन करने की विधि वैष्णव व्यक्ति, विशेष रूप से इस कार्तिक मास में प्रतिदिन श्रीराधा- दामोदर का अर्चन, प्रातः स्नान और व्रत आदि का पालन करेंगे। आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी या पौर्णमासी में अथवा तुला-संक्रान्ति के दिन, आलस्य को कार्तिक व्रत को अवश्य पालन करना चाहिए। नित्य कार्तिक मास की रात्रि के अंतिम प्रहर में उठकर, स्तोत्रपाठ करते हुए प्रभु को जगाकर आरती करेंगे। वैष्णवों के साथ समस्त धर्मतत्व का श्रवण और आनन्द से गीत आदि कीर्तन करेंगे। इसके बाद नदी या पवित्र जलाशय (तालाब) में जाकर आचमन के बाद प्रभु के उद्देश्य से निम्नलिखित संकल्प, प्रार्थना और अर्घ्य प्रदान करेंगे,—
कार्तिकेऽहं करिष्यामि प्रातःस्नानं जनार्द्दन।
प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह॥
(हे जनार्दन! हे देवेश! हे दामोदर! के साथ तुम्हारी प्रीति के लिए मैं कार्तिक मास में प्रातः स्नान करूँगा)।
तव ध्यानेन देवेश जलेऽस्मिन स्नातुमुद्यतः।
मे पापं दामोदर विनश्यत्यु॥
(हे देवेश! ध्यान करते हुए मैं इस जल में स्नान करने जा रहा हूं; हे दामोदर! तुम्हारी प्रसन्नता के द्वारा मेरे पापों का विनाश हो)।
नित्ये नैमित्तिक कृत्स्ने कार्तिके पापशोषणे।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे॥
(कार्तिक मास में नित्य-नैमित्तिक जो सभी कार्य किये जाते है, वे समस्त ही पापनाशक हैं, हे हरे! आपको मैं यह अर्घ्य प्रदान कर रहा हुँ, आप राधा जी के साथ इसे ग्रहण करें)।
व्रती व्यक्ति ‘श्रीकृष्ण’, ’नारायण’ आदि नामों का उच्चारण करते हुये यथाविधि स्नान और संध्या आदि कर घर में लौटेंगे, बाद भगवान् के समक्ष स्वस्तिक निर्माण कर तुलसी, मालती, कमल आदि द्वारा श्रीदामोदर की पुजा करेंगे। कार्तिक मास प्रतिदिन वैष्णवों के साथ भगवान् की कथा का श्रवण और दिन-रात घी या तिल-तेल का प्रदीप जलाकर अर्चन करेंगे। अन्यान्य मास की अपेक्षा कार्तिक मास में विशेष रूप से नैवेद्य (भोग) अर्पण और यथाशक्ति एकभुक्त अर्थात् एक बार मात्र भोजन कर व्रत धारण करना कर्तव्य है। पद्मपुराण में नारद-शौनकादि संवाद में कहा गया है,
—

प्रातःकाल उठकर शौच के बाद जलाशय में स्नान और इसके बाद दामोदर की अर्चन करेंगे। व्रतधारी व्यक्ति कार्तिक मास में मौन रहकर भोजन और विष्णु के निकट या देवालय में अथवा तुलसी के सामने या फिर आकाश में उत्तम घी या तिल-तेल का प्रदीप करेंगे। कार्तिक मास में वैष्णवों के साथ कृष्ण कथा में दिन बिताते हुए संकल्पित व्रत-पालन में तत्पर होंगे। मनुष्य कार्तिक मास में दामोदर की प्रीति के

चाँदी, सोना, मणि, मुक्ता, दीप और मीठे फल-मूल आदि प्रदान करेंगे। पद्मपुराण
में और भी कहा गया हैं,—
जितनी सभी गोपियाँ हैं, उनमें से श्रीराधिका ही श्रीकृष्ण की प्रियतमा
हैं, कार्तिक मास में श्रीदामोदर के साथ श्रीराधाजी की पूजा करना भी कर्तव्य है। जो कार्तिक मास में श्रीराधिका की प्रीति के लिए दामोदर के साथ ऊर्जादेवी की पूजा करते हैं, श्रीदामोदर हरि उनके प्रति प्रसन्न होते है। कार्तिक मास में राधा- की अर्चन करते हुए सत्यव्रत नामक मुनि द्वारा रचित
“” नामक स्तोत्र का प्रतिदिन पाठ करना कर्त्तव्य है, उसी से ही दामोदर वशीभूत होते हैं।
विशेष रूप से कार्तिक मास में,—राजमाष (बरबटी) और सेम का भोजन करने से, प्रलय तक नरक में निवास करना पड़ता है। कार्तिक मास में कलमी साग, परवल, बैंगन और संधित (शराब आदि) का यदि परित्याग नही करते हैं तो अवश्य ही नरक गति प्राप्त होती है। कार्तिक मास में मछली और मांस खाने वाले व्यक्ति को चण्डालत्व प्राप्त होता है। इसके अलावा दूसरों का अन्न, दूसरों की शैय्या, दूसरों का धन और दूसरों की स्त्री, तेल, मालिश, शहद, कांस्य-पात्र में भोजन आदि वर्जनीय हैं। इस मास में पलाश पत्र पर भोजन विशेष लाभदायक है, क्योंकि पलाश-वृक्ष को ब्रह्म-स्वरूप कहा गया है। जो लोग कार्तिक मास में भूमि-शयन, ब्रह्मचर्य पालन, निरामिष
भोजन (के लिए प्रसाद-भोजन) करते हुए श्रीदामोदर की पूजा करते हैं, वे सारे
पापों से मुक्त होकर श्रीहरि के निकट गमन करते हैं। सामर्थ्य के अनुसार इस
महीने में एकाहारी होकर जो दिन बिताते हैं, वे महापराक्रमशाली और कीर्तिमान
होते हैं।

दीपदान-माहात्म्य
स्कन्द पुराण में ब्रह्मा-नारद संवाद में कहा गया है—कार्तिक मास में आधे क्षण के भगवान् विष्णु के मन्दिर में दीपदान करने से सारे पाप नष्ट हो जाते हैं और
दुबारा पृथ्वी पर जन्म ग्रहण नहीं करना पड़ता। विष्णु के मन्दिर में जिस व्यक्ति का घी या तिल-तेल-प्रदीप प्रज्वलित होता है, हे मुनिशार्द्दुल! उसे सूर्यग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में और चन्द्रग्रहण के समय नर्मदा आदि में दान
या अन्य यज्ञ करने की क्या आवश्यकता है? कार्तिक में दीपदानकारी के मंत्रहीन, क्रियाहीन और शौचहीन समस्त कार्य भी संपूर्णता लाभ करते हैं। जिस व्यक्ति ने कार्तिक मास में केशव के समक्ष दीप दान किया है, उसके सभी प्रकार के यज्ञ और सभी तीर्थों में स्नान हो जाते हैं। हे नारद! पितृगण कहते हैं कि, यदि उनके वंश में पर ऐसी कोई संतान उत्पन्न होती है जो कार्तिक मास में दीपदान के द्वारा केशव को संतुष्ट करे तो उन्हें चक्रपाणि (श्रीविष्णु) की कृपा से निश्चय ही मुक्ति होगी। कार्तिक मास में वासुदेव के मंदिर में दीपदान करने से सभी बाधाओं से रहित नित्य-स्थान लाभ होता है। हे मुने! जो मानव कार्तिक मास में कर्पूर के द्वारा दीपदान करता है, उसके कुल में उत्पन्न और भविष्य के वंशज भी चक्रपाणि के प्रसाद से अवश्य ही मुक्ति प्राप्त करते हैं। हे विप्रेन्द्र! कार्तिक मास में, खेल-खेल में ही सही विष्णु के या वैष्णवों के मन्दिर को दीपों से आलोकित करने पर उसे धन, यश, कीर्ति लाभ होती है और सात कुल पवित्र हो जाते हैं। हे मुने! व्यक्ति के लिए अपने को बेचकर भी कार्त्तिकी पूर्णिमा तक दीपदान करना कर्तव्य है। जो मूर्ख व्यक्ति कार्तिक मास में विष्णु मंदिर में दीपदान नही करता है, वह कहलाने योग्य नहीं है। पद्मपुराण और नारद पुराण में रुक्मांगद-मोहिनी संवाद में हुआ है,—
जो व्यक्ति कार्तिक मास में श्रीहरि के निकट अखण्ड दीपदान करता है, वह
दिव्य कान्ति युक्त होकर विष्णुलोक में विहार करता है। एक ओर समस्त दान और दूसरी ओर कार्तिक मास में दीपदान बराबर नही होने के कारण दीपदान का ही अधिक माहात्म्य है। स्कन्द पुराण के ब्रह्म-नारद-संवाद में कहा गया है,—कार्तिक

मास में दूसरों का दीप प्रज्ज्वलित करने और वैष्णवों की सेवा करने से अन्नदान, राजसूय आदि महायज्ञों का फल लाभ होता है। हे विप्रेन्द्र! जो सभी लोग कार्तिक मास में श्रीहरि के मन्दिर में दूसरों के द्वारा रखे गये दीप को प्रज्ज्वलित करके दुर्लभ मनुष्य जैसा जन्म लाभ किया था।
समुद्र सहित पृथ्वी दान और बछड़ों सहित दुग्धवती करोड़ों गायों का दान का
फल विष्णु मंदिर के ऊपर शिखर दीपदान करने से सोलहवें अंश के एक अंश के बराबर भी नहीं है। हे महामुने! मूल्य ग्रहण करके भी शिखर या हरिमंदिर में दीपदान करने से शत-कुल का उद्धार हो जाता है। हे विप्रेन्द्र! शिखर दीपदान की बात को दूर ही रखें, जो सब व्यक्ति भक्ति सहित कार्तिक मास में केवल मात्र ज्योति-दीप्त विष्णु मंदिर के दर्शन करते हैं, कुल में कोई नारकी नहीं होता है। देवगण भी विष्णु के गृह में दीपदान करने वाले मनुष्य के संग की कामना करते हैं। हे मुनि- श्रेष्ठ! कार्तिक मास में कार्तिकी पूर्णिमा तक विष्णु-मंदिर के ऊपर दीपदान करने से -पार्षदत्व सुलभ (सहजता से लाभ) होता है।

दीपमाला-माहात्म्य स्कंद पुराण में ब्रह्मा-नारद संवाद में वर्णित है—जो श्रीहरिमंदिर में
बाहर और अंदर दीपमाला की रचना करते है, उनके वंश में उत्पन्न लाखों पुरुषों को नरक के दर्शन नहीं होते और वे स्वयं विष्णु का सारूप्य और परमपद प्राप्त करते हैं। भविष्य पुराण में वर्णित है,—जो कार्तिक मास में विशेष रूप से विष्णु के उत्थान के समय द्वादशी या एकादशी में घी-युक्त-प्रदीप प्रज्ज्वलित करते हैं, वे दस हजार सूर्यों के समान प्रकाश और कान्ति विशिष्ट होकर दिव्य विमान में सवार होकर विष्णुलोक मे अवस्थित होते हैं।

आकाश-दीपदान-माहात्म्य
पद्म-पुराण में कहा गया है,—
जो मनुष्य कार्तिक मास में, दामोदर केशव के उद्देश्य से आकाश में उच्च-प्रदीप दान करते हैं, वे धन, समृद्धि, ऐश्वर्य, धार्मिक-पुत्र प्राप्त कर सुलोचन-विशिष्ट-विद्वान के रूप में जन्म ग्रहण करते हैं और अंत में अपने कुल को पवित्र करने वाला होकर विष्णुलोक में गमन करते हैं।
आकाश-दीपदान-मंत्र—
दामोदराय नभसि तुलायां लोलया सह।
प्रदीपन्ते प्रयच्छामि नभोऽनन्ताय वेधसे॥
— (हरिभक्तिविलास १६/६६ उद्धृत पद्मपुराण-वाक्य)
हे दामोदर! कार्तिक मास में आकाश में महालक्ष्मी श्रीराधिका के सहित तुम्हें प्रदीप दान करता हूँ; हे अनन्त! हे विधाता! तुम्हें नमस्कार है।

बहुलाष्टमी
कार्तिक मास में कृष्ण-पक्षीय अष्टमी तिथि की मध्य रात्रि को श्रीगोवर्द्धन-पर्वत के तट में श्रीहरिप्रिय राधाकुण्ड का प्रकाश हुआ। अतः इस बहुलाष्टमी में श्रीराधाकुण्ड में स्नान कर श्रीकृष्ण की पूजा करना कर्त्तव्य है। उत्थान एकादशी में व्रतोपवास करने से श्रीकृष्ण जिस प्रकार प्रसन्न होते हैं, इस अष्टमी-स्नान में भी उसी प्रकार संतुष्ट होते हैं। राधाकुण्ड में स्नान ही श्रीहरि की संतुष्टि का श्रेष्ठ कारण है।
“गोवर्द्धनगिरौ रम्ये राधाकुण्डं प्रियं हरेः।
कार्तिके बहुलाष्टम्यां तत्र स्नात्वा हरेः प्रियः।
भवेद् विप्रास्तद्धि तस्य प्रतोषणम्॥”

“यथा राधा प्रिया विष्णोस्तस्या कुण्डं प्रियस्तथा।
सर्वगोपीषु सैवैका विष्णोरत्यन्त-वल्लभा॥”
— (पद्मपुराण)
श्रीमती राधिका जिस प्रकार श्रीकृष्णकी सर्वाधिक प्रिया हैं, उसी प्रकार उनका कुण्ड—श्रीराधाकुण्ड भी श्रीकृष्णको उतना ही प्रिय है। सारी प्यारी गोपिकाओंमें भी श्रीमती राधिकाजी ही श्रीकृष्णकी अत्यन्त वल्लभा हैं।

श्रीयमदीप-दान
कार्तिक मास की कृष्ण-पक्षीय त्रयोदशी तिथि में शाम को घर के बाहर श्रीयमराज के उद्देश्य से दीप प्रदान करने पर अप-मृत्यु का भय दूर होता होता है।
श्रीयमदीप-दान मन्त्र—
“मृत्युना पाशदण्डाभ्यां कालः श्यामलया सह। दीपदानात् सूर्यजः प्रीयतामिति॥” त्रयोदशी में इस दीपदान के द्वारा ‘पाश’, ‘दण्ड’, तथा ‘श्यामला’ सहित अवस्थित ‘काल’ अर्थात् यम आप संतुष्ट हों।

गोवर्द्धन-पूजा
कार्तिक मास की शुक्ल प्रतिपद में श्रीकृष्ण-दासवर्य (श्रीकृष्ण के दासों में श्रेष्ठ) गोवर्द्धन- की पूजा करनी चाहिए। यह पूजा प्रातःकाल करणीय है। “प्रातः” शब्द का अर्थ पूर्वाह्न ही समझा जायेगा। द्वितीया-बिद्धा प्रतिपद में पूजा करना उचित नहीं है। व्रजमण्डल के अलावा कहीं और गोमय (गोबर) द्वारा बड़ा पर्वत बनाकर साक्षात् गोवर्द्धन-पूजा की तरह ही उनमें गिरिवर की पूजा करनी होगी। गोवर्द्धन- करने बाद गायों को भूषित कर पूजा करनी चाहिए। उस दिन गाय दुहना या फिर बैलों से बोझ ढोने का काम लेना उचित नहीं है— (हरिभक्तिविलास १६/२३१ श्रीसनातन-कृत टीका)। इस प्रकार यथारीति गोवर्द्धन और गायों की पूजा करने से श्रीकृष्णचन्द्र अत्यंत प्रसन्न होते हैं।
इस दिन व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण के परामर्श अनुसार समस्त व्रजवासियों
ने अपनी वार्षिकी इन्द्र-पूजा त्यागकर श्रीगिरिराज- की पूजा के लिए व्रत किया था। खीर, मुद्गसूप, पिष्टक, शष्कुली (पूरी, पक्वान्न आदि), विविध व्यंजनादि, दूध, दही आदि तथा अन्न का कूट (पर्वत) बनाकर उन्होंने श्रीगिरिराज जी को भोजन कराने की व्यवस्था की थी। श्रीकृष्ण ने भी उस गिरि रूप को धारण कर ‘मैं ही शैल हुँ।’ कहकर पूजा ग्रहण की थी। इसलिए सैद्धान्तिक रूप से श्रीगिरिराज, श्रीकृष्ण के ही द्वितीय स्वरूप तथा सर्वाभीष्ट- के रूप में प्रमाणित हुए। बाद में श्रीमाध्व-सम्प्रदाय-गुरु यतिराज श्रीमाधवेन्द्रपुरी ने श्रीगिरिराज जी के निकट गोपाल जी को प्रकट कराकर दुबारा इस उत्सव का प्रवर्तन किया था—(चैः चः मः चौथा अध्याय देखें)। उस समय से विशेष कर गौड़ीय वैष्णवगण "अन्नकूट-महोत्सव" के द्वारा प्रति वर्ष उक्त दिवस को श्रीगोवर्द्धन-पूजा किया करते है।

गोपाष्टमी
कार्तिक मास के शुक्लपक्ष की अष्टमी तिथि को ”गोपाष्टमी” कहा जाता है। उस
दिन को व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण गोपालक (बड़ी गायों का पालन करने वाले) हुए थे। इसके पहले वे केवल गोवत्स-पालक (बछड़ों के पालक) थे। पण्डितगण इसीलिए इस तिथि विशेष रूप से स्मरण करते हैं। जो अपनी समस्त मनोवांछाओं को पूरा करना चाहते है, वे उक्त तिथि में गायों की पूजा, गोग्रास-दान, गाय की परिक्रमा तथा गायों के पीछे गमन करेंगे।

उत्थान या प्रबोधनी -एकादशी

कार्तिक शुक्ला एकादशी में श्रीहरि चार महिनों तक निद्रा के बाद जागृत होते हैं। अतः यह तिथि श्रीविष्णु को विशेष प्रिय है। पद्मपुराण में लिखित है —

"दुग्धाब्धि -भोगि -शयने भगवाननन्तो
दिने स्वपिति चाथ बिबुध्यते च।
तस्मिन्ननन्य -मनसामुपवास -भाजां
कामं ददात्यभिमतां गरुड़ांकशायी॥"

'क्षीरसागर में शेष - भगवान् श्रीअनन्त जिस दिन शयन और जागरण करते है, उस दिन जो लोग अनन्य चित्त होकर उपवास करते हैं, की पीठ पर सवार भगवान् उन्हें वांछित फल प्रदान करते हैं।' 'श्रीविष्णु की जागरणी तिथि को उपवास करने पर उस घर में त्रिलोक के सभी तीर्थ अवस्थित रहते हैं, मेरुमंदर -पर्वत के समान विशाल पाप -समूह जलकर राख हो जाता है, समस्त प्रकार के दान का फल लाभ होता है। इस व्रत के जनार्दन को संतुष्ट करने पर मनुष्य दसों दिशाओं में उज्ज्वल होकर इस लोक में विराज करते हैं और अंत में श्रीहरि के धाम में गमन करते हैं।'—(स्कन्द पुराण) अतः इस तिथि में शुद्ध -भक्तगण सुदुर्लभ हरिभक्ति - करने के लिए निर्जला उपवास, श्रीकृष्ण की विशेष अर्चन, पूरा दिन -रात जागकर निरन्तर हरिकथा -श्रवण -कीर्तन करते है।

दामोदर -व्रत तथा चातुर्मास्य -व्रत समापन

जो लोग द्वादशारम्भ -पक्ष से चातुर्मास्य व्रत तथा दामोदर व्रत आरम्भ करते हैं, वे कार्तिक मास की शुक्ल -पक्षीया द्वादशी में व्रत समापन करेंगे। पौर्णमासी -पक्ष से आरम्भ करने वाले व्रतकारीगण, कार्तिक मास की पूर्णिमा तिथि को व्रत समाप्त करेंगे। प्रातः काल नित्यक्रिया सम्पन्न करने के बाद श्रीहरि के निकट यह व्रतोत् हुए भक्ति सहित श्रीहरि की पूजा करनी चाहिए। इसके बाद सामर्थ्य अनुसार वैष्णव -ब्राह्मणों को भोजन, दान, आदि करनी चाहिए। इसके बाद सामर्थ्य अनुसार वैष्णव -ब्राह्मणों को भोजन, दान, पूजा आदि करनी चाहिए। व्रत के समय जो सब वस्तुएँ निषिद्ध थीं, उन्हें पुनः उस दिन से ग्रहण करना आरम्भ करना होगा। इस प्रकार जो यथाविधि उक्त वक्त का अनुष्ठान करते हैं, उन्हें परम -धर्म लाभ होता है और अंत में वे श्रीहरि का धाम प्राप्त करते हैं।

श्रीपुरुषोत्तम-मास-माहात्म्य
—श्रील ठाकुर भक्तिविनोद

स्मार्त तथा परमार्थ के आधार पर शास्त्र द्विविध
‘स्मार्त’ और ‘परमार्थ’ के आधार पर वैदिक आर्य-शास्त्र दो भागों में विभक्त हैं। जो लोग स्मार्त-विभाग के अधिकारी हैं, वे स्वाभाविक रूप से ‘परमार्थ’ शास्त्र में रुचि नहीं लेते। अपनी-अपनी रुचि के अनुसार ही मनुष्य का विचार, सिद्धान्त, क्रिया तथा जीवन का उद्देश्य गठित होता है। स्मार्तगण अपनी- अपनी रुचि-अनुसार शास्त्रों में ज्यादा विश्वास करते हैं। पारमार्थिक-

शास्त्रों में उनका उस प्रकार का अधिकार नहीं रहने पर उस तरह की आस्था भी व्यक्त नहीं करते हैं। इस प्रकार के विभाग के कर्ता—विधाता हैं। अतः इसमें जगदीश्वर का एक गुप्त उद्देश्य है, संदेह नहीं है। हमको जितनी जानकारी मिली है, वह उद्देश्य है कि,—अपने-अपने अधिकार में रहने से ही जीव की क्रमोन्नति होती है। अधिकार-च्युत होने पर ही पतन होता है। मानवगण अपने-अपने कर्म अनुसार कर्म-अधिकार तथा भक्ति-अधिकार—दो अधिकार लाभ करते हैं। जब तक मनुष्य का कर्म-अधिकार रहता है, तक उसके लिए स्मार्त पथ ही श्रेष्ठ है। कर्माधिकार अतिक्रम कर जब वे भक्ति के अधिकार में प्रवेश करते हैं, तब उनकी पारमार्थिक पथ में स्वाभाविक रुचि उत्पन्न होती है। इसीलिए विधाता ने स्मार्त-परमार्थ के आधार पर दो प्रकार के शास्त्रों की व्यवस्था की है।

स्मार्त-शास्त्रों के विधि-विधान—कर्म पर आधारित स्मार्त-शास्त्रों ने मनुष्यों को सदैव कर्माधिकार में निष्ठा लाभ कराने की चेष्टा में अनेक प्रकार के नियम बनाये हैं। यहाँ तक कि उन समस्त विधि- विधानों में विशेष निष्ठा देने के कारण परमार्थ-शास्त्रों के प्रति कई स्थानों पर उदासीनता भी दिखायी हैं। वस्तुतः शास्त्र एक होने पर भी लोगों के सामने इसके दो प्रकार के भाव हैं। अधिकार के प्रति निष्ठा के बिना जीवों का मंगल नहीं होता है। इसीलिए शास्त्र स्मार्त-परमार्थ के आधार पर दो तरह के प्रतीत होते हैं।

अधिमास सत्कर्म-हीन, इसका अन्य नाम—मलमास
वर्ष को बारह भागों में विभक्त कर, बारह महीनों में स्मार्त शास्त्रों ने
सभी सत्कर्मों का निरूपण किया है। वर्णाश्रम के आधार पर जब समस्त कर्म ही बारह महीनों में विभक्त हो गये, ‘’ कर्महीन मास हो गया। अधिमास में कोई सत्-कर्म नहीं होता है। चान्द्र-मास तथा सौर- में सामंजस्य बनाये रखने के लिए बत्तीस महीनों में एक महीना छोड़ देना पड़ता है। उसी मास का नाम है अधिमास। स्मार्तगण ने अधिमास को ‘मलमास’ कहकर त्याग दिया हैं। मलिम्लुच (चोर), मलिन-मास आदि नाम देकर अधिमास को घृणित बताया है।

परमार्थ-शास्त्र में अधिमास श्रेष्ठ तथा हरि-भजनोपयोगी इधर परमाराध्य परमार्थ-शास्त्र अधिमास को परमार्थ-कार्य में सर्वोपरि कहते हैं। जीवन अनित्य है। जीवन का कोई अंश भी व्यर्थ नहीं बिताना नही चाहिये। सर्वदा प्रत्येक क्षण हरि-भजन में रहना ही जीव का कर्त्तव्य है। अतः हर तीसरे साल जो अधिमास होता है, वह भी हरि-भजन के उपयोगी बने—यही परमार्थ शास्त्र की निगूढ़ चेष्टा है। फिर जब कर्मी लोग उस मास को सत्कर्म-शून्य के रूप में जानते हैं, सभी जीवों के उद्धार के लिए परमार्थ- ने उस समय को भजन के लिए विशेष उपयोगी निर्धारित किया है। परमार्थ-शास्त्र कहते हैं कि, हे जीव! क्यों अधिमास में हरि-भजन में आलस्य करते हो? मास श्रीमद् गोलोकनाथ के द्वारा सर्वोपरि स्थापित है; यहाँ तक कि कार्तिक, माघ तथा वैशाख आदि मास की अपेक्षा भी यह श्रेष्ठ है। इस मास में विशेष भजन-विधि के साथ श्रीश्रीराधा-कृष्ण का अर्चन करो। सब कुछ प्राप्त हो जायेगा।

अधिमास को ‘पुरुषोत्तम’-नाम की प्राप्ति
नारदीय पुराण में अधिमास का माहात्म्य ३१ वें अध्याय में वर्णित है। द्वादश मास का आधिपत्य और अपना अपमान होते देख अधिमास ने वैकुण्ठ में जाकर नारायण को अपना दुःख सुनाया। वैकुण्ठ-पति कृपा कर अधिमास को साथ लेकर गोलोकपति

श्रीकृष्ण के पास पहुँचते हैं। श्रीकृष्ण मलमास की आर्ति श्रवणकर दयापरवश बोले—
अहमेतैर्यथा लोके प्रथितः पुरुषोत्तमः।
तथायमपि लोकेषु प्रथितः पुरुषोत्तमः॥
अस्मै समर्पिताः सर्वे ये गुणमयि संस्थिताः।
मासानामधिपो भवेत्॥
जगद्वन्द्यो मासोऽयं तु भविष्यति।
सर्वे मासाः सकामाश्च नोष्कामोऽयं मया कृतः॥
सर्वकामो वा योऽधिमासं प्रपूजयेत्।
कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयम्॥
कदाचिन्मम भक्तानामपराधेति गण्यते।
पुरुषोत्तम-भक्तानां नापराधः कदाचन॥
य एतस्मिनन्महामूढा़ जप-दानादि-वर्जिताः।
सत्कर्म-स्नान-रहिता देव-तीर्थ-द्विज-द्विषः॥
जायन्ते दुर्भगा दुष्टाः पर-भाग्योपजीविनः।
सुखं तेषां स्वप्नेऽपि शशशृंगवत्॥
मासेऽस्मिन् शशशृंगवत्॥
भक्त्या मासेऽस्मिन् पुरुषोत्तमे।
धन-पुत्र- भुंक्त्वा पश्चाद्गोलोकवासभाक्॥
इसका अर्थ यह है कि,—हे रमापति! मैं जिस प्रकार से इस जगत में ‘पुरुषोत्तम’ के रूप में विख्यात हूँ, उसी प्रकार यह अधिमास भी पुरुषोत्तमके नाम से विख्यात होगा। मुझमें जितने सभी गुण हैं, वे सब इस महीने में अर्पित कर दिये हैं। मेरे समान होकर यह अधिमास अन्य सभी महीनों का अधिपति बन गया हैं। यह महीना जगत में पूजनीय और वंदनीय है। अन्य सभी मास सकाम हैं परन्तु यह मास निष्काम है। जो अकाम होकर या सर्वकाम होकर इस मास की पूजा करते हैं, वे समस्त कर्मों को भस्मीभूत कर मुझे प्राप्त करते हैं। मेरे भक्तों से कभी-कभी अपराध होता है, किन्तु इस पुरुषोत्तम- के भक्तों से कभी भी कोई अपराध नहीं होगा। जो सब महामूर्ख इस अधिमास में जप-दानादि-वर्जित, सत्कर्म और स्नान आदि रहित होते हैं और देव-तीर्थ तथा ब्राह्मणों के प्रति विद्वेष करते हैं, वे सब दुष्ट अभागे परभाग्योपजीवी (दूसरे के भाग्य के उपर निर्भर) होकर स्वप्न में भी किंचित मात्र सुख प्राप्त नहीं करते। इस पुरुषोत्तम मास में जो भक्तिपूर्वक मेरा अर्चन करते हैं, वे धन-पुत्र आदि का सुख भोगकर अंत में गोलोकवासी होते हैं।

पुरुषोत्तम-मास के माहात्म्य में द्रौपदी का इतिहास पुरुषोत्तम-मास के माहात्म्य-प्रसंग में कई पौराणिक प्रसंग कथित हैं। द्रौपदी पूर्वजन्म में ‘मेधा’-ऋषि की कन्या थीं। दुर्वासा मुनि के द्वारा ‘पुरुषोत्तम-माहात्म्य’ सुनकर भी उन्होंने इस मास की उपेक्षा की थी, इसलिए उस जन्म में कष्ट तथा द्रौपदी-जन्म में पाँच पतियों के अधीन हुई थीं। श्रीकृष्ण के उपदेश से पाण्डवों ने द्रौपदी के साथ पुरुषोत्तम-मास-व्रत पालन कर वनवास के सारे दुःखों का अतिक्रमण किया था। यथा—
एवं सर्वेषु तीर्थेषु भ्रमन्तः पाण्डुनन्दनाः।
पुरुषोत्तम-मासाद्य-व्रतः चेरुर्विधानतः॥
राज्यमतुलमवापुर्गतकण्टकम्।
पुर्णे चतुर्देशे वर्षे श्रीकृष्ण-कृपया-मुने॥

वाल्मिकी-कथित पुरुषोत्तम-व्रत

‘दृढ़धन्वा’ राजा के वृत्तांत तथा पूर्वजन्म के वृत्तांत में पुरुषोत्तम मास का विशेष रूप से कथित हुआ है। वाल्मीकि मुनि ने ‘दृढ़धन्वा’ के प्रश्न के उत्तर
में जिस व्रत का विवरण किया था, उसे नारद जी ने श्रीनारायण-ऋषि से बदरिका आश्रम में श्रवण किया था। धर्म-शास्त्र में जिस प्रकार ब्राह्मण की आह्निक-विधि निरूपित है, उसी प्रकार ब्राह्म-मुहूर्त्त से पुरुषोत्तम-सेवक का कर्त्तव्य निर्णय किया गया है।

श्रीपुरुषोत्तम-मास में स्नान-विधि श्रीपुरुषोत्तम-मास में स्नान-विधान में कहा गया है,—
समुद्रगा-नदी- परिकीर्त्तितम्।
वापी-कूप-तडागेषु मध्यमं कथितं बुधैः।
स्नानं तु सामन्यं गृहस्थस्य प्रकीर्त्तितम्॥
(, समुद्रगामी-नदी में स्नान उत्तम, अर्थात् सौ हाथ लम्बे जलाशय, कुआँ और तड़ाग पांच सौ धनु {एक धनु चार हाथा लंबा} परिमाण के जलाशय में स्नान मध्यम तथा घर में स्नान को सामान्य कहा गया है)।
श्रीपुरुषोत्तम-व्रत करने वाले व्यक्ति स्नान करने के बाद—
सपवित्रेण हस्तेन कुर्यादाचमन-
आचम्य तिलकं कूर्यादगोपी-चन्दन-मृत्स्नया॥
सौम्यं दण्डाकारं प्रकल्पयेत्।
शंख-चक्रादिकं धार्यं गोपी-चन्दन-मृत्स्नया॥
(, पवित्र हाथों से आचमन-क्रिया करेंगे, आचमन के बाद गोपीचन्दन के द्वारा ऊर्ध्वपुंड्र सरल, सौम्य तथा दण्डाकार तिलक रचना करेंगे। शंख, चक्र आदि चिन्ह
गोपी चन्दन के द्वारा धारण करेंगे)।

श्रीश्रीराधाकृष्ण की पूजा ही पुरुषोत्तम-मास में करणीय
श्रीकृष्ण की पूजा करना ही पुरुषोत्तम मास में कर्त्तव्य है, यथा— पुरुषोत्तम-मासस्य दैवतं पुरुषोत्तमः। सम्पूजयेद्भक्त्या श्रद्धया पुरुषोत्तमम्॥
वाल्मिकी जी ने कहा,—हे दृढ़धन्वा! पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण ही पुरुषोत्तम मास के हैं। अतएव इस मास में प्रतिदिन भक्ति-श्रद्धा के साथ पुरुषोत्तम-श्रीकृष्ण की
सोलह उपचारों से पूजा करेंगे। यथा—
पुरुषोत्तमम्।
श्रीश्रीराधा-श्रीकृष्ण की युगल उपासना ही कर्त्तव्य है, यथा—
आगच्छ देव देवेश श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम। राधया सहितश्चात्र गृहाण पूजनं मम॥
(, हे देव, देवेश, हे श्रीकृष्ण, पुरुषोत्तम, तुम श्रीमती राधारानी के साथ
इस स्थान पर आगमन करो तथा मेरी पूजा को ग्रहण करो)।

मास में क्या करना चाहिए
इस शास्त्र में श्रीपुरुषोत्तम-व्रत के सम्बन्ध में पहले जो समस्त विधि- लिखित हुए हैं, वे-समस्त नियम, सभी वर्ण एवं धर्म- धार्मिक लोगों के लिए पालनीय हैं। ग्रंथ के अंत में नैमिष-क्षेत्र में श्रीसूत गोस्वामी ने ऋषियों से यह कहा,—
जनुरासाद्य पुरुषोत्तममुत्तमम्।
न सेवन्ते न शृण्वन्ति गृहासक्ता नराधमाः॥
गतागतं भजन्तेऽत्र दुर्भागा जन्मजन्मनि।
पुत्र-मित्र-कलत्राप्त-वियोगादुःखभागिनः॥

द्विजश्रेष्ठा नासच्छास्त्रान्युदाहरेत्।
स्वपेत् पर- वितथं क्वचित्॥
ब्रुयान्न कथंचित् कदाचन।
न भुंजीत न कुर्व्वीत परक्रियाम्॥
भारत में जन्म लाभ कर गृहासक्त नराधम व्यक्ति श्रीपुरुषोत्तम-व्रत कथा श्रवण और उस व्रत का पालन नहीं करते हैं। दुर्भागे लोग प्रत्येक जन्म में जन्म-मरण-भोग करते हैं तथा पुत्र-मित्र-पत्नी तथा निजजन के वियोग-जनित दुख के भागी बनते हैं। इस पुरुषोत्तम मास में हे द्विजवरगण! व्यर्थ के काव्य- आदि असत्‌- शास्त्रों की चर्चा मत करना। दूसरों की शैय्या पर शयन तथा अनित्य विषयोंपर चर्चा मत करना। परनिन्दा सम्बन्धी बातचीत मत करना। दूसरों का भोजन तथा दूसरों का कार्य भी मत करना।

मास में क्या नहीं करना चाहिए
वित्तशाठ्यमकुर्वाणो दानं दद्याद्द्विजातये।
धने शाठयं कूर्वाणो रौरवं व्रजेत्॥
दिने द्विजेन्द्राय दत्त्वा भोजनमुत्तमम्।
भागे व्रती भोजनमाचरेत्॥
इन्द्रद्युम्नः शतद्युम्नो यौवनाश्वो भगीरथः।
ययुर्भगवदन्तिकम्॥
सर्व-प्रयत्नेन संसेव्यः पुरुषोत्तमः।
सर्व-साधनतः श्रेष्ठः सर्वार्थफलदायक:॥
" वन्दे गोपालं गोरूपिणम्।
गोविन्दं गोपिकाप्रियम्॥"
कौण्डिन्येन पुराप्रोक्तमिमं मन्त्रं पुनः पुनः।
नयेद्भक्त्या पुरुषोत्तममाप्नुयात्॥
ध्यायेन्नवघन- द्विभुजं मुरलीधरम्।
पीत- रम्यं सराधं पुरुषोत्तमम्।
यः कुरुते भक्त्या स्वाभीष्टं सर्वमाप्नुयात्॥
वित्तशाठ्य (हुए भी भगवान् की सेवा में कृपणता) त्याग कर ब्राह्मणों को दान
धन रहते हुए भी कृपणता, रौरव नरक में जाने का कारण बन जाती है। प्रतिदिन वैष्णवों तथा ब्राह्मणों को उत्तम भोजन करायेंगे। व्रती व्यक्ति स्वयं दिन के आठवें भाग में भोजन करेंगे। इन्द्रद्युम्न, शतद्युम्न, यौवनाश्व तथा भगीरथ ने की आराधना कर भगवान् के निकट वास लाभ किया था। सर्वप्रकार के यतन के साथ पुरुषोत्तम की सेवा करेंगे। यह पुरुषोत्तम सेवा सब प्रकार के साधन की अपेक्षा श्रेष्ठ तथा सर्वार्थ फलदायक है। ‘गोवर्द्धनधरं’ आदि मंत्र को पहले कौण्डिण्य मुनि ने बारम्बार जप किया था। श्रीपुरुषोत्तम मास में इस मन्त्र को भक्तिपूर्वक जप करने से पुरुषोत्तम प्राप्त होंगे। नव-घन द्विभुज मुरलीधर श्रीकृष्ण का श्रीराधा जी के साथ सदैव ध्यान करते हुए पुरुषोत्तम-मास को बितायेंगे। जो भक्ति सहित ऐसा करेंगे, वे समस्त अभीष्ट लाभ करेंगे।

श्रीपुरुषोत्तम-मास-कृत्य श्रीपुरुषोत्तम-मास में जिन समस्त नियमों का पालन करना होगा, वे वाल्मीकि जी द्वारा इस प्रकार वर्णित हैं—
“हविष्यान्नं च भुंजीत प्रयतः पुरुषोत्तमे।
शालयाः सर्वाः सिता मुद्गा यवास्तिलाः॥
कलाय-कंगुनी-वारा वास्तुकं हिलमोचिका।
आद्रकं काल- मूलं कन्दंच कर्कटीम्॥

रम्भा सैन्धव-सामुद्रे लवणे दधि-सर्पिषी।
पयोऽनुद्धृत-सारंच पनसाम्र-हरितकी॥
पिप्पली-जीरकंचैव नागरं चैव तिन्तिड़ी।
क्रमुकं लवली- फलान्यगुड्मैक्षवम्॥
अतैल-पक्वं मुनयो हविषां प्रवदन्ति च।
हविष्य-भोजनं नृणामुपवास-समं विदुः॥” पुरुषोत्तम-व्रती व्यक्ति हविष्यान्न भोजन करेंगे। गोधूम (गेहूँ), शालि- तण्डूल (शालि-चावल), मुद्ग (मूँग दाल), यव (जौ), तिल मटर, कांगनी-तण्डुल (कांगनी- चावल), ऊड़ी-तण्डुल (ऊड़ी-चावल), वास्तुक-शाक (वास्तुक-साग), हिलमोचिका-शाक (हिलंचा साग), आद्रक, काल-साग, मूलक (मूली), कन्दमूल, काँकुड़ (ककड़ी), रम्भा (केला), सैन्धव तथा समुद्री नमक, दही, घी, अनुधृत-दुग्धसार, पनस (कटहल), आम्र (आम), हरीतकी (हरड़), पिप्पली, जीरा, सौंठ, तेंतुल (ईमली), क्रमुक (शहतूत फल), आता (सीताफल), आमलकी-फल (आंवला), इक्षुजात (गन्ने के रस से निर्मित) चीनी, मिश्री, बिना तेल के गई सब्ज़ियाँ—ये समस्त हविष्यान्न हैं। उपवास और हविष्यान्न में एक ही प्रकार का फल होता है।

परित्यज्य वस्तु तथा आचरण
“सर्वमिषाणि मांसंच क्षौद्रं सौवीरकं तथा।
राजमासादिकं चैव राजिका मादकं तथा॥
द्विदलं तिल-तैलंच तथान्नं शाल्य-भाव-दुष्टं क्रिया-दुष्टं शब्द- वर्जयेत्॥
परान्नंच परद्रोहं पर-दार-गमं तथा।
विना प्रयाणंच परदेशं परित्यजेत्॥
देव-वेद-द्विजानांच गुरु-गो-व्रतिनां तथा। स्त्री-राज- निन्दां वर्जयेत् पुरुषोत्तमे॥” सभी प्रकार का आमिष, मांस, मधु, कुलर्कटी-फल, -सरसों तथा समस्त प्रकार के मादक-द्रव्यों का परित्याग करेंगे। द्वि- अर्थात् चना आदि की दाल, तिल-तेल, कंकड-युक्त अन्न, भाव-दुष्ट, क्रिया-दुष्ट तथा शब्द-दुष्ट समस्त द्रव्यों का वर्जन करेंगे। परान्न-भोजन, परद्रोह, परदार-गमन, तीर्थ यात्रा के बिना दूरदेश गमन या परदेश गमन त्याग करेंगे। पुरुषोत्तम मास में देवता, वेद, गुरु, गाय, व्रती, नारी, और महत्-जनों की निंदा नहीं करेंगे।

आमिष किसे कहते हैं?
“ चूर्णं फले जम्बीरमामिषम्।
धान्ये मसूरिका प्रोक्ता अन्नं पर्युषितं तथा॥
अजा-गो-महिषी-दुग्धादन्य-दुग्धदि- द्विज-क्रीता रसाः सर्वे लवणं भूमिजं तथा॥
ताम्र- गव्यं जलं चर्मणि संस्थितम्। चान्नमामिषं तद्बुधैः स्मृतम्॥”
के अंगों से उत्पन्न चूर्ण—आमिष है तथा फलों में जम्बीर अर्थात् एक विशेष प्रकार का नींबू—आमिष है। अनाज में मसूर तथा बासी अन्न—आमिष है। बकरी, गाय तथा भैंस के दूध के अलावा अन्य सभी दूध आमिष हैं। ब्राह्मणों के विक्रय किये नमक तथा भूमि से उत्पन्न नमक, ताम्बे के पात्र में रखा गव्य (घी, दूध आदि), में रखा जल तथा स्वयं खाने के लिए बनाया अन्न—आमिष में गिने जाते है।

वर्जनीय द्रव्य आदि
“ त्यजन् म्लेच्छ-पतितैर्व्रात्यकैः सह।

द्विज--वेद- न वदेत् पुरुषोत्तमे॥
दृष्टं च काकैश्च सूतकान्नं च यद्भवेत्।
च दग्धान्नं नैवाद्यात् पुरुषोत्तमे॥ पलाण्डुं लशूनं मुस्तां छत्राकं गृंजनं तथा। मूलकं शीघ्रं वर्जयेत् पुरुषोत्तमे॥
- वर्जयेत् किंचित पुरुषोत्तम-तुष्टये। दत्वा भक्षयेत् सर्वदैव हि॥”
रजस्वला, म्लेच्छ, पतित, व्रात्य-व्यक्ति (पतित-ब्राह्मण), ब्राह्मण-द्वेषी, वेद-बाह्य, इन सबके साथ वार्तालाप नही करेंगे। इन सब लोगों के द्वारा गये तथा कौऐ द्वारा गये अन्न, सूतक-अन्न, अन्न तथा जले हुए अन्न को नहीं खायेंगे। प्याज, लहसुन, मुस्ता (एक प्रकार की जड़), छत्राक (मशरूम), गाजर, नालिता (लौकी), केमुक-नामक-मूलक, सजिना (एक प्रकार की फली)—इन सब का वर्जन करेंगे। पुरुषोत्तम मास बीत जाने पर उन सब वर्जित द्रव्यों को ब्राह्मण को देने के बाद भोजन करेंगे।

पुरुषोत्तम, कार्तिक तथा माघ—

तीनों महीनों में एक ही कृत्य तथा त्रिविध व्रत
“ शय्यां पत्रावल्यांच भोजनम्। चतुर्थकाले भुक्तिं च प्रकुर्यात पुरुषोत्तमे॥ कुर्यादेतांश्च नियमाव्रती ‘कार्तिक-माघयोः’। पुण्येह्रि प्रातरुत्थाय कृत्वा पौर्वाह्णिकीः क्रियाः॥ णीयान्नियमं भक्त्या श्रीकृष्णंच हृदि स्मरन्। उपवासस्य नक्तस्य चैकभुक्तस्य भूपते॥
कृत्वा व्रतमेतत् समाचरेत्।” अर्थात् अमैथुन, भूमि-शयन, पत्तों पर भोजन, चतुर्थ प्रहर में भोजन पुरुषोत्तम-मास में उचित है। कार्तिक तथा माघ में भी इन समस्त नियमों का व्रत करेंगे। सुबह उठकर पूर्वाह्न- की क्रियाएँ सम्पन्न कर श्रीकृष्ण को भक्ति सहित हृदय में स्मरण कर पूर्वोक्त नियमों को ग्रहण करेंगे। व्रत तीन प्रकार का है उपवास, रात्रि में हविष्यान्न ग्रहण और एक-—व्रती व्यक्ति के लिए जो कर्त्तव्य (उपयुक्त) बोध हो, उसका निश्चय (विचार) कर इस व्रत का पालन करेंगे।

पुरुषोत्तम-मास में श्रीमद्भागवत-श्रवण तथा व्रत-पालन का फल
“श्रीमद्भागवतं भक्त्या श्रोतव्यं पुरुषोत्तमे॥ वचसा वक्तुं विधाता हि न शक्नुयात्। शालग्रामार्चनं कार्यं मासे श्रीपुरुषोत्तमे॥ राजन् श्रेष्ठं क्रतुशतादपि। कृताप्नुयात् स्वर्गं गोलोकं पुरुषोत्तमे॥ पृथिव्यां यानि तीर्थानि क्षेत्राणि सर्वदेवताः। यः कुर्यात् पुरुषोत्तमम्॥” पुरुषोत्तम-मास में, भक्तिपूर्वक श्रीमद्भागवत-ग्रंथ श्रवण करेंगे। भागवत-श्रवण के पुण्य के विषय में विधाता भी नहीं कह सकते हैं। भक्तगण श्रीशालिग्राम-शिला का अर्चन करेंगे। इस मास में व्रत—सौ क्रतु (यज्ञ) की अपेक्षा श्रेष्ठ है। क्योंकि यज्ञ करने से स्वर्ग लाभ होता है; किन्तु जो पुरुषोत्तम-व्रत का पालन हैं, उनकी देह में समस्त तीर्थक्षेत्र तथा देवतागण विराजते हैं।

दीप-दान और उसका फल
“कर्तव्यं दीप-दानंच पुरुषोत्तम-तुष्टये।
तिल-तैलेन कर्त्तव्यं सर्पिषा वैभवे सति॥
तयोर्मध्ये न किंचित्ते कानने वसतोऽधुना।
इंगदीजेन तैलेन दीपः कार्यस्त्वयानम॥
योगो ज्ञानं तथा सांख्यं तंत्राणि सकलान्यपि।
पुरुषोत्तम- कलां नार्हन्ति षोड़शीम्॥” पुरुषोत्तम की तुष्टि के लिये दीपदान करना कर्त्तव्य है। वैभव (सामर्थ्य) होने पर घी का दीपक, नहीं तो तिल तेल का दीपक प्रज्ज्वलित करने का नियम है। हे मणिग्रीव! तुम्हारे वनवास में घी या तिल-तेल नहीं मिलेगा। तुम इंगुदी (अरण्डी) के तेल से दीपदान करो। अष्टांग-योग, ब्रह्म-ज्ञान तथा सांख्य-ज्ञान एवं समस्त तांत्रिक-क्रिया—पुरुषोत्तम-मास में दीपदान की सोलहवीं कला के समान भी नहीं है।

पुरुषोत्तम-मास में कृष्णपक्षा की चतुर्दशी, नवमी तथा अष्टमी तिथियों में विशेष क्रिया का वर्णन
इस व्रत का उद्यापन करने के सम्बन्ध में, वाल्मीकि जी ने कहा,—हे महाराज! पुरुषोत्तम-मास में कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, नवमी तथा अष्टमी तिथि को इस व्रत का उद्यापन किया जाता है। विशुद्ध भक्त-ब्राह्मण को निमंत्रण कर एकाग्रचित्त से क्रिया को करना चाहिए। पंच-धान्य (पाँच प्रकार के अनाज) द्वारा अतिसुन्दर सर्वतोभद्र (सिंहासन) की रचना करेंगे। मण्डल के उपर चार कलशों को स्थापित कर चारों ओर चतुर्व्यूह (वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्घ) की प्रीति कामना से बेल- रखेंगे। सद्‌-वस्त्रों से घिरे पान के पत्ते से चतुर्व्यूह स्थापित करेंगे। श्रीराधा-माधव को कलश सहित स्थापित करेंगे। वेद-वेदांग-विशारद वैष्णवाचार्य को वरण करेंगे। चतुर्व्यूह जपकर—चारों ओर, चार दीप प्रज्वलित करेंगे।

अर्घ्य-मन्त्र तथा नमस्कार-मन्त्र क्रमशः श्रद्धा-भक्ति के साथ पत्नी सहित नारियल आदि अर्घ्य दान करेंगे। अर्घ्य-मन्त्र,—
“देव-देव नमस्तुभ्यं पुराण-पुरुषोत्तम।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहित हरे॥”
यह मन्त्र बोलकर नमस्कार करेंगे,—
“वन्दे नवघन- द्विभुजें मुरलीधरम्।
देवं सराधं पुरुषोत्तमम्॥”

आरति, ध्यान तथा पुष्पांजलि मंत्र
इसके बाद तिल-होम करके आरति करेंगे। नीराजन (आरति) मंत्र है— “निराजयामि देवेशमिन्दीवर-राधिका-रमणं प्रेम्णा कोटि-कन्दर्प-”
अथ ध्यान-मंत्र—
“अन्तर्ज्योतिरनन्त-रत्न- सिंहासने संस्थितम्। वंशीनाद-विमोहित- वृन्दावने सुन्दरम्॥
राधिकया सकौस्तुभमणि-
राजद्रत्न-किरीट-कुण्डलधरं प्रत्यग्र-”
करते हुए पुष्पांजलि अर्पण करेंगे और इस मंत्र के साथ नमस्कार करेंगे—

“नौमि नवघन- पीतवाससमच्युतम्। श्रीवत्स-भासितोरस्कं राधिका- हरिम्॥”

व्रत के अंतिम-कृत्य तथा नियम-भंग करने की विधि
बाद में भक्त-ब्राह्मण को पूर्णपात्र दान कर आचार्य को दक्षिणा देंगे। इसके बाद दान करेंगे। इस समय उपयुक्त वैष्णव-ब्राह्मण को भागवत दान करने की विधि है। ब्राह्मण को संपुटित कांस्य-पात्र दान करेंगे। बाद में ब्राह्मणों को घी-युक्त-खीर का भोजन करायेंगे। बाद में सबको अन्न प्रदानकर स्वजनों के साथ भोजन करेंगे। उद्यापन करके व्रत-नियम त्याग करेंगे।

स्वनिष्ठ, परिनिष्ठित तथा निरपेक्ष परमार्थी के कृत्य
तीन प्रकार के हैं—अर्थात् स्वनिष्ठ (श्रद्धालु, किन्तु अदीक्षित
व्यक्ति), परिनिष्ठित (वैष्णव गुरु के आश्रित) तथा निरपेक्ष (गृह-त्यागी भक्त)। पूर्वोक्त समस्त कार्य स्वनिष्ठ- के लिए विधेय हैं। परिनिष्ठित भक्त मण्डली अपने-अपने आचार्यों के द्वारा निर्धारित ‘कार्तिक-मास-व्रत-पालन’-नियमानुसार ‘पुरुषोत्तम-व्रतपालन’ करने के अधिकारी हैं। निरपेक्ष भक्तगण ऐकान्तिकी प्रवृत्ति के ‘श्रीभगवत्‌-प्रसाद-सेवन’-नियम के साथ दिन रात साध्यानुसार ‘श्रीहरिनाम-श्रवण-कीर्तन’ के द्वारा समस्त पवित्र मास व्यतीत करते हैं। जैसे श्रीहरिभक्तिविलास
में चरम-उपदेश में विष्णुरहस्य वाक्य है—
इन्द्रियार्थेष्वसक्तानां सदैव विमला मतिः। परितोषयते विष्णुं नोपवासो जितात्मनः॥
जिनकी मति भक्तिपूत (भक्ति के द्वारा पवित्र) होकर इन्द्रियों की भोग्य
के प्रति अनासक्त है, उनकी मति स्वाभाविक रूप से विमला (निर्मल) है, अतः वे जितात्मा (इन्द्रजीत)—सब समय ही स्वाभाविकी भक्ति के द्वारा श्रीकृष्ण को संतुष्ट करते हैं। उपवास आदि उनकी चित्त- का कारण नहीं हो सकता है। अतएव श्रीसनातन गोस्वामी ने एकान्तिकियों के संबंध में यह कहकर ग्रंथ समाप्त किया है।

ऐकान्तिक भक्तों का माहात्म्य
एवमेकान्तिनां प्रायः कीर्तनं स्मरणं प्रभोः।
कुर्वतां परमप्रीत्या कृत्यमन्यन्न रोचते॥
केनचित् प्रेष्ठ-श्रीमूर्त्तेरंघ्रि सेवने।
स्यादिच्छैषां स्वतंत्रेण स्वरसेनैव तद्विधिः॥
विहितेष्वेव नित्येषु प्रवर्त्तन्ते स्वयं हि ते।
भाति माहात्म्यं लिखितं हि तत्॥
एकान्त कृष्ण-भक्तों को श्रीकृष्ण-स्मरण तथा श्रीकृष्ण-कीर्तन ही अत्यंत प्रिय है। प्राय ही वे इन दो अंगों के अलावा और किसी अंग में व्यस्त नहीं होते हैं। परम प्रीति के साथ उक्त दोनों अंगों के पालन में इतना आग्रह है कि वे अन्य समस्त कार्यों में रुचि नही ले पाते हैं। श्रीकृष्ण की चरण-सेवा किसी विशेष भाव के साथ करने की उनकी इच्छा प्रबल होती है, अतः कुछ स्वतंत्रता के साथ एवं अपने रस के अनुकूल-भाव अनुसार कृष्ण की चरण सेवा ही उनकी विधि है। ऋषियों ने जो सब विधि-नियम दिये हैं, उनमें ऐकान्तिकी-भक्तों के लिए विधि- बाध्य-भाव नहीं है। स्वयं प्रवृत्ति भाव ही स्वाभाविक रूप से विद्यमान है। यही अनन्य भक्तों की महिमा है।

अपने-अपने अधिकारानुसार यह व्रत पालनीय

भक्तों ! स्वनिष्ठ , परिनिष्ठित तथा एकान्त भाव के आधार पर यथाधिकार श्रीपुरुषोत्तम पालन करने में प्रवृत्त होना। भगवान् व्रजनाथ श्रीकृष्ण इस मास के अधिपति हैं।

अधिमास भक्त मात्र के लिए ही प्रिय मास है , घटनाक्रम में उस मास में कोई कर्मकाण्ड की पीड़ा आकर भक्ति में व्यवस्थान नही पहुँचा सकती है।

सदाचार

— श्रीमद्भक्तिमयूख भागवत महाराज

भगवान् विष्णुके जगदीश होनेके नाते जगत् -वासी हमलोग सभी उसकी संतान या उसके सेवक अर्थात् वैष्णव हैं। इसलिए विष्णुकी सेवा करना हमारा धर्म है। इसलिए एकमात्र विष्णुकी सेवा और विष्णुसेवाके अनुकूल समस्त कर्मोंको सदाचार कहते हैं। और यही सर्वश्रेष्ठ सदाचार है। विष्णु -सेवाके प्रतिकूल कार्य अतीव सुखकर प्रतीत होने पर भी यथार्थ कल्याणप्रद नहीं होते। अतः इन्हें असदाचार कहा जाता है। असदाचार सर्वथा वर्जनीय है। श्रीचैतन्यचरितामृतमें कहा गया है —

"केह माने , केह ना माने , सब कृष्ण -दास।
ये ना माने , तार हय सेई पापे नास॥
जीवेर 'स्वरूप ' हय कृष्णेर 'नित्यदास। '
कृष्णेर 'तटस्था शक्ति ' 'भेदाभेद प्रकाश '॥"

(चैतन्यचरितामृत)

भावार्थ यह है कि निखिल प्राणी कृष्णके नित्य दास हैं। कुछ लोग इस वास्तव तथ्यको स्वीकार करते हैं और कुछ लोग स्वीकार नहीं करते। जो लोग स्वीकार नहीं करते , उनका इसी पापके कारण विनाश हो जाता है। जीव स्वरूपतः कृष्णका नित्य दास है। चिज्जगत् और मायिक जगत् —इन दोनोंके मध्य सीमारेखा पर अवस्थित होकर दोनों जगतोंसे सम्बन्ध रख सकता है। इसलिये जीवको तटस्था शक्ति भी कहा गया है। जीव कृष्णका भेदाभेद प्रकाश है। चिन्मय धर्मके सम्बन्धसे जीव कृष्णका अभेद प्रकाश है तथा अणु -चैतन्य धर्मवशतः जीव वृहद् चैतन्य कृष्णका भेद प्रकाश है। भेद और अभेद दोनों युगपत् सिद्ध हैं।

श्रीमद्भागवतका कहना है — 'वृक्षकी जड़में जल देनेसे जिस प्रकार उसकी शाखा प्रशाखा जल देनेकी आवश्यकता नहीं होती , प्राणोंमें आहार देनेसे जिस प्रकार अन्यान्य इन्द्रियोंको अलग -अलग आहार नहीं देना पड़ता , उसी प्रकार सर्वेश्वर विष्णुकी उपासना करनेसे दूसरे -दूसरे देवताओंकी पृथक् -पृथक् पूजा करनेकी आवश्यकता नहीं रहती। जो मनुष्य समस्त प्रकारके कर्मोंका परित्यागकर श्रीहरिको सबका मूल जानकर उसी अखिल लोकशरण्य श्रीमुकुन्दके चरणोंमें सर्वतोभावेन शरण ले लेता है , वह देवता , ऋषि, पितृगण , भूतसमूह और आत्मीय -स्वजनों — किसीका भी ऋणी नहीं रहता। '

कल्याणकामी साधकको सबसे पहले सद्गुरुका पदाश्रय करना चाहिये। उनसे विधिवत् मंत्र -दीक्षा ग्रहणकर प्रीतिपूर्वक उनकी सेवा करनी चाहिए तथा उनके आनुगत्यमें रहकर श्रवण -कीर्त्तन आदि भक्तिके अङ्गोंका यथायथ पालन करना चाहिये।

अनुकूल ग्रहण , प्रतिकूल वर्जन कृष्ण मेरी अवश्य ही रक्षा करेंगे — यह सुदृढ़ विश्वास , भगवानको अपने रक्षक और पालकरूपमें वरण , स्वतन्त्रता परित्याग कर आनुगत्य और दैन्य भाव ग्रहण — शरणागतिके इन छः अङ्गोंका पालन करना चाहिये। सत्संग , संकीर्त्तन , भागवत -श्रवण श्रीधाम अथवा मन्दिर या आश्रममें वास तथा श्रद्धापूर्वक श्रीअर्चामूर्तिकी सेवा —भक्तिके इन पाँचों अङ्गोंका पालन ही यथार्थ सदाचार है।

शुद्ध भक्तोंकी पद -धूलि , पद-जल और अधरामृत ग्रहण करनेसे भक्ति प्राप्त होती है। इसलिये श्रद्धापूर्वक इनका सेवन करना चाहिये। यदि प्रतिदिन सत्संग न मिले तो अभावमें सत् शास्त्रोंका आलोचनरूप सत्संग अवश्य करणीय है। भगवान्की अर्चामूर्तिको काठ या पत्थर मानना , गुरुदेवको मरणशील मानव समझना , भक्तोंकी जातिपाँतिका भेदभाव रखना , विष्णु और वैष्णवोंके पादोदकको साधारण जल समझना , भगवन्नाम और मंत्रको साधारण शब्द मानना , और सर्वेश्वर विष्णुको दूसरे -दूसरे देवताओंके समान समझना महा अपराध -जनक और नरकप्रापक होता है।

सुख -दुःख जभी जो कुछ आ पड़े , भगवान्की दया मानकर सर्वदा सन्तुष्ट रहना चाहिये। जो सांसारिक अमंगलोंको भगवान्की कृपा न मानकर जागतिक उन्नति और वैषयिक सुखोंके

लिये प्रधावित होते हैं, उन्हें अन्तमें केवल निराशा ही हाथ लगती है। सांसारिक असुविधाओंके मिस (बहाने) अपनी सेवाका विशेष अधिकार प्रदान करते हैं। भगवान्के प्रत्येक विधानमें अनन्त मंगलराशि निहित रहती है। हमें उसका अनुभव करना चाहिये।
साधक भगवान्की अर्चा-पूजा करते हैं, उन्हें ब्राह्ममुहूर्त्तमें ही बिछौनेसे उठ जाना चाहिये तथा नित्य क्रिया समाप्तकर श्रीविग्रहका जागरण सर्व-प्रथम कराना चाहिये। फिर पहले दिनका निर्माल्य हटा देना चाहिये। यदि पूर्व दिनका उस समय न हटाया गया तो वह भगवान्की छातीमें अरुणोदय तक काँटोंकी तरह चुभता है, सूर्योदयके एक घंटा बादतक बाणोंकी तरह हृदयको विद्ध करता है और उसके बाद वज्रकी तरह प्रहार करता है।
खुली हुई जगहमें आचमन और अर्चन नहीं करना चाहिये। पहले गुरुपूजा, पीछे गौरपूजा और अन्तमें राधाकृष्णकी पूजा करनी होती है। अन्यथा वह पूजा व्यर्थ हो जाती है। द्वादशीके दिन अर्चामूर्त्ति को स्नान कराना और तुलसी चयन करना निषेध है। स्नान करनेके बाद चयन किया हुआ पुष्प भगवान् ग्रहण नहीं करते। इसलिये नित्यप्रति स्नानके पहले ही पुष्प-चयन कर लेना उचित है। तुलसी चयन स्नानके बाद करना चाहिये, नहीं तो वे भगवान् की सेवाके लिये अनुपयोगी हो जाती हैं। पूजाके अतिरिक्त किसी भी रोगके लिये तुलसीका व्यवहार करना नितान्त अपराधजनक होता भगवान्को प्रतिदिन नाना-प्रकारके उत्तम-उत्तम अन्न पेयादि भोग निवेदन करना घृतहीन भोजनको आसुरिक भोजन कहा गया है। अतएव घृतहीन पदार्थ भगवान्को भोग नहीं लगाना चाहिये। लहसुन, प्याज, मसूरी, जला हुआ अन्न (भात); लाल रंगका पुई शाक, मांस-मछली आदि अमेध्य पदार्थोंका भोग निवेदन नहीं करना चाहिये। सामर्थ्य रहते हुए वेतनभोगी रसोइयेके हाथसे तैयार किया हुआ नैवेद्य भोग लगाना और वेतन-भोगी पुजारी द्वारा विष्णु-पूजा करवाना— ये दोनों सर्वथा अनुचित हैं। तुलसीकी माला धारण किये बिना विष्णुकी पूजा पूर्ण फल-दायक नहीं होती। उपनयन रहित व्यक्ति विष्णुकी पूजाके लिये अयोग्य है। उन्हें विष्णु पूजा नहीं करनी चाहिये।
श्रीगुरुदेवके चरणोंमें तुलसी निवेदन नहीं करना चाहिये। तुलसी देवी आश्रयजातीया शक्तितत्त्व और गोविन्दजीकी प्रिया हैं। उनके द्वारा एकमात्र विषय-विग्रह श्रीविष्णुका ही अर्चन किया जा सकता है। श्रीगुरुदेव और तुलसी देवी ये दोनों ही आश्रय जातीय सेवक भगवान् हैं। एक आश्रय जातीय शक्ति तत्त्वको
एक दूसरे आश्रय जातीय शक्ति तत्त्वके चरणोंमें निवेदन करना अपराधजनक होता है। इसीलिये श्रीगुरुदेव, श्रीलक्ष्मीजी और श्रीमती राधिकाजीके चरणोंमें तुलसी अर्पण करना अवैध है। हाँ, उनके हाथोंमें तुलसी प्रदान करनेकी शास्त्रीय पद्धति है। हाथोंमें तुलसी देनेमें यह भावना होनी चाहिये कि गुरुदेव अथवा लक्ष्मीजी या श्रीमती तुलसीदेवीको भगवान्की सेवामें अर्पण कर रही हैं। श्रीकृष्णचन्द्र, श्रीगौरांगदेव, श्रीनित्यानन्द प्रभु, और श्रीरामचन्द्र आदि भगवद्वतारोंके चरणोंमें ही तुलसी प्रदान करनेकी विधि है। भगवदवतारोंके अतिरिक्त किसी भी अन्य देव-देवियोंके चरणोंमें तुलसी प्रदान करना अवैध है। क्योंकि वे सभी शक्ति तत्त्व हैं।
श्रीविग्रहके सामने चरणामृत पान करना और महाप्रसाद भोजन करना निषेध है। कृष्ण-प्रीतिके लिये कार्त्तिकके महीनेमें आकाश-दीप प्रज्वलित करना और ग्रीष्मकालमें तुलसीके पौधेके ऊपर जल धारा देना प्रधान सदाचार है। भगवानकी आरतिका प्रतिदिन दर्शन करना चाहिए। इससे दुःख-दारिद्र्य और पापोंका नाश होता है। आरति दर्शन खड़े होकर करना चाहिए। अयुग्म (दो बत्तियोंको एक साथ न मिला कर) और अनेक बत्तियोंवाले प्रदीप द्वारा आरति करनी चाहिए। चरणामृत पीनेके बाद आचमन करना चाहिए। भगवान्के उत्सवोंमें नीच जातिके लोगोंसे स्पर्श होनेसे अस्पृश्यताका दोष नहीं लगता। एकादशी और जन्माष्टमी आदि हरिवासरोंके दिन उपवास रहकर हरिनाम संकीर्त्तन करना चाहिए। उस दिन किसी भी हालतमें अन्न भोजन

नहीं करना चाहिए। उस दिन क्षौर कर्म भी करना मना है। स्मार्त्तमतके विधानके अनुसार विद्धा एकादशी और जन्माष्टमीको परित्याग कर वैष्णवमतानुसार शुद्ध एकादशी आदि हरिवासरोंका पालन करना चाहिए। उन्मीलनी, व्युञ्जली, त्रिस्पृशा, पक्षवर्द्धिनी, जया, विजया, जयन्ती और पापनाशिनी—इन आठ महाद्वादशियोंका पालन विशेषरूपसे करना चाहिए। एक वस्त्र पहन कर भगवानकी पूजा और आहार करना निषेध है। ताँबेका बर्तन परम पवित्र और भगवानका अत्यन्त प्रिय होता है। ताँबेके बर्तनमें दुग्ध और मधु रखनेसे मद्यके समान हो जाते हैं। किन्तु उस बर्तनमें घी लगाकर दुग्ध और मधु रखनेसे दूषित नहीं होते। ग्रहणके समय भगवान्की सेवा और महाप्रसादकी सेवा करनेमें कोई बाधा नहीं है। जन्म और मरणमें वैष्णवोंको अशौच स्पर्श नहीं करता। इसलिये वे उस समय भी सेवा बन्द न करेंगे।

गृह, आश्रम या मठमें कोई भी भक्त उपस्थित होने पर यथाशक्ति उनकी अभ्यर्थना और सम्मान करना कर्त्तव्य है। एकादशीके दिन किसी अतिथिको अन्न भोजन कराना सदाचारके विरुद्ध है। श्रीमद्भागवत आदि ग्रन्थोंको अथवा श्रीहरिनामकी मालिकाको जहाँ-तहाँ रखना अथवा साधारण वस्तुओंके साथ रखना सर्वथा वर्जनीय है। महाप्रसादके सामने कलह, प्रजल्प अथवा क्रोध प्रदर्शित करनेसे महाअपराध होता है। महाप्रसादके साथ अमेध्य द्रव्योंको (मद्य, मांस, मसूर आदि अपवित्र पदार्थोंको, जिनका व्यवहार यज्ञमें नहीं किया जाता है) मिश्रित कर भोजन नहीं करना चाहिये। गंगा-यमुनाके तटपर मल-मूत्र आदि परित्याग करना तथा उनके जलमें कफ थूक इत्यादि फेंकना अपराधजनक है।

शास्त्रोंका कहना है—श्रीनामसंकीर्त्तन, परिक्रमा और श्रीहरि-यात्राके समय तुरन्त उठ कर प्रणाम करना चाहिये और कुछ दूर तक उनका अनुगमन करना चाहिये। सन्तोंको और गुरुदेवको देखते ही प्रणाम करना चाहिये। यदि वे कहीं जा रहे हों, तो कुछ दूर तक उनका अनुगमन करना चाहिये। पुत्रके संन्यास ग्रहण करने पर गृहस्थ पिताका कर्त्तव्य है कि वे संन्यासी पुत्रको प्रणाम करें। त्रिदण्डि संन्यासी शिखा और सूत्र (उपवीत) धारण करेंगे, कषाय वस्त्र पहनेंगे और पवित्र रहकर निरन्तर हरिनाम करेंगे। 'हे भगवन्! आप मुझ पर प्रसन्न होइये'—कह कर भगवान्को प्रणाम करना चाहिये।

प्रणामकी दो विधियाँ हैं—पञ्चांग और अष्टांग। दोनों हाथ, दोनों घुटनों और सिरको पृथ्वी पर टेक कर वचन और बुद्धिसे प्रणाम करनेको पंचांग प्रणाम कहते हैं और दोनों घुटने, दोनों हाथ, दोनों पैर, छाती और मस्तकको पृथ्वीपर टेककर दृष्टि, मन और वचनसे प्रणाम करनेको साष्टांग प्रणाम कहते हैं।

सामने मस्तक रख कर प्रणाम करनेसे अपराध होता है। श्रीगुरुदेव, वैष्णवों और अपनी बाईं ओर रख कर प्रणाम करना चाहिये। श्रीविग्रहके शयन अथवा भोजनकालमें प्रणाम नहीं करना चाहिये। इस विषयमें 'हरिभक्तिविलास' ग्रन्थमें नारदपंचरात्रका निम्नलिखित वचन उद्धृत किया गया है—

सन्धि वीक्ष्य हरिं चाद्यं गुरुन् स्वगुरुमेव च।
सर्वथा नमेत्

(नारद पञ्चरात्र)

श्रीसनातन गोस्वामीने इस श्लोककी टीकामें लिखा है—सन्धि भोजनशयनाद्यवसरं। आलोच्य तद्व्यतिरिक्तकाले इत्यर्थः।

जूठे हाथोंसे अथवा अपवित्र अवस्थामें प्रणाम करना निषेध है। एक हाथसे प्रणाम करना चाहिए। भगवान्के पीछेसे अथवा अत्यंत निकटसे या गर्भ मन्दिरके भीतर प्रणाम और जप नहीं करना चाहिये। श्रीमन्दिरमें अथवा सभा आदि स्थलोंमें जहाँ बहुत से भक्त एकत्रित हों, वहाँ सबको अलग-प्रणाम नहीं करना चाहिये। भगवान्की प्रदक्षिणा चार बार करनी चाहिए, भगवान् और तुलसी की प्रदक्षिणा एक बार नहीं करनी चाहिए। पवित्र आसन पर पूर्व अथवा उत्तर मुख बैठ कर आचमन कर अपने इष्टदेवकी कृपा भिक्षाकर संख्यापूर्वक अपने इष्टमंत्रका त्रिसंध्याओंमें जप करना चाहिए। एक वस्त्र पहन कर जप करना मना है। निर्दिष्ट संख्यापूर्वक जप करना

चाहिए। महामन्त्र बिना संख्या रक्खे हुए ऊँचे स्वरसे भी कीर्त्तनीय है। जप करनेके समय सुमेरु (जप माला के बीचका वह सबसे बड़ा दाना जहाँसे जप आरम्भ और शेष किया जाता है) का लंघन और बायें हाथसे मालाका स्पर्श नहीं करना चाहिए। तर्जनी अँगुली (अँगूठेकी बादवाली अँगुली) से भी मालाका स्पर्श करना निषेध है। जप करनेके समय मालाका हिलाना अनुचित है। मालाको वस्त्रसे ढककर जप करना उचित है। प्रकाश्य रूपमें लोगोंको दिखलाकर जप करनेसे भूत, वैताल, राक्षस, सिद्ध और गन्धर्वोंके द्वारा उस जपका फल अपहरण कर लिया जाता है। सुयोग प्राप्त रहनेसे तुलसी, गुरु, श्रीविग्रह अथवा भक्तोंके सम्मुख जप करना ही विधि है। हरिभक्तिविलासका कथन है—जप करनेके पहिले विधिवत् पुरश्चरण कराना नितांत आवश्यक है। विना पुरश्चरण कराये सैकड़ों वर्षों तक जप सिद्ध नहीं हो सकता। पुरश्चरणके द्वारा साधककी सारी कामनाएँ पूरी हो जाती हैं। पुरश्चरणको मंत्रकी शक्ति अथवा प्रधान वीर्य कहा गया है। किन्तु अधिक व्ययसाध्य, श्रमसाध्य और समयसाध्य होनेके कारण शास्त्रोक्त विधियोंके अनुसार पुरश्चरण करना सबके लिए संभव नहीं है। इसलिए बुद्धिमान भक्त श्रीगुरुदेवको ईश्वर मानकर तन मन, और वचन से प्रीतिपूर्वक गुरुकी सेवा करते हैं और जिनकी कृपामात्रसे ही उनका पुरश्चरण अपने-आप सिद्ध हो जाता है।
अथवा देवतारूपं गुरुं ध्यात्वा प्रतोषयेत्।
तस्य छायानुसारी स्याद्भक्तियुक्तेन चेतसा॥
गुरुमूलमिदं सर्वं तस्मान्नित्यं गुरुं भजेत्।
पुरश्चरणहीनोऽपि मन्त्री सिध्येन्न संशयः॥
(हरिभक्तिविलास १७/१३०)
शास्रके अनुसार विधिवत् पुरश्चरण करना चाहिये अथवा श्रीगुरुदेवको साक्षात् ईश्वर मानकर निष्कपट सेवाके द्वारा उन्हें प्रसन्न कर छायाकी तरह उनका अनुसरण करना चाहिये। किन्तु जो लोग न तो पुरश्चरण ही करते हैं और न गुरुकी सेवा ही करते हैं, उनकी मन्त्रसिद्धिकी कोई संभावना नहीं होती। श्रीगुरुदेव समस्त कर्मोंके मूल हैं। अतएव प्रतिदिन उनकी सेवा करना कर्त्तव्य है। ऐसा होनेसे पुरश्चरण न करके भी मन्त्रकी सिद्धि हो सकती है। उक्त श्लोककी टीकामें श्रीसनातन गोस्वामीने लिखा है— “केवल श्रीगुरुप्रसादेनैव पुरश्चरणसिद्धिः स्यात्।”
शास्त्रोंमें और भी कहा गया है—
यस्य देवे च मन्त्रे च गुरौ त्रिष्वपि निश्चला।
न व्यवच्छिद्मते बुद्धिस्तस्य सिद्धिरदूरतः॥
मंत्रात्मा देवता ज्ञेया देवता गुरुरूपिणी।
तेषां भेदो न कर्त्तव्यो यदाच्छेदिष्टमात्मनः॥
(हरिभक्तिविलास १७/३०)
जिनकी भगवान्, गुरु, और इष्टमन्त्रके प्रति अचला भक्ति है वे शीघ्र ही
सिद्धि लाभ कर लेते हैं। प्रत्येक कल्याणकामी साधकको श्रीमंत्र और श्रीगुरुदेवको साक्षात् ईश्वर मानना चाहिए। इन तीनों वस्तुओंमें कभी भेदभाव नहीं रखना चाहिए। गुरुकी अनायास ही सर्वार्थकी सिद्धि होती है तथा भगवान्की कृपा पायी जा सकती है। श्रीगुरुदेवकी सेवा करनेसे भगवान् जितने सन्तुष्ट होते हैं, वे और किसी भी उपायसे उतना प्रसन्न नहीं होते।
गुरुशुश्रूषणं नाम सर्वधर्मोत्तमोत्तमम्।
तस्मात् धर्म्मात् परो धर्मः पवित्रं नैव विद्यते॥
(हरिभक्तिविलास ४/१४०)
श्रीगुरुसेवा समस्त उत्तम धर्मोंमें भी उत्तम धर्म है। इससे बढ़कर कोई
भी दूसरा श्रेष्ठ और पवित्र धर्म नहीं है।
श्रीजीव गोस्वामीने भक्तिसन्दर्भमें लिखा है—
यो मंत्रः स गुरुः साक्षाद्, यो गुरुः स हरिः स्वयम्।

गुरुर्यस्य भवेत् तुष्टस्तस्य तुष्टो हरिः स्वयम्॥
हरौ रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन गुरुमेव प्रसीदयेत्॥
प्रथमन्तु गुरुं पूज्य ततश्चैव ममार्चनम्।
कुर्वन् सिद्धिमवाप्नोति ह्यन्यथा निष्फलं भवेत्॥
नाहमिज्या-प्रजातिभ्यां तपसोपशमेन च।
तुष्येयं सर्वभूतात्मा गुरुशुश्रूषया यथा।
टीका च—ज्ञानप्रदाद् गुरोरधिको सेव्यो नास्ति। अतएव तद्भजनादधिको धर्मश्च नास्ति। इज्या गृहस्थधर्मः, प्रजातिः प्रकृष्टं जन्मोपनयनं, तेन ब्रह्मचारिधर्म उपलक्ष्यते ताभ्यां; तथा तपसा वनस्थधर्मेण; उपशमेन यतिधर्मेण वा। अहं परमेश्वरस्तथा न तुष्येयं, यथा सर्वभूतात्मापि गुरुशुश्रूषया।
मंत्र और गुरु एक ही वस्तु हैं। गुरु ही साक्षात् हरि हैं। अतः गुरुदेव
जिस पर प्रसन्न होते हैं, श्रीहरि भी उसके प्रति प्रसन्न होते हैं। हरि यदि अप्रसन्न भी हो जायँ तो गुरु उसकी रक्षा कर सकते हैं। किन्तु गुरु रुष्ट होनेपर कोई भी उसकी रक्षा नहीं कर सकता। इसलिए गुरुदेवको प्रसन्न करनेके लिए जी-जानसे प्रयत्न करना चाहिए। स्वयं भगवान् कहते हैं— ‘पहले गुरु-पूजा कर पीछे मेरी पूजा करो। ऐसा होनेसे ही सिद्धि प्राप्त हो सकती है, अन्यथा पूजा व्यर्थ हो जाती है। मुझे गुरु-सेवासे जितनी प्रसन्नता होती है, उतनी प्रसन्नता गृहस्थ धर्म, ब्रह्मचर्य धर्म, वानप्रस्थधर्म अथवा संन्यासधर्म आदिके पालनसे नहीं होती। भगवत्-ज्ञानको देनेवाले श्रीगुरुदेवसे बढ़कर कोई भी सेव्य तत्त्व नहीं है। अतएव उनकी सेवासे बड़ा कोई दूसरा धर्म नहीं है। इज्यासे गृहस्थ धर्मका, प्रजाति या प्रकृष्ट जन्म अर्थात् उपनयनसे ब्रह्मचर्यधर्मका लक्ष्य होता है। इसी प्रकार तपसे वानप्रस्थ और उपशमसे संन्यासधर्म लक्षित होता है। परमेश्वर मैं, गुरुसेवासे जितना संतुष्ट होता हूँ, उतना संतुष्ट पूर्वोक्त गृहस्थ, ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास धर्मोंके पालनसे नहीं होता।

एकादशी व्रत का भक्ति के साथ क्या संबंध है ?

हरिवासरादि एकादशी -व्रत भाव प्रकाशित करने वाले उद्दीपन है

श्रीचैतन्य चरितामृत मध्य -लीला (२३.४६)

रसके 'हेतु' विभावके दो प्रकार —

([illegible]) [illegible] [illegible] ([illegible]) [illegible] —

द्विविध 'विभाव',—आलम्बन, उद्दीपन।
वंशीस्वरादि —उद्दीपन, कृष्णादि —आलम्बन॥४६॥

अनुवाद —विभाव दो प्रकारके होते हैं —आलम्बन और उद्दीपन। श्रीकृष्णादि आलम्बन और वंशीध्वनि आदि उद्दीपन कहलाते हैं॥४६॥

अनुभाष्य —

([illegible])—

"तत्र ज्ञेया विभावास्तु रत्यास्वादन -हेतवः।
ते द्विधालम्बना एके तथैवोद्दीपनाः परे॥"

इस विषयमें अग्निपुराणमें —

"विभाव्यते हि रत्यादिर्यत्र येन विभाव्यते।
विभावो नाम स द्वेधालम्बनोद्दीपनात्मकः॥"

अर्थात् "श्रीकृष्णरतिके आस्वादनके कारणको 'विभाव' कहते हैं; वह दो प्रकारका होता है —आलम्बन और उद्दीपन। जिससे और जिसके द्वारा रति आदि विभावित होती है, वही अग्निपुराणादिमें 'विभाव' (आलम्बनमय और उद्दीपनमय)के नामसे कहा गया है।"

'[illegible]'—([illegible])—

"कृष्ण कृष्णभक्ताश्च बुधैरालम्बना मताः।
रत्यादेर्विषयत्वेन तथाधारतयापि च॥"

अर्थात् "रति आदिके (अर्थात् गौण हास्यादि रसके) विषयरूपमें 'श्रीकृष्ण' और आधार-स्वरूपमें 'श्रीकृष्णभक्त'—इन दोनोंको पण्डितगण 'आलम्बन' कहते हैं।"

'[illegible]'—([illegible] [illegible]-[illegible])—

"उद्दीपनास्तु ते प्रोक्ता भावमुद्दीपयन्ति ये।
ते तु श्रीकृष्णचन्द्रस्य गुणाश्चेष्टाः प्रसाधनम्॥
स्मिताङ्गसौरभे वंशशृङ्गनूपुरकम्बरः।
पदाङ्क -क्षेत्र -तुलसी -भक्त -तद्वासरादयः॥"

अर्थात् "जो भाव प्रकाशित करते हैं, वे ही उद्दीपन हैं। जैसे —श्रीकृष्णके गुण, चेष्टा और प्रसाधन (कंघे आदिके द्वारा केश -सँवारना आदि देहकी सज्जाके उपकरण) और स्मित (मृदुहास्य), अङ्गगन्ध, वंशी, शृङ्ग, नूपुर, शङ्ख, पदचिह्न, क्षेत्र, तुलसी, भक्त, हरिवासरादि एकादशी -व्रत॥"४६॥

एकादशी —भक्त्युद्दीपक वस्तु

भक्त्युद्दीपक वस्तु -शक्ति जनित भक्त्याभासके उदाहरण शास्त्रोंमें सर्वत्र भरे पड़े हैं। तुलसी, महाप्रसाद, वैष्णव -प्रसाद, एकादशी, श्रीमूर्ति, क्षेत्र, गङ्गा, जयन्ती -तिथि, वैष्णव -पद-धूलि आदि अनेक भक्त्युद्दीपक वस्तुएँ हैं। अज्ञानतावश भी इन वस्तुओंके संयोगसे जीवोंका कहीं -कहीं प्रचुर कल्याण होता है। कहीं -कहीं तो अपराधके रूपमें संयोग होने पर भी वैसा ही फल प्राप्त होता ऐसा संयोग भी भक्त्याभास है। भक्त्याभासका ऐसा अद्भुत फल देखकर भक्तजन कभी आश्चर्य न करेंगे। ये समस्त फल शुद्धा भक्तिके असीम प्रभावसे ही उत्पन्न होते हैं। ज्ञान या योगका अनुष्ठान यदि शुद्धरूपमें न किया जाय और यदि उन्हें भक्त्याभासकी सहायता न प्राप्त हो; तो ज्ञान या योग कोई भी फल देनेमें समर्थ नहीं है। परन्तु भक्तिदेवी सर्वत्र स्वतन्त्र हैं। चाहे जो हो और जिस किसी अभिलाषासे क्यों न हो, भक्तिदेवीके आश्रित होनेसे वे उसकी सभी मनोकामनाएँ पूर्ण कर देती हैं। यद्यपि ये समस्त फल भक्त्याभासमें दृष्टिगोचर होते हैं तथापि भक्त्याभासके आचरणको कर्त्तव्य नहीं बतलाया गया है। शुद्धाभक्तिका आचरण करना ही कर्त्तव्य है। जो लोग सम्पूर्ण मङ्गल प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें किसी भी दशामें ‘प्रतिबिम्ब’-भक्त्याभासको हृदयमें स्थान नहीं देना चाहिए तथा शुद्ध वैष्णवोंके आश्रयमें रहकर भजनके बलसे ‘छाया’भक्त्याभासको अतिक्रम कर शुद्ध -भक्तिदेवीके चरणकमलोंमें आश्रय लेना चाहिए।

भक्तिके प्रति अपराध

यह एक भयंकर बात है। हम लोग अनेक प्रकारसे भक्तिका अनुष्ठान करते हैं। साम्प्रदायिक ब्राह्मण -गुरुके निकट मन्त्र ग्रहण करते हैं। प्रतिदिन द्वादश अंगोंमें द्वादश तिलक धारण कर श्रीकृष्णका अर्चन करते हैं। एकादशी तिथिका पालन तथा शक्तिके अनुसार नाम -स्मरण भी करते हैं। श्रीवृन्दावन आदि स्थानोंका दर्शन करते हैं। परन्तु दुर्भाग्यकी बात यह है कि हम इस बातके लिए प्रयत्न नहीं करते कि भक्तिदेवीके प्रति हमारा अपराध न हो।

एकादशी व्रत पालन न करना यह एक प्रकारका सेवापराध सेवापराध और नामापराध वैधभक्तगण सेवापराध और नामापराधसे सदैव सावधान रहेंगे। वराहपुराण तथा पद्मपुराणमें सेवापराध पाँच प्रकारके बतलाए गए हैं—(१) सामर्थ्यके रहते हुए भी यत्नका अभाव, (२) अवज्ञा, (३) अपवित्रता, (४) निष्ठाका अभाव और (५) गर्व या अभिमान।
श्रीमूर्त्तिसेवाके सम्बन्धमें जो अपराध शास्त्रोंमें कहे गए हैं, वे
सभी अपराध पूर्वोक्त पाँच विभागमें विभक्त किए जा सकते हैं। सभी अपराधोंका विस्तारपूर्वक वर्णन करना सम्भव नहीं है। अतएव वराहपुराण और पद्मपुराण आदि शास्त्रोंमें जो अपराध बतलाए गए हैं, उन्हींका संक्षेपमें यहाँ वर्णन किया जा रहा है—
(१) सामर्थ्यके रहते हुए भी यत्नका अभाव—अर्थके रहते हुए भी श्रीमूर्त्तिसे सम्बन्धित नियमित उत्सवादि न करना, सामर्थ्यके रहते हुए भी गौणोपचारके द्वारा सेवा-निर्वाह करना, जिस कालमें जो द्रव्य या फलादि प्राप्त हों, यत्नपूर्वक भगवान्को निवेदन नहीं करना, स्तव-स्तुति, वन्दना, आदि न करना; बिना जलाए भगवान्के मन्दिरमें प्रवेश करना—ये सभी कार्य सामर्थ्ययुक्त होते हुए भी यत्न नहीं करनेसे होते हैं।
(२) अवज्ञा—यानारोहण या पादुका धारणकर पूजागृहमें जाना, श्रीमूर्त्तिके सामने प्रणाम नहीं करना, एक हाथ द्वारा प्रणाम, भगवान्की मूर्त्तिको दिखलाना, श्रीमूर्त्तिके सामने प्रदक्षिणा, श्रीमूर्त्तिके आगे पाँव फैलाना। पर्यङ्कबन्धनमें बैठकर स्तव-पाठ करना, श्रीमूर्त्तिके सामने शयन, भोजन आदि शारीरिक कर्म करना, जोर-जोरसे बातें करना या चिल्लाना, परस्पर वार्त्तालाप करना, विषयान्तरकी चिन्ता करते हुए रोदन करना, कलह अथवा विवाद करना, दूसरे व्यक्तियोंकी आलोचना करना, अधोवायु त्याग करना, लाए हुए वस्तुका दूसरेको देकर अवशिष्ट भगवान्को निवेदन करना, श्रीमूर्त्तिकी ओर पीठ करके बैठना, श्रीमूर्त्तिके सामने अन्य व्यक्तिको प्रणाम करना, अकालमें श्रीमूर्त्तिका दर्शन (उपयुक्त अवसरको छोड़कर दूसरा समय अकाल है)—ये सभी कार्य सेवा-सम्बन्धी अवज्ञाके अन्तर्गत हैं।
(३) अपवित्रता— या अपवित्र शरीर होकर भगवान्के मन्दिरमें प्रवेश करना, पशुलोमयुक्त (कम्बलादि) वस्त्रोंको पहनकर श्रीमूर्त्तिकी सेवा करना, पूजाके समय थूकना, सेवाके समय अन्य विषयकी चिन्ता आदि नाना प्रकारकी अपवित्रताओंका शास्त्रोंमें वर्णन किया गया है।
(४) निष्ठाका अभाव—भगवत्-सेवाके पूर्व जल ग्रहण करना, अनिवेदित द्रव्योंको ग्रहण करना, श्रीमूर्त्ति और उसकी सेवादिका नित्य दर्शन न करना, प्रियवस्तु और कालोचित स्वादिष्ट फलादि द्रव्य भगवान्को अर्पण न करना, हरिवासर या भगवान्के जन्म-दिवस आदिका पालन न करना—ये सभी कार्य निष्ठा अभावके अन्तर्गत हैं।
(५) गर्व या अभिमान— करते समय अपनेको अकिञ्चन भगवान्का दास जानना चाहिए।
ऐसा न कर अपनी प्रशंसा आप ही करना या अपनेको श्रेष्ठ पूजक मानकर अभिमान करना— सेवाकालीन गर्व है। अनेक सामग्री द्वारा और आडम्बरके साथ श्रीमूर्त्तिकी सेवाकर अपनी महानता समझना भी गर्व है।
इन पाँच प्रकारके सेवापराधोंसे सावधान रहकर श्रीमूर्त्तिकी सेवा करनी चाहिए। विग्रह-प्रतिष्ठाता, पुजारी और साधारण भक्तोंपर ये सभी सेवापराध यथायोग्य लागू होते हैं। भजनमें उन्नति चाहनेवाले साधकोंको सेवापराध और नामापराधोंसे अवश्य बचना चाहिए।

श्रीबलदेवविद्याभूषण पाद के विचार

तुलस्यश्वत्थधात्र्यादि-पूजनं धाम निष्ठता। अरुणोदय-विद्धस्तु संत्याज्यो हरिवासरः जन्माष्टम्यादिकं सूर्य्योदयविद्धं परित्यजेत्॥
(प्रमेयरत्नावली, प्रमेय ८, श्लोक ९)
अनन्तर भक्ति के अनेक अंगों का वर्णन करते हैं। तुलसी, अश्वत्थ, धात्री
आदि वृक्ष का पूजन, धाम में निवास करें अर्थात् सामर्थ्य होने से शरीर के द्वारा धाम वास करें अन्यथा भावना से करें। अनन्तर वैष्णव व्रत समूह का दिन निर्णय करते अर्थात् वैष्णवस्मृति श्रीहरिभक्तिविलास ग्रन्थ के अनुसार श्रीएकादशी प्रभृति व्रत किस रीति से पालनीय है, उसका वर्णन करते हैं। समस्त तिथियों में पूर्व विद्धा त्याज्य है, यह विद्धा अरुणोदय वेध एवं सूर्योदय वेध से द्विविध है, एकादशी तिथि में ही केवल अरुणोदय वेध को मानना होगा, अन्यत्र सूर्योदय विद्धा निश्चित है। एकादशी तिथि—अरुणोदय से अरुणोदय पर्यन्त पूर्णा है, प्रभृति तिथि—सूर्योदय से अपर सूर्योदयकाल तक पूर्णा है, अतएव उक्त समय में पूर्व तिथि का प्रवेश होने से तिथि विद्धा होती है। केवल एकादशी ही अरुणोदय-विद्धा त्याज्या है, जन्माष्टमी प्रभूति तिथि समूह सूर्योदय विद्धा त्याज्या है, इसका विस्तृत विवेचन श्रीहरिभक्तिविलास ग्रन्थ में है।

श्रीरूप गोस्वामी

श्रीरूप गोस्वामी के आनुगत्य में एकादशी व्रत करना रागानुग साधकों के लिए परमावश्यक

रागानुग भक्तोंको निरन्तर गुरुके आनुगत्यमें ही निजाभीष्ट सिद्ध -सेवा करनी चाहिए।

जनञ्चास्य प्रेष्ठं निजसमीहितम्।
तत्तत्कथारतश्चासौ कुर्य्यद्वासं व्रजे सदा॥

—भक्तिरसामृतसिन्धु (१.२.२९४)

जो भक्त रागमयी भक्तिके लोलुप हैं उन्हें ब्रजबासी कृष्णका एवं अपने सजातीय कृष्ण -प्रियजनोंका स्मरण करते -करते उनकी लीला कथाओंमें अनुरक्त रहकर सर्वदा ब्रजमें वास करना चाहिए।

स्मरि कृष्ण निज कृष्ण प्रेष्ठ व्रज जन।
कृष्ण कथा -रत व्रजवास अनुक्षण॥

रागानुगाकी परिपाटी है कि अपने प्रियतम इष्ट नवकिशोर नन्दनन्दन श्रीकृष्ण तथा अपन अभिलषित भावापन्न प्रिय सखियाँ श्रीरूपमंजरी आदिका स्मरण करना चाहिए तथा उनकी श्रवण करते हुए श्रीनन्दराजके व्रज अर्थात् वृन्दावनमें सदैव वास करे। शक्तिसामर्थ्य रहनेपर सशरीर वृन्दावन तथा गोवर्धन , राधाकुण्ड आदि स्थानोंमें वास करे , असमर्थ होनेपर मनसे वास करना चाहिए। ये स्थान श्रृंगाररसमय स्थान हैं तथा भजनमें रसोद्दीपक तथा लीला उद्दीपक हैं। श्रीभक्तिविनोद ठाकुर प्रार्थनामें कहते हैं —'राधाकुण्ड तट कुञ्ज -कुटीर , गोवर्धन पर्वत यामुन तीर। '

उपरोक्त साधकोंको कृष्ण- अर्थात् भावानुकूल ब्रज रसिकजन यथा श्रीरूपमंजरी आदि सखियोंकी कथाओंका स्मरण करना चाहिए, ऐसा करनेसे उनके भाव हृदयमें संक्रमित होते हैं। व्रज-रसिकजनोंकी सेवा परिचर्या द्वारा उक्त भाव प्राप्त होते हैं।
उदाहरण स्वरूप—श्रील रघुनाथ दास गोस्वामीको श्रीस्वरूप दामोदर तथा श्रीलरूप गोस्वामीके आनुगत्यमें ब्रजकी रसमयी उपासनाकी पराकाष्ठा प्राप्त हुई थी।
श्रीनिवास आचार्य की बेटी, श्रीमती हेमलता ठाकुरानी के एक ‘रूप कविराज’ नामक शिष्य थे। रूप कविराज को बाद में उन्होंने उनके अपरंपरागत विचारों के लिए अपने संप्रदाय से बहिष्कृत कर दिया था। रूप कविराज ने असम के सूरमा घाटी क्षेत्र में अपने दोषपूर्ण विचारों का प्रचार किया। इस पथभ्रष्ट शिष्य रूप कविराज ने सिखाया कि चूंकि गोपियों ने गुरु की शरण नहीं ली, एकादशी व्रत नहीं किया, या शालग्राम और तुलसी देवी की पूजा नहीं की, इसलिए उनके अनुयायियों के लिए भी ऐसा करना आवश्यक नहीं हैं।
विश्वनाथ चक्रवर्ती ने इस अपसिद्धांत का जोरदार खंडन किया। उस अपसिद्धांत का नाम उन्होंने ‘सौरम्य-मत’ रखा, क्यों कि यह कुसिद्धान्त आसाम के सुरमा घाटी क्षेत्र में लोकप्रिय था। इस अपसिद्धांत के अनुसार रूप गोस्वामी के ’कृष्ण जनञ्चास्य’ श्लोक में ‘व्रज-लोक’ शब्द का गलत अर्थ कृष्ण की व्रज की नित्य प्रेयसीवृन्द जैसे राधा एवं चंद्रावली ऐसा निकाला गया।
यदि कोई यह शङ्का करता है कि ‘व्रजलोक’ पदसे श्रीराधा ललितादिको ही ग्रहण
किया गया है, तब साधकदेहसे कायिकी सेवा भी श्रीराधा ललितादिके अनुसार ही होनी चाहिये। और यदि ऐसा ही हो, तब श्रीराधा ललितादिने कभी भी श्रीगुरुपदाश्रय, एकादशीव्रत, शालिग्रामसेवा, तुलसीसेवा आदि नहीं की थी। क्योंकि ऐसा कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता। इसलिए उन नित्य परिकरोंका अनुसरणकारी हमलोगोंके लिए भी वे अङ्गसमूह करणीय नहीं है। किन्तु उपर्युक्त व्रजलोक पदके द्वारा आधुनिक विरुद्ध मतावलम्बी इन शङ्कावादियोंका यह अपसिद्धान्त भी निरस्त हुआ। श्रीजीव गोस्वामीपादने भी श्रीभक्तिरसामृत-सिन्धु ग्रन्थमें इसी श्लोककी टीकामें ऐसी ही व्याख्या की है। यथा—‘व्रजलोक’ शब्दका तात्पर्य श्रीकृष्णके प्रियतमवर्ग एवं तदनुगत श्रीरूप गोस्वामी आदिसे है। अतएव सिद्धदेह द्वारा श्रीरूपमञ्जरी आदि व्रजवासीयोंके अनुसार मानसीसेवा एवं साधकदेह द्वारा श्रीरूप गोस्वामी आदिका अनुसरणपूर्वक कायिकी सेवा करनी चाहिये।

श्रीगुरुदेव के स्वतन्त्र और परतंत्र स्वरूप
—श्रील भक्ति रक्षक श्रीधर गोस्वामी महाराज
थोडा समझाकर बताना जरूरी है। कृष्ण के विशेष इच्छा से ही श्रीगुरु आदिष्ट शक्तितत्व हैं। कृष्ण ने गुरु के भीतर अपनी शक्ति संचार की है। एकान्त अन्तर्दृष्टि देकर देखनेसे हम समझ सकते है की श्रील गुरुदेव कृष्ण का अवतार— शक्त्यावेश अवतार हैं एवं इस दृष्टिसे ही उन्हें देखना चाहिए। फिर गुरु— कृष्ण के भक्त हैं एवं कृष्ण का प्रकाश भी हैं—उन में ये दो रूप युगपत् विद्यमान होते है। गुरुदेव के यही दो प्रकार के स्वरूप हैं। एक ओर वे वैष्णव है, और कृष्ण का प्रकाश भी है। वैष्णव ही गुरु होते है। एकादशी के उपवास के दिन गुरु अन्न प्रसाद ग्रहण नहीं करते हैं। तब वे वैष्णव होते है। किन्तु श्रील गुरुदेव का विग्रह जब सिंहासन पर पूजित होता है, तब शिष्य उस विग्रह को अन्न का नैवेद्य अर्पण करते है। उपवास तिथि में भी गुरुदेव के श्रीविग्रह को अन्न का नैवेद्य अर्पण करना शास्त्र सम्मत है।

एकादशी और जन्माष्टमी आदि व्रत

आंशिकरूपमें भावसम्बन्धी भजनानुष्ठान
कुछ लोगोंकी यह भ्रान्त धारणा है कि वेदशास्त्रमें निर्दिष्ट विधियोंके पालन की कोई आवश्यकता नहीं है, यहाँ तक कि श्रीमद्भागवत जैसे सर्वप्रमाण शिरोमणि ग्रन्थको भी माननेकी आवश्यकता नहीं है। मनमाने ढङ्गसे आत्यन्तिकी या अनन्या भक्ति करनेसे ही रसिक भक्त बना जा सकता है। इसी धारणाके कारण अनिवार्य पालनीय एकादशी व्रत, गुरुपदाश्रय, कार्त्तिक व्रत तथा श्रीमद्भागवतमें वर्णित भावोंको भी परित्यागकर बड़े गर्वसे अपनेको रसिक एवं रागमार्गी होनेका अभिमान करते हैं। इसीलिए यहाँ भक्तिरसामृतसिन्धुके ‘श्रुतिस्मृतिपुराणादि’ श्लोककी अवतारणा की गयी है।
अनन्तर रागानुगा भक्तिमें कौन-कौनसे अङ्ग भजनीय हैं, वे अङ्ग कौन-कौनसे हैं, उनके कितने प्रकार हैं, उनका स्वरूप क्या है, कर्त्तव्य क्या है और अकर्त्तव्य क्या है—इस पूर्वपक्षको ध्यानमें रखकर कह रहे हैं, शास्त्रमें पाँच प्रकारके भजनानुष्ठान दृष्टिगोचर होते हैं—(१) स्वाभीष्ट भावमय, (२) स्वाभीष्ट भावसम्बन्धी, (३) स्वाभीष्ट भावानुकूल, (४) स्वाभीष्ट भावाविरुद्ध और (५) स्वाभीष्ट भावविरुद्ध। (यहाँ स्वाभीष्टका तात्पर्य साधकके अपने अभिलषित भावसे है।) इनमेंसे कुछ साध्य और साधन उभय प्रकारके हैं। (अर्थात् साधनमें जैसे हैं, साध्यमें भी वैसे ही हैं। केवल पक्व और अपक्व अवस्थाका भेदमात्र है) और कुछ साध्यप्रेमके उपादान-कारण-स्वरूप हैं, कुछ निमित्त-कारण-स्वरूप हैं, कुछ भजनके चिह्न-स्वरूप हैं, कुछ उपकारक हैं, कुछ अपकारक हैं तथा कुछ तटस्थ अर्थात् उपकारक या अपकारक या कुछ भी नहीं हैं। इन सबको विभागपूर्वक दिखलाया जा रहा है।
दास्य, सख्य, वात्सल्य प्रभृतिको स्वाभीष्ट भावमय कहते हैं। दास्य, सख्य, वात्सल्यादि भावमय श्रवण-कीर्त्तनादि भजनसमूह साधकोंके प्रेमतरुका पोषण करते हैं। अतः इन्हें भावमय साधन कहा जाता है और प्रेमके प्रादुर्भाव होनेपर वह श्रवण-कीर्त्तनादि भावमय साध्य कहलाते हैं। इसलिए ये भजनसमूह साध्य और साधन दोनों रूप हैं।
श्रीगुरुपदाश्रयसे लेकर मन्त्रजप ध्यानादि तक कतिपय भजनानुष्ठान साध्यप्रेमके उपादान कारण होनेके कारण भावसम्बन्धी कहलाते हैं। “जपेन्नित्यमनन्यधीः”—(प्रतिदिन अनन्यचित्तसे जप करना चाहिये) इत्यादि शास्त्रयुक्ति हेतु नित्यकृत्यसमूह तथा “जप्यः स्वाभीष्ट संसर्गी कृष्णनाम-महामनुः”—(निज-अभीष्ट-संसर्गी कृष्णनाम महामन्त्रका जप करना कर्त्तव्य है) गणोद्देशदीपिकाकी इस युक्तिके अनुसार सिद्धरूपमें जिनका अनुसरण किया जाता है, उन्हें मन्त्रजपके निर्देशको उपादान कारण होनेसे श्रीकृष्णनाम-जप-कीर्त्तनको भावसम्बन्धी समझना चाहिये। यहाँ स्वाभीष्ट संसर्गी कृष्णनाम महामन्त्र किसे कहते हैं? इसे बतलाते हैं—
इसका गणोद्देशदीपिकामें इस प्रकार अर्थ किया गया है—‘गोविन्द’ शब्दसे मेरी गो अर्थात् इन्द्रियोंमें व्याप्त होकर गोपीजनवल्लभ अर्थात् “गोपीजन वल्लभ भवति” अर्थात् गोपीजनवल्लभ मेरी समस्त इन्द्रियोंमें व्याप्त होकर विराजमान हैं। इसलिए निज-अभीष्ट-सम्बन्धी कृष्णनाम ही महामन्त्र है। इस अर्थके द्वारा अष्टादशाक्षर ही श्रेष्ठ-मन्त्र कहे गये हैं। अपने भावोपयोगी श्रीकृष्णके नाम-रूप-गुण-लीला प्रभृतिके श्रवणकीर्त्तनादि साधनसमूहको भी (उपादान-कारण होनेसे) भावसम्बन्धी कहते हैं।
नामानि रूपाणि तदर्थकानि गायन् विलज्जो विचरेदसङ्ग
शृण्वन्ति गायन्ति गृणन्त्यभीक्ष्णशः स्मरन्ति नन्दन्ति तवेहितं जनाः॥
अर्थात् लज्जादिका भलीभाँति परित्यागपूर्वक सङ्गरहित होकर, श्रीकृष्ण अर्थ प्रकाशक नाम और रूप-माधुर्यका कीर्त्तन करते हुए विचरण करना चाहिये और

भक्तजन तुम्हारे चरित्रका निरन्तर श्रवण, कीर्त्तन और स्मरणकर परमानन्द लाभ किया करते हैं। इन शास्त्रीय प्रमाणोंके अनुसार उपर्युक्त भावसम्बन्धी साधनसमूह निरन्तर कर्त्तव्य रूपमें निर्धारित किये गये हैं।
पहले जो रागानुगा भक्तिमें स्मरणको मुख्य अङ्ग बतलाया गया है—उसे कीर्त्तनके अधीन समझना चाहिये। वर्त्तमान कलियुगमें कीर्त्तनाङ्ग भजनका ही अधिकार है। क्योंकि भक्तिके समस्त अङ्गोंमें कीर्त्तनाङ्ग ही उत्कर्षयुक्त एवं सर्वश्रेष्ठ है—ऐसा समस्त शास्त्रोंमें प्रतिपादित किया गया है। श्रीउज्ज्वलनीलमणि ग्रन्थमें ऐसा कहा गया है “गोपियोंके भावोंका अनुगमन करनेवाली श्रुतियोंने श्रद्धायुक्त होकर तपस्या करके पूर्ण-प्रेमको लाभकर व्रजमें जन्म ग्रहण किया था।” इस प्रमाणानुसार गोपी जातीय प्रेम प्राप्तिके कारणके रूपमें तपस्याको देखा जाता है। यहाँ तपस्याका तात्पर्य एकादशी, जन्माष्टमी प्रभृति व्रतसमूहको समझना चाहिये। क्योंकि वर्त्तमान कलियुगमें अन्य तपस्या निन्दनीय है। भगवान्ने स्वयं ऐसा कहा हैं, “मेरे लिए कृत्-व्रत ही तपस्या है।” इसलिए एकादशी, जन्माष्टमी आदि तपरूप निमित्त-कारण हैं। इन नैमित्तिक कृत्योंके अकरणमें दोष सुना जाता है। अतः इनकी भी नित्यता समझनी चाहिये। स्मृतिशास्त्रमें एकादशी व्रतके सम्बन्धमें ऐसा लिखा गया है— एकादशीमें उपवास करना ही गोविन्द-स्मरण करना है। इस प्रमाणके अनुसार उपादान-कारणरूप स्मरणाङ्गकी प्राप्तिके लिए एकादशी आदि व्रतोंका आंशिक रूपमें भावसम्बन्धित्व भी देखा जाता है। (भावसम्बन्धी स्मराणाङ्गमें सहायक होनेके कारण एकादशी और जन्माष्टमी आदि व्रतको भी आंशिकरूपमें भावसम्बन्धी कहा जाता है।) निषेध पक्षमें—जो लोग एकादशी व्रत नहीं करते उन्हें मातृवध, पितृवध, भ्रातृवध और गुरुवध आदिका पाप लगता है। स्कन्दपुराणके इस प्रमाणके अनुसार एकादशी आदि व्रतोंके अकरणसे नामापराध भी होता है। विष्णुधर्मोत्तरमें भी ऐसा देखा जाता है—ब्रह्महत्याकारी, मद्यपायी, अपहरणकारी, गुरुपत्नी-गामीका धर्मशास्त्रके अनुसार प्रायश्चित्त देखा जाता है, किन्तु एकादशीमें अन्न भोजन करनेवालेको अविनाशी पापकी प्राप्ति होती है, जिसका कहीं कोई प्रायश्चित्त भी नहीं है। इसलिए एकादशी व्रत एक आवश्यक प्रमाणित कृत्य है। ऐसे आवश्यक कृत्यकी नित्यता स्वतः स्वीकृत है। स्कन्दपुराणमें तो यहाँ तक उल्लेख है कि “घोरविपत्ति अथवा परमानन्द उपस्थित होनेपर भी जो लोग एकादशी व्रतका त्याग नहीं करते, उन्हीं लोगोंकी वैष्णवी दीक्षा यथार्थ है। और जो लोग अपने समस्त कर्मोंको विष्णुके चरणोंमें समर्पण करते हैं, वे यथार्थ वैष्णव हैं। इस प्रकार स्कन्दपुराणके दोनों प्रमाण वाक्योंसे यह सिद्ध है कि वैष्णवमात्रको एकादशी व्रत अवश्य करना चाहिये। भी जो वस्तुएँ भगवान्को अनिवेदित हैं, उनका भोजन वैष्णवोंके लिए सर्वथा निषिद्ध है। इसके अतिरिक्त वैष्णव यदि प्रमादवशतः एकादशीके दिन भोजन करते हैं—इस वचनके द्वारा यह गूढ़ रहस्य है कि वैष्णवलोग तो भगवन्निवेदित महाप्रसाद ही भोजन करते हैं, अतः एकादशीके दिन उस महाप्रसाद भोजनका भी यहाँ निषेध किया गया है।
कार्त्तिक व्रत भी तपस्याके अंशमें निमित्त-कारण है तथा श्रवणकीर्त्तनादि अंशमें उपादान-कारण है। श्रीरूप गोस्वामीचरणने अनेकानेक स्थलोंमें कार्त्तिक देवता, ऊर्जादेवी और ऊर्जेश्वरी आदि नामोंका उल्लेख किया है। विशेषतः कार्त्तिक व्रतके पालनसे वृन्दावनेश्वरी श्रीमती राधिकाकी प्राप्ति होती है। अतः कार्त्तिकव्रत अवश्य करणीय है। “हे अम्बरीष! शुकके द्वारा कहे गये भागवतका नित्य श्रवण करें।” स्मृतिके इस वचनसे श्रीमद्भागवतका श्रवण भी नित्यकृत्यके रूपमें सिद्ध है। “मैंने तुम्हारे निकट महापुरुषोंकी इन कीर्त्तन किया तथा नित्य अमङ्गल नाशक उत्तमश्लोक भगवान्का गुणानुवाद श्रीकृष्णके चरणोंमें विशुद्ध भक्ति लाभ करनेके अभिलाषी व्यक्तिको प्रतिदिन निरन्तर श्रवण करना चाहिये”—द्वादश स्कन्धकी इन उक्तियोंके अनुसार दशम

स्कन्ध सम्बन्धी अपने प्रियतम श्रीकृष्णके चरित्र श्रवणादिका यथायोग्य नित्य -निरन्तरकृत्यत्व और भावसम्बन्धीत्व सिद्ध है।

निवेदित तुलसी , गन्ध , चन्दन , माला और वस्त्रादि धारण —भावसम्बन्धी हैं। तुलसी काष्ठकी माला , गोपीचन्दन आदिका तिलक , नामचिह्न , चरणचिह्न आदि वैष्णवचिह्न धारण भावानुकूल हैं। तुलसी -सेवा , परिक्रमा और प्रमाणादि भी भावानुकूल हैं। गो , अश्वत्थ (पीपल), आँवला और ब्राह्मणादिका सम्मान करना प्रभृति अङ्गसमूह उपकारी होनेके कारण भाव अविरुद्ध कहलाते हैं। वैष्णवसेवा उपरोक्त समस्त लक्षण -विशिष्ट है अर्थात् ऊपर कहे गये चारों प्रकारके भजनानुष्ठानमें करणीय हैं। उपर्युक्त सभी अनुष्ठान कर्त्तव्य रूपमें ग्रहणीय हैं , जिस प्रकार पोष्य श्रीकृष्णसे भी अधिक तत्पोषक औंटाये हुए दुग्ध , दधि , मक्खन आदिमें मैया यशोदाका (रक्षा आदिके विषयमें) अधिक आग्रह देखा जाता है। वे पुत्र कृष्णको स्तन पान करा रही थीं कि बीचमें ही अतृप्त कृष्णको छोड़कर चूल्हेपर उफनते हुए दुग्धको उतारनेके लिए चली गयीं। उसी प्रकार रागमार्गका अनुगमन करनेवाले रसाभिज्ञ भक्तवर्गके सम्बन्धमें पोष्य श्रवणकीर्त्तनादिसे भी तत्पोषक उक्त अङ्गोंमें विशेष आग्रह होना अनुचित नहीं कहा जा सकता।

अहंग्रहोपासना , न्यास , मुद्रा , द्वारकाध्यान और महिषीवर्गका अर्चन आदि रागमार्गके साधनमें अपकारक होनेके कारण वर्जनीय है। श्रीमद्भागवतके अतिरिक्त अन्यान्य पुराणोंकी कथाओंका श्रवण प्रभृति तटस्थ अर्थात् उपकारक या अपकारक कुछ भी नहीं हैं। सच्चिदानन्द स्वरूपा भक्तिका विकार नहीं रहनेपर भी उसे उपादान रूपा आदि कहा जाता है। वह केवल दुर्बोध विषयको सहज रूपमें बोध करानेके लिए कहा जाता है। रसशास्त्रमें जैसे रसको विभावादि शब्दोंके द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है। यहाँपर भी उसी प्रकार इस विषयको सरल करनेके लिए उपादान आदि शब्दोंका प्रयोग किया जाता है। साधुजन इसके लिए क्षमा करें।

भक्तिसन्दर्भमें श्रीलजीव गोस्वामी कहते हैं —“अतएव यद्यप्यन्याभक्तिः कलौ कर्त्तव्या तदा तत्संयोगेनैवेत्युक्तम्॥ ” अर्थात् कलियुगमें यदि भक्तिके किसी दूसरे अङ्गका अनुष्ठान करना भी हो , तो हरिनाम -सङ्कीर्त्तनके संयोगसे ही करना कर्त्तव्य है।

श्रीलसनातन गोस्वामीजीने भी हरिनाम -सङ्कीर्त्तनको स्मरणादि भक्ति अङ्गोंमें सर्वश्रेष्ठ बतलाया है —

मन्यामहे कीर्त्तनमेव सत्तमं
स्वहृदि स्फुरत्स्मृतेः।
वाचि स्वयुक्ते मनसि श्रुतौ तथा
दीव्यत् परानप्युपकुर्वदात्मवत्॥

(२/३/१४८)

अर्थात् हम लोगोंके विचारसे चञ्चल -स्वभाव और एकमात्र अपने हृदयमें स्फूर्ति प्राप्त स्मरणकी अपेक्षा कीर्त्तन श्रेष्ठ है। क्योंकि कीर्त्तन वागिन्द्रियमें स्फुरित होकर स्वयं ही मनको भी अपने रङ्ग -में -रङ्ग देता है। वही कीर्त्तन ध्वनि अन्तमें श्रवणेन्द्रियको भी कृतार्थ कर देती है। इतना ही नहीं , आत्माकी भाँति अपने सेवक श्रोताओंको भी कृतार्थ करती है।

स्मरणमें ऐसी शक्ति नहीं है। इसलिए वायुसे भी अधिक चञ्चल मनको वशीभूत करनेमें एकमात्र कीर्त्तन ही समर्थ है। साथ ही कीर्त्तनाङ्गके बिना मन भी स्मरण करनेमें समर्थ नहीं हो सकता। कीर्त्तनके अतिरिक्त किसी भी उपायसे चञ्चल मनको स्थिर नहीं किया जा सकता। यही श्रीलसनातन गोस्वामीके इस श्लोकका गूढ़ तात्पर्य है।

श्रीकृष्णके नाना प्रकारके कीर्त्तनोंमें कृष्णनामकीर्त्तन ही सर्वश्रेष्ठ एवं परमसेव्य है। कृष्णनाम -सङ्कीर्त्तनके द्वारा साधकोंके हृदयमें बहुत शीघ्र ही श्रीकृष्णप्रेमरूप सम्पत्ति आविर्भूत होती है। श्रीनामसङ्कीर्त्तन स्वयं ही अन्यान्य निरपेक्ष रूपमें प्रेमसम्पत्ति

उत्पादनमें समर्थ है। इसीलिए स्मरणादि समस्त अङ्गोंमें श्रीनामसङ्कीर्त्तन ही श्रेष्ठतम है। श्रीनामसङ्कीर्त्तन साधन एवं साध्य दोनों हैं। यही श्रीलसनातन गोस्वामी एवं प्रेमी -वैष्णवाचार्योंका सिद्धान्त है —

कृष्णस्य नानाविध -कीर्त्तनेषु , तन्नाम -सङ्कीर्त्तनमेव मुख्यम्।
तत्प्रेमसम्पज्जनने स्वयं द्राक , शक्तं ततः श्रेष्ठतमं मतं तत्॥

(२/३/१५८)

जन्माष्टमी -रामनवमी -एकादशी आदि उपवासरूप तप

योजना —स्वाभिमत केवल पराभक्ति द्वारा अपनी दृश्यता कह रहे हैं —

भक्त्या त्वतन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप॥

(श्रीमद्भगवद्गीता ११ .५४)

हे परन्तप अर्जुन ! पक्षान्तरमें गोपालोपनिषदादि वेद , जन्माष्टमी -रामनवमी -एकादशी आदि उपवासरूप तप , मेरे भक्तको स्वभोग्योंका समर्पणरूप दान और मेरी मूर्तिपूजारूप इज्याके सहयोगसे निर्विशेषब्रह्मज्ञान -कर्म -अष्टाङ्गयोग आदिके मिश्रणसे शून्य गोविन्द -गोपालादि नामकीर्तन -स्मरणादि लक्षणोंवाली मेरी ऐकान्तिकी केवला -भक्तिके द्वारा ही स्वरूपशक्तिमय श्यामसुन्दर देवकीनन्दन चतुर्भुज या द्विभुज रूपवाला मैं अथवा राम -नृसिंहादि प्रकाशवाला मैं क्रमशः परोक्षज्ञानरूप यथार्थ शास्त्रबोधके योग्य होता हूँ , यथार्थतः अपरोक्ष तथा प्रत्यक्ष दर्शनके योग्य होता हूँ . और अन्तमें कृपापूर्वक अपनी लीलामें प्रवेश देनेमें समर्थ होता हूँ।

एकादशी —भक्ति का नित्य अंग

अननुष्ठानतो दोषो भक्तङ्गानां प्रजायते।
कर्मणामकरणादेष भक्त्यधिकारिणाम्॥६३॥
निषिद्धाचारतो दैवात् प्रायश्चित्तं तु नोचितम्।
इति वैष्णवशास्त्राणां रहस्यं तद्विदां मतम्॥६४॥

(भक्तिरसामृतसिन्धु पूर्व विभाग , द्वितीय साधन -भक्ति लहरी , श्लोक ६३ -६४)

भक्ति के अधिकारी व्यक्तिगण यदि एकादशी एवं जन्माष्टमी व्रतोपवास आदि भक्ति के नित्य अंगों का अनुष्ठान न करें तो उन्हें दोष लगता हैं। किन्तु वर्णाश्रमोचित क्रिया न करने से उन्हें कोई दोष नहीं लगता। शुद्ध वैष्णवों में विकर्म म प्रवृत्ति नहीं होती। किन्तु यदि दैववश अर्थात् प्राचीन वैष्णव अपराध रूपी दोष के कारण यदि वैष्णव कोई निषिद्ध कर्म भी कर बैठे , तब भी उन के लिए कोई भी प्रायश्चित्त विहित नहीं हैं। क्यों कि भक्ति के प्रभाव से ही उन का प्रायश्चित कार्य अपने आप संपन्न हो जाता हैं। वैष्णव शास्त्र रहस्य जानने वाले विद्वानों ने वैष्णव शास्त्रों का यहीं गुढ़ रहस्य बतलाया है।

एकादशी के द्वारा भक्तिमूलक सुकृति की प्राप्ति
संग प्रभावसे जीवका स्वभाव परिवर्तन होता है। असत्संग द्वारा असद् वस्तुमें आसक्ति एवं सत्संग द्वारा ही सत्संगमें प्रवृत्ति जन्मती है। सिंहशावक यदि शिशुकालसे ही मेषपालमें रहता है, तो तृण भक्षण एवं मेषकी भाँति बोलना सीखता है। उसी प्रकार चोर व्यक्तिके संगफलसे चोर और साधु व्यक्तिके संगमें निवास करनेसे साधु हुआ जा सकता है। मनुष्य यदि देहको आत्मा मानकर मिथ्याश्रयी वृत्तिमें वास करता है, तब वह स्वयं मिथ्याश्रयी होकर सत्यभ्रष्ट होता है। मायामोहित जीव स्वयं आत्मवस्तु है, इसे भूलकर ध्वंसशील देहको ही अपना स्वरूप मानकर विश्वास कर बैठता है, इसे वह स्वयं समझ नहीं पाता है। बहुजन्मोंके ज्ञात एवं अज्ञात हरि-गुरु-वैष्णव सेवाके फलसे साधुसंग प्राप्त होता है। साधुसंगसे ही सत् एवं आत्मवस्तुमें ममत्व बुद्धि जन्मती है—
सतां प्रसङ्गान्मम वीर्यसम्विदो भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः। तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि - श्रद्धारतिभक्तिरनुक्रमिष्यति॥
(भागवत ३/२५/१५)
सत्संगमें अवस्थान व वास करने पर श्रद्धासे क्रमशः प्रेमभक्ति प्राप्त होती है। किन्तु बद्धजीव असत्संगमें या देहसुख चेष्टाकारी व्यक्तियोंमें रुचिविशिष्ट होनेके कारण साधुसंगमें रुचिहीन रहता है। किन्तु जिनकी सुकृति सञ्चित होती है, वे ही साधुओंके प्रति आकृष्ट होते हैं। जैसे धर्मसभामें उपस्थित सब व्यक्ति साधुकी वाणी श्रवण करते हैं, किन्तु श्रवणके बाद सुकृतिहीन व्यक्ति पूर्ववत् स्त्री-पुत्रोंमें ही यत्नवान् रहते हैं, उनमें कोई भी परिवर्तन दिखायी नहीं पड़ता। किन्तु इनमेंसे दो-एक व्यक्ति ही साधुके निकट अधिकतर हरिकथा या आत्मधर्म-कथा सुननेके आग्रही देखे जाते हैं। अतएव इस सुकृतिको ही साधुसंगका मूल कहा गया है। यह सुकृति किस प्रकार अर्जित होती है, उसके उत्तरमें देखा जाता है—जानते हुए या अनजानेमें, इच्छापूर्वक या अनिच्छापूर्वक किसी जीव द्वारा यदि कोई आत्मकल्याणजनक कार्य हो जाता है, उससे जीवकी सुकृति होती है। जैसे एकादशीके दिन खाद्य अभावमें उपवास रहनेसे भी अनिच्छापूर्वक सुकृति एवं भक्तिमूलक फल होता है। किसी साधु व्यक्तिको कुछ दान करनेसे इच्छाकृत सुकृतिका फल होता है। मनुष्यके अतिरिक्त अन्य प्राणियोंमें भी इस प्रकारकी सुकृतिका सञ्चय होता है। गाय दूध देती है, उसका पालनकर्ता दूध पान करता है। किसी दिन उनके गृहमें एक साधु व्यक्ति आते हैं। गृहस्वामी साधुको कुछ दूध प्रदान करते हैं, इससे गृहस्वामी व गायकी भी सुकृति हो जाती है। इस प्रकार सुकृतिपुष्ट जीवकी ही साधुके प्रति श्रद्धा उदित होती है। इस श्रद्धाको ही प्रेमभक्तिका मूल कहा गया है। श्रद्धा उत्पन्न होनेसे शास्त्रवाक्य एवं साधुवाक्यमें दृढ़ विश्वास जन्मता है। तब वह मिथ्या व मायाका कार्य परित्यागकर सत्यके चरणोंमें आग्रही होता है, अपनेको कृष्णका नित्यदास मानने लगता है एवं उसकी साधुओंके आनुगत्यमें कृष्णसेवाकी इच्छा होती है। परन्तु सुकृतिविहीन व्यक्ति स्त्रीपुत्रादिके प्रति आसक्ति परित्याग करनेमें सक्षम नहीं होता है। सुकृतियुक्त जीवको ‘जीवेर स्वरूप हय कृष्णेर नित्यदास’ एवं ‘श्रीकृष्ण-सेवा करनेसे सभीकी सेवा सम्पादित होती है’— इन बातों पर विश्वास हो जाता है तथा इस विश्वाससे परिचालित होकर माता, पिता, स्त्री, पुत्र, कन्या एवं देह सम्बन्धीय व्यक्तियोंके प्रति कर्तव्य परित्याग करनेकी शक्ति प्राप्त करता है। अतः साधुसंग ही जीवको सत्यमें प्रतिष्ठित करता है।
प्रकृष्ट साधुसंगके फलस्वरूप सत्य वस्तु भगवान्की कथा श्रवणकर मनुष्यकी प्रति प्रीति उत्पन्न होती है। यह भगवत् प्रीति व प्रेम ही जीवका परम धर्म एवं पराशान्ति कहलाता है।

अनजाने में किये गये एकादशी व्रत के लाभ
हरिहरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृतः।
अनिच्छयापि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः॥
बिना इच्छाके स्पर्शकी गयी अग्नि भी जिस प्रकार जला देती है, उसी प्रकार दुष्टचित्तवाले मनुष्योंके द्वारा किसी भी प्रकारसे स्मरण किये गये प्रभु उनके समस्त पापोंको हर लेते हैं, अतः उनका नाम 'हरि' है।
कोलकाता में श्री सिंघानिया नामक एक भक्त व्यापारी रहते थे। एक शनिवार
की दोपहर उनकी धर्मपत्नी बैंक लॉकर में रखे अपने गहनों की जांच करने के लिए बैंक गयी। जब वह बैंक लॉकर के अंदर थी, बैंक प्रबंधक को लॉकर रूम में उसकी उपस्थिति के बारे में पता नहीं चला, उसने बाहर से दरवाजा बंद कर दिया और सप्ताहांत के लिए बैंक बंद कर दिया। रविवार को बैंक की छुट्टी होने के कारण वह लॉकर के अंदर ही फंसी रही। संयोगवश रविवार को एकादशी का दिन भी था। इसलिए उन्होंने अज्ञाततः बैंक के लॉकर में एकादशी का व्रत रखा। वे केवल द्वादशी के दिन (सोमवार) को ही बाहर आ सकीं। क्या उन्हें एकादशी के व्रत का लाभ मिला? श्री श्रीमद् भक्तिविज्ञान भारती महाराज कहते हैं कि उन्हें एकादशी के दिन उपवास करने का लाभ अवश्य मिला होगा। उदाहरण के लिए यदि किसी कैदी या संदिग्ध को एकादशी के दिन हिरासत के दौरान पुलिस लॉकअप में कुछ भी भोजन नहीं दिया जाता है, तो उस कैदी को निश्चित रूप से एकादशी के व्रत का लाभ मिलता है।
कभी-कभी पति-पत्नी आपसी असहमति या झगड़े के कारण खाना नहीं खाते हैं। यदि
ऐसा एकादशी के दिन होता है तो उन्हें अनजाने में ही एकादशी के दिन व्रत करने का लाभ मिल जाता है।

व्रत (श्रीचैतन्य-शिक्षामृत से उद्धृत)
व्रत तीन प्रकारके होते हैं—(१) शारीरिक, (२) सामाजिक और (३) पारमार्थिक। प्रातःस्नान, परिक्रमा, दण्डवत्—ये व्यायाम सम्बन्धी शारीरिक व्रत हैं। कोई-कोई धातु, (कफ, पित्त, वात) कुपित होनेपर शरीर अस्वस्थसा लगता है। इसके लिए पौर्णमासी, अमावस्या, सोमवार, रविवार आदि व्रतोंकी व्यवस्था की गई है। उन निर्दिष्ट दिनोंमें आहार और व्यवहारमें परिवर्त्तन करने तथा उपवास आदिके द्वारा इन्द्रिय संयमपूर्वक ईश्वर-चिन्तन करना ही श्रेयस्कर है। आवश्यक होनेपर उनका अवलम्बन करनेसे पुण्य होता है। उपनयन, चूड़ाकरण, विवाह आदि व्रतसमूहकी सामाजिक वर्णविचारसे अधिकारके अनुसार व्यवस्थाकी गयी है। कोई-कोई व्रत मानवमात्रके लिए भी बनाए गए हैं। विवाहकी व्यवस्था सभी वर्णोंमें है। एक पुरुष एक सवर्णा कन्याके साथ विवाह करेगा। एकपत्नीव्रत ही कर्त्तव्य है। अर्थात् एक पत्नीके रहते हुए दूसरा विवाह नहीं करना चाहिए। एक पत्नीके रहते हुए दूसरा विवाह करना नीच प्रकृतिके व्यक्तिका ही कार्य है। सन्तान नहीं होनेपर विशेष अवस्थामें ही एक पत्नी रहते हुए दूसरे विवाहकी व्यवस्था दी गयी है। महाभारतमें जिस मासव्रतका उल्लेख है, तथा वैसे-वैसे दूसरे जो व्रत हैं, वे सभी पारमार्थिक व्रत हैं। चौबीस एकादशी और जन्माष्टमी आदि छह जयन्तीव्रत—ये मासव्रत हैं। केवल परमार्थ चेष्टा ही इन व्रतोंका मूल उद्देश्य है। भक्तिविचारके प्रसङ्गमें इनका विस्तृत विचार होगा। श्रीहरिभक्तिविलासमें इन व्रतोंका विवरण है।

देश, काल और द्रव्यगत भगवदनुशीलन वैधभक्त शरीर, मन और आत्मा द्वारा भगवदनुशीलन करके ही सन्तुष्ट नहीं होते; क्योंकि वे इसके अतिरिक्त आवरणस्वरूप एक प्राकृत जगतको भी देखते हैं। वे ऐसा कहते हैं कि मेरा यह शरीर और इसमें स्थित मन तथा आत्मा इस जगतके एक अत्यन्त क्षुद्र अंश हैं। सम्पूर्ण जगत मेरे प्रभुका गुणगान करे। मैं अपने बाहर चारों ओर जो असीम काल, असीम देश और वस्तुस्वरूप जिन नाना प्रकारके द्रव्योंको देख रहा हूँ वह सब कुछ मेरे प्रभुकी पूजाकी सामग्री हो जाए। प्रभु मेरे सामने सर्वत्र नृत्य करें और विश्वकी हर वस्तु उनकी उपासनामें नियुक्त हो। इस भावनासे आर्द्र होकर वे देश, काल और द्रव्यगत भगवदनुशीलनमें प्रवृत्त होते हैं। प्रकृतिगत अनुशीलन तीन प्रकारके हैं—(१) देशगत अनुशीलन 1 (२) कालगत अनुशीलन और (३) द्रव्यगत अनुशीलन।

(१) देशगत अनुशीलन—
अथ देशान् प्रवक्ष्यामि धर्मादिश्रेय आवहान्। स वै पुण्यतमो देशः सत्पात्रं यत्र लभ्यते॥
(श्रीमद्भागवत ७/१४/२७)
वैष्णव-तीर्थोंमें भ्रमण, भगवदधिष्ठानादि स्थानोंमें गमन, वैष्णव-स्थानों (उनके गृह, भजन-स्थल और उनकी समाधि आदि स्थल) के दर्शनोंके लिए गमन—ये तीन प्रकारके देशगत अनुशीलन हैं। द्वारका, पुरुषोत्तम, काञ्ची, मथुरा-मण्डल, श्रीनवद्वीप- आदि वैष्णवतीर्थ हैं। इन स्थानोंमें भगवान्की जो लीलाएँ सुनी जाती हैं, उनके प्रति श्रद्धालु होकर इन तीर्थोंमें भ्रमण करना चाहिए अथवा उनमेंसे किसी तीर्थमें वास करना चाहिए। भगवत्-चरणामृतरूपा गङ्गा और भगवत्- सेवापरायण यमुना आदि तीर्थजलोंमें श्रद्धापूर्वक स्नान करना चाहिए। जिन-जिन भगवान्के अर्च्चावताररूप श्रीमूर्त्तिकी सेवा-पूजा होती है, उन-उन स्थानोंमें गमन करना चाहिए। परम भगवद्भक्तोंके गृह, ग्राम और उनकी भजन-कुटी तथा समाधि आदि स्थानसमूह वैष्णवों द्वारा सर्वदा आश्रयणीय हैं। श्रीचैतन्यदेवके पार्षद महात्माओंकी जन्मभूमि तथा उनकी भजन-स्थलियोंका

श्रद्धापूर्वक दर्शन करना चाहिए। इन तीर्थस्थानोंमें गमन करनेसे अथवा वहाँ निवास करनेसे प्रति- भगवान्की वीर्यवती लीलाकथा तथा भगवद्भक्तोंके भक्तिप्रद पूत चरित्र श्रवण द्वारा श्रीकृष्णचन्द्रके चरणोंमें रति पैदा होती है।

(२) कालगत अनुशीलन—
त एते श्रेयसः काला नृणां श्रेयोविवर्द्धनाः। कुर्यात् सर्वात्मनैतेषु श्रेयोऽमोघं तदायुषः॥
(श्रीमद्भागवत ७/१४/२४)
कालगत अनुशीलन सर्वदा विधेय है। पन्द्रह दिनतक संसारके नाना प्रकारके कार्योंको करके श्रीहरिवासर (एकादशी) के दिन आहार-निद्राका परित्याग करके भगवदनुशीलन करना जीवमात्रका नितान्त कर्त्तव्य है। उर्जाव्रत पालन अर्थात् कार्त्तिक मासमें नियम-सेवा पालन करना सर्वतोभावेन कर्त्तव्य है। हरिलीला सम्बन्धित पर्वोंका सम्मान करना परम कल्याणजनक है। परमभागवतोंके जीवनमें जो बड़ी-बड़ी घटनाएँ घटित हुई हैं, उन सभी दिन और तिथियोंका आदर करना परम पुनीत कर्त्तव्य है।

(३) द्रव्यगत अनुशीलन—
पात्रं तत्र निरुक्तं वै कविभिः पात्रवित्तमैः। हरिरेवैक उर्वीश यन्मयं वै चराचरम्॥
(श्रीमद्भागवत ७/१४/३४)
द्रव्यगत भगवदनुशीलन अनेक प्रकारके हैं। उनकी गणना करना द्रव्य-संख्याकी भाँति अत्यन्त कठिन है। फिर भी उनमेंसे कुछ एकका वर्णन करनेसे अन्यान्य सबकी धारणा हो जाएगी। वृक्ष एक द्रव्य है। अतएव इस द्रव्यमें भगवदनुशीलन करनेके लिए पीपल, आँवला, तुलसी आदि कतिपय अत्यन्त पवित्र वृक्षोंके सम्बन्धमें भगवदनुशीलन होता है। मूर्त्ति एक द्रव्य है, इसीलिए जीवके शुद्धचित्तमें प्रतिभात भगवत्-स्वरूपके अवताररूप श्रीमूर्त्तिकी सेवा करना कर्त्तव्य है। पर्वतोंमें गोवर्द्धन, नदियोंमें गङ्गा-यमुना, पशुओंमें गाय और गोवत्स—ये सब भगवदनुशीलनके निदर्शन स्वरूप हैं। श्रीमूर्त्तिकी सेवा और अर्चनके सम्बन्धमें मनुष्योंके व्यवहार्य शयन-आसन आदि कार्योंके उपयोगी सारी सामग्रियों तथा चन्दन, गन्ध, द्रव्यादि, वस्त्र और पलङ्ग आदि सारे द्रव्योंको भगवदर्पित करनेकी विधि है। अपने प्रिय द्रव्योंको भगवदर्पित करनेसे वैध सेवा सुन्दर होती है। श्रीमूर्त्तियाँ आठ प्रकारकी होती हैं।

एकादशी सभी मनोकामनाएँ पूर्ण कर सकती है
श्री श्रीमद् भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज टर्नब्रिज, इंग्लैंड: ९ जुलाई १९९९
जगन्नाथ प्रसाद कितना स्वादिष्ट होता है, आप जानते हैं। जगन्नाथ के मंदिर के पंडे (पुजारी) श्री चैतन्य महाप्रभु के लिए कुछ प्रसाद लेकर आए, जो अपने सहयोगियों (परिकरों) के साथ कीर्तन कर रहे थे: ‘हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम राम राम हरे हरे।’
सामान्य तौर पर, जगन्नाथ पुरी में पांडा और अन्य लोग एकादशी उपवास का पालन नहीं करते हैं। उन्हें लगता है कि उन्होंने 'एकादशी-देवी के पैरों को रस्सी से कस कर बाँध कर उसे एक पेड़ की शाखा पर उल्टा टाँग दिया है', ताकि किसी को एकादशी का पालन न करना पड़े। वे कहते हैं, ”यह महाप्रसाद की महिमा है, कि एकादशी, जन्माष्टमी और राम नवमी पर भी, आपको विशेष उपवास की आवश्यकता नहीं है। आप प्रसाद ले सकते हैं, और उसके बाद आप सुपारी, और कभी-कभी सिगरेट भी ले सकते हैं; और बस ‘जगन्नाथ, जगन्नाथ, जय जगन्नाथ’ का जाप एवं कीर्त्तन करते रहें।” पंडों ने विचार किया, ”यदि बंगाल के गौड़ीय भक्त, और भारत के अन्य हिस्सों
के वैष्णव, एकादशी पर यहां आते हैं, तो हमारा महाप्रसाद नहीं बिकेगा और हमारा व्यवसाय ठंडा पड जायेगा। साथ ही, यदि वे सभी एकादशी का पालन कर रहे हैं और यदि हम एकादशी का व्रत नहीं करते हैं, तो वे हम पर हँसेंगे।”
इन कारणों से पंडों ने एकादशी पर महाप्रभु जगन्नाथ का महा-प्रसाद अर्पित किया। उन्होंने सोचा कि श्रीचैतन्य महाप्रभु दुविधा का अनुभव करेंगे और फिर उसे स्वीकार कर लेंगे।
महाप्रभु ने क्या किया? उन्होंने कहा, ”हमें महाप्रसाद का अपमान नहीं करना चाहिए, न ही एकादशी का अपमान करना चाहिए।” फिर, अपने सभी भक्तों के साथ, उन्होंने पुनः कीर्तन करना आरंभ कर दिया। पूरी रात उन्होंने अनेक सारे वेदों, उपनिषदों, पुराणों और श्रीमद्-भागवत में वर्णित महा-प्रसाद के स्तुति परक श्लोकों का उच्च स्वर से उच्चारण किया और महाप्रसाद के उद्देश्य से कई बार दंडवत प्रणाम प्रस्तुत किया।
महाप्रसाद स्वयं कृष्ण ही हैं—
महाप्रसाद गोविन्दे, नाम-ब्रह्मणि वैष्णवे। स्वल्प- राजन्‌, विश्वासो नैव जायते॥
(स्कंद पुराण)
जिन लोगों की पूर्व जन्म या भूत काल में उपार्जित पुण्य एवं भक्ति उन्मुखी सुकृति का संचय पर्याप्त नहीं है, लोगों का श्रीभगवद्‌-महाप्रसाद, श्री गोविन्द, उनके पवित्र नाम एवं वैष्णवों में सुदृढ विश्वास उत्पन्न नहीं हो सकता।
जो भाग्यशाली नहीं हैं वे महा-प्रसाद का सम्मान इस विश्वास के साथ नहीं
कर सकते कि यह स्वयं गोविंद हैं, क्योंकि वे यह नहीं समझ सकते हैं कि कृष्ण ने अपनी सारी शक्ति, ऐश्वर्य, दया और सब कुछ उनके नाम में संचित कर के रखी है। कृष्ण का पवित्र नाम स्वयं कृष्ण है, और महाप्रसाद स्वयं कृष्ण हैं, और शुद्ध वैष्णव भी कृष्ण से अलग नहीं हैं। उनमें एक विशेष शक्ति होती है। हमें उनकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।
महाप्रभु ने अपनी पूरी रात विविध प्रकार से श्रीमहाप्रसाद के माहात्म्य
का गुणगान करते हुए बिताई। फिर, प्रातः ४ बजे वे स्वर्गद्वार के करीब समुद्र में गए। वहाँ उन्होंने स्नान किया, फिर अपने स्थान पर लौट आए और आचमन किया, तिलक लगाया, और आह्निक किया। यद्यपि वे स्वयं कृष्ण हैं, वे ऐसा कर रहे थे। वे कृष्ण

को क्यों याद कर रहे थे? उनका दिल राधिका का है, इसलिए उन्हें याद आया, “कृष्ण, कृष्ण।”
अपने सुबह के कर्तव्यों को पूरा करने के बाद, उन्होंने महाप्रसाद को प्रणाम किया और उसे स्वीकार किया, और फिर वे जगन्नाथ, बलदेव और सुभद्रा के दर्शन के लिए गए। हालाँकि, उन्होंने जगन्नाथ, बलदेव और सुभद्रा को नहीं देखा। उन्होंने केवल व्रजेंद्र नंदन (नंद महाराज के पुत्र श्रीकृष्ण) को देखा। वे बेहोश (मूर्च्छित) होने ही वाले थे, लेकिन उन्हें सार्वभौम भट्टाचार्य के पुत्र चंदनेश्वर ने पकड़ लिया। सार्वभौम ने अपने पुत्र से कहा था, “हमेशा श्रीमन्महाप्रभु के साथ जगन्नाथ मंदिर जाओ, और जब वे बेहोश होने वाले हो, तो तुम्हें उन्हें गिरने से बचाना चाहिए।“
बार-बार पानी, फलों का रस, दूध आदि न लेते हुए अत्यंत वैराग्य एवं तपस्या पूर्वक एकादशी का व्रत करने का प्रयास हमें करना चाहिए। अगर आप जवान और स्वस्थ हैं, तो आप दिन-रात बिना कुछ लिए, यहां तक कि पानी के बिना भी उपवास कर सकते हैं। अगर आप ऐसा नहीं कर सकते हैं तो आप दोपहर या शाम को एक समय अनुकल्प ले सकते हैं। यदि आप बीमार या कमजोर हैं, तो आप अपने जीवन को बनाए रखने के लिए दिन में दो बार कुछ अनुकल्प ले सकते हैं ताकि आप ”हरे कृष्ण” महामंत्र का सतत जप कर सकें। पाश्चात्य भक्तों के लिए अधिक रियायतें दी गई हैं क्योंकि वे शरीर से कमजोर हैं। नहीं तो वे बहुत मजबूत हैं। मैंने कई सारे पश्चिमी भक्तों को देखा है, विशेषकर महिला भक्तों को, जो दिन-रात उपवास करते हैं और सोते भी नहीं हैं। एकादशी का व्रत करने से अनेक लाभ होते हैं। कॉलेजों, अस्पतालों और सभी कार्यस्थलों में, हम देखते हैं कि छात्रों और श्रमिकों को सप्ताह में एक बार छुट्टी दी जाती है ताकि वे आराम कर सकें, और अगले दिन वे पूरी ऊर्जा के साथ काम कर सकें। अन्यथा, वे वर्षों तक अपनी गतिविधियों को जारी नहीं रख पाएंगे। उन्हें थोड़ा आराम करना चाहिए।
यह हमारे पेट के बारे में भी सच है। हमारे पेट में कुछ ऐसे बैक्टीरिया होते हैं जो हमारी सेहत के लिए मददगार होते हैं। ये बैक्टीरिया हमेशा हमारे पाचन के लिए काम करते हैं, इसलिए अगर वे बीमार या थक जाते हैं, तो आप बीमार हो जाएंगे। हमें कोशिश करनी चाहिए कि उन्हें कम से कम एक दिन आराम दें, ताकि अगले दिन वे फिर से बड़ी ऊर्जा के साथ काम करें।
दूसरे, आप देखते हैं कि समुद्र में, विशेष रूप से एकादशी से पूर्णिमा तक, बहुत बड़ी लहरें दिखाई देती हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि चंद्रमा इस ग्रह के सभी जल को अपनी ओर आकर्षित करता है। जहां भी पानी होता है, चंद्रमा उसे अपनी ओर आकर्षित करता है। हमारे शरीर में बहुत पानी होता है, और विशेष रूप से एकादशी के दिन चंद्रमा इसे आकर्षित करता हैं; अगर कोई बीमारी है, तो वह बीमारी बहुत ज्यादा बढ़ जाती हैं। सबसे अच्छा है कि हम अनाज, मक्का, गेहूँ और उनके द्वारा बनाई गई वस्तुओं से परहेज करें।
ऐसा कहा गया है कि कभी-कभी आप पानी ले सकते हैं, और इसमें कोई बुराई नहीं
है। यदि तुम पत्थर पर पानी डालोगे, तो पत्थर फिर सूख जाएगा; सारा पानी गायब हो जाएगा। दूसरी ओर, यदि आप किसी रूई या ब्लॉटिंग पेपर (सोख्ता कागज पर) पर पानी डालते हैं, तो वे पानी को सोख लेंगे और सूखने में घंटों लगेंगे।
अनाज, गेहूँ, चावल, मक्का और दाल से बने व्यंजन हमारे पेट में रूई की तरह होते हैं। चंद्रमा इन रुई की तरह अनाजों में संचित जल को अपनी ओर आकर्षित करता है और रोग बढ़ जाते हैं। एकादशी से पूर्णिमा और एकादशी से अमावस्या तक अस्पतालों में कितने लोग मरते हैं। हमारे रोगों पर नियंत्रण पाने के लिए एकादशी का पालन करना बहुत आवश्यक है।

यह एक दिन नहीं है—यह कृष्ण है
श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज त्रिविक्रम कृष्ण एकादशी लॉस एंजिल्स, कैलिफोर्निया (५ जून १९९८)
आज एकादशी है, जो बहुत ही शुभ दिन है। इस संबंध में, आइए हम अंबरीष महाराज
और दुर्वासा ऋषि के इतिहास को याद करें। *[देखें अंत टिप्पणी १] इस इतिहास से सीखने के लिए बहुत सी चीजें हैं—पहले सीखना, फिर अभ्यास करना और फिर महसूस (अनुभूत) करना।
आज की क्या विशेषता है जो इसे एकादशी का नाम देती है? यह अमावस्या के दिन (अमावस्या) और पूर्णिमा के दिन (पूर्णिमा) से ग्यारहवां दिन है। हमारे पास ग्यारह इंद्रियाँ हैं—पांच काम करने वाली इंद्रियाँ (कर्मेन्द्रियाँ) और पांच ज्ञान प्राप्त करने वाली इंद्रियाँ (ज्ञानेन्द्रियाँ)। इस तरह दस इन्द्रियाँ और मन ग्यारहवां इन्द्रिय है। इन ग्यारह इंद्रियों से हमें कृष्ण के निकट जाने का प्रयास करना चाहिए। एकादशी का अर्थ हैं हम अपनी ग्यारह इंद्रियों से ‘उपवास’ करते हैं। ‘उप’ का अर्थ है ’बहुत निकट’ और ‘वास’ का अर्थ है ’निवास करना’। एकादशी के दिन, हमें अपने पूरे मन और शरीर के साथ, और अपनी सभी इंद्रियों के साथ कृष्ण के करीब होने का प्रयास करना चाहिए।
एकादशी का पालन न करना हमारे लिए हानिकारक होगा। एकादशी पर चंद्रमा पृथ्वी के करीब आता है, और इसलिए यह हर जगह से पानी आकर्षित करता है—समुद्र से, नदी से, हमारे शरीर से, आदि। इस दिन यदि कोई अनाज का सेवन करता है तो वह अन्न ब्लॉटिंग पेपर (सोख्ता कागज़) के समान हो जाता है। यदि आप पानी पीते हैं, तो पानी बहुत जल्द शरीर से बाहर निकल जाएगा। लेकिन अगर आप अनाज और पानी को एक साथ लेते हैं, तो अनाज ब्लॉटिंग पेपर या कपास की तरह हो जाता हैं—अनाज पानी का संचय करके रखता हैं।
रुई को निचोड़ भी दोगे तो थोड़ा पानी उसमें रह जाएगा। इसी तरह अगर आप कोई अनाज खाते हैं तो वह स्पंज जैसा हो जाता है। इसमें बहुत सारा पानी संचित होकर रहेगा। चंद्रमा उस जल को अपनी ओर आकर्षित करेगा, और आपके सभी रोग बढ़ेंगे। आप चन्द्रमा के आकर्षण के प्रभाव को इसे समुद्र या महासागर में देख सकते हैं। इस समय उच्च ज्वार आते हैं और लहरें बहुत ऊँची उठती हैं।
इसी तरह हमारे शरीर में भी ऐसा ही होता है। यदि किसी व्यक्ति को पहले से
कोई रोग है तो उसका रोग एकादशी से पूर्णिमा तक और एकादशी से अमावस्या तक बढ़ जाता है। हमने अस्पतालों में इसका परीक्षण किया है, और हम देखते हैं कि जो लोग अस्पतालों में मरते हैं, उनमें से ज्यादातर इन दिनों ही मर जाते हैं।
एकादशी के दिन खान-पान पर नियंत्रण रखें और अनाज का सेवन न करें। बिना पानी पूर्ण उपवास अर्थात् निर्जला उपवास करना बेहतर है। आज भारत में, बहुत से लोग निर्जला-एकादशी मनाते हैं—यहां तक कि छोटे लड़के भी, और तब भी जब बाहर का तापमान ४८ डिग्री सेल्सियस होता है। फिर भी ये लोग निर्जला एकादशी का पालन करते हैं। ऐसे व्यक्तियों को इससे कोई हानि नहीं होती है; बल्कि यह व्रत सभी रोगों को दूर करता है।
एकादशी का पालन करने में इस प्रकार सावधानी बरतें कि आप कृष्ण के और कृष्ण के
के व्यक्तित्वों और भगवान् के तदीय वस्तुओं के करीब हो जाएंगे। इसमें तुलसी, गंगा, यमुना, वृंदावन, गिरिराज और श्री-श्री राधा-कृष्ण का कोई भी मंदिर शामिल है। यह अधिकतर उनके शुद्ध भक्तों को संदर्भित करता है। ‘शुद्ध भक्त’ यह संज्ञा रसिक और तत्वज्ञ उत्तम-अधिकारी वैष्णवोंको (प्रथम श्रेणी के शुद्ध भक्तोंको), और यहां तक कि मध्यम-अधिकारी वैष्णवोंको (मध्यवर्ती भक्तोंको) को सूचित करती है। यदि आप उनके साथ जुड़ रहे हैं, वृंदावन में रह रहे हैं, तुलसी के पौधे के

पास, पुरी-धाम जहां श्री चैतन्य महाप्रभु कुछ समय के लिए रहते थे, श्री गोविंद मंदिर और श्री गोपीनाथ मंदिर, और सभी मंदिरों में, यदि आप प्रार्थना कर रहे हैं और हरि-कथा सुन रहे है, आप अवश्य ही कृष्ण के निकट हो जाओगे। इसे उप (निकट)—वास (निवास) उपवास कहा जाता है। कोशिश करें कि एकादशी के दिन कोई भी सांसारिक कार्य न करें।
हमें श्री श्री राधा और कृष्ण के करीब होने के लिए दो सप्ताह में कम से कम
एक दिन का उपयोग करना चाहिए, और इस तरह आप अपनी भक्ति नहीं खोएंगे। उनकी (श्री श्री राधा और कृष्ण के) संगति के प्रभाव से आपकी भक्ति अवश्य बढ़ेगी, और इसलिए कृष्ण ने इस अवसर की व्यवस्था की है—वे स्वयं एकादशी बन गए हैं। एकादशी के रूप में, वे हमें आमंत्रित करते हैं—“आज तुम मुझे अपनी ग्यारह इंद्रियाँ दे दो।” यह बहुत अच्छी बात है—कृष्ण एकादशी हो गए हैं—इसलिए हमें इसका पालन करने का प्रयास करना चाहिए।
कृष्ण ने अपने चक्र को बुलाया और उसे शिशुपाल के पास जाने का आदेश दिया,
और एक सेकंड में उस चक्र ने शिशुपाल का सिर काट दिया। वैदिक शास्त्रों में हम देखते हैं कि जब भी कृष्ण अपना चक्र लेकर फेंकते हैं, तो वह एक सेकंड में उस व्यक्ति का सिर काट देता है। फिर चक्र ने दुर्वासा का पीछा क्यों किया? दुर्वासा जल्दी से पूरे एक साल तक चक्र से दूर भाग रहे थे, और फिर भी चक्र उनका सिर काटने के लिए नहीं पहुंचा? क्यों? क्या कारण है? चक्र उनका सिर क्यों नहीं काट रहा था? उसने एक मिनट, दो मिनट, तीन मिनट, एक घंटा, दो घंटे या एक महीने के बाद भी उनका सिर नहीं काटा। लगभग पूरा एक साल लग गया, लेकिन फिर भी चक्र ने दुर्वासा का सिर नहीं काटा। चक्र उन से दो अंगुल दूर ही क्यों रहा? क्या कारण है?
भक्त: अंबरीष महाराज भगवान् विष्णु से प्रार्थना कर रहे थे कि दुर्वासा
को कोई हानि न हो।
श्रील नारायण गोस्वामी महाराज: नहीं, यह कारण नहीं है। अंबरीष महाराज कभी
भी कृष्ण की इच्छा के विरुद्ध नहीं हो सकते। यदि नारायण या कृष्ण सुदर्शन-चक्र फेंकते हैं, तो चक्र ने उस व्यक्ति का सिर काट देना चाहिए।
सुदर्शन-चक्र केवल एक हथियार या अस्त्र नहीं है। सुदर्शन शब्द का अर्थ है ’शुभ दृष्टि’। उस ‘शुभ दृष्टि’ के संबंध में किसी की मृत्यु नहीं होगी। उसका सिर काटकर या किसी अन्य तरीके से उस व्यक्ति का विनाश नहीं किया जाएगा।
दुर्वासा ऋषि शुद्ध वैष्णव हैं; वे शंकर, शिव की अभिव्यक्ति (अंश-अवतार)
है। वे सभी वैष्णवों में सबसे महान हैं (’वैष्णवानां यथा शम्भुः’) *[अंत टिप्पणी २ देखें]। वे अप्रत्यक्ष रूप से भक्ति (कृष्ण की शुद्ध भक्ति) और कृष्ण भक्तों की शक्ति का महिमामंडन करना चाहते थे। वे किसी को भी कोई भी वरदान दे सकते हैं, और उन्होंने श्रीमती राधिका को भी वरदान दिया है। श्रीमती राधिका ने उनसे यह वरदान प्राप्त किया कि वह जो कुछ भी पकाएँगी, वह पकवान (व्यंजन) अमृत से अधिक मीठा होगा, और यही श्रीमती राधिका के पाककला की विशेषता है।
यह कैसे संभव है कि जो व्यक्ति भक्ति और कृष्ण का महिमामंडन करना चाहता
है, वह अंबरीष महाराज जैसे व्यक्ति का विरोध कर सकता है? दुर्वासा ऋषि एक उच्च श्रेणी के ब्राह्मण और योगी हैं, और वे अमर हैं। वह ब्रह्म-लोक में रहते है *[अंत टिप्पणी ३ देखें], इस पृथ्वी ग्रह पर नहीं।
अंबरीष महाराज हमेशा ’हरे कृष्ण हरे कृष्ण’, ’गोविंद दामोदर माधवेति’, और अन्य भक्ति संबंधित भजन एवं कीर्तन मे निमग्न रहते थे। वे बहुत सरल थे। वे व्यक्तिगत रूप से कई सेवाएं करते थे, जैसे कि फूल इकट्ठा (पुष्प चयन) करना और कृष्ण के विग्रह के लिए माला बनाना। और, उन्होंने अपने राज्य के नियंत्रण और रखरखाव के संबंध में सभी जिम्मेदारियाँ अपने मंत्रियों को दे रखी थी। किसी को पता ही नहीं चला कि वे इतने उच्च कोटि के भक्त है।

जो भक्त जो अपनी सांसारिक नौकरी करते हुए और अपने जीवन को बनाए रखते हुए हमेशा विशुद्ध रूप से ’हरे कृष्ण हरे कृष्ण’ का जप करता है, वह दुर्वासा की तरह किसी भी योगी या ब्रह्म-ज्ञानी (परमेश्वर के निराकार रूप को महसूस करने वाले व्यक्ति) से बड़ा (श्रेष्ठ) है। उसने भले ही अपनी आध्यात्मिक स्थिति प्राप्त नहीं की हो, लेकिन फिर भी वह किसी भी ब्रह्म-ज्ञानी से बहुत ऊँचा है।
सुदर्शन-चक्र जानते थे, “दुर्वासा मुनि भी मेरे भक्त है। वे भक्ति, के
और स्वयं सर्वोच्च भगवान् की महिमा का गुणगान करना चाहते थे। चूंकि वे अप्रत्यक्ष रूप से उनकी महिमा का गुणगान करने जा रहा है, मैं भी अप्रत्यक्ष तरीके से कार्य करूंगा। मैं उनका सिर नहीं काटूंगा, लेकिन मैं उनका पीछा करूंगा। जो के भक्तों के खिलाफ (विरुद्ध) हैं, उन सभी में भय पैदा करने के लिए, मैं ऐसा करूंगा। वे समझेंगे कि सुदर्शन-चक्र हमेशा प्रह्लाद महाराज, गजेंद्र और अन्य
सभी भक्तों की रक्षा करते है।”
अंबरीष महाराज सोच रहे थे, “मैं क्या करूँ? एक तरफ, अगर मैं चरणामृत (के
विग्रह को अभिषेक करने के उपरांत प्राप्त होने वाला पवित्र जल) पीता हूं, तो
मैं उन ब्रह्म-योगी की उपेक्षा कर रहा हूं, लेकिन दूसरी तरफ मुझे एकादशी का विचार करना चाहिए। अगर मैं एकादशी का ठीक से पालन नहीं करता (जिसमें अगले दिन उचित समय भगवान् के प्रसाद का सम्मान करके इस व्रत का पारण करना शामिल है), तो इसका मतलब
है कि मैं एकादशी की उपेक्षा कर रहा हूं। इनमें अधिक हानिकारक क्या है— ब्राह्मण की अवज्ञा करना या भक्ति की अवज्ञा करना?”
उन्होंने निष्कर्ष निकाला, “मैं इस ब्रह्म-ज्ञानी-योगी की तरह हजारों-
हजारों ब्राह्मणों की अवज्ञा कर सकता हूं, लेकिन मैं पवित्र भगवन्नाम या एकादशी की अवज्ञा नहीं कर सकता।”
(महा- भगवान् के खाद्य पदार्थों के अवशेषों का सम्मान करने से पहले वैष्णव यह प्रार्थना दोहराते हैं—)
महाप्रसाद गोविन्दे, नाम-ब्रह्मणि वैष्णवे। स्वल्प- राजन्‌, विश्वासो नैव जायते॥
(स्कंद पुराण, चैतन्य चरितामृत,
अंत्य-लीला, १६.९६ तात्पर्य में उद्धृत)
जिन लोगों की पूर्व जन्म या भूत काल में उपार्जित पुण्य एवं भक्ति उन्मुखी सुकृति का संचय पर्याप्त नहीं है, लोगों का श्रीभगवद्‌-महाप्रसाद, श्री गोविन्द, उनके पवित्र नाम एवं वैष्णवों में सुदृढ विश्वास उत्पन्न नहीं हो सकता।
हम हरिनाम या एकादशी की अवज्ञा नहीं कर सकते।
एकादशी भक्ति की माता है। एकादशी का व्रत करेंगे तो भक्ति की अवश्य प्राप्त होगी। यह देखने में बहुत साधारण सी बात लग सकती है, लेकिन यह बिल्कुल भी सामान्य नहीं है। अंबरीष महाराज ने कुछ चरणामृत जल का सेवन किया, जो पारण (उपवास तोड़ना) था और साथ ही पारण भी नहीं था, क्योंकि यह चरणामृत जल अनाज या भोजन की तरह नहीं है। जब कोई निर्जला एकादशी (पानी से भी उपवास) का पालन करता है, यदि कोई अगले दिन व्रत तोड़ने के लिए निर्दिष्ट समय पर चरणामृत जल पान करता है, तो वह चरणामृत जल भी पारण माना जाता है।
यदि एकादशी के दिन किसीने फल और जल का सेवन किया हो, तो उसे अन्न के द्वारा व्रत का पारण करना होगा। अंबरीष महाराज तीन दिनों तक निर्जला व्रत का पालन करते थे। पहले दिन (दशमी, एकादशी के पूर्व दिन) वे एक बार पानी पीते थे, आखिरी दिन (द्वादशी, एकादशी के अगले दिन) एक बार पानी पीते थे, और बीच में, पूरे एकादशी के दिन वे निर्जला व्रत करते थे। वे रात में एक पल भर भी नहीं सोते थे। बल्कि, वे हमेशा श्रीकृष्ण के नाम और महिमा का जप और स्मरण किया करते थे। यह एकादशी की प्रक्रिया है।

हम महाराज अंबरीष की तरह योग्य नहीं हैं, इसलिए कृष्ण ने हमें कुछ रियायतें दी हैं, और श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज ने भी हमें और रियायतें दी हैं। आप फल, दूध और दही ले सकते हैं, इसमें कोई बुराई (नुकसान) नहीं है—लेकिन एकादशी का पालन करें। अनाज मत लो। दिन में एक बार अनुकल्प प्रसाद (फल या दूध) लेने का प्रयास करें, लेकिन यदि आप सक्षम नहीं हैं, तो आप दो बार अनुकल्प प्रसाद (फल या दूध) ले सकते हैं; लेकिन तीन बार नहीं, चार बार, पांच बार, छह बार—एक किलो रस के साथ, रबड़ी (एक भारतीय मिठाई), एक किलो आम, फलों का रस, संतरे का रस, और उसके बाद सेब का रस—अपने पेट को आराम न देकर हमेशा खाते ही रहना ठीक नहीं हैं। हमें ऐसा नहीं करना चाहिए। एक या दो बार अनुकल्प प्रसाद (फल या दूध) का सेवन पर्याप्त है; और हर बार इतनी ही मात्रा में अनुकल्प प्रसाद ले कि जिससे पेट आधा भर जाए। आधा पेट खाली रहना चाहिए। बहुत कम अनुकल्प प्रसाद (फल या दूध) लो; तो वह यथार्थ एकादशी है।
[अंत टिप्पणी १:
“अंबरीष महाराज सम्पूर्ण विश्व के सम्राट थे, लेकिन उन्होंने अपने ऐश्वर्य को अस्थायी माना। वास्तव में, यह जानते हुए कि इस तरह का भौतिक ऐश्वर्य जीव के बद्ध अवस्था में पतन का कारण हो सकता है, वे इस ऐश्वर्य के प्रति अनासक्त उन्होंने अपनी इंद्रियों और मन को भगवान् की सेवा में लगा दिया। इस प्रक्रिया को युक्त-वैराग्य, या व्यवहार्य त्याग कहा जाता है, कि भगवान् की पूजा के लिए काफी उपयुक्त है। क्योंकि अंबरीष महाराज, सम्राट के रूप में, अत्यधिक समृद्ध थे, ऐश्वर्य के साथ भगवान् की सेवा अर्थात् भक्ति की। इसलिए धन-सम्पत्ति के होते हुए भी उन्हें अपनी पत्नी, सन्तान या राज्य से कोई मोह नहीं था। वे निरन्तर अपनी इन्द्रियों और मन को भगवान् की सेवा में नियुक्त करते थे। इसलिए, भौतिक ऐश्वर्य के भोग करने की कामना दूर ही रहे, उन्होंने कभी भी मुक्ति की भी इच्छा नहीं रखी।
“एक बार अंबरीष महाराज वृंदावन में द्वादशी के व्रत का पालन करते हुए
की पूजा कर रहे थे। द्वादशी पर, एकादशी के एक दिन बाद, जब वे अपना एकादशी के व्रत का पारण करने ही वाले थे, महान योगी दुर्वासा उनके घर अतिथि के रूप में प्रकट हो गए। राजा अंबरीष ने सम्मानपूर्वक दुर्वासा मुनि का स्वागत किया, और दुर्वासा मुनि, वहाँ उनके भोजन प्रसाद के निमंत्रण को स्वीकार करके, दोपहर के समय यमुना नदी में स्नान करने गए। क्योंकि वह समाधि में लीन थे, वे बहुत जल्द वापस नहीं आए। अंबरीष महाराज ने, हालांकि यह देखते हुए कि उपवास के पारण का समय बीत रहा है, विद्वान ब्राह्मणों की सलाह के अनुसार, उपवास के पारण की औपचारिकता का पालन करने के लिए, भगवान् का चरणामृत पान पिया।
“योग की शक्ति से, दुर्वासा मुनि समझ सकते थे कि क्या हुआ है, और वे बहुत क्रोधित हुए। जब वे लौटे तो उन्होंने अंबरीष महाराज को डाँटना आरंभ किया, फिर भी वे जब संतुष्ट नहीं हुए, तो अंत में उन्होंने अपने बालों से आग की तरह दिखने वाली एक मृत्यु- कृत्या नामक राक्षसी का निर्माण किया। भगवान् हमेशा अपने भक्त के रक्षक होते हैं, और अंबरीष महाराज की रक्षा के लिए, उन्होंने अपना अस्त्र, सुदर्शन-चक्र को भेज दिया, जिसने तुरंत उग्र राक्षसी पर विजय प्राप्त की और फिर अंबरीष महाराज के प्रति प्रचंड ईर्षा रखनेवाले दुर्वासा का पीछा करना आरंभ किया।
“दुर्वासा भाग कर ब्रह्मलोक (सत्यलोक), शिवलोक और अन्य सभी उच्च ग्रहों
पर गए, लेकिन वह खुद को सुदर्शन-चक्र के प्रकोप से नहीं बचा सके। अंत में उन्होंने आध्यात्मिक दुनिया (जगत) जाकर भगवान् नारायण को आत्मसमर्पण कर दिया, भगवान् नारायण एक वैष्णव के प्रति द्रोह एवं अपराध करने वाले व्यक्ति को माफ नहीं कर सके। इस तरह के अपराध से मुक्त होने के लिए, जिस वैष्णव के चरणों में अपराध किया हैं, उसी वैष्णव के चरणों में प्रस्तुत होकर क्षमा याचना करनी

क्षमा प्राप्त करने का कोई अन्य तरीका नहीं है। इस प्रकार भगवान् नारायण ने दुर्वासा मुनि को अंबरीष महाराज के पास लौटने और क्षमा मांगने की सलाह दी।
“ विष्णु के आदेश से, दुर्वासा मुनि तुरंत अंबरीष महाराज के पास गए और
उनके चरण कमलों पर गिर पडे़। अंबरीष महाराज, स्वाभाविक रूप से बहुत विनम्र और दीनहीन होने के कारण, लज्जा एवं संकोच महसूस करते कर रहे थे, क्योंकि दुर्वासा
मुनि ने उनके चरणों में पर गिर पडे थे, और इस प्रकार उन्होंने दुर्वासा को
बचाने के लिए सुदर्शन-चक्र को प्रार्थना करना आरंभ कर दिया।
“यह सुदर्शन चक्र क्या है? चक्र भगवान् के दृष्टिपात या कटाक्ष है जिस के
वे संपूर्ण भौतिक संसार का निर्माण करते हैं। स ऐक्षत्‌, असृजत्। यह वैदिक संस्करण है। चक्र सृष्टि का मूल एवं भगवान् को सबसे प्रिय है। उस की हजारों तीलियां हैं।
यह सुदर्शन चक्र अन्य सभी हथियारों के पराक्रम एवं प्रभाव का हत्यारा (विनाशक), अंधकार का हत्यारा (विनाशक) और भक्तिमय भगवद्-सेवा के प्रभाव का प्रकटकर्ता
है। यह धार्मिक सिद्धांत स्थापित करने का साधन एवं सभी अधार्मिक गतिविधियों
का हत्यारा (विनाशक) है।
“उनकी दया के बिना, ब्रह्मांड को बनाए नहीं रखा जा सकता है, और इसलिए सुदर्शन- को भगवान् के द्वारा नियोजित किया जाता है।
“जब अंबरीष महाराज ने इस प्रकार प्रार्थना की कि सुदर्शन-चक्र दयालु हो,
तो सुदर्शन-चक्र ने प्रसन्न होकर, दुर्वासा मुनि को मारने से परहेज किया। इस प्रकार दुर्वासा मुनि ने सुदर्शन-चक्र की दया प्राप्त की। दुर्वासा मुनि ने इस प्रकार किसी वैष्णव को एक साधारण व्यक्ति समझने (वैष्णवे जाति-बुद्धि) का गलत विचार को छोड़ना सीख लिया। अंबरीष महाराज क्षत्रिय समूह के थे, और इसलिए दुर्वासा मुनि उन्हें ब्राह्मणों से कम मानकर उनके खिलाफ एक ब्राह्मण की शक्ति का प्रयोग करना चाहते थे।
“इस घटना से, सभी को सीखना चाहिए कि वैष्णवों की उपेक्षा के शरारती
विचारों को कैसे रोका जाए। इस घटना के बाद, अंबरीष महाराज ने दुर्वासा मुनि के
लिए सुन्दर महाप्रसाद का भोजन प्रस्तुत किया, और फिर राजा, जो एक वर्ष से बिना
कुछ खाए एक ही स्थान पर खड़े थे, उन्होंने भी प्रसाद लिया। उसके उपरांत अंबरीष महाराज संपत्ति अपने पुत्रों के बीच बाँटकर भक्तिपूर्वक भगवान् का ध्यान करने के लिए मानस-सरोवर के तट पर चले गए।" (श्रीमद्भागवत, सर्ग ९, अध्याय ४, सारांश, और सर्ग
४ अध्याय ५ सारांश, श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज द्वारा)]

[अंत टिप्पणी २:
यथा गंगा, अच्युतो यथा।
वैष्णवानां यथा शम्भु:, पुराणां इदं तथाः॥
”जिस प्रकार गंगा सभी नदियों में सबसे महान है, में सर्वोच्च भगवान् अच्युत वैष्णवों में सबसे महान भगवान् शंभु (शिव) हैं, उसी प्रकार श्रीमद्भागवत सभी पुराणों में सबसे महान हैं।” (श्रीमद्भागवत १२.१३.१६)]

[अंत टिप्पणी ३:
शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा: इस प्रकार सभी प्रकार से संतुष्ट होकर, महान
योगी दुर्वासा ने अनुमति ली और राजा की लगातार महिमा गाते हुए वे चले गए। आकाशमार्ग के माध्यम से, वे ब्रह्मलोक गए, जो अज्ञेयवादी और शुष्क दार्शनिक मीमांसकों से रहित है।
तात्पर्य (श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज द्वारा): यद्यपि दुर्वासा मुनि अंतरिक्ष-मार्ग से ब्रह्मलोक वापस चले गए, उन्हें एक हवाई जहाज की आवश्यकता नहीं पडी, क्योंकि ऐसे महान योगी बिना किसी मशीन (यंत्र) के किसी भी ग्रह से किसी अन्य ग्रह तक खुद को पहुँचा सकते हैं। सिद्धलोक नाम का एक ग्रह है

जिसके निवासी किसी भी अन्य ग्रह पर जा सकते हैं, क्योंकि उनके पास स्वाभाविक रूप से योग अभ्यास की सभी पूर्णता होती है।
इस प्रकार दुर्वासा मुनि, महान रहस्यवादी योगी, आकाश के रास्ते से किसी
भी ग्रह, यहां तक कि ब्रह्मलोक तक भी जा सकते थे। ब्रह्मलोक में, हर कोई आत्म-साक्षात्कारी होता है, और इस प्रकार वहाँ पूर्ण सत्य के निष्कर्ष पर आने के लिए दार्शनिक अटकलों की कोई आवश्यकता नहीं है। ब्रह्मलोक में जाने का दुर्वासा मुनि का उद्देश्य स्पष्ट रूप से ब्रह्मलोक के निवासियों से बात करना था कि एक भक्त कितना शक्तिशाली है और एक भक्त इस भौतिक दुनिया के भीतर रहनेवाले हर जीव को कैसे भव-सागर पार करा सकता है। तथाकथित ज्ञानी और योगी की तुलना किसी भक्त से नहीं की जा सकती। (श्रीमद्भागवत ९.५.२२)]

साक्षात्-गुरुसेवाके सम्बन्धमें गुरुदासका कर्त्तव्य
गुरुदासके बहुतसे कर्त्तव्य होनेपर भी साधारणतः गुरुदेवकी साक्षात् सेवाके सम्बन्धमें संक्षेपमें यहाँ वर्णन किया जा रहा है— प्रतिदिन गुरुदेवके लिए जल लाना, कुश, पुष्प, यज्ञीय काष्ठ संग्रह करना, गुरुका शरीर मार्जन, चन्दन लेपन, घर साफ करना, कपडे़ साफ करना तथा उनके प्रिय और हितकर कर्मोंका अनुष्ठान करना, गुरुके गुरु (परमगुरु) के साथ गुरुकी तरह व्यवहार करना चाहिए। गुरुकी आज्ञा लेकर पिता-माताके साथ बोलना चाहिए। सदा गुरुका दर्शन करते ही भूमिष्ठ होकर दण्डवत् प्रणाम करना चाहिए। तन, मन, वचन, प्राण और धनके द्वारा गुरुके प्रिय कार्योंको करना चाहिए। श्रीकृष्णके चरणकमलोंका आश्रय करनेके लिए अप्राकृत दीक्षा ग्रहण करनी चाहिए। गुरुदेवको भगवत् बुद्धिसे प्रणाम करना चाहिए। अपनी सब सम्पत्ति यहाँ तक कि अपनी देह तक दक्षिणाके रूपमें गुरुदेवको समर्पण कर देना चाहिए। सेव्य भगवान् कृष्णको गुरुके शरीरमें अवस्थित जानना चाहिए। एकादशी, जन्माष्टमी, रामनवमी, फाल्गुनी पूर्णिमा (महाप्रभुका जन्म दिवस) आदि हरिवासरोंमें उपवास करना चाहिए।

गुरुदासके लिए ५२ प्रकारके निषेध
गुरुदासके लिए ५२ प्रकारके निषेध गुरुसेवकोंको निम्नलिखित ५२ प्रकारके निषेधोंको अवश्य मानना चाहिए— (१) दोनों सन्ध्या कालमें सोना (२) मिट्टीके बिना शौच (३) खड़े होकर आचमन (४) गुरुके सामने पैर पसारना (५) गुरुकी छाया लांघना (६) समर्थ होते हुए भी स्नान न करना (७) देवार्चनमें आलस्य (८) देवता और गुरुकी अभ्यर्थना न करना (९) गुरुदेवके आसनपर बैठना (१०) गुरुके सामने पाण्डित्य प्रकाश करना (११) जंघाके ऊपर पैर रखना (१२) विष्णुके नैवेद्यका उल्लंघन करना (१३) मन्त्रहीन तिलक और आचमन (१४) नीला वस्त्र धारण करना (१५) भगवत्-विमुख और वैष्णव-विद्वेषीके साथ मित्रता (१६) असत् शास्त्र पाठ (१७) तुच्छ संगसुखमें आसक्ति (१८) मद्य-मांस सेवन (१९) मादक औषधि सेवन (२०) मसूरी दालके साथ अन्न भोजन (२१) शक, कद्दू (लौकी), बैंगन, प्याज, लहसुन आदि भोजन (२२) अवैष्णवके निकट अन्न ग्रहण (२३) अवैष्णव व्रतका पालन (२४) अवैष्णव मन्त्र ग्रहण करना (२५) मारण, उच्चाटन आदि अनुष्ठान (२६) सामर्थ्य रहनेपर हरिसेवामें कृपणता करना—हीन उपचारसे पूजा करना (२७) शोकके वशीभूत होना (२८) दशमीसे संयुक्त एकादशीका व्रत पालन (२९) शुक्ल और कृष्ण पक्षकी एकादशीमें भेद (३०) जुआ खेलना (३१) समर्थ होनेपर भी व्रत उपवासमें अनुकल्प स्वीकार (३२) एकादशीके दिन श्राद्ध (३३) द्वाद्वशीके दिन सोना (३४) द्वाद्वशीमें विष्णु स्नान (३५) विष्णुके प्रसादके सिवा दूसरी वस्तुओंसे श्राद्ध (३६) वृद्धि-श्राद्धमें अतुलसी (३७) अवैष्णव या राक्षस श्राद्ध (३८) चरणामृत रहते हुए पवित्रताके लिए दूसरे जलसे आचमन करना (३९) काठके आसनपर बैठे हुए पूजा करना (४०) पूजाके समय असत् कथा (४१) गृह-कनेर या आकके फूलसे पूजा (४२) लौह-निर्मित धूप-पात्र व्यवहार (४३) प्रमादवश तिरछा पुण्ड्र धारण (४४) असंस्कृत द्रव्य द्वारा पूजा (४५) चञ्चल चित्तसे अर्चन (४६) एक हाथसे प्रणाम और केवल एकबार प्रदक्षिणा (४७) असमयमें श्रीमूर्ति दर्शन (४८) बासी अन्न निवेदन (४९) असंख्य जप (५०) मन्त्र प्रकाश (५१) मुख्यकाल त्याग और गौणकाल स्वीकार (५२) विष्णु प्रसाद अस्वीकार।

एकादशीका यत्नपूर्वक पालन करना चाहिए।
१५ दिनोंमें एक दिन एकादशी तिथिमें समस्त प्रकारके भोगोंका परित्यागकर
भजन करनेसे निरन्तर भजनका अभ्यास होता है।
साधकको सबसे पहले गुरुपदाश्रय करके उनसे दीक्षा और शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। साधुजनोंके चरित्रका अनुसरण और उनके सिद्धान्तोंकी शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। जीवनको कृष्णमय करनेके लिए कृष्ण-तीर्थमें निवास कर कृष्ण उद्देश्यसे अपने समस्त भोगोंका परित्याग करना चाहिए। व्यवहारिक कार्योंके द्वारा भक्तिके अनुकूल संसारके निर्वाहोपयोगी अर्थ उपार्जन या संग्रह करना चाहिए। भक्तिके लिए एकादशी और जयन्ती (जन्माष्टमी) आदिका विधिवत पालन करना चाहिए। वैष्णव आदि तदीय वस्तुओंका सम्मान करना चाहिए। इस प्रकार ये दस अन्वय विधियाँ अवश्य पालनीय हैं।

द्रव्यासक्ति सबके लिये त्याज्य है
द्रव्योंके प्रति होने वाली समस्त प्रकारकी आसक्तियोंको दूर करनेका विशेष रूपसे प्रयत्न करना चाहिये। घर-बार, स्त्री-पुत्र, सुन्दर-सुन्दर आभूषण और वस्त्र, शरीर, भोजन, वृक्ष, पशु, पक्षी तथा अपने व्यवहारकी वस्तु आदिके प्रति गृही लोगोंकी निसर्गसे ही आसक्ति होती है। कुछ लोगोंको धूम्रपानमें, बहुतोंको मद्य-मांस आदि भोजनमें तथा दूसरोंको मादक द्रव्योंके सेवनमें इतनी अधिक आसक्ति होती है कि वे बुरी आदतें परमार्थ-साधनमें बड़ी बाधक सिद्ध होती है। कुछ लोग मद्य-मांस आदिके सामने भगवानके प्रसादका भी निरादर करनेमें आगा-पीछा नहीं करते। बार-बार धूम्रपानकी आदत भक्ति ग्रन्थोंके पाठक, उनके श्रवण और कीर्त्तनका अधिक देर तक रसास्वादनमें बाधक होती है। ऐसी आदतसे लाचार व्यक्ति मन्दिरमें अधिक देर तक नहीं ठहर पाते, सत्संगका सुख अधिक समय तक नहीं पा सकते। जब तक इन द्रव्यासक्तियोंको सम्पूर्ण रूपसे दूर नहीं किया जाता, तब तक भजन-सुखका अनुभव नहीं हो सकता है। सत्संग द्वारा ये सब आसक्तियाँ दूर हो जाती हैं; फिर भी साधन-भक्तिकी क्रियाओंके द्वारा इन छोटी-मोटी आसक्तियोंको दूर करनेकी चेष्टा करनी चाहिए। भगवद्भक्ति सम्बन्धी व्रतोंके पालनसे ये आसक्तियाँ दूर हो सकती हैं।

एकादशी आदि व्रतोंके पालनसे आसक्तिका दूर होना
एकादशी, जन्माष्टमी, गौरपूर्णिमा, रामनवमी, नृसिंहचतुर्दशी आदि व्रतोंका श्रद्धाके साथ नियम-पूर्वक पालन करनेसे ये आसक्तियाँ सहज ही दूर हो जाती हैं। व्रत और नियमोंका एक उद्देश्य आसक्तियोंको दूर करना भी है। व्रतोंके दिन सब प्रकारके भोगोंका वर्जन करके एकान्त मनसे भगवानका भजन करना ही एकमात्र विधि है।

साधकोंका कर्त्तव्य
साधकका कर्ममें ही लगे रहना नित्य साध्य नहीं है, यथा—
कर्माणि कुर्वीत न निर्विद्येत यावता।
मत्कथा श्रवणादौ वा श्रद्धा यावन्न जायते॥
(श्रीमद्भागवत ११/२०/९)
अर्थात् कर्मके विषयमें जितने प्रकारके विधि-निषेध हैं उनका पालन तभी तक करना चाहिए जब तक उनसे मिलनेवाले स्वर्ग आदि सुखोंके प्रति वैराग्य उत्पन्न न हो जाय। उनके प्रति उत्पन्न वैराग्य भी तभी तक क्रियाशील रहेगा जबतक कि मत्कथा अर्थात् मुझ श्रीकृष्णकी लीला कथाओंके प्रति श्रद्धा उत्पन्न न हो जाय क्योंकि कृष्ण भक्ति सर्वथा निर्पेक्ष शुद्ध तत्त्व है, उसे न कर्म, न ज्ञान और

न वैराग्यकी ही अपेक्षा है। जहाँ शुद्ध कृष्ण भक्ति होती है, वहाँ सत्कर्म, सत्ज्ञान और युक्त वैराग्य स्वंय आकर वास करने लगते हैं तथा वे भक्तिका पदाश्रय प्राप्त कर स्वंयको धन्य समझते हैं।

यथा —

योगिनो वै मदात्मनः।
न ज्ञानं न च वैराग्यं प्रायः श्रेयो भवेदिह॥

(श्रीमद्भागवत ११/२०/३१)

अर्थात् 'मदात्मनः'—जो योगी मेरी भक्ति और मेरी लीलाकथाओंके चिन्तन मनन और स्मरणमें तल्लीन रहता है उसे न ज्ञानकी और न वैराग्यकी आवश्यकता रहती है। उसका सर्वहित (मेरे प्रेमकी प्राप्ति) मेरी भक्तिसे ही हो जाता है।

अतएव कृष्णनाम साधकोंको कर्म और ज्ञानके प्रति निष्ठावान नहीं होना चाहिए। उनका प्रयास एवं आग्रह तो स्थिर मन एवं निष्ठावान चित्तसे भगवान् कृष्णकी लीला कथाओंका श्रवण, पठन, सत्संग, वृन्दावन वास, पदाश्रय, एकादशीव्रत, नाम जपमें रहना चाहिए।

-संग
के ११वें सर्ग (स्कन्द) में, कृष्ण उद्धव से कहते हैं, ”हे मेरे प्रिय उद्धव, आप मेरे बहुत निकट और प्रिय हैं। आप मेरे मित्र, सेनापति और सलाहकार हैं, और हमारे और भी बहुत से संबंध हैं। इसलिए मैं आपके समक्ष सबसे महत्वपूर्ण और छिपे हुए ज्ञान को प्रकट करने जा रहा हूं।”
”हे मित्र, मेरे सबसे श्रेष्ठ भक्तों की संगति सांसारिक इन्द्रिय-तृप्ति
की सभी इच्छाओं को काट देती है। वह संगति, उच्च श्रेणी का महत्‌-संग, मुझे नियंत्रित कर सकता है। दूसरी ओर, तत्व-विवेक (दार्शनिक विश्लेषण) धर्म (धर्मपरायणता), योग, स्वाध्याय (वेद मंत्रों का उच्चारण), त्याग (सन्यास आश्रम स्वीकार करना), तप (गंभीर तपस्या), दक्षिणा (दान में देना), अहिंसा, नियम (आध्यात्मिक अनुशासन के लिए प्रमुख निर्देशों का पालन करना) यम (मामूली नियम), व्रत स्वीकार करना, व्रत चंद्र तीर्थ (पवित्र स्थानों में जाना और स्नान करना) और चंद्रमसी (गोपनीय मंत्रों का जाप) ऐसा नहीं कर सकते।
भी ऐसा ही सोचना चाहिए। जितनी मदद महत्‌-संग आपको कर सकता है, उस के तुलना
ये गतिविधियाँ आपको इतनी मदद नहीं कर सकती हैं। भक्ति के लिए महत्‌-संग सबसे अनुकूल गतिविधि है। यम-नियम, मन और इंद्रियों को नियंत्रित करना इत्यादि — महत्-संग के साथ यह ठीक है, अन्यथा नहीं। यदि किसी ने संन्यास ले लिया है, लेकिन कोई भक्ति या गुरु-निष्ठा (आत्म-साक्षात्कार गुरु में दृढ़ विश्वास) नहीं है, तो उपर्युक्त पवित्र गतिविधियाँ सभी व्यर्थ हैं। अकेले बाहरी गतिविधियां आपकी मदद नहीं कर सकतीं।
वैदिक अग्निहोत्रादि यज्ञ करना और उद्यान विकसित करना, बच्चों के स्कूल
और गोशालाएँ (गोरक्षा के लिए क्षेत्र) बनाना भी आपकी मदद नहीं कर सकता हैं। केवल दक्षिणा (गुरुदेव के पास धन लाने) से कुछ नहीं होगा। आपको शुद्ध भक्त संगति में आंतरिक रूप से सेवा करनी होगी, ताकि शुद्ध भक्ति आपके पास आए। उस संगति में आप सीखेंगे कि कुछ ही समय में कृष्ण को कैसे नियंत्रित किया जाए।
अन्यथा, भक्ति-व्रत (एकादशी के पवित्र दिन का उपवास), पूजा (देवताओं और यहां तक भगवान् के विग्रहोंकी पूजा करना), ब्रह्म-गायत्री और अन्य मंत्र, और तीर्थ (गंगा में स्नान करना) अकेले आपकी मदद नहीं करेंगे। कृष्ण ने सत्य (हमेशा सच बोलना), अचौर्य (चोरी न करना) और असंग (संसार से विरक्त होकर रहना)—इन शब्दों
का भी उल्लेख किया है। वे भी आपकी मदद नहीं करेंगे। वे आपको नियंत्रित और आकर्षित महत्-संग के बिना एकादशी का व्रत करना भी कर्म के समान होगा। आप कर्म के उपरांत होने वाले भौतिक पुण्य अर्थात् सुकृति द्वारा इस प्रकार नियंत्रित होंगे। गतिविधियों में महत्‌-संग को शामिल किया जाना चाहिए, ताकि वे आपके लिए
हों। यदि आप महत्‌-संग की उपेक्षा करते हैं और आप असत्-संग (भौतिकवादियों के संघ) की भी उपेक्षा करते हैं, तो यह भी अनुकूल नहीं होगा। अगर कोई असत-संग की उपेक्षा करता है और साथ ही सत-संग की उपेक्षा करता है, तो यह न केवल किसी काम का है, बल्कि यह खतरनाक है। ऐसा इसलिए है क्योंकि व्यक्ति फिर से असत-संग से आकर्षित होगा। वास्तव में, वह व्यक्ति अभी भी असत-संग में है, वह अपने स्वयं के प्रदूषित मन और हृदय की संगति में हैं।
असंचय का अर्थ है कुछ भी इकट्ठा नहीं करना, और श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी
एक ऐसे भक्त का उदाहरण हैं, जिन्होंने भौतिक सामग्री एकत्र नहीं की। यदि असंचय भक्ति के लिए किया जाता है या भक्ति का परिणाम है, यदि यह महत्-संग में किया जाता है, तो ठीक है। अन्यथा वह कुछ भी नहीं है। वह ठीक नहीं है। साज-सामान इकट्ठा करना संचय है। भक्ति के संबंध में असंचय अच्छा है। तब वह अनुकूल है। यदि वह भक्ति के लिए नहीं है, तो वह अनुकूल नहीं है। ब्रह्मचर्य भी अनुकूल नहीं रहेगा।

एवं ठाकुर भक्तिविनोद इंस्टीट्यूट
पञ्चमी और एकादशीको अवकाश
श्रील प्रभुपादने पराविद्याकी शिक्षाके लिए श्रीधाम मायापुरमें अप्रैल १९३१ ई॰ में Thakur Bhaktivinode Institute की स्थापना की। उक्त विद्यालयके Managing Committee के सभापति श्रील प्रभुपाद, प्रधानाध्यापक श्रीमद्भक्तिप्रदीपतीर्थ महाराज एवं बाकी सदस्योंमें श्रीविनोदविहारी ब्रह्मचारी भी व्यवस्थापक सदस्य मनोनीत हुए। इनकी व्यवस्थाके अनुसार उक्त विद्यालयके लिए रविवारके बदले पञ्चमी और एकादशीको अवकाशका दिन और शनिवारके बदले चतुर्थी और दशमीको अर्द्ध अवकाशका दिन घोषित किया गया। एकादशी शुद्धभक्तिकी जननी माधवतिथि कहलाती है। पञ्चमी तिथि शुद्धा सरस्वतीकी आविर्भाव तिथि (श्रील प्रभुपादकी भी) है। रविवारके दिन गिरिजाघरोंमें उपासनाके कारण विशेष छुट्टी दी जाती थी। इन्होंने अँग्रेजोंके द्वारा स्थापित नियमोंको बदलकर पूर्वोक्त नियमोंकी घोषणा की थी। इसके अतिरिक्त इन्होंने विशेष-विशेष वैष्णव आचार्योंके आविर्भाव और तिरोभावके दिनको भी अवकाशका दिन घोषित किया। इस विद्यालयमें धर्मशिक्षा अनिवार्य कर दी गयी। अन्य सभी विषयोंमें उत्तीर्ण होनेपर भी जो छात्र धर्मविषयमें अनुत्तीर्ण होंगे, उन्हें अगली कक्षामें प्रवेश नहीं मिलेगा। धर्मनीतिरहित निरीश्वर शिक्षाके द्वारा समाजका कल्याण कदापि सम्भव नहीं—ऐसी विवेचना कर ही इन्होंने उक्त विद्यालयमें इन विषयोंको लागू किया। इनके इस कार्यके लिए नवद्वीपधाम प्रचारिणी सभाके पक्षसे इन्हें विशेष धन्यवाद ज्ञापन किया गया।

एकादशी संबंधित जानकारी
▪ भगवान श्रीराम के वर से यज्ञसीताएं द्वापर युग में श्रीकृष्ण के प्रकट लीला के समय साधन-सिद्धा गोपियों के रूप में उत्पन्न हुईं थी। एक दिन वे श्रीकृष्ण का दर्शन कर मोहित हो गईं और श्रीकृष्ण की प्रसन्नता के लिए कोई व्रत पूछने के उद्देश्य से श्रीमती राधाराणी के पास गईं।
▪ श्रीराधा ने साधन-सिद्धा गोपियों से कहा—‘श्रीकृष्ण की प्रसन्नता के
लिए तुम सब एकादशी-व्रत का अनुष्ठान करो। इससे श्रीहरि तुम्हारे वश में हो जाएंगे।’
▪ श्रीकृष्ण की प्रसन्नता के लिए श्रीराधा द्वारा साधन-सिद्धा गोपियों
को एकादशी व्रत की विधि, नियम और माहात्म्य बताया।
▪ श्रीराधा ने कहा—‘जैसे नागों में शेष, पक्षियों में गरुड़, देवताओं
में विष्णु, वर्णों में ब्राह्मण, वृक्षों में पीपल तथा पत्रों में तुलसीदल श्रेष्ठ है, उसी प्रकार व्रतों में एकादशी तिथि सर्वोत्तम है।
▪ एकादशी व्रत का प्रारम्भ किसी भी एकादशी से किया जा सकता है। इसके लिए उत्पन्ना एकादशी की प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है; क्योंकि कोई भी शुभ कार्य जितनी जल्दी हो सके, प्रारम्भ कर देना चाहिए।
▪ दशमी युक्त एकादशी में उपवास नहीं करना चाहिए। यह संतान के लिए अनिष्टकारी होती है। सूर्योदय के समय दशमी तथा दिन भर एकादशी हो तो द्वादशी को उपवास करके त्रयोदशी को पारण करना चाहिए।
▪ एकादशी के दिन प्रात:काल स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण करे। तन-मन व विचारों को शुद्ध रखना चाहिए।
▪ वैसे तो कूप, तालाब, नदी या समुद्र का स्नान उत्तरोत्तर श्रेष्ठ माना
गया है; परन्तु आज के समय में यह हर किसी के लिए संभव नही है। अतः घर में भी ’हरे कृष्ण’ महामंत्र उच्चारण करते हुए स्नान करने से शरीर और मन दोनो पवित्र हो जाएंगे।
▪ भगवान श्रीकृष्ण का पंचामृत स्नान कराए। सुंदर पुष्पों से पूजन करे, नैवेद्य लगाएं और दीप जलाए, आरती कर प्रदक्षिणा करे।
▪ एकादशी माहात्म्य की कथा संभव हो तो वैष्णव से सुने अथवा स्वयं पाठ करे।
▪ एकादशी-व्रत में उपवास, रात्रि जागरण व हरि-कीर्तन की विशेष महिमा है।
▪ रात्रि में जागरण कर श्रीकृष्ण सम्बन्धी पदों, भजनों और स्तोत्रों (गीता और विष्णु सहस्त्रनाम) का गान (कीर्तन) करे। पद्मपुराण में कहा गया है — ‘श्रीहरि की प्रसन्नता के लिए जागरण करके मनुष्य पिता, माता और पत्नी—तीनों के कुलों का उद्धार कर देता है। समस्त यज्ञ और चारों वेद भी श्रीहरि के निमित्त किए जाने वाले जागरण के स्थान पर उपस्थित हो जाते हैं।’
▪ द्वादशी को प्रात:काल वैष्णव को भोजन देकर व्रत-पूजन की समाप्ति होती
है।
▪ एकादशी व्रत करने वाले को इन चीजों का त्याग कर देना चाहिए—१. बार-बार
जल पीना, २. जुआ (ताश खेलना), ३. दिन में सोना, ४. पान-गुटका चबाना, ४. दातुन करना,
५. दूसरों की निंदा, ६. चुगली, ७. चोरी, ८. रतिक्रीड़ा, ९. क्रोध, १०. हिंसा मारपीट,
११. झूठ बोलना।
▪ एकादशी-व्रत का यदि पूरे विधि-विधान से पालन करना हो तो दशमी को इन दस वस्तुओं का त्याग कर देना चाहिए—१. कांसे का बर्तन, २. मांस, ३. मसूर, ४. कोदो, ५. चना, ६. साग, ७. शहद, ८. दूसरे का अन्न, ९. दो बार भोजन, १०. मैथुन।
▪ एकादशी व्रत में सेंधा (लाहौरी) नमक व काली मिर्च का प्रयोग होता है।
सादा (समुद्र का) नमक और लाल मिर्च खाना मना है।

▪ एकादशी को यदि कोई जन्म या मृत्यु के सूतक हों तो भी व्रत का परित्याग नहीं करना चाहिए।
▪ एकादशी को यदि नैमित्तिक श्राद्ध हो तो उस दिन न कर द्वादशी को करना चाहिए।
▪ एकादशी व्रतों में शिरोमणि व्रत है। पूर्वकाल में राजा अम्बरीष महाभागवत हुए हैं। उनका एकादशी व्रत का अनुष्ठान प्रसिद्ध है।
▪ पुण्य का फल सुख और पाप का फल दु:ख होता है। मनुष्य को सुख चाहिए लेकिन कष्टरहित। यह कैसे संभव है? सुख दिखता है, पुण्य दिखता नहीं, दु:ख दिखता है किन्तु पाप दिखता नहीं। यदि मानव को कष्ट रहित जीवन चाहिए तो व्रत-नियम का पालन अनिवार्य है। व्रत-नियम के पालन से श्रीहरि को प्रसन्नता होती है, और श्रीहरि की प्रसन्नता से सुख-समृद्धि एवं भक्ति की प्राप्ति होती है। शास्त्रोक्त विधि से एकादशी का व्रत करने वाला मनुष्य जीवन्मुक्त और परम भक्त बन जाता है।

आचार्यों का संक्षिप्त जीवन चरित्र

श्रीश्रीलभक्तिरक्षक श्रीधर गोस्वामी महाराजका संक्षेप जीवनचरित्र
परम पूज्यपाद श्रीश्रीलभक्तिरक्षक श्रीधर गोस्वामी महाराज सारे विश्वमें शुद्धभक्ति एवं नामसङ्कीर्त्तनका प्रचार करनेवाले, सर्वत्र गौड़ीय मठोंके मूल संस्थापक श्रीलभक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपादके अन्तरङ्ग सेवकोंमें अन्यतम थे। ये पश्चिम बङ्गालके वर्द्धमान जिलेके हापानियाँ नामक ग्राममें एक शिक्षित सम्भ्रान्त ब्राह्मण कुलमें १० अक्तूबर, १८९५ ई॰ को पैदा हुए थे। इनके पिताका नाम श्रीउपेन्द्रचन्द्र भट्टाचार्य और माताका नाम श्रीयुता गौरीबालादेवी था। बचपनमें इनका नाम रमेन्द्रचन्द्र भट्टाचार्य था। ये बचपनसे ही बड़े गम्भीर, सरल, शान्त एवं धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे। इनकी बुद्धि कुशाग्र थी। स्नातककी डिग्री प्राप्त करनेके पश्चात् ये Law College में भर्ती हुए, किन्तु law की पढ़ाई समाप्त करनेके पहले ही ये अँग्रेजोंके विरुद्ध गाँधीजीके असहयोग आन्दोलनमें केद पड़े। इसी समय इनका सम्पर्क श्रीलभक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपादसे हुआ। ये श्रीलप्रभुपादकी वीर्यवती हरिकथा तथा सुयुक्तिपूर्ण दार्शनिक उपदेशोंको श्रवणकर बड़े मुग्ध हुए। १९२६ ई॰ में घर-बार सम्पूर्णतः त्यागकर इन्होंने श्रील प्रभुपादके चरणोंका आश्रय ग्रहण किया। हरिनाम-दीक्षाके पश्चात् इनका नाम श्रीरामानन्द दासाधिकारी हुआ। ये बँगला, हिन्दी और अँग्रेजीमें पारङ्गत विद्वान थे। श्रील प्रभुपादके निर्देशसे मद्रास, बम्बई, दिल्ली आदि उत्तर भारतके बड़े-बड़े नगरोंमें इन्होंने गौरवाणीका प्रचार किया। १९३० ई॰ में श्रीलप्रभुपादने इन्हें त्रिदण्डसंन्यास प्रदान किया। तबसे ये श्रीश्रीमद्भक्तिरक्षक श्रीधर महाराज नामसे प्रसिद्ध हुए। श्रीप्रभुपादने अप्रकट होते समय इन्हें ‘श्रीरूपमञ्जरी पद’ कीर्त्तन करनेका निर्देश दिया था, जिसे देखकर सभी गुरुभ्राताओंने इनकी महत्ताको पहचाना। इनके द्वारा रचित संस्कृत भाषाके स्तोत्र आज भी विभिन्न गौड़ीय मठोंमें कीर्त्तन किये जाते हैं। श्रीलप्रभुपादके अप्रकटलीलामें प्रवेश करनेके पश्चात् ये भी परमाराध्यतम श्रीलगुरुदेव, श्रीनरहरि प्रभु आदि सतीर्थोंके साथ श्रीनवद्वीपधाममें श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठकी स्थापनाकर वहींसे श्रीमन्महाप्रभुके प्रचारित शुद्धभक्तिधर्मका प्रचार करना आरम्भ किया। कुछ दिनोंके बाद इन्होंने स्वयं सारस्वत गौड़ीय मठकी स्थापना की। हमारे परमाराध्यतम श्रील गुरुदेवने भी इन्हींसे त्रिदण्डसंन्यास ग्रहण किया था। ये बड़े ही उच्च कोटिके सिद्धान्तविद् महापुरुष थे। श्रील प्रभुपादके अप्रकट होनेके पश्चात् इनके बहुत-से गुरुभ्राताओंने इनसे संन्यास ग्रहण किया जिनमें परमाराध्यतम श्रीगुरुदेव, श्रीमद्भक्ति आलोक परमहंस महाराज, श्रीमद्भक्तिकमल मधुसूदन महाराज, श्रीमद्भक्तिकुशल नारसिंह महाराज आदि प्रमुख हैं।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजका संक्षेप जीवनचरित्र
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजका जन्म १८९६ ई॰, नन्दोत्सवके
दिन कलकत्ता नगरके एक धार्मिक परिवारमें हुआ था। वैष्णव धर्माश्रित माता- पिताके संसारमें रहनेके कारण सरल-सहज रूपमें बचपनसे ही ये वैष्णव सदाचारका पालन करते थे। अपने बन्धु-बान्धवोंके साथ जन्माष्टमी, झूलनयात्रा, रथयात्राके दिनोंमें बड़े उत्साहसे उत्सव आदि करते थे। इनके बचपनका नाम अभयचरण दे था।

इनके माता-पिता घरपर साधु-संन्यासियोंके आनेपर उनके चरणोंमें यही आशीर्वाद प्रार्थना करते थे कि यह बालक श्रीमती राधारानीकी कृपा प्राप्त करे। बालक अभय आठ वर्षकी आयु तक किसी स्कूल या पाठशालामें प्रविष्ट नहीं हुए। घरपर ही इनकी शिक्षा हुई। तत्पश्चात् स्कूल-कॉलेजमें शिक्षा लाभकर १९२० ई॰ में कलकत्ता Scottish Church College की परीक्षा देकर महात्मा गाँधीके आन्दोलनमें कूद पड़े। १९१८ ई॰ में जब ये B.A. में पढ़ रहे थे, उसी समय इनका विवाह भी हो गया। १९२१ ई॰ में अपने पिताके अन्तरङ्ग मित्र स्वर्गीय कार्तिकचन्द्र वसु (Bengal Chemical
के Managing Director और डा॰ वसुकी laboratory के मालिक) ने योग्य अभयचरणको अपना सहकारी मैनेजर नियुक्त किया।
१९२२ ई॰ में ये अपने किसी अन्तरङ्ग मित्रके साथ कलकत्ताके उल्टा
डाँगामें सर्वप्रथम ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपादसे मिले। श्रील प्रभुपादकी वीर्यवती हरिकथा एवं प्रभावशाली उपदेशोंको सुनकर ये बड़े प्रभावित हुए। श्रील प्रभुपादने अँग्रेजी भाषामें विशिष्ट योग्यता देखकर इन्हें अँग्रेजी भाषामें प्रबन्ध लिखने तथा विदेशोंमें प्रचार करनेके लिए उत्साहित किया। अब युवक अभयचरण प्रायः श्रील प्रभुपादके चरणोंमें हरिकथा
लिए आने लगे। सन् १९३२ ई॰ में प्रयागमें जगद्गुरु श्रील प्रभुपादने कृपापूर्वक अभयचरणको दीक्षामन्त्र एवं गोपाल भट्ट गोस्वामीकी पद्धतिके अनुसार उपनयन आदि भी प्रदान किया। दीक्षाके पश्चात् इनका नाम श्रीअभयचरणारविन्द दासाधिकारी हुआ। तबसे इन्होंने श्रील प्रभुपाद द्वारा प्रतिष्ठित The Harmonist नामक अँग्रेजी पत्रिकाके लिए नियमित रूपसे प्रबन्ध लिखना आरम्भ किया। श्रील प्रभुपादके अप्रकट होनेपर अस्मदीय गुरुपादपद्म श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीसे इनका सम्पर्क बहुत अधिक हुआ। इसी समय श्रील गुरुदेवने इन्हें अपने द्वारा प्रतिष्ठित श्रीगौड़ीय पत्रिका (बँगला मासिक) एवं श्रीभागवत पत्रिका (हिन्दी मासिक) दोनोंका संघपति नियुक्त किया। इन दोनों पत्रिकाओंके लिए नियमित रूपसे ये प्रबन्ध देते थे। श्रीअभयचरणारविन्द प्रभुने स्वयं ही Back to Godhead नामक अँग्रेजी पत्रिकाकी स्थापना की। १९४१ ई॰ में जब कलकत्तामें अस्मदीय गुरुपादपद्मने ‘श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति’ की स्थापना की, तो उस समारोहमें ये भी सम्मिलित थे। १९५८ ई॰ में घर-बार, स्त्री-पुत्र, व्यवसाय-वाणिज्य सब कुछ त्यागकर ये श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरामें उपस्थित हुए। उस समय श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराजजी श्रीकेशवजी गौड़ीय मठके मठरक्षक थे। यहींपर रहकर श्रीअभयचरणारविन्द प्रभुने श्रीमद्भगवद्गीता एवं श्रीमद्भागवतका अँग्रेजी अनुवाद करना आरम्भ किया। श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराज एवं ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके अनुरोध करनेपर १९५९ ई॰ में श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें ही इन्होंने संन्यास ग्रहण किया। श्रीलगुरुपादपद्मने सात्त्वत वैष्णवस्मृतिके अनुसार इन्हें विधिवत् संन्यास प्रदान किया। तत्पश्चात् ये श्रीराधादामोदर मन्दिर, श्रीधाम वृन्दावन तथा दिल्लीमें रहकर श्रीमद्भागवत प्रथम-स्कन्धका तीन खण्डोंमें अँग्रेजी टीकाके साथ प्रकाशन किया। १९६५ ई॰ में ये श्रीमन्महाप्रभुकी वाणीका प्रचार करनेके लिए संयुक्तराज्य अमेरिका गये तथा जुलाई १९६६ ई॰ में इन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृतसंघ (Iskcon) की स्थापना की। कुछ ही दिनोंमें विश्वके बहुत-से देशोंमें इसकी शाखाएँ प्रतिष्ठित हुईं। इन्होंने पचाससे अधिक ग्रन्थ लिखे हैं, जिनका विश्वकी अनेक भाषाओंमें अनुवाद हुआ है। इस तरहसे सारे विश्वमें श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा आचरित एवं प्रचारित शुद्धभक्तिधर्म तथा नामसङ्कीर्त्तनका प्रचार करनेका अधिकांश श्रेय इस महापुरुषको है।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन महाराजका संक्षेप जीवनचरित्र

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन महाराजका जन्म पूर्वी बङ्गालके खुलना जिलेके पिलजङ्ग गाँवमें एक सम्भ्रान्त एवं धार्मिक परिवारमें २३ दिसम्बर, १९२१ ई० में हुआ था। इनके पिताका नाम श्रीसतीशचन्द्र घोष तथा माताका नाम श्रीमती भगवतीदेवी था। श्रीश्रीमद्भक्तिकुशल नारसिंह महाराज पूर्वाश्रमके सम्बन्धसे इनके पितृव्य थे। माता भगवतीदेवी विश्वभरमें गौड़ीय मठोंके प्रतिष्ठाता-आचार्य श्रीश्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपादकी शिष्या थीं। पिता श्रीसतीश घोष भी अस्मदीय गुरुपादपद्मसे हरिनाम-दीक्षा प्राप्त आदर्श गृहस्थ भक्त थे। दीक्षाके बाद इनका नाम श्रीसर्वेश्वर दासाधिकारी हुआ था।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन महाराजजीका बचपनका नाम सन्तोष था। ये चार भाइयोंमेंसे द्वितीय थे। बचपनमें इनकी शिक्षा गाँवकी पाठशालामें ही हुई। बाल्यकालसे ही ये बड़े धीर, शान्त, मेधावी एवं धार्मिक बालक थे। ये सर्वदा अपनी कक्षामें प्रथम स्थान ही पाते थे। कोई भी विषय या श्लोक एक बार श्रवण करनेपर उसे कभी नहीं भूलते। २ मार्च, १९३१ ई० को श्रीनवद्वीपधाम परिक्रमाके अवसरपर बालक सन्तोषको साथ लेकर इनकी माँ श्रीमती भगवतीदेवी परिक्रमाके लिए आयी। धाम-परिक्रमाके पश्चात् अपने प्यारे पुत्र सन्तोषको मठ-व्यवस्थापक श्रीविनोदबिहारी ब्रह्मचारीके हाथों सौंप दिया। तभीसे श्रीविनोदबिहारी प्रभुके संरक् मठमें रहने लगे। कुछ ही दिनोंमें श्रील प्रभुपादने मायापुरमें श्रीभक्तिविनोद स्थापना की। श्रीश्रीमद्भक्तिप्रदीप तीर्थ महाराज उसके प्रधानाध्यापक तथा श्रीविनोदबिहारी ब्रह्मचारी इसके व्यवस्थापक थे। श्रील गुरुदेवने इन्हें इसी स्कुलमें भर्ती कराया। श्रीलगुरुदेव प्रतिदिन श्रीगौड़ीय कण्ठहार, गीता एवं भागवतसे कुछ श्लोक इन्हें कण्ठस्थ करनेके लिए देते थे। एक श्लोकको कण्ठस्थकर सुनानेपर एक चॉकलेट मिलती थी। ये प्रतिदिन चार-पाँच श्लोक कण्ठस्थ कर सुना दिया करते थे। कुछ ही दिनोंमें श्रीगौड़ीय कण्ठहारके सारे श्लोक एवं गीता-भागवतके बहुत-से श्लोक इन्हें कण्ठस्थ हो गये। गौड़ीय वैष्णव समाजमें ये अभिधान माने जाते हैं। १९३६ ई० में जगद्गुरु श्रीलप्रभुपादने इन्हें हरिनाम प्रदान किया और अब इनका नाम सज्जनसेवक ब्रह्मचारी हो गया। ये स्कुलमें अध्ययन करते हुए भी श्रीमन्दिर एवं वैष्णवोंकी भजन-कुटियोंमें प्रतिदिन झाड़ू देते, उनके लिए जल भरते। प्रसादके पहले प्रसादसेवनके लिए आसन, पत्ता आदि प्रस्तुत करते। प्रसादके पश्चात् उस स्थानको साफ करते। मठके बगीचेसे फल-फुल, पत्ता, सब्जी आदि लाते, इत्यादि सेवाके कार्योंमें व्यस्त रहते। श्रीलप्रभुपादके अप्रकट होनेके पश्चात् श्रीगौड़ीय मठमें एक अन्धकारका युग आया। उस समय श्रीलगुरुदेवने इन्हें दीक्षामन्त्र प्रदान किया। इसके पहले श्रीलगुरुदेवने किसीको दीक्षामन्त्र नहीं दिया था। वे स्वयं नैष्ठिक ब्रह्मचारी वेशमें थे, इसलिए उन्होंने श्रीलप्रभुपादके अन्तिम संन्यासी श्रीश्रीमद्भक्तिविचार यायावर महाराजके हाथों उपनयन संस्कार करवाया। तत्पश्चात् ये पूज्यपाद भक्तिदयित माधव महाराज तथा पूज्यपाद भक्तिभूदेव श्रौती महाराजके साथ बङ्गालके विभिन्न स्थानोंमें प्रचारपार्टीके साथ रहे।

१९४० ई० में श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति एवं देवानन्द गौड़ीय मठकी स्थापना होनेपर श्रील गुरुदेवने पुनः इन्हें अपने पास रख लिया। तबसे ये गुरुजीके साथ रहकर बङ्गाल और बङ्गालके बाहर सर्वत्र ही उनकी सेवा करते, उनका पत्र लिखते। इन्होंने गुरुजीके साथ भारतके सभी प्रधान-प्रधान तीर्थोंमें भ्रमण किया। १९४८ ई० में श्रीगौड़ीय पत्रिकाके आरम्भ होनेपर प्रकाशनका सारा दायित्व इनके ऊपर दे दिया गया। सम्पादक, मुद्रक एवं प्रकाशकका नाम दूसरोंका होनेपर भी ये ही सारे कार्योंको सम्पन्न करते थे।

सन् १९५२ ई॰ में श्रीगौरपूर्णिमाके दिन श्रीधाम नवद्वीपमें श्रील गुरुदेवने कृपाकर इन्हें संन्यास वेश प्रदान किया। तबसे इनका नाम श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन महाराज प्रसिद्ध हुआ। श्रील गुरुमहाराजने बीच-बीचमें इन्हें बङ्गालके बहुत-से स्थानोंमें शुद्धभक्तिका प्रचार करनेके लिए भी भेजा। इन्होंने बड़े परिश्रमके साथ गुरुजीके निर्देशसे उन्हींके आनुगत्यमें श्रीमद्भगवद्गीता (श्रीबलदेवविद्याभूषण-कृत टीका सहित), जैवधर्म, प्रेम-प्रदीप, प्रबन्धावली, शरणागति, नवद्वीपभाव-तरङ्ग, Śrī Caitanya Mahāprabhu—His life and precepts, श्रीचैतन्यशिक्षामृत, श्रीचैतन्य महाप्रभुकी शिक्षा, श्रीदामोदराष्टकम् आदि ग्रन्थोंका श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिसे पुनः प्रकाशन किया।
सन् १९६८ ई॰ में श्रीलगुरुमहाराजके अप्रकट होनेके पश्चात् ये श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके सभापति एवं आचार्य पदपर अधिष्ठित हुए थे। ये पराविद्यानुरागी, भक्तिसिद्धान्तमें निपुण, अद्भुत सहिष्णु, भजनपरायण आदि वैष्णवोचित गुणोंसे सम्पन्न थे। श्रीलगुरुदेवके अप्रकटलीलाके पश्चात् इन्होंने बहुत-से भक्तिग्रन्थोंका सम्पादन किया था। श्रीधाम पुरी, तुरा (मेघालय), धूबड़ी (आसाम), गौहाटी (आसाम) और सिल्चर (आसाम) आदि स्थानोंमें समितिके नये प्रचारकेन्द्रोंकी स्थापना की है।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त त्रिविक्रम महाराजका संक्षेप जीवनचरित्र
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त त्रिविक्रम महाराजका जन्म ३१ जनवरी, १९१६ (१७
माघ १३२२ बंगाब्द) में हुआ था। इनके पिताका नाम श्रीयुत आशुतोष कुमार घोष एवं माताका नाम श्रीयुता कात्यायनीदेवी था। वे दोनों ही सदाचारसम्पन्न सत्यानुरागी एवं परम धार्मिक थे। गृहदेवता श्रीनारायणकी सेवा किये बिना जल भी ग्रहण नहीं करते थे। लोकसमाजमें उनका बड़ा सम्मान था।
बचपनमें श्रीपाद भक्तिवेदान्त त्रिविक्रम महाराजका नाम श्रीराधानाथ कुमार था। धार्मिक माता-पिताका इनके जीवनपर बहुत ही अधिक प्रभाव पड़ा। बचपनसे ही विशेष कुशाग्रबुद्धिके छात्र थे। पढ़ने-लिखनेके साथ-ही-साथ सङ्गीत, चित्रकारी, चिकित्साशास्त्र (होम्योपैथिक) आदि विषयोंमें विशेष अभिरुचि रखते थे। छह भाइयों एवं तीन बहनोंमें ये द्वितीय सन्तान थे। ये सभी विषयोंमें इतने दक्ष थे कि इनके बड़े भाई, पिता तथा परिवारके सभी लोग इनके परामर्शके बिना कोई कार्य नहीं करते थे।
दसवीं श्रेणीकी परीक्षा उत्तीर्ण होनेपर प्राइमरी स्कुलमें शिक्षकके रूपमें नियुक्त हुए। उसी समय वे अपने बहनोईके घरपर गये हुए थे। वहाँ उस समय श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके महोपदेशक पूज्यपाद श्रीनरोत्तमानन्द ब्रह्मचारी प्रचारपार्टीके साथ श्रीमन्महाप्रभुके आचरित एवं प्रचारित विशुद्धभक्तिका प्रचार कर रहे थे। उनके भागवत-प्रवचनको सुनकर इनके हृदयमें संसारके प्रति वैराग्य तथा भगवद्भजन करनेकी तीव्र लालसा उत्पन्न हो गयी। सौभाग्यवश इन्हीं दिनों वे अपनी बहनसे मिलनेके लिए गङ्गाके पूर्वी तटपर स्थित श्रीधाम मायापुरके समीपवर्त्ती किसी ग्राममें जा रहे थे। रास्तेमें श्रीयोगपीठका नौ शिखर विशिष्ट विशाल मन्दिर देखा। श्रीमन्दिरको भलीभाँति देखनेके लिए उसके चारों ओर घूमकर देखा। बहनकी ससुरालके वृद्धलोगोंसे उस मन्दिरके सम्बन्धमें पूछा। उन लोगोंने बताया कि श्रीचैतन्यमहाप्रभुकी यह आविर्भावस्थली है। यहींसे गौड़ीय मठका विश्वभरमें प्रचार हुआ। श्रीविनोदबिहारी ब्रह्मचारीजीने इस स्थानका वैभव प्रकाशित किया है। उस समय युवक श्रीराधानाथ कुमार यह भी नहीं जानते थे कि श्रीमन्दिर या तुलसीपरिक्रमा क्या होती है तथा उसका फल क्या होता है? उनके अनुसार साधुसङ्गमें हरिकथा तथा श्रीहरिमन्दिर एवं श्रीतुलसी

परिक्रमाका यह अद्भुत फल हुआ कि वे शीघ्र ही माता, पिता, पत्नी, बन्धु-बान्धव एवं गृह सम्पत्ति सबकुछ त्यागकर भगवद्भक्तिमें तत्पर हो गये।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराजका संक्षेप जीवनचरित्र
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराजके पूर्वाश्रमका नाम श्रीमन् नारायण तिवारी था। ये बिहार प्रदेशके बक्सर जिलेके सुप्रसिद्ध तिवारीपुर नामक ग्राममें एक उच्चशिक्षित सम्भ्रान्त ब्राह्मण कुलमें पैदा हुए थे। तिवारीपुर ग्राम पतितपावनी भगवती गङ्गाके तटपर अवस्थित था, परन्तु आजकल गङ्गाके पथपरिवर्तनसे थोड़ी दूरपर स्थित है। सम्पूर्ण गाँवमें केवल ब्राह्मणोंका ही वास है। सभी लोग पढ़े-लिखे एवं सम्पन्न हैं। इनके पिताका नाम पण्डित बालेश्वरनाथ तिवारी तथा माताका नाम श्रीमती लक्ष्मीदेवी था। माता- पिता दोनों ही सच्चरित्र, परोपकारी, सत्यनिष्ठ तथा सर्वोपरि श्री सम्प्रदायके आश्रित वैष्णव थे। आसपासके गाँवमें इन लोगोंकी बड़ी मान-प्रतिष्ठा थी। बचपनमें अत्यन्त शान्त रहनेके कारण सब लोग इन्हें भोलानाथ भी कहते थे। किन्तु माता-पिता तथा कुटुम्बियोंने इनका नाम श्रीमन्नारायण रखा। यही नाम आगे प्रसिद्ध हुआ। बचपनसे ही बालकमें धर्मके प्रति विशेष रुचि देखी जाती थी। बिना किसीके निर्देश या उपदेशके ही वे स्वाभाविक रूपसे सदा-सर्वदा भगवन्नामका जप किया करते थे। श्रीमद्भागवत, गीता, रामायण और महाभारत आदिकी कथायें घरपर होती थीं। बालक बड़ी श्रद्धासे रुचिपूर्वक इन कथाओंका श्रवण करता। अतः बचपनमें ही रामायण, महाभारत आदिकी कथाएँ इन्हें सम्पूर्ण रूपसे कण्ठस्थ हो गयी थी। गाँवकी पाठशालामें प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करनेके बाद गाँवसे पाँच मील दूर बक्सर हाईस्कुलमें इनका प्रवेश कराया गया। प्रतिदिन पैदल विद्यालयमें आना- जाना पड़ता था। फिर भी कुशाग्र बुद्धि होनेके कारण कक्षामें प्रथम, द्वितीय स्थान प्राप्त करते थे। खेलकूदमें भी इनकी विशेष रुचि थी। हाईस्कुलमें अध्ययन करते समय ही प्रदेशभरमें खेलकुदमें अग्रणी (चैम्पियन) रहे एवं बहुत-से पुरस्कार आदि प्राप्त किये।
उच्च विद्यालयकी शिक्षा समाप्त करते ही खेलकुदमें प्रवीणताके कारण अनायास ही पुलिस विभागमें अच्छी नौकरी मिल जानेके कारण इच्छा रहनेपर भी महाविद्यालयकी शिक्षा बीच ही में छोड़ देनी पड़ी। तीन-चार वर्ष सरकारी नौकरीमें रहते समय ही बिहार प्रदेशके साहिबगंज नामक शहरमें श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके प्रचारक महामहोपदेशक श्रीनरोत्तमानन्द ब्रह्मचारी ‘भक्तिशास्त्री’ ‘भक्तिकमल’ जीसे इनकी भेंट हुई।
वे उस समय पूज्यपाद भक्तिकुशल नारसिंह महाराज, श्रीजगन्नाथदास बाबाजी महाराज, श्रीराधानाथ दासाधिकारी और श्रीप्रेमप्रयोजन ब्रह्मचारीके साथ शहरके विभिन्न स्थानोंमें शुद्धभक्ति एवं हरिनामका प्रचार कर रहे थे। इनकी सभाओंमें तिवारीजी भी प्रतिदिन नियमित रूपसे योगदानकर श्रद्धापूर्वक श्रीमद्भागवतकी कथाओंका श्रवण करते थे। कभी-कभी तो ब्रह्मचारीजीके साथ सारी रात बैठकर हरिकथाका श्रवण करते। शुद्ध वैष्णवोंके सङ्गमें इस प्रकार वीर्यवती हरिकथाका श्रवण करनेसे तिवारीजीके जीवनपर बहुत प्रभाव पड़ा। पहलेसे ही धार्मिक स्वभाव होनेके कारण अब इनका जीवन सम्पूर्ण रूपसे बदल गया। प्रचार पार्टीके वहाँसे चले जानेके बाद उन्होंने प्रतिदिन हरिनाम महामन्त्रका एक लाख जप आरम्भ कर दिया। धीरे-धीरे इनके हृदयमें संसारके प्रति स्वाभाविक रूपसे वैराग्यका उदय होने लगा। जिस समय वे गङ्गाके तटपर बसे हुए श्रीचैतन्यमहाप्रभु तथा श्रीरूप-सनातन गोस्वामीके पदाङ्कपूत स्थान रामकेलिके पास ही राजमहलमें सरकारी सेवामें नियुक्त थे, उस समय उन्हें संसारसे पूर्ण वैराग्य हो गया था। नौकरीसे अवकाश ग्रहण करनेकी चेष्टा करनेपर भी उच्चपदस्थ अधिकारी इनके

कार्यसे अत्यन्त सन्तुष्ट रहनेके कारण इनके सेवात्यागपत्र ग्रहण नहीं करते थे। इसी समय इनका परमाराध्यतम श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजसे कई बार पत्रालाप भी हुआ। अन्तमें किसी प्रकार बड़ी कठिनाईसे पदत्यागकर सन् १९४६ ई॰ के अन्तमें माता-पिता, भाई-बन्धु-पत्नी, परिवारजन एवं धन-सम्पत्ति सबकुछ छोड़कर पूर्णरूपेण निष्किञ्चन होकर श्रीनवद्वीपधाममें श्रीगुरुदेवके चरणोंमें उपस्थित हुए।
सन् १९४७ ई॰ में श्रीनवद्वीपधाम परिक्रमाके अवसरपर फाल्गुनी गौरपूर्णिमाके दिन परमाराध्यतम श्रील गुरुदेवने इन्हें हरिनाम एवं दीक्षा प्रदान की। तत्पश्चात् हरिकथा श्रवण करनेमें इनकी अभिरुचि देखकर अपनी सेवामें नियुक्त कर लिया। जहाँ कहीं भी प्रचार अथवा किसी विशेष कार्यके लिए जाते, सब समय अपने साथ रखते। कुछ समयके लिए श्रील गुरुपादपद्मने अपने प्रियसेवक श्रीअनङ्गमोहन ब्रह्मचारीके अस्वस्थ हो जानेपर उनकी सेवा शुश्रूषाके लिए इन्हें रखा था। किन्तु उनके परलोकगमनके बाद पुनः अपने साथ ही रख लिया। सारे भारतमें भक्तिप्रचारमें उनके साथ रहनेके कारण हरिकथा श्रवणका विशेष सुयोग प्राप्त हुआ। श्रीगुरुदेव भी बड़े प्रसन्न होकर इन्हें हरिकथा श्रवण कराते।
श्रील गुरुदेवके साथ इन्हें सम्पूर्ण भारतके मुख्य-मुख्य सभी तीर्थस्थलियों विशेषतः श्रीव्रजमण्डल, श्रीगौरमण्डल और श्रीक्षेत्रमण्डलकी श्रीकृष्ण एवं श्रीराधाभाव एवं कान्तिसे देदीप्यमान श्रीगौरसुन्दरकी लीलास्थलियोंके दर्शन एवं परिक्रमा करनेका सुयोग मिला। इस प्रकार श्रील गुरुदेवके साथ इन्हें उत्तर-दक्षिण, पूरब-पश्चिमके सारे तीर्थोंके धाम-माहात्म्य श्रवणके साथ उन स्थलोंकी परिक्रमा करनेका दुर्लभ सुयोग प्राप्त हुआ। एक समय श्रीलगुरुदेव अपने सतीर्थ गुरुभ्राताके साथ बैठे हुए थे। श्रीगौरनारायण भी पास ही बैठे थे। परमाराध्यतम श्रीगुरुदेवने श्रीगौरनारायणकी तरफ देखते हुए कहा मैं तुम्हें गैरिक वस्त्र तथा संन्यास देना चाहता हूँ। मैंने बहुत-से अबङ्गाली भारतीयोंको देखा है। वे लोग श्रीमन्महाप्रभुके अत्यन्त गम्भीरतम एवं उच्च भक्तिसिद्धान्तोंको विशेषतः प्रेमतत्त्वको समझ नहीं पाते। किन्तु तुम इन भावोंको बड़े सरल- सहज रूपमें हृदयङ्गम कर लेते हो। श्रीरूप-सनातन तथा हमारे बहुत-से गौड़ीय वैष्णवाचार्य बहुत दिनों तक व्रजमें रहे। किन्तु उन्हें एक भी ऐसा कोई उत्तर-भारतीय भक्त नहीं मिल सका, जो श्रीमन्महाप्रभुके हृदयस्थित भावोंको हृदयङ्गम कर सका हो। तुम बड़े सौभाग्यवान हो। श्रीगौरनारायणजीने बड़ी ही नम्रतासे उनके श्रीचरणोंमें गिरकर अश्रुपूरित नेत्रोंसे कहा—मैंने अपने आपको आपके चरणोंमें सर्वतोभावेन उत्सर्ग कर दिया है। मैं अपनी माताकी ममता, पिताका स्नेह, पत्नीका प्रेम एवं बन्धु-बान्धवोंका बन्धुत्व सबकुछ उन-उन स्थानोंसे उठाकर आपके श्रीचरणोंमें अर्पित कर रहा हूँ। आप मुझे नङ्गा रखें, लँगोटी पहनावें, सफेद कपड़ेमें रखें, गेरुए कपड़े पहनावें अथवा संन्यास प्रदान करें। आप जिस रूपमें मेरा कल्याण समझें वही करें। अब मैं अपना नहीं केवल आपका हो गया। इनकी बातोंको सुनकर श्रीगुरुदेवकी आँखें भी छलछला आयीं। वे श्रीपाद सनातन प्रभुकी ओर देखने लगे। श्रीसनातन प्रभु भी श्रीगौरनारायणकी बातोंको सुनकर स्तब्ध थे। इसके पश्चात् श्रीलगुरुदेवने क्या स्थिर किया वे ही जानें। वे कुछ देर मौन रहनेके पश्चात् पुनः हरिकथामें लग गये। इस घटनाके कुछ दिन बाद ही सन् १९५२ में गौरपूर्णिमाके दिन श्रीपाद सज्जनसेवक ब्रह्मचारी, श्रीपाद राधानाथ दासाधिकारी एवं श्रीपाद गौरनारायण दासाधिकारीने त्रिदण्डसंन्यास ग्रहण किया।
श्रीलगुरुदेवने इन्हें श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ मथुरामें मठरक्षक नियुक्त किया। वहींसे इन्होंने श्रील गुरुदेवके आदर्श-निर्देश और आनुगत्यमें ‘श्रीभागवत पत्रिका’ (मासिक पत्र), जैवधर्म, श्रीचैतन्यशिक्षामृत,

श्रीमन्महाप्रभुकी शिक्षा, भक्तितत्त्वविवेक, उपदेशामृत, श्रीशिक्षाष्टक, श्रीमनःशिक्षा, सिन्धु-बिन्दु-कणा, श्रीगौड़ीयकण्ठहार, श्रीमद्भगवद्गीता (श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरकृत टीका सहित, हिन्दी संस्करण) आदिका प्रकाशन कराया है। आपने सारे भारत एवं भारतसे बाहर अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, बेल्जियम, हालैण्ड, कैनडा, मैक्सिको, कोस्टारिका, आस्ट्रेलिया, इण्डोनेशिया, मलेशिया, फिजी, न्यूज़ीलैण्ड, जापान तथा हवायी (होनुलूलू) आदि विश्वके छोटे- बड़े देशोंमें शुद्धभक्तिका प्रचार किया। अँग्रेजी, फ्रेंच, स्पैनिश आदि भाषाओंमें इनके ग्रन्थोंका विशेष रूपमें प्रचार हो रहा है। इस प्रकार ये वृद्धावस्थामें भी श्रीहरि-गुरु-वैष्णव मनोऽभीष्ट सेवामें उत्साहपूर्वक तत्पर थे।